श्री रत्नप्रभाकर ज्ञानपुष्पमाला पु० नं०

श्री रत्नप्रभसूरीसद्गुरुभ्यो नम

अथश्री

ज्ञान विलास.

(पच्चवीसपुष्पोंका संग्रह)

संग्राहक,
श्रीमदुपकेश (कमला) गच्छीयमुनि
श्री ज्ञानसुन्दरजी (गयवरचन्दजी)

द्रव्य सहायक—
श्री संघ–फलोधी सुपनोंकी आमदनीसे

प्रबन्धकर्ता
शाहा मेघराजजी मोणोयत मु० फलोधी

प्रथम आवृत्ति १०००   वीर संवत् २४४६

विक्रम संवत् १९७५

श्री 'आनंद' प्री प्रेसमें शाह गुलाबचंद लल्लुभाइने छापा

प्रस्तावना.

प्यारे पाठक वृन्द !

इस आरापार ससारके अन्दर परिभ्रमन करते हुवे जीवोको शास्त्रकारोने मनुष्यजन्मादि अच्छी सामग्री मीलना अति दुर्लभ बतलाया है अगर कभी पूर्व पुन्योदयसे मील भी जावे तो आत्मकल्याण करना बहुतही दुष्कर है क्यो कि आत्मा निमित्तवासी है। जीवात्माको जेसा जेसा निमित्त मीलता है वेसी वेसी प्रवृत्ति हुवा करती है इस वास्ते आत्मकल्याणी पुरुषोको सदैवके लिये शुद्ध निमित्त--कारणकी ही गवेषणा करना चाहिये

मोक्षमार्ग साधनेके लिये भी शास्त्रकारोने प्रथम साम अच्छे निमित्त--कारणकी आवश्यक्ता बतलाइ है इसके लिये पूर्व महा ऋषियोंने बहुतसे साधन और उपाय बतलाये है, जेसे सत्सग, ज्ञानाभ्यास, ज्ञानमय पुस्तकोंका पठन--पाठन, सिद्धान्तश्रवण, सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, प्रभुपूजा, प्रभावना, दान, शील, तप, भावना इत्यादि इनके अलावा महात्माओने पूर्ण परिश्रम द्वारा अनेक अपूर्व और परम उपयोगी ग्रन्थ बनाके जनसमाजपर बडाही उपकार किया है। परन्तु वे ग्रन्थ प्राय सस्कृत--प्राकृत भाषाके होनेसे साधारण समाजको उस ग्रन्थोका पूर्ण लाभ नही मिल सक्ता है। कारण आजकाल लोगोका ख्याल प्रचलित भाषाकी ओर विशेष है वास्ते समयानुसार प्रचलित भाषाओंके ग्रन्थकी अत्यावश्यक्ता है अगर एक ग्रन्थ ऐसा

तैयार किया जाय कि प्रचलित धर्मक्रियाए सर्व सविस्तर जिस्के अन्दर प्रतिपादन हो परन्तु साथमें भय इस बातका खडा होता है कि वह ग्रन्थ बहुत बडा हो जानेसे हाथमें लेतेही मगज कप उठेगा, अगर भिन्न भिन्न विषयकी भिन्न भिन्न पुस्तके बनाइ जाय तो पुस्तक बहुतसी बन जायगी तो उसकी सभाल रखनेमें तथा पढनेमें आलस्य–प्रमाद आके घेर लेगा। इस दोनो पक्षके इन्साफ तथा प्रमादग्रस्त जीवोको जागृत करनेके लिये एक एसा ग्रन्थ तैयार कराया जाय कि जिस्में प्रचलित सब धर्मक्रियाओका समावेश होनेपर भी ग्रन्थ बहुत बडा न हो, जिस्को सुगमतापूर्वक अपने पासमें रखते हुवे हमेशा पठन–पाठन कर अपना आत्मकल्याण कर सके। इस सहेतुक यह लघु ग्रन्थ तैयार करवाके आप साहिबोके करकमलोमे रखा जाता है

इस लघु ग्रन्थमे बडेही उपयोगी पचीश पुष्पोका सग्रह किया गया है उक्त पुष्प भिन्न भिन्न विषयसे परिपूर्ण है जैसे नमस्कारसे लेके सामायिक विधिपूर्वक लेना–पारना, प्रतिक्रमण, चैत्यवन्दनो, स्तवनो, सज्झायो, गहुलीयो, मन्दिरजीमें बोलनेके श्लोक, दोहा, प्रभुपूजाका हेतु, फल, विधि, शुद्धता तथा दश त्रीक, पाच अभिगम, चोराशी आशातना और भी विधिचैत्य अविधिचैत्यका विवरणके साथ और भी बहुत बातें बतलाइ गइ है

धर्मके सन्मुख कोन हो सक्ते है? इसके लिये मार्गानुसारीपनेके पैतीस बोल, प्रतिदिन चितारने योग चौदा नियम विस्तारपूर्वक और श्रावकको गत कालकी आलोचनापूर्वक शुद्ध देव गुरु, धर्मकी पहि-

चानके साथ बारह व्रत ग्रहन करना और १२४ अतिचारका संक्षिप्तमे अच्छा खुलासा किया गया है

जीवोंके साथ कभी सुमति कभी कुमति आया करती है तथा यह जीव मोहराजाकी पासमे बन्धा हुवा चौरासीके अन्दर विविध प्रकारका नाटक कर रहा है इसका प्रदर्शन कक्काबत्तीसी द्वारा कराया है जिस्मे नय, निक्षेप प्रमाण, स्याद्वाद, सप्तभगी आदिका खुलासा करते हुवे मोहराजापर विजयका रस्ता बतलाया है

जैन मुनि कैसे होने चाहिये और कितनी योग्यता हो तथा कहातक परिक्षामे पास हुवे हो तो दीक्षा देना, इसको भी सविस्तारसे दरसाया गया है

यह लघु ग्रन्थ साधारण जनको ही उपयोगी नहीं परन्तु व्याख्यानदाता वक्तावोको भी पूर्ण साहितारूप है क्यों कि इसके अन्दर व्याख्याविलास संस्कृत, प्राकृत और हिन्दी भाषाके अन्दर बडी मनोरंजक और असर करनेवाली कवितावोका भी समावेश किया गया है

वर्तमान समाजका दिग्दर्शन करानेके लिये एक बीनतीशतकने भी इस लघु ग्रन्थमे महत्वका स्थान रोक रखा है यह भी अवश्य पढने योग्य है

मूर्ति और दयादान नहीं माननेवाले ढुंढीयो और तेरापन्थीयोका जन्म किस. किस कारणसे कोनसे कोनसे समयमे हुवा है, वह मनोरंजक दृश्य कविताद्वारा बतलाया है उक्त मतवालोकी कितनीक क्रिया

जैनोसे विपरीत है वह भी स्पष्ट बतला दीया है मूर्ति तथा दयादानके विषयमें आगम प्रमाण तथा युक्तिप्रमाणमे अच्छा प्रतिपादन किया है साथमे वे लोक केवल ३२ सूत्र वे भी मूल पाठ माननेका आग्रह करते है इसके लिये बत्तीस सूत्रोंके मूल पाठके १०० प्रश्न पूछे गये है इत्यादि ।

अन्तमें ग्रन्थकर्ता मुनिश्री अपने उपकेशगच्छ (पार्श्वनाथ-परम्परा) की पट्टावली मनोरंजक कवितामे दी है, जिस्मे ओसवाल, पोरवाल, श्रीमाली जातियोके स्थापक श्रीस्वयप्रभसूरिजी, श्रीरत्न-प्रभसूरिजी, यक्षदेवसूरिजी महाराजोका जैन कोमपर कितना उपकार है उसका विवरण कर बतलाया है

इसके सिवाय और भी इस ग्रन्थके अन्दर बहुतसी विषय है कि जो सर्व साधारण समाजके लिये बडेही हितकारी और निरतर उपकारी है जिसका प्रतिदिन पठन–पाठन, मनन करनेसे अपूर्व ज्ञान और आत्मकल्याण सुगमतापर्वक हो सके इस लघु प्रस्तावनाको समाप्त करते हुवे हम हमारे आत्मबन्धुओसे निवेदन करते है कि आप एक दफे इस ग्रन्थको आद्योपान्त अवश्य पढे । कारण ग्रन्थकी उपयोगिता और ग्रन्थकर्ताका श्रम जब ही सफल होगा कि इस ग्रन्थको आद्योपान्त पढेंगे सुज्ञेषु कि बहुना इतिशम् ।

प्रकाशक.



श्री मदुपकेशगच्छीय–

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज ।



जन्म स १९३७ । दीक्षा स १९६२ ।

(१) विषयानुक्रमणिका.

—— ० ——

(२४) प्रतिक्रमण सूत्र.

१	अरिहंत चेइआण	१
२	सव्वलोए अरि०	२
३	पुक्खरवरदीवड्ढे	२
४	सिद्धाणबुद्धाण	२
५	वेयावच्च ग०	३
६	भगवानादि	३
७	देवसिअ प्र०	३
८	इच्छामि ठामि०	२
९	अतिचारकि ८ गाथा	४
१०	सुगुरु वन्दना	४
११	सात लाख	५
१२	अठारा पाप	६
१३	सव्वस्सवि	६
१४	वंदित्ता सूत्र	७
१५	आयरिय उ०	११
१६	सुअदेवी	११
१७	वेरोट्या स्तुति	१२
१८	क्षेत्रदेवता	१२
१९	इच्छामोअणुसट्ठि	१२
२०	नमोऽस्तु वर्द्धमानाय	१२
२१	उपसर्गहर	१२
२२	वरकनक	१२
२३	अड्ढाइज्जेसु	१३
२४	दादासाहिबका का०	१३
२५	दुक्खक्खओकम्म०	१३
२६	लघुशान्ति	१४
२७	चउ कसाय	१५
२८	राई प्रतिक्रमण	१६
२९	जगचिंतामणि	१६
३०	भरहेसरकी सज्झाय	१७
३१	सकलतीर्थस्तव	१९
३२	विशाल लोचन	२०
३३	कल्याणकंदकी स्तुति	२१
३४	श्रीसीमंधर चैत्यवन्दन	२१
३५	,, स्तवन	२१
३६	,, स्तुति	२२
३७	श्रीसिद्धाचलका चैत्य०	२२
३८	,, स्तवन	२३
३९	,, स्तुति	२३
४०	प्रभातके पच्चक्खाण	२३
४१	सांझके पच्चक्खाण	२४



(२) विषयानुक्रमणिका.

(१) देवगुरुवन्दनमाला

नंबर		पृष्ट
१	नमस्कार	१
२	चावीस जिननाम	१
३	सामायिकमें शुद्धि	२
४	पचिंदिय	२
५	इच्छामिखमा०	३
६	सुहराइसुह देवसि	३
७	अब्भुट्ठिओ	३
८	इरियावही	३
९	तस्सोत्तरी	४
१०	अन्नत्थ	४
११	लोगस्स	४
१२	सामायिक लेनेकी विधि	५
१३	मुहपत्तीके २५ बोल	५
१४	शरीरके २५ बोल	६
१५	करेमिभंतेसामा०	६
१६	मनके १० दोष	७
१७	वचनके १० दोष	७
१८	कायाके १२ दोष	८
१९	सामायिक पारनेकी विधि	९
२०	सामायिक गाथा	

(२) चैत्यवन्दनादि स्तवन

२१	सकलकुशलवल्लि	१०
२२	बीजका चैत्यवन्दन	१०
२३	पंचमीका ,,	११
२४	अष्टमीका ,,	११
२५	एकादशीका ,,	१२
२६	पाखीका ,,	१३
२७	पार्श्वनाथ ,,	१४
२८	महावीर ,,	१५
२९	शान्तिनाथ ,,	१५
३०	नेमिनाथ ,,	१५
३१	ऋषभदेव ,,	१६
३२	जंकिंचि	१६
३३	नमुत्थुणं	१६
३४	जावंतिचेइआइ	१७
३५	जावंतकेविसाहु	१७
३६	नमोऽर्हत्सिद्धा०	१७
३७	बीजकी थुई	१७
३८	पंचमीकी थुई	१८
३९	अष्टमीकी थुई	१९
४०	एकादशीकी थुई	२०
४१	पाखीकी थुई	२१
४२	सिद्धचक्रकी थुई	२१
४३	सिद्धाचलकी थुई	२२
४४	ओलीयाकी थुई	२३
४५	पर्युषणकी थुई	२४

४६ वीरप्रभुकी थुई . २५
४७ बीजका स्तवन . २५
४८ पंचमीका ,, २६
४९ अष्टमीका ,, २८
५० एकादशीका ,, २९
५१ पाखीका ,, ३२
५२ ओलभंडे ,, ३६
५३ आदेश्वर ,, ३७
५४ राणपुराका ,, ३८
५५ पार्श्वनाथ ,, ३९
५६ केशरियाजी ,, ३९
५७ ,, ,, ४०
५८ ,, ,, ४१
५९ पर्युषणका ,, ४२
६० ,, ,, ४३
६१ धर्मस्तवन ४४
६२ जयवीयराय ४४
६३ अरिहंतचेइआण ४५
६४ चौवीस जिनस्तुति ४५

(३) जैननियमावली

६५ जैन ४६
६६ धर्मके १५ गुण ४७
६७ मार्गानुसारीके ३५ ४८
६८ बारह व्रतोंकी टीप सम्यक्त्वकी शुद्ध श्रद्धा तथा १२४ अतिचार ५४

(४) सुबोधनियमावली

६९ चौदा नियम ७०
७० पच्चक्खानका पाठ ७४

(५) ८४ आशातना

७१ आशातना . ७७
७२ वर्तमान आशा० ८२
७३ पांच अभिगम ८४
७४ दशत्रीक ८५

(६) जिनस्तुति

७५ संस्कृत श्लोक . ८९
७६ भाषामें दोहा ९६

(७) प्रभुपूजा

७७ पूजाका हेतु-फल १००
७८ द्रव्यशुद्धि . १०२
७९ क्षेत्रशुद्धि ११४
८० विधिचैत्य ११४
८१ कालशुद्धि ११५
८२ भावशुद्धि ११६
८३ [illegible] पूजा . १२०
८४ प्रभुपूजाकी विधि १२२
८५ केशरपूजा . १२२
८६ अष्टप्रकारी पूजा १२३
८७ त्रीकाल पूजा १३०

(८) तीर्थयात्रा

८८ तीर्थयात्रा स्तवन १३६

(९) जैन दीक्षा

८९ वीस पुरुष दीक्षाके अयोग १३८
९० आठवर्ष दीक्षा देना १४३
९१ दीक्षा लेनेवालेके लक्षण १४७
९२ जैन मुनि दोय प्रकारके १४८

(१०) प्रतिमाछत्तीसी

३ बत्तीस सूत्रोंके मूल पाठमें मूर्ति है (कविता) . १५४

(११) लिंगनिर्णय

४ मुनिका लिंग १५६
५ लुपकोंकी उत्पत्ति .. . १६०
६ सूत्रोंका टवा १६१
७ तेरापन्थीयों १६२
८ प्रदेशी टुटीया . १६२
९ मुहपत्तिकी चर्चा . १६६

(१२) कक्काबत्तीसी सार्थ

०० कक्काबत्तीसी मूल १६९
०१ कक्काबत्तीसी अर्थ . १७३

(१३) व्याख्याविलास भाग २

०२ संस्कृत विभाग २२६

(१४) व्याख्याविलास भाग ३

०३ प्राकृत विभाग २४८

(१५) व्याख्याविलास भाग ४

०४ भाषा विभाग २६३

(१६) दानछत्तीसी

०५ तेरापन्थीयोंको दान विषय उत्तर २९६

(१७) अनुकम्पाछत्तीसी

०६ तेरापन्थीयोंको दया विषय उत्तर ३०२

(१८) प्रश्नमाला

१०७ पचांगी नही माननेवाले ढुंढीया तेरापन्थीयोंसे बत्तीस सूत्र मूल पाठके १०० प्रश्नो ३२८

(१९) विनती शतक

१०८ वीरप्रभुसे विनति=वर्तमान समयके आदर्श स्वरूप ३४०

(२०) स्तवन संग्रह भाग १.

१०९ भिन्न भिन्न विषयके पचीश स्तवनें . ३५२

(२१) स्तवन संग्रह भाग २

११० भिन्न भिन्न विषयके पचीश स्तवनोंका संग्रह ३८०

(२२) स्तवनसंग्रह भाग ३

१११ भिन्न भिन्न विषयके स्तवन पचीश ४०१

(२३) सझाय संग्रह

११२ धम्मोमंगल सझाय ४१४
११३ बीजकी ,, ४१४
११४ पंचमीकी ,, ४१५
११५ पगराडाकी ,, ४१६
११६ इग्यारा अंगकी,, ४१७
११७ सुखश्रावककी ,, ४१८
११८ तुंगीया नगरीके श्रावकोंकी सझाय . ४१९
११९ कामदेव श्रावककी सझाय . ४२०
१२० आनन्द श्रावक ,, ४२१
१२१ हम अमर भये ,, ४२२
१२२ अवधु खोली नयन ,, ४२३
१२३ आप स्वभाव ,, . ४२३
१२४ समकितकी ,, ४२४
१२५ लघुता मेरे मन ,, ४२५
१२६ कथनी कथ ,, ४२५

अथ श्री

प्रतिक्रमण मूल सूत्रम् ।

नमस्कार, इर्यावहि, तस्सोत्तरी, अन्नत्थ, लोगस्स, सामायिक लेना, पारना, चैत्यवन्दनो, स्थुइयो, स्तवनो, सज्झायो आदि सूत्रों इसी पुस्तकके प्रारभमें लिखा गया है। कण्ठस्थ करनेवाले भाइ इसी पुस्तकसे कर सक्ते है वास्ते वह सूत्र यहां नहीं लिखा है। यहापर मात्र प्रतिक्रमणके शेष मूल सूत्र ही लिखा जावेगा। जो कि कण्ठस्थ करनेवाले सुभितेके साथ कर सके। सार्थ और सहेतु प्रतिक्रमण अन्य पुस्तक द्वारा प्रकाशित किया जायगा।

॥ प्रतिक्रमणकी आदिमे देववन्दन ॥

इरियावहि पडिकमके चैत्यवन्दनसे नमुथ्थुणं तक कहेना देखो पृष्ट ३ से बादमें अरिहंत चेइआणका पाठ—

अरिहंत चेइआणं करेमि काउस्सग्ग वंदणवत्तिआए पूअणवत्तिआए सक्कारवत्तिआए सम्माणवत्तिआए बोहिलाभ वत्तिआए निरूवसग्गवत्तिआए सद्धाए मेहाए धीईए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्ग। अन्नत्थ०। एक नवकारका काउस्सग्ग करके एक थुई बोलना, देखो पृष्ट १७ से

शीघ्रबोधके थोकडोंकी संख्या.



नं.	शीघ्र.	थोकडे	नं.	शीघ्र.	थोकडे
१	भाग १ ला	१६	१४	भाग १४ वा	१७
२	भाग २ जा	२	१५	भाग १५ वा	प्र० उ० ५
३	भाग ३ जा	९	१६	भाग १६ वा	१२
४	भाग ४ था	९	१७	भाग १७ वा	तीन सूत्र
५	भाग ५ वा	१७	१८	भाग १८ वा	पाच सूत्र,
६	भाग ६ ठा	३	१९	भाग १९ वा	एक सूत्र
७	भाग ७ वा	२	२०	भाग २० वा	,,
८	भाग ८ वा	२८	२१	भाग २१ वा	,,
९	भाग ९ वा	२१	२२	भाग २२ वा	,,
१०	भाग १० वा	२	२३	भाग २३ वा	थो० २
११	भाग ११ वा	२१	२४	भाग २४ वा	छपतें है
१२	भाग १२ वा	२१	२५	भाग २५ वा	,,
१३	भाग १३ वा	७	६६	द्रव्यानुयोग	थो० ४



अथ श्री

प्रतिक्रमण मूल सूत्रम् ।

नमस्कार, इर्यावहि, तस्सोत्तरी, अन्नत्थ, लोगस्स, सामायिक लेना, पारना, चैत्यवन्दनो, स्थुइयो, स्तवनो, सज्झायो आदि सूत्रों इसी पुस्तकके प्रारभमें लिखा गया है। कण्ठस्थ करनेवाले भाइ इसी पुस्तकसे कर सक्ते है वास्ते वह सूत्र यहा नहीं लिखा है। यहांपर मात्र प्रतिक्रमणके शेप मूल सूत्र ही लिखा जावेगा। जो कि कण्ठस्थ करनेवाले सुभितेके साथ कर सके। सार्थ और सहेतु प्रतिक्रमण अन्य पुस्तक द्वारा प्रकाशित किया जायगा ।

॥ प्रतिक्रमणकी आदिमें देववन्दन ॥

इरियावहि पडिकमके चैत्यवन्दनसे नमुथ्थुण तक कहेना देखो पृष्ट ३ से बादमें अरिहंत चेइआणका पाठ—

अरिहंत चेइआण करेमि काउस्सग्गं वंदणवत्तिआए पूअणवत्तिआए सकारवत्तिआए सम्माणवत्तिआए बोहिलाभवत्तिआए निरूवसग्गवत्तिआए सद्धाए मेहाए धीईए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं । अन्नत्थ० । एक नवकारका काउस्सग्ग करके एक थुई बोलना, देखो पृष्ट १७ से

थुई । बादमें लोगस्स कहके-सव्वलोए अरिहंत चेइआणं करेमि काउस्सग्गं० पूर्ववत् एक थुई कहेना । बादमें पुक्खरवरदीका पाठ—

॥ पुक्खरवरदी ॥

पुक्खरवर दीवड्ढे धायइ संडेअ जंबुदीवे अ ॥ भरहेरवय विदेहे । धम्माइगरे नमंसामि ॥ १ ॥ तम तिमिर पडल विद्ध सणस्स । सुरगण नरिंद महिअस्स । सीमा धरस्स वंदे । पप्फोडिअ मोह जालस्स ॥ २ ॥ जाई जरा मरण सोग पणासणस्स । कल्लाण पुक्खल विसाल सुहावहस्स ॥ को देव दाणव नरिंद गणच्चिअस्स । धम्मस्स सार मुवलब्भ करे पमायं ॥ ३ ॥ सिद्धे भो पयओ णमो जिणमए नंदी सया संजमे । देवं नाग सुवन्न किन्नर गण स्सब्भुअ भावच्चिए ॥ लोगो जत्थ पइट्ठिओ जगमिणं ॥ तेलुक्क मच्चासुरं । धम्मो वड्ढओ सासओ विजयओ धम्मुत्तरं वड्ढओ ॥४॥ सुअस्स भगवओ करेमि काउस्सग्गं वंदणवत्तिआए० यावत् एक थुइ कहना ॥ बाद—

॥ अथ सिद्धाणं बुद्धाणं ॥

सिद्धाणं बुद्धाणं । पारगयाणं परंपर गयाणं । लोअग्ग मुवगयाणं ॥ नमो सया सव्व सिद्धाणं ॥ १ ॥ जो देवाणवि देवो । जं देवा पंजली नमंसंति ॥ तं देव देव महिअं । सिरसा वंदे महावीरं ॥ २ ॥ इक्कोवि नमुक्कारो । जिणवर वसहस्स वद्धमाणस्स ॥ संसार सागराओ । तारेइ नरं व नारिं वा ॥३॥

उभिंत सेल सिहरे । दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स ॥ त धम्मचक्कवट्टिं । अरिट्ठनेमिं नमंसामि ॥४॥ चत्तारि अठ दस दो य । वंदिया जिणवरा चउव्वीसं ॥ परमठ निठिअठा । सिद्धा-सिद्धि ममदिसंतु ॥ ५ ॥

॥ अथ वेयावच्चगराणं ॥

वेयावच्चगराण संतिगराणं । सम्मद्दिठि समाहिगराणं ॥ करेमि काउस्सग्ग । अन्नथ० यावत् एक थुइ कहके नमु-त्थुणं कहना ।

॥ अथ भगवानादि वंदनं ॥

भगवान् हं, आचार्य हं, उपाध्याय हं, सर्व साधु हं ॥इति॥

॥ अथ देवसिअ पडिक्कमणे ठाउं ॥

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् । देवसिअ पडिकमणे ठाउं ॥ 'इच्छं' सव्वस्सवि देवसिअ दुच्चिंतिअ । दुब्भासिअ दुच्चिठिअ ॥ तस्स मिच्छामि दुक्कडं । बाद करेमिभंते कहके-

॥ इच्छामि ठामि काउस्सग्गं ॥

इच्छामि ठामि काउस्सग्गं । जो मे देवसिओ अइआरो कओ ॥ काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उमग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ । दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छिअव्वो असावग पाउग्गो । नाणे दंसणे चरित्ताचरित्ते । सुए सामाइए तिण्हं गुत्तीणं चउण्हं कसायाणं । पंचण्हमणुव्वयाण । ति-

एहगुणव्वयाणं । चउण्हं सिख्खावयाणं । बारस विहस्स सावग धम्मस्स । जं खंडिअं जं विराहिअं तस्स मिछामि दुकडं ॥ तस्सोत्तरी० अन्नत्थ० काउस्सग्ग करके काउस्सग्गमें ८ गाथाएं चिंतवे सो पाठ ॥

॥ अतिचारकी आठ गाथा ॥

नाणंमि दंसणंमि अ । चरणंमि तवंमि तहय विरियंमि ॥ आयरणं आयारो । इअ एसो पंचहा भणिओ ॥ १ ॥ काले विणए बहुमाणे । उवहाणे तह य निण्हवणे ॥ वंजण अत्थ तदुभए । अठविहो नाण मायारो ॥ २ ॥ निस्संकिअ निकंखिअ । निव्वितिगिच्छा अमूढ दिठीअ ॥ उववूह थिरीकरणे । वच्छल्ल प्पभावणे अठ ॥३॥ पणिहाण जोगजुत्तो । पंचहिं समिईहिं तिहिं गुत्तीहि ॥ एस चरित्तायारो । अठविहो होइ नायव्वो ॥४॥ बारस विहंमिवि तवे । सभिंतर बाहिरे कुसल दिठे ॥ अगिलाइ अणाजीवी । नायव्वो सो तवायारो ॥ ५ ॥ अणसण मूणोअरिया । वित्तीसंखेवणं रसच्चाओ ॥ काय किलेसो संली णया य बज्झो तवो होइ ॥ ६ ॥ पायच्छित्तं विणओ । वेयावच्चं तहेव सज्झाओ ॥ झाणं उस्सग्गोविअ । अभिंतरओ तवो होई ॥ ७ ॥ अणिगूहिअ बल विरिओ । पडिक्कमइ जो जहुत्त माउत्तो ॥ जुजइ अ जहा थामं । नायव्वो वीरिआयारो ॥८॥ काउ० पारके एक लोगस्स कहके तीसरे आवश्यककी मुहपत्ति पडिलेहन करके वन्दन करे सो पाठ—

॥ सुगुरुने वांदणा ॥

इच्छामि खमासमणो। वंदिउ जावणिज्जाए। निसीहिआए। अणुजाणह मे मिउग्गहं निसीहि। अहो काय कायसंफास। खमणिज्जो भे किलामो। अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे। दिवसो वइक्कंतो जत्ता भे जवणि ज्जंच भे खामेमि खमासमणो। देवसिअं वइक्कमं आवसिआए। पडिक्कमामि खमासमणाणं। देवसिआए आसायणाए। तित्तीसन्नयराए जंकिंचि मिच्छाए। मण दुक्कडाए, वय दुक्कडाए काय दुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए, सव्व कालिआए। सव्व मिच्छोवयाराए। सव्व धम्माइक्कमणाए। आसायणाए जो मे अइआरो कओ। तस्स खमासमणो पडिक्कमामि। निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ॥ १ ॥ दुजीवारके वांदणे 'आवसिआए' ए पद नहीं कहेना।

इच्छाकारेण संदिसह भगवन्। देवसिअं आलोउ 'इच्छं' आलोएमि जोमे देवसिओ० ॥

॥ अथ सात लाख ॥

सात लाख पृथिवीकाय। सात लाख अप्पकाय। सात लाख तेउकाय। सात लाख वाउकाय। दशलाख प्रत्येक वनस्पतिकाय। चउद लाख साधारण वनस्पतिकाय। बे लाख बेंद्री, बे लाख तेंद्री, बे लाख चौरिंद्री, चार लाख

देवता, चार लाख नारकी। चार लाख तिर्यंच पंचेंद्री। चौद लाख मनुष्य, एवंकारे। चोराशी लाख जीवायोनि मांहि म्हारे जीवे जे कोइ जीव हण्यो होय, हणाव्यो होय, हणतां प्रत्ये अनुमोद्यो होय। ते सव्वे मने वचने कायाए करी तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

॥ अथ अठारा पापस्थानक ॥

पहेले प्राणातिपात, बीजे मृषावाद, त्रीजे अदत्तादान, चोथे मैथुन, पांचमे परिग्रह, छठे क्रोध, सातमे मान, आठमे माया, नवमे लोभ, दशमे राग, इग्यारमे द्वेष, बारमे कलह, तेरमे अभ्याख्यान, चौदमे पैशुन्य, पन्नरमे रति अरति, सोलमे परपरिवाद, सत्तरमे माया मृषावाद, अढारमे मिथ्यात्वशल्य, ए अढार पापस्थानक मांहि, महारे जीवे जे कोइ पाप सेव्युं होय सेवराव्युं होय सेवतां प्रत्ये, अनुमोद्यु होय ते सव्वे मने वचने कायाए करी तस्स मिछामि दुकडं।

॥ अथ सव्वस्सवि ॥

सव्वस्सवि देवसिअ दुच्चिंतिअ, दुप्भासिअ, दुचिठिअ इछाकारेण संदिसह भगवन् 'इछं' तस्स मिछामि दुकडं ॥

एक नवकार एक करेमिभंते। इच्छामि पडिक्कमिउं। जो मे देवसिओ अइआरो कओ०

॥ अथ श्रावक प्रतिक्रमण सूत्र ॥

[वंदिता सूत्र]

वंदित्तु सव्व सिद्धे । धम्मायारिए अ सव्व साहू अ ॥ इच्छामि पडिकमि ओ । सावग धम्माइआरस्स ॥ १ ॥ जो मे वयाइआरो । नाणे तह दंसणे चरित्ते अ ॥ सुहुमो अ बायरो वा । तं निंदे तं च गरिहामि ॥ २ ॥ दुविहे परिग्गहंमि । सावज्जे बहुविहे अ आरंभे ॥ कारावणे अ करणे । पडिक्कमे देवसिअं सव्वं ॥ ३ ॥ जं बद्ध मिंदिएहि । चउहिं कसाएहिं अप्पसत्थेहिं ॥ रागेणव दोसेणव । तं निंदे तं च गरिहामि ॥ ४ ॥ आगमणे निग्गमणे । ठाणे चंकमणे अणाभोगे ॥ अभिओगे अ निओगे ॥ पडिक्कमे० ॥ ५ ॥ संका कंख विगिच्छा । पसंस तह संथवो कुलिंगीसु ॥ सम्मत्तस्सइआरे । पडिक्कमे० ॥ ६ ॥ छकाय समारंभे । पयणे अ पयावणे अ जे दोसा ॥ अत्तट्ठा य परट्ठा । उभयट्ठा चेव त निंदे ॥७॥ पंचण्ह मणुव्वयाणं । गुणव्वयाणं च तिण्ह मइआरे ॥ सिक्खाणं च चउण्ह ॥ पडिक्कमे० ॥८॥ पढमे अणुव्वयंमि । थूलगपाणाइवाय विरइओ ॥ आयरिअ मप्पसत्थे । इत्थ पमाय प्पसंगेणं ॥ ९ ॥ वह बंध छविच्छेए । अइभारे भत्तपाण वुच्छेए ॥ पढम वयस्सइआरे ॥ पडिक्कमे० ॥ १० ॥ बीए अणुव्वयंमि । परिथूलग अलिअ वयण विरईओ ॥ आयरिय मप्पसत्थे । इत्थ पमाय प्पसंगेण ॥ ११ ॥ सहसा रहस्स दारे । मोसुवएसे अ कूटलेहेअ ॥

बीअवयस्सइआरे ॥ पडिकमे० ॥ १२ ॥ तइए अणुव्वयंमि । थूलग परदव्व हरण विरइओ ॥ आयरिअ मप्पसत्थे । इत्थ पमाय प्पसंगेणं ॥ ॥१३ ॥ तेनाहड प्पओगे । तप्पडिरूवे विरुद्ध गमणे अ ॥ कूडतुल कूडमाणे ॥ पडिकमे० ॥ १४ ॥ चउत्थे अणुव्वयंमि । निच्चं परदार गमण विरईओ ॥ आयरिअ मप्पसत्थे । इत्थ पमाय प्पसंगेणं ॥१५॥ अपरिग्गहिआ इत्तर । अणंग वीवाह तिव्व अणुरागे । चउत्थवयस्सइआरे ॥ पडिकमे० ॥ १६ ॥ इत्तो अणुव्वए पंचमंमि आयरिअ मप्पसत्थंमि । परिमाण परिच्छेए । इत्थ पमाय प्पसंगेण ॥ १७ ॥ धण धन्न खित्त वत्थू । रुप्प सुवन्ने अ कुविअ परिमाणे । दुपए चउप्पयंमि ॥ पडिकमे० ॥१८॥ गमणस्सओ परिमाणे । दिसासु उड्ढं अहे अ तिरिअं च ॥ वुड्ढि सइ अंतरद्धा । पढमंमि गुणव्वए निंदे ॥ १९ ॥ मज्जंमि अ मंसंमि अ । पुप्फे अ फले अ गंधमल्ले अ ॥ उवभोगे परिभोगे । बीअमि गुणव्वए निंदे ॥ २० ॥ सचित्ते पडिबद्धे । अपोल दुप्पोलिअं च आहारे । तुच्छोसहि भरकणया ॥पडिकमे०॥२१॥ इंगाली वण साडी । भाडी फोडी सुवज्जए कम्मं ॥ वाणिज्जं चेव य दंत, लरक रस केस विस विसयं ॥ २२ ॥ एवं खु जंतपिल्लण कम्मं । निल्लंछणं च दवदाणं ॥ सर दह तलाय सोसं । असई पोसं च वज्जिज्जा ॥ २३ ॥ सत्थग्गि मुसल जंतग । तण कठे मंत मूल भेसज्जे । दिन्ने दवाविएवा ॥ पडिकमे० ॥२४॥ न्हाणुवट्टण वन्नग । विलेवणे सद्द रूव रस गंधे । वत्थासण

'आभरणे ॥ पडिक्कम० ॥२५॥ कंदप्पे कुक्कुइए। मोहरि अहिग-
रण भोग अइरित्ते ॥ दंडंमि अणट्ठाए। तइअमि गुणव्वए
निंदे ॥ २६ ॥ तिविहे दुप्पणिहाणे। अणवट्ठाणे तहा सइ
विहूणे ॥ सामाइअ वितह कए। पढमे सिरकावए निंदे ॥२७।
आणवणे पेसवणे, सद्दे रूवे अ पुग्गलक्खेवे॥ देसावगासिअंमि।
बीए सिरकावए निंदे ॥ २८ ॥ संथारुचार विही। पमाय तह
चेव भोअणाभोए ॥ पोसह विहि विवरीए। तइए सिरकावए
निंदे ॥ २९ ॥ सचित्ते निक्खिवणे। पिहिणे ववएस मच्छरे
चेव ॥ कालाइक्कम दाणे। चउत्थे सिरकावए निंदे ॥ ३० ॥
सुहिएसु अ दुहिएसु अ। जा मे असंजएसु अणुकंपा ॥ रागे-
णव दोसेणव। त निंदे त च गरिहामि ॥ ३१ ॥ साहूसु
संविभागो। न कओ तव चरण करण जुत्तेसु ॥ संते फासुअ
दाणे। तं निंदे त च गरिहामि ॥ ३२ ॥ इहलोए परलोए।
जीविअ मरणे अ आसंस पओगे ॥ पंचविहो अइआरो। मा
मज्झ हुज्ज मरणंते ॥ ३३ ॥ काएण काइअस्स। पडिक्कमे वाइ-
अस्स वायाए॥ मणसा माणसिअस्स। सव्वस्स वयाइआरस्स
॥ वंदण वय सिरका गारवेसु। सन्ना कसाय दंडेसु ॥ गुत्तीसु
अ समिईसु अ। जो अइआरो अ त निंदे ॥३५॥ सम्मद्दिठी
जीवो। जइवि हु पावं समायरे किंचि ॥ अप्पोसि होइ बंधो॥
जेण न निद्धंधस कुणइ॥ ३६ ॥ तंपि हु सपडिक्कमणं। सप्प-
रिआवं सउत्तरगुणं च ॥ खिप्पं उवसामेई। वाहिव्व सुसि-

खिओ विज्जो ॥ ३७ ॥ जहा विसं कुठगय । मंत मूल विसा-
रया । विज्जा हणंति मंतेहि । तो तं हवइ निव्विसं ॥ ३८ ॥
एवं अठ्ठविहं कम्मं । राग दोस समज्जिअं ॥ आलोअंतो अ
निदंतो । खिप्प हणइ सुसावओ ॥ ३९ ॥ कयपावोवि मणुस्सो ।
आलोइय निंदिअ गुरु सगासे ॥ होइ अइरेग लहुओ । ओह-
रिअ भरुव्व भारवहो ॥ ४० ॥ आवस्सएण एएण । सावओ
जइवि बहुरओ होइ ॥ दुक्खाणमंतकिरिअं । काही अचिरेण
कालेण ॥ ४१ ॥ आलोअणा बहुविहा । नय संभरिआ पडि-
कमणकाले ॥ मूलगुण उत्तरगुणे । तं निंदे तं च गरिहामि
॥४२॥ तस्स धम्मस्स केवलि पन्नत्तस्स । अब्भुठ्ठिओमि आरा-
हणाए । विरओमि विराहणाए ॥ तिविहेण पडिकंतो वंदामि
जिणे चउव्वीसं ॥ ४३ ॥ जावंति चेइआइं उड्ढे अ अहे अ
तिरिअलोए अ ॥ सव्वाइं ताइं वंदे । इह संतो तत्थ संताइं
॥ ४४ ॥ जावत केवि साहू । भरहेरवय महाविदेहे अ ॥
सव्वेसिं तेसिं पणओ । तिविहेण तिदंड विरयाणं ॥ ४५ ॥
चिर संचिय पाव पणासणीइ । भव सय सहस्स महणीए ॥
चउवीस जिण विणिग्गय कहाइं । वोलंतु मे दिअहा ॥ ४६ ॥
मम मंगल मरिहंता । सिद्धा साहू सुअं च धम्मो अ ॥ सम्म-
दिट्ठी देवा । दिंतु समाहिं च बोहिं च ॥ ४७ ॥ पडिसिद्धाणं
करणे । किच्चाण मकरणे पडिकमण ॥ असद्दहणे अ तहा ।
विवरीय परूवणाए अ ॥ ४८ ॥ खामेमि सव्व जीवे, सव्वे

जीवा खमंतु मे। मित्तीमे सव्व भूएसु, वेर मज्झ न केणइ ॥४९॥ एव महं आलोइअ। निंदिअ गरहिअ दुगंछिअ सम्मं॥ तिविहेण पडिकंतो । वंदामिजिणे चउव्वीसं ॥ ५० ॥ दोय वन्दना देना। अब्भुट्ठिओ खमायके। दो वन्दना।

॥ अथ आयरिअ उवझाए ॥

आयरिअ उवझाए। सीसे साहम्मिए कुल गणेअ॥ जे मे केइ कसाया। सव्वे तिविहेण खामेमि ॥ १ ॥ सव्वस्स समण संघस्स। भगवओ अंजलि करिअ सीसे॥ सव्वं खमावइत्ता। खमामि सव्वस्स अहयंपि ॥ २ ॥ सव्वस्स जीव रासिस्स। भावओ धम्म निहिअ निअचित्तो॥ सव्वं खमावइत्ता खमामि सव्वस्स अहयंपि ॥३॥ बादमें करेमिभंते० इच्छामिठामि० तस्सोत्तरी० अन्नत्थ० दो लोगस्सका काउस्सग्ग० एक लोगस्स प्रगट, सव्वलोए अरिहंत चेइआण यावत् एक लोगस्सका काउस्सग्ग०। पुक्खर० यावत् एक लोगस्सका काउ०। सिद्धाण बुद्धाणं के बादमें—श्रुतदेवताका एक नवकारका काउस्सग्ग करके स्तुति—

वाग्देवी वरदेवी भूता, पुस्तीका पद्म लिख्यतु।
आपो व्या वि व्रजेस्तु, पुस्तीका पद्म लिख्यतु॥

बादमें वैरोट्यादेवीका एक नवकारका काउ० स्तुति।
सामानगास्ति पुत्राभो, वैरोट्यारभयेवतु।
शान्तो रात्रिर्जाति य ग्रह। वैरोट्यारभयेवतु ॥ १ ॥

बादमे क्षेत्रदेवताका काउ० और स्तुति ।

यस्याः क्षेत्रं समाश्रीत्य । साधुभिः साध्यते क्रियाः ॥
सा क्षेत्र देवता नित्य । भूयान्नः सुखदायिनी ॥ १ ॥

एक नवकार कहके छट्ठा आवश्यककी मुहपत्ती प्रतिलेखनकर दोय वन्दना देके पच्चखान करो । बादमे—

इच्छामो अणुसठिं नमोखमासमणाणं । नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः ।

नमोऽस्तु वर्द्धमानाय । स्पर्द्धमानाय कर्मणा ॥ तज्जयावाप्त मोक्षाय । परोक्षाय कुतीर्थिनां ॥ १ ॥ येषां विकचारविंदराज्या । ज्यायः क्रम कमलावलिं दधत्या ॥ सदृशै रिति सगतं प्रशस्यं । कथितं संतु शिवाय ते जिनेंद्राः ॥ २ ॥ कषाय तापार्दित जंतुनिर्वृतिं । करोति यो जैनमुखांबुदोद्गतः ॥ स शुक्रमासोद्भव वृष्टि सन्निभो । दधातु तुष्टिं मयि विस्तरो गिरां ॥३॥

नमुत्थुणं कहके स्तवन कहेना तथा उपसर्गहर कहना ।

॥ अथ उपसर्गहर स्तवन ॥

उवसग्ग हर पासं । पासं वदामि कम्मघण मुक्कं ॥ विसहर विस निन्नासं । मंगल कल्लाण आवासं ॥ १ ॥ विसहर फुलिंग मंतं । कंठे धारेइ जो सया मणुओ ॥ तस्स गह रोग-मारी । दुठ जरा जंति उवसामं ॥ २ ॥ चिठउ दूरे मंतो । तुज्ज पणामो वि वहु फलो होइ ॥ नर तिरिएसु वि जीवा ।

पावंति न दुक्ख दोगच्च ॥ ३ ॥ तुह सम्मत्ते लद्धे । चिंतामणि कप्पपायवब्भहिए ॥ पावंति अविग्घेण । जीवा अयरामरं ठाण ॥ ४ ॥ इअ संथुओ महायस। भत्तिब्भर निब्भरेण हिअएण ॥ ता देव दिज्ज बोहिं । भवे भवे पास जिणचद ॥

॥ अथ श्री वरकनक ॥

वर कनक शंख विद्रुम। मरकत घन सन्निभं विगत मोहं। सप्तति शत जिनानां। सर्वामर पूजितं वन्दे ॥ १ ॥

भगवानादि च्यारको नमस्कार करके।

॥ अथ अड्ढाइज्जेसु=मुनिवंदन ॥

अड्ढाइज्जेसु दीव समुद्देसु। पन्नरससु कम्म भूमिसु ॥ जावंत केवि साहू। रयहरण गुच्छ पडिग्गह धारा ॥ पंच महव्वयधारा। अठारस सहस्स सीलंग धारा ॥ १ ॥ अखु-यायार चरित्ता। ते सव्वे सिरसा मणसा। मत्थएण वंदामि ॥ २ ॥ बादमें देवसि पायच्छित विशुद्धार्थे च्यार लोगस्सका काउस्सग्ग करके एक लोगस्स प्रगट कहेना बादमें—

श्रीमदुपकेश गच्छ श्रृंगारहार भट्टारक दादाजी श्रीरत्न-प्रभसूरिजी महाराज चारित्र चुडामणि आराधना निमित्त काउ-स्सग्ग करु? 'इच्छं' करेमि काउस्सग्गं० च्यार लोगस्सका काउ० एक लोगस्स प्रगट कहके सज्झायका आदेश लेके सज्झाय क हेना सज्झाय इसी पुस्तकमें लिखी है देखो पृष्ट ४१४। बादमें—

दुक्खखओ कम्मखओ निमित्त च्यार लोगस्सका काउ-

स्सग्ग करणा, बादमें एक श्रावक शान्त कहे और सब लोग काउस्सग्गमें सुने—

॥ अथ लघुशांति स्तव ॥

शांतिं शांति निशांतं । शांतं शांताशिवं नमस्कृत्य ॥ स्तोतुः शांति निमित्तं । मंत्रपदैः शांतये स्तौमि ॥ १ ॥ ओमिति निश्चित वचसे । नमो नमो भगवतेऽर्हते पूजां ॥ शांति जिनाय जयवते । यशस्विने स्वामिने दमिना ॥२॥ सकलातिशेषक महा । संपत्ति समन्विताय शस्याय ॥ त्रैलोक्य पूजिताय च । नमो नमः शांति देवाय ॥३॥ सर्वामर सुसमूह । स्वामिक संपूजिताय निजिताय ॥ भुवन जन पालनोद्यत । तमाय सतत नमस्तस्मै ॥४॥ सर्व दुरितौघ नाशन । कराय सर्वाशिव प्रशमनाय ॥ दुष्ट ग्रह भूत पिशाच । शाकिनीनां प्रमथनाय ॥५॥ यस्येति नाम मंत्र । प्रधान वाक्योपयोग कृततोषा ॥ विजया कुरुते जनहित । मिति च नुता नमत तं शांति ॥६॥ भवतु नमस्ते भगवति । विजये सुजये परापरैरजिते ॥ अपराजिते जगत्यां । जयतीति जयावहे भवति ॥ ७ ॥ सर्वस्यापि च संघस्य । भद्र कल्याण मंगल प्रददे ॥ साधूनां च सदा शिवसु तुष्टि पुष्टि प्रदे जीयाः ॥ ८ ॥ भव्यानां कृत सिद्धे । निर्वृत्ति निर्वाण जननि सत्वानां ॥ अभयप्रदान निरते । नमोस्तु स्वस्तिप्रदे तुभ्यं ॥ ९ ॥ भक्तानां जंतूनां । शुभावहे नित्यमुद्यते देवि ॥ सम्यग्दृष्टीनां धृति । रति मति बुद्धि प्रदानाय ॥ १० ॥ जिनशासन निर-

तानां । शांतिनतानां च जगति जनतानां ॥ श्रीसंपत्कीर्त्ति यशो । वर्द्धनि जयदेवि विजयस्व ॥ ११ ॥ सलिलानल विष विषधर । दुष्टग्रह राज रोग रणभयतः ॥ राचस रिपुगण मारी । चौरेति श्वापदादिभ्यः ॥ १२ ॥ अथ रक्ष रक्ष सुशिवं । कुरु कुरु शांतिं च कुरु कुरु सदेति ॥ तुष्टिं कुरु कुरु पुष्टिं । कुरु कुरु स्वस्तिं च कुरु कुरु त्वं ॥ १३ ॥ भगवति गुणवति शिव-शांति । तुष्टि पुष्टि स्वस्तीह कुरुकुरु जनाना ॥ ओमिति नमो नमो ह्रॉ ह्रीं ह्रूँ ह्रः । य क्षः ह्रीं फुट फुट स्वाहा ॥ १४ ॥ एवं यन्नामाक्षर । पुरस्सरं संस्तुता जयादेवी ॥ कुरुते शांतिं नमतां । नमो नमः शांतये तस्मै ॥१५॥ इति पूर्वसूरि दर्शित । मंत्रपद विदर्भितः स्तवः शांतेः ॥ सलिलादि भय विनाशी । शांत्यादिकरश्च भक्तिमतां ॥ १६ ॥ यश्चैनं पठति सदा । श्रृणोति भावयति वा यथायोग्यं ॥ सहि शांतिपद यायात् । सूरिः श्रीमानदेवश्च ॥ १७ ॥ उपसर्ग्गाः क्षयं यांति । छिद्यंते विघ्नवल्लयः ॥ मनः प्रसन्नतामेति । पूज्यमाने जिनेश्वरे ॥१८॥ सर्व मंगल मांगल्यं । सर्व कल्याण कारणं ॥ प्रधानं सर्व-धर्माणां । जैनं जय तिशासन ॥ १९ ॥ एक लोगस्स प्रगट कहेके इरियावहि करना बादमें —

॥ अथ चउक्कसाय ॥

चउकसाय पडिमल्लुल्लूरणु । दुज्जय मयण बाण मुसु-मूरणु ॥ सरस पिअगु वन्नु गयगामिओ । जयउ पासु भुवण-

त्तय सामिश्रो ॥१॥ जसु तणु कंति कडप्पसिणिद्धश्रो । सोहइ फणि मणि किरणालिद्धश्रो ॥ निन्नव जलहर तडिल्लय लंछिश्रो । सो जिणु पासु पयच्छउ वंछिश्रो ॥ बादमें नमुत्थुणं से जयवीयराय तक चैत्यवन्दन कर सामायिक पारे । इति ॥

॥ राइप्रतिक्रमण ॥

प्रथम विधिपूर्वक सामायिक करके आदेशपूर्वक "कुसुमिणो दुसुमिणो श्रोडावणी राई पायच्छित विसोहउणत्थं काउस्सग्ग करुं? "इच्छं" कुसुमिण० च्यार लोगस्सका काउ० एक लोगस्स प्रगट कहेना बादमें आदेशपूर्वक चैत्यवन्दन करना सो—

॥ जगचिंतामणि चैत्यवंदन ॥

जग चिंतामणि जग नाह । जग गुरु जग रक्खण ॥ जग बंधव जग सत्थवाह । जग भाव विश्रक्खण ॥ अठावय सठविश्र रुव । कम्मठ विणासण ॥ चउवीसंपि जिणवर जयंतु । अप्पडिहय सासण ॥ १ ॥ कम्मभूमिहिं कम्मभूमिहिं । पढम संघयणि ॥ उक्कोसय सत्तरिसय ॥ जिणवराण विहरंत लब्भइ ॥ नवकोडिहिं केवलिण ॥ कोडि सहस्स नव साहु गम्मइ ॥ संपइ जिणवर वीसमुणि ॥ बिहुं कोडिहिं वरनाण ॥ समणह कोडि सहस दुश्र ॥ थुणिज्जश्र निच्च विहाणि ॥ २ ॥ जयउ सामी जयउ सामी ॥ रिसह सत्तुंजि उज्जिंत पहु नेमि-

जिण, जयउ वीर सचउरि मंडण ॥ भरुअच्छहि मुणिसुव्वय । मुहरि पास दुह दुरिअ खंडण ॥ अवर विदेहिं तित्थयरा । चिहुं दिसि विदिसि जिं केवि ॥ तीआणागय संपइअ । वंदु जिण सव्वेवि ॥ ३ ॥ सत्ताणवइ सहस्सा । लक्खा छप्पन्न अट्ठकोडीओ ॥ बत्तीस बासिआइं । तिअलोए चेइए वंदे ॥४॥ पनरस्स कोडि सयाइं । कोडि बायाल लक्ख अडवन्ना ॥ छत्तीस सहस असिआइं । सासयबिंबाइ पणमामि ॥ ५ ॥

जं किंचि नाम तित्थं । सग्गे पायालि माणुसे लोए ॥ जाइं जिणबिंबाइं । ताइ सव्वाइं वंदामि ॥ १ ॥ यावत् जयवीयराय तक कहेना । बादमें भगवानादिको च्यारों नमस्कार कर आदेशपूर्वक सभाय करना सो—

भरहेसर बाहुबली । अभयकुमारो अ ढंढण कुमारो ॥ सिरिओ अणिआउत्तो । अइमुत्तो नागदत्तो अ ॥ १ ॥ मेअज्ज थूलिभद्दो । वयररिसि नंदिसेण सीहगिरी ॥ कयवन्नो अ सुकोसल । पुंडरिओ केसि करकंडु ॥२॥ हल्ल विहल्ल सुदसण । साल महासाल सालिभद्दो अ ॥ भद्दो दसन्नभद्दो । पसन्नचंदोअ जसभद्दो ॥३॥ जंबुपहु वंकचूलो । गयसुकुमालो अवंति सुकुमालो ॥ धन्नो इलाइपुत्तो । चिलाइपुत्तो अ बाहुमुणी ॥४॥ अज्जगिरि अज्जरक्खिअ । अज्जसुहत्थी उदायगो मणगो ॥ कालय सूरी संबो । पज्जुन्नो मूलदेवो अ ॥५॥ पभवो विण्हुकुमारो । अद्दकुमारो दढप्पहारी अ ॥ सिज्जस कूरगडु अ । सिज्जंभव मेहकुमारो अ ॥ ६ ॥ एमाइ महासत्ता । दिंतु सुह गुणगणेहिं

संजुत्ता ॥ जेसिं नामग्गहणे । पावपबंधा विलय जंति ॥ ७ ॥ सुलसा चंदनबाला । मणोरमा मयणरेहा दमयंती ॥ नमया सुंदरी सीया । नंदा भद्दा सुभद्दा य ॥८॥ रायिमई रिसिदत्ता। पउमावइ अंजणा सिरीदेवी ॥ जिठ सुजिठ मिगावई । पभावई चिल्लणादेवी ॥ ९ ॥ बंभी सुंदरी रुप्पिणि । रेवइ कुंती सिवा जयंती य ॥ देवइ दोवइ धारिणि । कलावई पुप्फचूला य ॥१०॥ पउमावई य गोरी । गंधारी लक्खमणा सुसीमा य ॥ जंबुवई सच्चभामा । रुप्पिणि कन्हठ महिसीओ ॥ ११ ॥ जक्खाय जक्खदिन्ना। भूआ तह चेव भूअदिन्ना य ॥ सेणा वेणा रेणा। भयणीओ थूलिभद्दस्स ॥ १२ ॥ इच्चाइ महासइओ । जयंति अकलंक सील कलिआओ ॥ अजवि वजइ जासिं। जस पडहो तिहुअणे सयले ॥ १३ ॥ इति ॥

बादमें खमासमण देके सुहराइका पाठ कहके आदेशपूर्वक राईप्रतिक्रमण ठाउं पाठ कहे । बादमें नमुत्थुणं कहके करेमिभंते० इच्छामिठामि० तस्सोत्तरी० अन्नत्थ० एक लोगस्सका काउस्सग्ग० प्रगट एक लोगस्स० सव्वलोए अरिहंत चेइआणं यावत् एक लोगस्सका काउस्सग्ग० पुक्खरवर० आठ गाथाका काउस्सग्ग (दोय लोगस्स) बादमें सिद्धाणं बुद्धाण कहके तीजा आवश्यककी मुहपत्तिका प्रतिलेखन कर देवसिप्रतिक्रमणकी माफीक आयरिय उवज्झाय तक कहेना । करेमिभंते० इच्छामिठामि० तस्सोत्तरी० अन्नत्थ तपचिंतवनार्थे काउस्सग्ग करना (च्यार लोगस्स) एक

लोगस्स प्रगट कहे। छठा आवश्यककी मुहपत्ति प्रतिलेखन करना, दोय चन्दना देना। बादमें सकलतीर्थ स्तव कहेना सो–

सकल तीर्थ वंदु करजोड। जिनवर नामे मंगल कोड ॥ पहिले स्वर्गे लाख बत्रीस। जिनवर चैत्य नमुं निशदिश ॥१॥ बीजे लाख अठावीस कह्यां। त्रीजे बार लाख सद्द्यां॥ चोथे स्वर्गे अडलख धार। पांचमे वंदु लाखज चार ॥ २ ॥ छठे स्वर्गे सहस पचास। सातमे चालिश सहस प्रासाद ॥ आठमे स्वर्गे छ हजार। नव दशमें वंदु शत चार ॥ ३ ॥ अग्यार बारमें त्रणशें सार। नवग्रैवेके त्रणशें अढार॥ पांच अनुत्तर सर्वे मळी। लाख चोराशी अधिका वळी ॥ ४ ॥ सहस सत्ताणुं त्रेविश सार। जिनवर भुवन तणो अधिकार॥ लांबा सो जोजन विस्तार। पचास उंचा बहुंतेर धार ॥ ५ ॥ एकसो एंशी बिंब प्रमाण। सभा सहित एक चैत्ये जाण॥ सो कोड बावन कोड सभाल। लाख चोराणुं सहस चौंआल ॥ ६ ॥ सातशें उपर साठ विशाल। सवि बिंब प्रणमुं त्रण्य काल॥ सात कोडने बहुंतेर लाख। भुवनपतिमां देवल भाख ॥ ७ ॥ एकसो एंशी बिंब प्रमाण। एक एक चैत्ये संख्या जाण॥ तेरशें कोड नेव्याशी कोड। साठ लाख वंदुं करजोड ॥ ८ ॥ बत्रीशेंने ओगणसाठ। तीर्च्छा लोकमां चैत्यनो पाठ॥ त्रण्य लाख एकाणुं हजार। त्रणशे वीश ते बिंब जुहार ॥ ९ ॥ व्यंतर ज्योतिषिमां वळी जेह। शाश्वता जिन वंदुं तेह॥ रिखभ चंद्रानन वारिषेण। वर्द्धमान नामे

गुणसेण ॥ १० ॥ समेतशिखर वंदुं जिन वीश । अष्टपद वंदुं चोवीश ॥ विमलाचल ने गढ गिरनार । आबु उपर जिनवर जुहार ॥ ११ ॥ शंखेश्वर केसरियो सार । तारंगे श्री अजित जुहार ॥ अंतरीक वरकाणो पास । जिरावलो ने थंभण पास ॥ १२ ॥ गाम नगर पुर पाटण जेह । जिनवर चैत्य नमुं गुणगेह ॥ विहरमान वंदुं जिन वीश । सिद्ध अनंत नमुं निशदिश ॥ १३ ॥ अढिद्विपमां जे अणगार । अढार सहस सिलांगना धार । पंचमहाव्रत समिति सार ॥ पाले पलावे पंचाचार ॥ १४ ॥ बाह्य अभ्यिंतर तप उजमाल । ते मुनि वंदुं गुणमणिमाल ॥ नित नित उठी कीरति करूं । जीव कहे भवसायर तरूं ॥ १५ ॥ इति ॥

बादमें यथाशक्ति पच्चखान करना । बादमें सामायिक चोवीसथ्थो वन्दणा पडिकमण काउस्सग्ग पच्चक्खाण इच्छामि अणुसठिं नमो तेसिं खमासमणाणं । नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः । बादमें विशाललोचन कहेना—

विशाललोचन दलं । प्रोद्यद्दंतांशु केशरं ॥ प्रातर्वीर जिनेंद्रस्य । मुखपद्म पुनातु वः ॥ १ ॥ येषामभिषेक कर्म कृत्वा । मत्ता हर्षभरात् सुख सुरेंद्राः ॥ तृणमपि गणयंति नैव नाकं । प्रातःसंतु शिवाय ते जिनेंद्राः ॥ २ ॥ कलंक निर्मुक्त मभुक्त पूर्णतं । कुतर्क राहु ग्रसनं सदोदयम् ॥ अपूर्व चन्द्र जिनचन्द्र भापितं । दिनागमे नौमि वुधैर्नमस्कृतम् ॥ ३ ॥

बादमें नमुत्थुणं कहके च्यार थुईसे देववन्दन करना । कल्लाणकन्दकी च्यार थुई—

कल्लाण कंदं पढमं जिणंदं । संतिं तओ नेमिजिण मुणिंदं ॥ पासं पयास सुगुणिक ठाणं । भत्तीइ वंदे सिरि वद्धमाणं ॥ १ ॥ अपार संसार समुद्द पारं । पत्ता सिव दितु सुइक सारं ॥ सव्वे जिणंदा सुरविंद वंदा । कल्लाण वल्लीण विसाल कंदा ॥ २ ॥ निव्वाण मग्गे वर जाण कप्पं । पणासियासेस कुवाइ दप्पं ॥ मय जिणाणं सरणं बुहाणं । नमामि निच्चं तिजगप्पहाणं ॥ ३ ॥ कुंदिंदुगोक्खीरतुसारवन्ना । सरोज हत्था कमले निसन्ना ॥ वाएसिरी पुत्थय वग्गहत्था । सुहाय सा अम्ह सया पसत्था ॥ ४ ॥

बादमें नमुत्थुणं कहके अड्ढाइज्जेसु कहेना ।

॥ अथ सीमंधर जिन चैत्यवंदन ॥

श्री सीमंधर वीतराग। त्रीभुवन उपगारी ॥ श्री श्रेयास पिता कुले । बहु शोभा तुमारी ॥ १ ॥ धन्य धन्य माता सत्यकी । जेणे जायो जयकारी ॥ वृषभ लछन विराजमान । वंदे नरनारी ॥ २ ॥ धनुष पांचशे देहडीए । सोहीए सोवन वान ॥ कीर्त्तिविजय उवझायनो । विनय धरे तुम ध्यान ॥३॥

॥ अथ सीमंधर जिन स्तवन ॥

पुक्खलवइ विजये जयो रे। नयरी पुंडरिगिणि सार ॥ श्री सीमंधर साहिबा रे । राय श्रेयांस कुमार ॥ जिणंदराय । धरजो धर्म सनेह ॥ ए आंकणी ॥ १ ॥ मोटा नाहाना अंतरो रे । गिरुआ नवि दाखंत ॥ शशि दरिसण सायर

वधे रे । कैरववन विकसंत ॥ जि० ॥ २ ॥ ठाम कुठाम न लेखवे रे । जग वरसंत जलधार ॥ करदोय कुसुमे वासिये रे। छाया सवि आधार ॥ जि० ॥ ३ ॥ रायने रंक सरिखा गणे रे । उद्योते शशि सूर ॥ गंगाजल ते त्रिहुंतणा रे । ताप करे सवि दूर ॥ जि० ॥ ४ ॥ सरिखा सहुने तारवा रे । तिम तुमे छो महाराज ॥ मुजशुं अंतर किम करो रे। बांह ग्रह्यानी लाज ॥ जि० ॥ ५ ॥ मुह देखी टीलुं करे रे । ते नवि होय प्रमाण ॥ मुजरो माने सवितणो रे । साहिब तेह सुजाण ॥ जि० ॥ ६ ॥ वृषभ लछन माता सत्यकी रे। नंदन रुकमिणी कंत ॥ वाचक जस इम विनवे रे । भयभंजन भगवंत ॥जि०॥७॥ श्री सीमंधरस्वामी आराधवा काउस्सग्ग एक नवकारका करना ॥

॥ अथ सीमंधर जिन स्तुति ॥

श्रीसीमंधर जिनवर । सुखकर साहिब देव ॥ अरिहंत सकलनी । भाव धरी करुं सेव ॥ सकलागम पारग । गणधर भाखित वाणी ॥ जयवंती आणा । ज्ञानविमल गुणखाणी ॥

॥ अथ सिद्धाचलनुं चैत्यवन्दन ॥

श्रीशत्रुंजय सिद्धखेत्र । दीठे दुर्गति वारे ॥ भाव धरीने जे चढे । तेने भवपार उतारे ॥ १ ॥ अनंतसिद्धनो एह ठाम। सकल तीर्थनो राय ॥ पुरव नवाणु रिखभ देव । ज्यां ठविया प्रभु पाय ॥२॥ सूरज कुंड सोहामणो । कवडजक्ष अभिराम ॥ नाभिराया कुलमंडणो जिनवर करुं प्रणाम ॥ ३ ॥

॥ अथ श्री सिद्धाचल स्तवन ॥

मारुं मन मोह्युंरे श्री सिद्धाचलेरे। देखी हरषित होय ॥ विधि शुं किजेरे यात्रा एहनीरे। भवभवना दुःख जाय ॥ मा० ॥ १ ॥ पंचमे आरेरे पावन कारणेरे। ए समुं तीर्थ न कोय ॥ मोटो महिमारे महीयल एहनोरे। आ भरते इहां जोय ॥ मा० ॥ २ ॥ इणे गिरि आव्यारे जिनवर गणधरारे। सिद्धा साधु अनत ॥ कठिण कर्म पण इण गिरि फरसतां रे। होय कर्म निशान्त ।।मा०॥३॥ जैन धर्म ते साचो जाणीयेरे। मानव तीर्थ एह थभ॥ सुरनर किन्नर नृप विद्याधरारे। करता नाटारंभ ॥ मा० ॥ ४ ॥ धन्य धन्य दहाडो धन्य धन्य ए घडीरे। धरी हृदय मझार ॥ ज्ञानविमल प्रभु एहना गुण-गणारे। कहेतां न आवे पार ॥ मा० ॥ ५ ॥ इति ॥ सिद्धा-चल आराधवा काउस्सग्ग एक नवकारका करना ॥

॥ स्तुति ॥

पुंडरगिरि महिमा। आगममां प्रसिद्ध ॥ विमलाचल भेटी। लहीये अविचल रिद्ध ॥ पंचमी गति पहोता। मुनिवर कोडाकोड। एणे तीरथ आवी। कर्म विपातिक छोड ॥

पूर्वविधि मार्फोक सामायिक पारे और हमेशोंके लिये भावना भावे ॥ शम् ॥

॥ अथ प्रभातनां पच्चखाण ॥

॥ नमुक्कारसहि मुठिसहि नु ॥

" उग्गए सूरे, नमुक्कार सहियं, मुठि सहिय, पचक्खाइ,

चउविहंपि आहारं, असणं, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणा भोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरे" इति ॥

॥ पोरिसिसाढपोरिसिनुं ॥

" उग्गए सूरे, नमुकार सहिअं, पोरिसिं, साढपोरिसिं, मुठिसहियं पच्चक्खाइ, उग्गए सूरे, चउव्विहंपि आहारं, असण, पाणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेण, पच्छन्नकालेण, दिसामोहेणं, साहुवयणेण, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं वोसिरे" इति ॥

॥ अथ सांझना पच्चखाण ॥

॥ चउविहारनुं ॥

" दिवस चरिमं पच्चक्खाइ, चउविहंपि आहारं, असणं, पाणं, खाइम, साइमं, अन्नत्थणाभोगेण, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं, वोसिरे" इति ॥

॥ अथ तिविहारनु ॥

" दिवस चरिम पच्चक्खाइ, तिविहंपि आहारं, असणं, खाइमं, साइमं, अन्नत्थणाभोगेण, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेणं, वोसिरे" इति ॥

॥ अथ दुविहारनु ॥

" दिवस चरिम पच्चक्खाइ, दुविहंपि आहारं, असणं, खाइमं, अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व समाहिवत्तियागारेण, वोसिरे" इति ॥

—※◎※—

अथश्री

देवगुरुवन्दनमाला

और

चैत्यवन्दन स्तवनादि.



नमो अरिहताणं, नमो सिद्धाण, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोएसव्वसाहुणं, एसो पंचनमुकारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणंच सव्वेसिं, पढमंहोइ मंगलम् ॥

चौवीस तीर्थंकरोंका स्मरण.

१ श्री ऋषभदेवजी	७ श्री सुपार्श्वनाथजी
२ श्री अजितनाथजी	८ श्री चन्दाप्रभुजी
३ श्री सभवनाथजी	९ श्री सुवधीनाथजी
४ श्री अभिनन्दनजी	१० श्री शीतलनाथजी
५ श्री सुमतिनाथजी	११ श्री यसनाथजी
६ श्री पद्मप्रभुजी	१२ श्री वासपूजजी

१३ श्री विमलनाथजी
१४ श्री अन्तनाथजी
१५ श्री धर्मनाथजी
१६ श्री शान्तिनाथजी
१७ श्री कुंथुनाथजी
१८ श्री अरेनाथजी
१९ श्री मल्लिनाथजी
२० श्री मुनिसुव्रतजी
२१ श्री नामिनाथजी
२२ श्री नेमिनाथजी
२३ श्री पार्श्वनाथजी
२४ श्री महावीरजी

सामायिक लेनेकि विधि.

सामायिक करने वाले श्रावक वर्ग कों प्रथम च्यार प्रका शुद्धि होना चहिये (१) द्रव्यशुद्धि-शरीर या सामायिक उपगरणशुद्ध (२) चेत्र=मकांन धर्मशालादि शुद्ध (३ काल=लेनदेन राज न्यातादिके कार्यसे या शरीरचिंता आदि निवृति होना (४) भाव=अन्तःकरणकि शुद्धि ।

गुरुमहाराज होतो सब क्रिया गुरुमहाराजके आदेश करना, अगर गुरुमहाराज न होतो उचे आसनपर पुस्तका कि स्थापना कर उन्ही स्थापनामे गुण आरोपनकि दो गाथा केहनी ।

पचिंदिय संवरणो, तह नवविह बंभचेरगुत्तिधरो ।
चउविह कसायमुक्को, इह अट्ठारस्स गुणेहिं संजुत्तो ॥ १ ॥
पंच महव्वय जुत्तो, पंचविहायार पालण समत्थो ।
पच समिओ तुगुत्तो, छत्तीश गुणो गुरु मभ ॥ २ ॥

जीतना गुरुमहाराजकों बहू मान दीयाजाता है इतनाही स्थापनाजीकों देना चाहिये स्थापनाजीके आगे वन्दन करना.

इच्छामिखमासमणो वंदिउ जावणिज्जाए निसीहियाए मत्थएण वंदामि ॥ यह पाठ तीनदफे उठ बेठके कहेना.

इच्छकार भगवन् सुहराइ सुहदेवसि सुखतपशरीर निराबाध सुख संजम जात्रा निर्वहोछोजी स्वामिसुखसाता है भातपाणीका लाभ देनाजी ॥ एक खमासमण देके अब्भुठिओका पाठ केहना.

इच्छाकारेण संदिसह भगवान् अब्भुठिओमि अभिंतर देवसियं खामेओ "इच्छं खामेमिदेवसिय" जं किंचि अपत्तियं परपत्तियं भत्ते पाणे विणए वेयावच्चे आलावे संलावे उच्चासणे समासणे अंतर भासाए उवरिमासाए जं किंचि मज्झ विणय परिहीणं सुहुमं वा बायरं वा तुब्भे जाणह अहं न याणामि तस्समिच्छामिदुक्कडं॥ एक खमासमणा और देके वन्दन करना।

सामायिक लेने वालोंकों पेहला इरियावहिय करना.

इच्छाकारेण सदिसह भगवन् इरियावहियं पडिक्कमामि "इच्छं इच्छामि पडिकमिओ" इरियावहियाए विराहणाए गमणागमणे पाणक्कमणे बीयक्कमणे हरियक्कमणे ओसाउतिंगं पणगदग मट्टीमक्कडा संताणासंकमणे जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया अभिहया

वत्तिया लेसिया संघाइया संघट्टिया परियाविया किलामिया उद्दविया ठाणाओ ठाणं, संकामिया जीवियाओ ववरोविया तस्समिच्छामिदुकडं.

तस्सउत्तरीकरणेणं पायच्छित्तकरणेणं विसोहीकरणेणं विसल्लिकरणेणं पावाणं कम्माणं निग्घायणठाए ठामि काउस्सग्गं ॥ अन्नत्थऊससिएणं नीससिएणं खासिएणं छीएणं जंभाइएणं उडुएणं वायनिसग्गेणं भमलीए पित्तमुच्छाए सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं एवमाइएहिं आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्जमे काउस्सग्गे जाव अरिहंताण भंगवंताणं नमुकारेणं न पारेमि तावकायं ठाणेणं मोणेणं झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥ यहांपर एक लोगस्स " चंदेसु निम्मलयरा " तक केहना फिर नमो अरिहंताणं केहेके काउस्सग्ग पारके लोगस्स केहेना ॥

लोगस्स उज्जोअगरे धम्मतित्थयरेजिणे अरिहंतेकित्तइस्सं चउविसंपि केवली ॥ १ ॥ उसभमजियंच वन्दे. संभवमभिणंदणच सुमइंचपउमप्पहं सुपास जिणंच चंदप्पह वन्दे ॥ २ ॥ सुविहिंच पुष्फदंतं, सीयलसिज्जस वासुपुज्जंच, विमलमणंतंच जिणं धम्मंसंतिच वंदामि ॥ ३ ॥ कुंथु अरं च मल्लिं वन्दे मुणिसुव्वयं, नमिजिणंच वंदामि रिठनेमिं पासं तह वद्धमाणच ॥ ४ ॥ एवंमए अभिथुआ, विहुयरमला पहीण

जरमरणा चउवीसंपि जिणवरा॥५॥तिन्थयरामे पसीयंतु कित्तिय वंदिय महिया, जेए लोगस्स उत्तमा सिद्धा आरूग्ग बोहिलाभ समाहिवरमुत्तम दिंतु ॥ ६ ॥ चंदेसु निम्मलयरा आइच्चेसु अहिय पयासयरा, सागरवरगंभीरा सिद्धासिद्धिं मम दिसंतु ॥७॥

एक खमासमणा दे आदेश लेके सामायिक लेनेको मुहपत्ति पडिलेहन करना सो विधिमुहपत्ति हाथमें लेके खोलती वखत केहेना सूत्र अर्थ सचाश्रद्धु, सम्यक्त्वमोहनिय, मिथ्यात्वमोहनिय, मिश्रमोहनिय परित्याग करूं। द्रष्टिकी प्रतिलेखन करतों कामराग, स्नेहराग, द्रष्टिरागका परित्याग करूं। यह सात बोल केहेनेके बाद मुहपतिके विभाग जीमणे हाथकि अंगुलीके निचमें पकडके डाबा हाथपर प्रतिलेखन समय सुदेव सुगुरु सुधर्म आदरूं कुदेव कुगुरु कुधर्म परित्याग करूं। ज्ञान दर्शन चारित्र आदरू यह ६ बोल केहकर मुहपत्ति डाबा हाथके अंगुलीयोंके निचमें लेके जीमणा हाथपर प्रतिलेखन करना यथा ज्ञानविराधना दर्शनविराधना चारित्रविराधनाका परित्याग करू। मनोगुप्ती वचनगुप्ती कायगुप्ती आदरूं। मनोदंड वचनदड कायादंडका परित्याग करूं। एव २५ बोल।

अब शरीर प्रतिलेखन करनेकि विधि केहते है

मस्तकपर मुहपत्ति लगाके कृष्ण निल कापोत लेश्याका परित्याग करू। मुखपर मुहपत्ति रख–ऋद्धिगारव रसगारव

सातागारवका परित्याग करूं। हृदयपर मुहपत्ति रखके नियाणशल्य मायाशल्य मिथ्यादर्शनशल्यका परित्याग करूं। जीमणे खांधेपर क्रोध मान और डावे खांधेपर माया लोभका परित्याग करूं। डावे हाथकी बाहापर हास्य रति अरति और जीमणे हाथकि बाहापर भय शोक जुगुप्साका परित्याग करूं। पृथ्वीकाय अपकाय तेउकाय कि विराधना डावे पगपर रजोहरणसे और वायुकाय वनस्पतिकाय त्रसकाय कि विराधना जीमणे पगपर रजोहरणसे परित्याग करूं। इन्ही विधिसे उपयोगयुक्त मुहपत्तिका प्रतिलेखन कर खमासमण देके " इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामायिक संदिसवु " ' इच्छं ' खमासमणा देके इच्छाकारेण संदिसह भगवन् सामायिक ठाउं ' इच्छं ' दोनों हाथ जोडके एक नवकार केहेना। इच्छकारि भगवन् पसायकारि सामायिक दंडक उचरावोजी अगर गुरूमहाराज न हो तो पाठ अपने मुखसें " केहेना. करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहं मणेणं वायाणं काएणं न करेमि न करावेमि तस्सभंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि " ॥

खमासमणा आदेशपूर्वक वेसणुं संदिसावु वेसणो ठाउं सज्झाय संदिसावु सज्झाय ठाउ सज्झायका तीन नवकार केहकर दोय घडी (४८ मीन्ट) आत्मध्यान या पठन पाठन करना चाहिये ॥

सामायिक करनेवाले आत्मबन्धुओको प्रथम ३२ दोषकों जानना चाहिये ॥

१० मनके दोष.

१ अविवेकदोष–अविवेकतासें क्रिया करे या सामायिक करके मोक्षमें कोन गये हैं या इसे क्या फल है ।
२ यशोवांच्छादोष–सामायिक कर यशकीर्तिकि इच्छा करे।
३ धनवांच्छादोष–सा० करके धनकि इच्छा करे ।
४ गार्वदोष–सा० अहंकार करे म्हैं सामायिक करता हू ।
५ भयदोष–लौकिकके भयके मारे लोक मुजे क्या कहेगा ।
६ निदानदोष–सा० इस लोक परलोकका नियाणा करना ।
७ सशयदोष–सा० क्या जाने फल होगा या न होगा ।
८ कषायदोष–क्रोधके मार या सा० मे क्रोध करे ।
९ अविनयदोष–गुरु बिनय न करे जेसे मूर्खकि माफीक ।
१० अवहूमान–उत्साहरहित वेगारकि माफीक सामायिक करके मनकों सावद्य कार्यकि चिंतवनेमें लगादे इत्यादि ।

१० वचनके दोष.

१ कुबोल–सामायिकमें मकार चकारादि कुवचन बोलना ।
२ सहसात्कार–सा० विनोविचारे बोलना ।
३ असदारोपण–दुसरेको पापकारी मति देना ।

४ निरपेक्षवाक्य-शास्त्रोकि अपेक्षारहित बोलना ।
५ संक्षेपदेष-सा०सूत्र अर्थ संक्षेपसे बोलना ।
६ कलहदोष-सा० कोइके साथ कलेश करना ।
७ विकथादोष-सा० च्यार प्रकारकि विकथा करे ।
८ हास्य दोष-सा० दुसरेकि हासी मिसकरी ठठा करना ।
९ अशुद्धपाठ दोष-सा० अशुद्ध पाठ या न्युनाधिक बोले ।
१० मुणमणाट दोष-सा० स्पष्टउच्चारण न करे ।

१२ कायाके दोष.

१ पगपर पग छडाके बेठे इन्हीसे अविनय होता है ।
२ आसन चलन इदर उदर बेठता रहै ।
३ चलन द्रष्टी-वार वार इदर उदर देखताही रहै ।
४ सवद्य क्रिया-सा० पापकारी या गृह कार्य करे ।
५ आलंबन दोष-भीत स्थंभादिका ओटा लेके बेठे ।
६ आकुंचनप्रसारण दोष-सा० विनोपुंजे हास्तपाद चलावे ।
७ आलस दोष-सा० अंगमोड कटका करे ।
८ मोटन दोष-उठ बेठ कसरत करना दंड निकालना ।
९ मेल दोष-खाजखीणे मेल उत्तारे मालस करे ।
१० विमासन दोष-सागल हाथ देके बेठ दोनो गोडा उचा कर हार्थोकी या कपडाकि ठासडी मारके बेठे ।
११ निद्रा दोष-सा० निद्रा लेवे ।

१२ शीत दोष–शीतके कारण सर्व अंगकों कपडासे ढाकके बेठे।

उपर लिखे ३२ दोषोंकों टालके शुद्ध उपयोगसे आत्मज्ञानमे रमणता करनेसे कर्मोंकि निर्जरा होती है।

सामयिक पारनेकि विधि.

गुरु आदेश लेके इरियावहि पूर्ववत् लगस्सतक केहना–आदेश लेके सामायिक पारनेकि मुहपत्तिका प्रतिलेखन करना। आदेश–अर्थात् खमासमण देके इच्छा कारण संदिसह भगवान् सामायिक पारू। तब गुरु कहे "पुणोवि कायव्वो" आप कहै" यथाशक्ति" फीर खमासमणादिके इच्छा कारण संदिसह भगवन् सामायिक पार्यु गुरु कहे " आयारो न मोत्तव्वो " आप कहे " तहत्ति " फिर जीमणा हाथ चरवालापर रखके एक नवकार केहके गाथा केहनी।

सामाइय वयजुत्तो, जावमणे होइ नियम संजुत्तो।
छिन्नइ असुह कम्म, सामाइय जत्तिया वारा ॥ १ ॥
सामाइयंमिउ कए, समणो इव सावओ हवइ जम्हा।
एएण कारणेणं, बहुसो सामाइयं कुज्जा ॥ २ ॥

सामायिक विधिसे लीधि विधिसे पारी विधि करतों अविधि हुइ हो सामायिकमें दश मनका दश वचनका बारह कायाका एव ३२ दोषसे कोइ भी दोष लागा होय तो मिच्छामिदुक्कडं ॥

(१) चैत्यवंदन.

सकल कुशलवल्लि पुष्करावर्त्त मेघो,
दुरित तिमिर भानुः कल्पवृक्षोपमानः ।
भवजलनिधि पोतः सर्व सम्पत्ति हेतुः,
सभवतु सततं वः श्रेयसे पार्श्वनाथः ॥ १ ॥

२ बीजका चैत्यवंदन.

अजितनाथ प्रणमुं सदा, तीर्थंकर दुजो ।
शिव रमणीके कारणे, चोखे चित्त पूजो ॥१॥
उत्कृष्टा जिनकेवली, लाढे संघ मुनिन्द्र ।
बीज कहे जिनराजने, सेवे सुरनर इन्द्र ॥२॥
अचिरा अंगज उपना, मृगी रोग निवार ।
चक्रवर्त पद्वि ल्ही, पट् खंडनो सीरदार ॥३॥
चक्ररतनको छोडके, धर्मचक्र ल्ही लार ।
शान्तिनाथ पूजो सदा, दिनमे वार हजार ॥४॥
चवन जन्म दीक्षातणा, नाण अने निर्वाण ।
बीजतणे दिन जे हुवा, तीर्थंकर कल्याण ॥५॥
वन्दु जेह जिनेन्द्रने, धर्म प्रकाश्यो दोय ।
साधुने श्रावकतणो, आराध्या शिव होय ॥६॥
छोडो विषय कषायने, आरंभ परिग्रह दोय ।
धर्म शुक्ल ध्यावो सदा, ज्ञान दर्शन शुद्ध होय ॥७॥

३ पंचमिका चैत्यवंदन

शासनपति विराजीया, समौसरण मझार ।
भक्तिभावे पुच्छीयो, श्रीगौतम गणधार ॥१॥
कहो स्वामि किम पामीये, निर्मल केवल नाण ।
उत्तर आपे वीरजी, सांभल गौतम वाण ॥२॥
शुक्लपक्षकि पंचमि, आराधे शुद्ध भाव ।
पौषद गुणणो जो करे, उजमणो चित्त चाव ॥३॥
ज्ञान विनो पशु सारखो, क्रिया नहीं विन ज्ञान ।
देश आराद्धि क्रिया कही, सर्व आराद्धि ज्ञान ॥४॥
पंच वर्ष पंच मासकि, उत्कृष्टी जावा जीव ।
पंच मास लघु कही, ज्ञान आराधन नीव ॥५॥
महा निसिथमे भाखीयो, ज्ञानतणो अधिकार ।
वरदत्त ने गुणमझरी, पाम्या भवनो पार ॥६॥
पंचकल्याणक जिनतणा, पालो पचाचार ।
पंचमि गति वरना भणी, ज्ञान सदा श्रीकार ॥७॥

४ अष्टमिका चैत्यवंदन

नमु नमु आठम दिने, कल्याणक जगनाथ ।
चैत्र वदि आठम दिने, जनम्या आदिनाथ ॥१॥
सोहम इन्द्र वनिता गयो, मेरू आया शेष ।
जन्म सफल जेणे कीयो, तीर्थंकर अभिशेष ॥२॥

मुत्ति मुत्ति निय धम्म धाम्मि धामी मण मोहे ।
संतिकरण सिरिसान्तिं नाह दंसण जग सोहे ॥ ४ ॥
हत्थीहत्थ सिवसत्थी वाहु जय कुंथुं जिणेसर ।
अंतरंग अरि वग्ग दलण पूजिजे जिणवर ॥
मोह वेल्लि वल हरण मल्लि अनन्निय आराहो ।
मुणिसुव्वय दरसणय नाह मुझ मन उमाहो ॥ ५ ॥
नमिर सुरासुर वंदि नंदि श्री नमि तीर्थंकर ।
रेवेगिरि सिरि तिलोय नेमि जयराय महीवर ॥
तिहुअण लच्छि निवास पास मह विग्घपणासे ।
वद्धमाण तिहि रीद्धि वद्धि पत्थारय पयासे ॥ ६ ॥
दह दिसि पसारिय कीत्ति पसार पखालिय कलमल ।
पंच मादन घण माण दलण सरण गइ वच्छल ॥
इम संथवसिरि सिद्ध सूरीसर जस निम्मल ।
दंतु सुख चोवीस देव तिहुयण गये मंगल ॥ ७ ॥

७ पार्श्वनाथ चैत्यवंदन.

जय जय चिंतामणि पास, जय त्रिभुवनस्वामी ।
अष्ट कर्मरिपु जीतने, पंचमि गति पामी ॥ १ ॥
प्रभु नामे आनन्द कन्द, सुखसंपत लहिये ।
प्रभु नामे भवभयतणा पातिक सब दहिये ॥ २ ॥
ॐ ह्रँ वर्ण जोडि करि, जपिये पार्श्व नाम ।
विप अमृत होय परिणमे, पामे अविचल ठाम ॥ ३ ॥

८ महावीर चैत्यवंदन.

सिद्धारथ राजातणो, नन्दन श्रीमहावीर ।
बहोतेर वर्षको आयुखो, सोवन वर्ण शरीर ॥ १ ॥
बारह वर्ष छद्मस्थ रह्या, तीस वर्ष गृहवास ।
तीस वर्ष प्रभु केवली, पांचमि गति कीयो वास ॥ २ ॥
सिंह लछन शासनपति, वन्दु उगमते सूर ।
शिवसंपत वच्छत फले, ज्ञानसे वढते नूर ॥ ३ ॥

९ शान्तिनाथ चैत्यवंदन.

विश्वसेन कुल चन्दलो, अचिरादेवी माय ।
शान्ति करी सर्व देशमें, सोवनवरणी काय ॥ १ ॥
अनन्त ज्ञान दर्शन धणी, चरण अनंतु जाण ।
गजपद लंच्छन नित्य नमुं, जग उगमते भाण ॥ २ ॥
कारण सफलोमे लेही, साधन कारज रूप ।
वंच्छत ज्ञान सदा फले, तुं त्रिभुवनको भूप ॥ ३ ॥

१० नेमिनाथ चैत्यवंदन.

गिरनार मंडन नेमिजिन, सेवादेवी माय ।
समुद्रविजय सुत गुण निलो, संख लच्छन पाय ॥ १ ॥
परसत्ता त्याग न करी, त्यागी राजुल नार ।
स्वसत्ता रमण करे, शिव सुन्दर भरतार ॥ २ ॥

पदपंकज धय जन लही, ध्याता भ्रमर करे ध्यान ।
कर्म वन दहन करी, पामे केवलज्ञान ॥ ३ ॥

११ आदेश्वर चैत्यवंदन.

नन्दन नाभि नरेन्द्रको, सिद्धाचल सोहे ।
मरूदेवीको लाडलो, सुरनर मन मोहे ॥ १ ॥
धोरी लंच्छन आयुखो, पूर्व चोरासी लाख ।
सोवन वर्ण सुखकरण, कल्पवृक्षनी साख ॥ २ ॥
अखंड अमल अमुरति, छेद भेद नहीं रूप ।
सहज समाधि ज्ञानरस, दीजे त्रिभुवन भूप ॥ ३ ॥

जंकिंचि नाम तित्थं, सग्गे पायालि माणुसे लोए ।
जाइं जिण बिंबाइं, ताइं सव्वाइं वंदामि ॥ १ ॥

शक्रस्तव.

नमुत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं तित्थगराणं सयंसंबुद्धाणं पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंडरियाणं पुरिसवरगंधहत्थीणं लोगुत्तमाण लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपईवाणं लोगपजोयगराणं अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं बोहिदयाणं (जीवदयाणं) धम्मदयाण धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं (दीवताणसरणगइपईठा) अप्पडिहयवरनाणदसणधराण वियट्टछउमाणं जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं

बुद्धाणं बोहियाणं मुत्ताणं मोअयाणं सव्वन्नूणं सव्वदरिसीणं सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वाबाह मपुणरावित्ति सिद्धिगइनामधेयं ठाणं सपत्ताणं नमो जिणाणं जिअभयाणं ॥ जेय अइआसिद्धा, जेअ भविस्सतिणागइकाले, संपइअ वट्टमाणा, सव्वे तिविहेण वंदामि ॥ इति ॥

जावंति चेइआइं उड्ढअ अहेअ तिरियलोए य ।
सव्वाइं ताइ वंदे इह संते तत्थ सताइं ॥ १ ॥
जावंति केइ साहू भरहेरवय महाविदेहेय ।
सव्वेसिं तेसिं पणाउ तिविहेण तिदंड विरयाणं ॥२॥

नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योः

स्तुति संग्रह.

१ बीजकि स्तुति

अजित जिनेश्वर अन्तर जामि, बीजे बीजा थुणीये जी ।
निर्मल चित्ते जिनवर पूजी, शिवपुरना सुख लुणीये जी ॥
उत्कृष्टा जिन केवली मुनिवर, तेहने वारे लाधे जी ।
अतित अनागत संप्रतकाले, वन्दो आगम वादे जी ॥ १ ॥
दोयउज्जल दोय राते वरणे, श्याम वरण दोय सोहे जी ।
निले वरणे युगजिनवरजी, सुरनरना मन मोहे जी ॥
सोवन वरण जिनेश्वर शोला, चोवीसे जिन पूजो जी ।

रायपसेणी शुक्ति केरो, फलदाता नहीं दुजो जी ॥ २ ॥
सुरधर रचीत समौसरण, चौमुख देशना अमृत भाखी जी ।
जलथल पुष्प ढीचण जेता, समवायांगजी साखी जी ॥
जिनवाणि आराधी प्राणी, मोक्ष गया वली जासी जी ।
लुपक पापी प्रतिमा उत्थापी, तेहनी शु गति थासी जी ॥ ३ ॥
शासन सुरी सवदुःख चुरी, अजित बला सुख पुरी जी ।
समकित साची नाटिक नाची, करी जिन भक्ति सनुरी जी ॥
उपकेशगच्छ मंडन मिथ्या विहंडन, रत्नप्रभ सुरी राया जी ।
तस्सपद राचीक शिवसुख जाचिक, ज्ञानसुन्दर गुण गाया जी ॥

२ पंचमिकि स्तुति.

समुदविजय सेना देवीनन्दन, जादव कुलनी जोत जी ।
श्रावण शुद्धि पाचमिने जनम्या, हुवो लोक उद्योत जी ॥
मेरू शीखरे चौंसटइन्द्र, मोहत्सव कियो मन रंगे जी ।
शिव मन्दिरमे नेमिजिनवर, रम रह्या राजुल संगे जी ॥ १ ॥
अनन्त तीर्थंकर इणीपर भाखे, पंचमि तप तुम धारो जी ।
जघन्य मध्यम उत्कृष्टी करिये, उजमणो उद्धारो जी ॥
केवल कमला लीलकरे घर, महा निसिथमे सारो जी ।
तीन कालका जिनवर वन्दी, पामी जे भव पारो जी ॥ २ ॥
पंचाचार निरमला पालों, पांचे समिति सुमता जी ।
पचइन्द्रिय निग्रह किजे, तीने गुप्ती गुपता जी ॥

पांचज्ञानकों गुणणो करीने, नन्दीसूत्रने पुजोजी ।
श्रुति ज्ञान समो नही कोइ, उपकारी जग दुजो जी ॥ ३ ॥
गीरनार मंडन नेमिजिनवर तस्स पद किंकर सेवी जी ।
साहानिधकारी सर्व संघने, भली अम्बिका देवी जी ॥
उपकेशगच्छ नायक शिवसुख लायक, रत्नसूरी मन भायाजी ।
ज्ञानसुन्दर कहे गुरु कृपासे, दिनदिन सुख सवाया जी ॥ ४ ॥

३ अष्टमिकि स्तुति.

अष्टमि आठमा जिनवर पूजो, चन्दा प्रभु चित लाइ जी ।
आगी रचावों नृत्य करावों, मृदंग ताल बजाइ जी ॥
रावण गौत तीर्थंकर बांधो, अष्टापद पर जाइ जी ।
आज हर्ष चित्त भक्ति म्हारे, सामि मुक्ति आइ जी ॥ १ ॥
तीन लोकमें प्रभुकि प्रतिमा, वन्दो पूजो भावे जी ।
आचारंग ठाणायांग नन्दी, ज्ञाता सूत्रमें गावे जी ॥
रायप्पसेणी जीवाभिगम, भगवती पेन्नोणे जी ।
आगम पाठ उत्थापे प्रतिमा, पापी अभव्य जाणों जी ॥ २ ॥
अष्ट महा प्रतिहार विराजे, समोसरण जिनराजे जी ।
देशना अमृत अर्थ अनोपम, भव्य जीवों हितकाजे जी ॥
सूत्र रुपे गणधर गुथी, द्वादशागनी वाणि जी ।
चोखे चित्ते जेह आराधे, शिवसुख ल्हे भव्य प्राणी जी ॥ ३ ॥
अष्ट प्रकारे पूजा करके, अष्टमि गतिमे जावो जी ।
अष्टम तप कर नागकेतु जिम, निर्मल केवल पावो जी ॥

उपकेशगच्छनायक शिवसुखदायक, रत्नसुयश सवायो जी ।
शासनसुरी सब दुःख चुरी, ज्ञान अमर पद पायो जी ॥ ४ ॥

४ एकादशीकी स्तुति.

ऊगणीसमा वन्दु मल्लि जिनवर देव ।
सुरनरना नायक सारे ज्हेनी सेव ॥
मीगसर शुद्ध एकादशी हुवा तीन कल्याण ।
नित्य नित्य हु वन्दु अनन्त सुखोकि खाण ॥ १ ॥
मौन एकादशी भाखी श्री वर्धमान ।
सहु मीलने हुवा दोडसो कल्याण ॥
यह तप आराध्या तुटे कर्मकी पास ।
मल्लिजिनवरजी पुरो मुज मन आस ॥ २ ॥
मोहन घर करायो षट् मंत्रीके काज ।
कनकमय पडिमा थापी छे जिनराज ॥
षट् मंत्री देखी उपनो पूर्व राग ।
उपदेशे बुज्या हुवा मल्लि जिन साग (साथे) ॥ ३ ॥
मौन एकादशी तप अखडंत सुर ।
उज्ञमणो करतां पावे सुख भरपुर ॥
उपकेश गच्छमंडन रत्नप्रभसूरिराय ।
तस्स पदपंकज सेवक ज्ञानसुन्दर गुण गाया ॥ ४ ॥

५ पक्षीकि स्तुति.

श्रीमद्वीरजिनेश श्रौवड कृत श्रीतोरणालंकृत ।
प्रासादे वररत्न कीर्ति गुरुणा संस्थापित सौख्यदः ॥
संसिक्त शुभ कामधेनु पयसा नोवेदित केनचित् ।
तं वन्दे शुभ कारण दरहरं श्रीत्रैशलेयं मुदा ॥ १ ॥
मुक्ति श्री सुखसंग लीन मनसो मिथ्यात्व मोहान्तकान् ।
बुद्धान् मानव देवदानव गणेशान् सर्वदानर्हतः ॥
संसारार्णव पारगामि विनतान दुष्टाष्ट कर्म च्छिदः ।
वन्दे भूत भविष्य भाविक भवान् तीर्थाधिपान् सर्वदा ॥ २ ॥
या जीवादि विचारतत्त्व निपुणा तीर्थंकरा स्यात्स्तता ।
श्रीमद्वीरगणि प्रधान विधृता चीणाष्टकर्म व्रजा ।
बह्वर्थाल्पक वर्णका व्रत फला भावप्रदीपोज्वला ।
सान्निध्यं श्रुतदेवता भगवती सघे विधत्तात्सदा ॥ ३ ॥
श्रीरत्नप्रभसूरि सौम्य वचसा तत्त्वेन सबोधिता ।
श्रौपकेश गणेश शासनसूरी दत्तात्पद संपदाम् ॥
या चाष्टादश गौत्रकेषु रचिते सुश्रावकरच्यते ।
सा देवी दुरितौ घनाशन करी संघस्य भूयाच्छुभा ॥ ४ ॥

६ सिद्धचक्राकि स्तुति.

चन्दरवो बांधीने त्रीघडे, सिद्धचक्र थापीजेजी ।
पाच वरणको मंडल मांडी, स्नात्रमहोत्सव कीजेजी ॥

अखड ज्योत वाजीत्र वाजा, भावे भक्ति कीजेजी ।
मयणाने श्रीपाल तणीपरे, नवभव शिवसुख लिजेजी ॥१॥
बारहा अरिहंत सिद्ध आठ गुण, सूरी छत्तीस गुण वरियाजी ।
पाठक गुण पचवीस सतावीस, मुनिवर गुणना दरियाजी ॥
सीतसट दर्शन ज्ञान एकावन, चरण सीतर सुखकारीजी ।
तप पचासे सर्व मीलीने, नवपद जग जयकारीजी ॥ २ ॥
शुद्ध सातम आसोज चैतकी, विधिपूर्वक तप झेलेजी ।
नव ओली एकीआसी आंबिल, उजमणो करी मेलोजी ॥
खमासमणा देइ गुणणो कीजे, जिन पूजा तीहु कालो जी ।
प्रति लाभी गुरु वन्दन करीने, निज आत्म उज्वालो जी ॥३॥
रूपे रुडी कर कंकण चुडी, रम झम नैपर वाजे जी ।
नवपद सेवी चक्रेश्वरी देवी, संघना संकट भाजे जी ॥
ओसवंस थापी मिथ्या कापी रत्नप्रभसूरी राया जी ।
तस्सपद दाशा शिवसुख प्यासा, ज्ञानसुन्दर सुख पाया जी ॥४॥

७ सिद्धाचल स्तुति.

सिद्धाचल मंडन मरू देवीनो नन्द ।
मूर्ति मनमोहन जाणे पुनम चन्द ॥
वृपभनो लच्छन सेवे सुरनर वृन्द ।
मीली मीलीने पूजो नरनारी सुख कन्द ॥ १ ॥
सास्वतो तीर्थ भाख्यो श्री भगवन्त ।
अतित अनागत सिद्धासिद्ध अनन्त ।

गुण निलो गीरिवर आगम महाभावन्त ॥
भावे करि नम तो पामे भवनो अन्त ॥ २ ॥
जिनवरकी वाणि अनन्त सुखोकि खाण ।
कमलेगच्छनायक देवगुप्त सूरी जाण ॥
उपदेशे करायो पन्दरमो उद्धार ।
समरा शाहा श्रावक लीधो लाभ अपार ॥ ३ ॥
चक्रेश्वरी देवी करती सार संभाल ।
सहु संघना संकट दुर करे ततकाल ॥
उपकेशगच्छ मंडन रत्नप्रभ सूरी राय ।
तस्सपद पकज सेवक ज्ञानसुन्दर गुण गाय ॥ ४ ॥

८ ओशीयां तीर्थकी स्तुति.

अश्वसेन नरेश्वर वामा देवी माय ।
अहि लंच्छन पार्श्व निलवरण तस्स काय ॥
शुभ हरिदत्त आयरियं केशी श्रमण कुमार ।
स्वयंप्रभ रत्नप्रभ छटे पाट मझार ॥ १ ॥
उपकेशे पटण पधारया गुरु राय ।
औचड दे मंत्री वीर प्रासाद कराय ॥
गाउ दुद्ध वेलुथी मूर्त्ति श्री महावीर ।
प्रतिष्टा कीनी नमतो भवजल तीर ॥ २ ॥
गुरु रत्नप्रभसूरी चवदापूर्वके धार ।

एक दिन प्रतिबोध्या तीन लक्ष चौरासी हजार ॥
ओसवंसे थाप्या गौत्र आठारा जाण ।
हु नित्य नित्य वन्दुं श्रीजिनवरकि वाण ॥ ३ ॥
चमुडा साची रही वचन चित्त लाय ।
तेथी सचाइ नाम ठवे गुरुराय ॥
शासन ने गच्छकी करती सार संभाल ।
सुख संपत्त लेसे ज्ञानसुन्दर उज्जमाल ॥ ४ ॥

९ पर्युषणपर्वकि स्तुति.

त्रिसलानन्दन वीर जिनेश्वर, चौवीसमा जिनराया जी ।
शासन जेहनो आज जयवन्तो, पर्व पर्युषण आया जी ॥
सोहम गणहर वीर पटोधर दुप्पसासूरी राया जी ।
चउ संघ वरते तेहनी आणा, अमर नमे तस्स पाया जी ॥ १ ॥
पर्व परूप्यो अनन्त तीर्थंकर, आराधे भव्य प्राणी जी ।
अनुभव आंगी और भावना, जिनवर पूजे जाणी जी ॥
आरंभ टाले कर्म प्रजाले, सुणे जिनवर कि वाणी जी ।
दीनोद्धारे दया जो पाले, ते वरसे शिवराणी जी ॥ २ ॥
जिनवर वाणि कल्पमे आणी, ओपमा अधिक विराजे जी ।
भक्ति रगे मोहत्सव संगे, पूजो केवल काजे जी ।
अष्टम कीजे कल्प सुणीजे, नव वाचना चित्त आणी जी ।
पारणे दान सुपात्र दीजे, ए मोक्षतणी निशानि जी ॥ ३ ॥

नन्दीश्वर द्विपे मोहने जीपे, सुरनर कोडा कोडी जी ।
भक्ति राचे नाटिक नाचे, पूजे होडा होडी जी ।
उपकेशगच्छराजे रत्न विराजे गाजे ज्ञान सवायो जी ।
सिद्धायका देवी सान्निधकारी पर्व पर्युषण आया जी ॥ ४ ॥

(१०)

वीर देवं नित्यं वन्दे ॥ १ ॥
जैनाः पादा युष्मान् पान्तुः ॥ २ ॥
जैनं वाक्य भूयाद् भूत्यै ॥ ३ ॥
सिद्धा देवी दद्यात्सौख्यम ॥ ४ ॥



स्तवन संग्रह.

१ बीजका स्तवन

देशी पीणियारीकि

अजित जिनेश्वर पूजीये । भव प्राणीरे लो, जिन पूज्या जिन थाय, गुणखाणीरे लो । टेर । समोवसरण सुरवर रच्यो भव प्राणीरे लो बेठा हे अजित जिनेन्द, गुणखाणीरे लो ॥१॥
अष्ट प्रतिहारज शोभता भ० सेवे इन्द्र नरिंन्द, गु० ॥ २ ॥
स्याद्वाद अमृत जीसी भ० मीटडि जिनवर वाण, गु० ॥ ३ ॥
नय निक्षेप परमाणसु भ० कारण कारज जाण, गु० ॥ ४ ॥

तीन गढ हद रचिया देवों, जल थल पुष्प हे ढींचण मान, प्रथम गढमें रहे असवारी, दुजे तिर्यंच सुने व्याख्यान, च्यार जातकी देवी आवे, च्यार देवता लो तुम धार, साधु साध्वी श्रावक श्राविका, इणीपरे हूई परषदा बार। (छुट)। स्फटिक सिंहासन उपरे विराजे जग भांणजी, तीन दिशामें प्रभुकी प्रतिमा थापे व्यंतर आणजी, देव दुंदुभी आकाशमें, ध्वजा रही फरकायजी, भामंडल अशोक वृत्त हे शीतल जिन्हकि छायजी। (सेर) ये चौष्ट इन्द्र चमर प्रभुके ढोले। भलोये चौष्ट०। तीन छत्र शिर उपर आगम बोले, या वाणी योजन-गामीनि घन जीम गाजे। भलोया वाणी०। वादी मानी श्रोर पाखडी लाजे। (दोड) प्रभुके चौतीस अतिशय छाजे, वाणी गुण पैतीस विराजे. आनन्द वर्ते सरव समाजे, आज हरप गणो आज हरप गणो। नाटक वतीस प्रकार, वाजा वाज रह्या झणकार, पूजा विविध प्रकार सुरभक्ति करे २। मिलत। विचर रह्या भूमंडल आगे।निर्वाण कल्याण सुनायेगा। जिन।३। अष्टमि अष्ट कर्म करी दुरा शिवपुर आप सिधावे है सुरनर करी महोत्सव द्विप नंदिश्वर जावे है। तीन लोकमें प्रभुकि प्रतिमा जिन्हसे ध्यान लगावे है, जिन प्रतिमा पूजी, आप वह जिनवर पदकों पावे है। ज्ञातासूत्र अध्ययन आठमे भगवती इम गावे है, जिन्हकों जो लोपे वह भवभवमें दुःख पावे है। (छुट) तीर्थंकर तेवीसमा सुभदत्त हुवे गणधारजी हरिदत्त हूवे पट

जिन्ही माहे, नित्य रह्या डालीरे म० ।४। एक एक कारण षट् मंत्री सुन, मनमे लोभाया, पूर्व राग परणवा काजे, जान लेइ आयारे म० । ५ । माथिलानगरी घेर लीवी, जदराजा गवरायो, श्रीमुख धीरप दीवी पीताने, भेद वतलायोरे म० । ६ । भूपति षट् बोलाय लिया प्रभु, मोहन घर माही, पुतली देख छेओ नृप मनमे, रह्या हरखाईरे म० । ७ । ढक उघाड लीयो पुतलिनकों, वासना वहु आइ, श्वान मडा सम दुर्गन्ध आवे, वेठीयो नही जाइरे म० । ८ । प्रभु उपदेश दीयो भूपतने, विषय छाक वारी, मिगसर शुद्व एकादश दीक्षा, हुवे भूप लारीरे म० ।९। एक पेहरमे केवल लीनो, सुरमोहत्सव कीनो, स्फटक सिंहासन बेठ प्रभुजी, ज्ञान दान दीनोरे म० । १० । मौन एकादशी वर्ष इग्यारे, उजमणो कीजे, ज्ञान कहे उपगरण ज्ञानका, देतो शिव लिजेरे म० । ११ । इति ॥



श्रीमदुपाध्याय मेरुनन्दनजी कृत

(श्री अजितशान्ति स्तव.).

श्री मंगल कमला कंदए। सुखसागर पुनमचन्दए ॥
जग गुरु अजिय जिनन्दए । शान्तिश्वर नयनानन्दए ॥ १ ॥
वेहुं जिनवर प्रणमेवए । वेहु गुण गाऊं संखेवए ॥ पुन्नेव भंडार भरेसए । मानव भव सफल करेसए ॥ २ ॥ कोडही

लाक्ख पचासए । सागर जिन शासन वासए ॥ ऋषभ जिनेश्वर वंसए । उवझ्झाय सरोवर हंसए ॥ ३ ॥ तिण अवसर तीहां राजीयोए । राजा जयशत्रु जिहां गाजीयोए ॥ विजिया तस्स घर नारए । वेहु रमत पासा सारए ॥ ४ ॥ कूखे जिण अवतारए । तिण राय मनायो हारए ॥ उदर वस्या दश मासए । प्रभु पूरीजननी नी आसए ॥५॥ बहु जन मन अनन्दीयोए । सुत नाम अजियजीण तां दियोए ॥ तिहुअण सयल उत्साहए। क्रम २ वधे जगनाहयए ॥ ६ ॥ हंस धवल सारस तणीए । गति सुललितनि जगत रंजणीए ॥ मलपति चाले गेलए । जाणे नैण अमीयरस रेलए ॥ ७ ॥ अवर न समो संसार ए । वले ज्ञान निवेक निचारए ॥ गुण देखी गज गह गयोए । लंछण मिसी पगलागी रयोए ॥८॥ जोवनमें जर आवीयोए । तव वर रमणी परणावीयोए ॥ प्रिय साधे सहु काजए । प्रभु पाले पुहेवी राजए ॥ ६ ॥ हिवे हथनापुर ठामए । विश्वसेन नरेसर नामए ॥ राणी अचलादेवए । मनोहर सुख माणे मेयए ॥१०॥ चउ दह सुभा परवर्याए । अचिराकूखे सुत अवतर्याए॥ मानव देव वखाणीयोए । चक्रीश्वर जिनवर जाणीयोए ॥११॥ देश नगर हुई शान्तए। जिणे नाम दियो श्री शान्तए ॥ जिन गुण ब्रुण जाणे कहीए। त्रिभुवनमें तसु ओपमा नहींए ॥१२॥ नैण सलुणो हिरण लोए । वन सिंहऽवीए एकलोए ॥ नैण

संबधी निरुद्धए । इण नैणा नार विरुद्धए ॥ १३ ॥ गीतही राग सुरंगए । तिहां पभणे लोक कुरंगए ॥ तो उलंघीयो शशि संकए । तिण पाम्यो नाम कलंकए ॥ १४ ॥ इण पर मृग अति खलभल्योए । भवभंजण स्वामी सांभल्योए ॥ आणंन्दीयो मन आपणोए । पाय सेवे मृग लंछण तणोए ॥ १५ ॥ लीला-वती परणे घणीए । नवी २ कुमरी राजा तणीए ॥ छलबल अरियण जोगवेए । प्रिय राज भलीपरे भोगवेए ॥ १६ ॥ कुमारपद मंडलीक समेए । पचास सहस वर्ष गमेए ॥ तव तेज दिनकर जिसोए । उपनो चक्री रयण तीसोए ॥ १७ ॥ साधीय भरह छे खंडए । वरतावी आणा अखंडए ॥ चउदह रयण नव निधि सहिए । वशु सोले सहस जक्ष २ सहिए ॥ १८ ॥ सहस बहोत्तर पुरवराए । बत्तीस सहस मुगट बंध नरवरा ए ॥ पायक ग्राम कोडए । छीनुव नमें कर जोडए ॥ १९ ॥ हय गय रहवर जुवा २ ए । लक्ष चोरासी महिधर हुवाए ॥ लचत्र वाजंत्र धमधमेए । बतीस सहस नाटक रमेए ॥ २० ॥ रुपजीसी सुर सुन्दरीए । लक्षण लावण्य लीला भरीए ॥ जंगम सोहग देहरीए । ऐसी चौसठ सहस अन्ते-वरीए ॥ २१ ॥ अवरज ऋद्धि प्रकारए । मणी कंचण रयण भंडारए ॥ तेतो कहो किम जाणए । प्रभु पूर्व पुन्य प्रमाणए ॥ २२ ॥ इम चक्रीश्वर पांचमोए । चौथो दुसम सुमम ममोए ॥ वर्ष सहस पचवीसए । प्रभु पूरी मनरी जगीसए ॥ २३ ॥

इणपर वेहु तीर्थंकराए। चिर पाली राज भली पराए ॥ जाणी अवसर सारए। वेहु लीधो संयम भारए ॥ २४ ॥ वेहु नम शम दम धीरम धरीए। वेहु मोह माया मद परिहरीए ॥ वेहु जिन जाण समानए। वेहु पाम्या केवल ज्ञानए ॥ २५ ॥ वेहु देव कोडे महीए। वेहु चौतीस अतीसय सहीए ॥ समोसरण वेहु ठाणए। वेहु जोजन वाणी वखाणए ॥ २६ ॥ नाचत रणकत नेवरीए। वेहु आगल इन्द्र अन्तेवरीए ॥ टिगमिग जोवे जग सहुए। रंगे गुण गावे सुरवहुए ॥ २७ ॥ वेहु शीर छत्र चामर वीमला। वेहु पगतल नवसोवन कमला ॥ वेहु जिन तणो विहारए। तिहा रोगने सोग निवारए ॥ २८ ॥ वेहु उवयर भुवण वरीए। वेहु सिद्ध रमणी सयंवरीए ॥ वेहु भंजीयो भव कन्दए। वेहु उदय परमानन्दए ॥ २९ ॥ इम वीजोने सोलमोए। जाणे चिन्तामणी सुरतरु समोए ॥ थुणीये ती सांझ वीहाणए। तिहा न पडे भवनो वीहाणए ॥ ३० ॥ वेहु उत्सव मंगल करणा। वेहु संघ सयल दुःख दूरहरणा ॥ वेहु वर कमल वयणा नयणा। वेहु श्री जिन राज भुवण रयणा ॥ ३१ ॥ इम भक्ति वालम थुईए। श्री अजिय शान्ति जिन थुई भणीए ॥ सरणवेहु जिन पायए। श्री मेरु नन्दन उवझ्झायए ॥ ३२ ॥ इति.

—❀(◎)❀—

६ श्री आदेश्वर भगवान् स्तवन.

ओलभडे मत खीजोहो जिनजी। खीजोतो वली वली रीझोंहो जिनजी ॥ रीझोतो शिव सुख दीजोहो जिनजी। दीजोने ओ जस लीजोहो जिनजी ॥ ओलभडे० ॥ १ ॥ बालपणे आपण ससनेही। रमता नवनव वेसे ॥ आज तमे पाम्या प्रभुताई। अमेतो संसारीने वेसे ॥ हो जिन० ॥ २ ॥ जो तम ध्यातां शिवसुख लहिये। तो तमने केई ध्यावे ॥ पण भव स्थिति पर पक थया विन। कोई यन मुक्ति जावे ॥ हो जिन० ॥ ३ ॥ सिद्धि निवास लहे भव सिद्धि। तेमां सुं पाड तमारो ॥ जो उपकार तमारो वहिये। अभव्य सिद्धने तारो ॥ हो जिन० ॥ ४ ॥ नाण रयण पामी एकान्ते। थई बेठा मेवासी ॥ ते माहिलो एक अस जो आपो। तो तमने साबासी ॥ हो जिन० ॥ ५ ॥ सेवा गुण रझा भवीजनने। जो तमे करो वड भागी ॥ करुणासागर केम कहावो। निरमम ने निरागी ॥ हो जिन० ॥ ६ ॥ अचय सुख देता भवीजननें। संकीर्णता नवी थाय ॥ जो शिवसुख देवा समरथ छो। तो यश लेतां सू जाय ॥ हो जिन० ॥ ७ ॥ नाभिनन्दन जन वन्दन प्यारो। जग गुरु जग जयकारी। रुपविबुधनो मोहन पभणे। वृषभ लंछन बलिहारी ॥ हो जिन० ॥ ८ ॥

—⊛—

७ श्री आदेश्वर भगवान् स्तवन.

म्हासूं मूंडे बोल, बोल बोल आदेश्वरवाला । कांइ थारी मरजीरे ॥ म्हांसू० ॥ टेर ॥ माता मरुदेवी वाट जोवता, इत्तने वधाई आई रे । आज ऋषभजी उतर्या बागमें, सुण हरखाईरे ॥ म्हां० १ ॥ नाय धोयने गज असवारी, करी मरुदेवी मातारे । जाय बागमें नन्दन निरख्यो, पाई सातारे ॥ म्हां० २॥ राज छोडने निकल्यो ऋषभा, आ लीला अद्भुतीरे । चमर छत्र ने और सिंहासण, मोहनी मूर्तिरे ॥ म्हा० ३ ॥ दिनभर बैठी वाट जोवती, कदम्हारो ऋषभा आवेरे, केहती भरतने आदिनाथकी, खबरां लावोरे ॥ म्हा० ४ ॥ किसा देशमें गयो बालेश्वर, तुज विन वनिता सुनीरे । बात कहो दिल खोल लालजी, क्यूं बण्या मूनीरे ॥ म्हा० ५ ॥ रह्या मजामें है सुखसाता, खूब किया दिल चाहायारे । अब तो बोल आदेश्वर म्हासू, कल्पे कायारे ॥ म्हा० ६ ॥ खैर हुई सो होगई बाला, बात भली नहीं कीनी रे । गया पीछे कागद नहीं दीनो, म्हारी खबर न लीनीरे ॥ म्हां० ७ ॥ ओलंभा मै देवूं कठा लग, पाछो क्यों नहीं बोलेरे । दुःख जननीको देख आदेश्वर, हिवडे तोलेरे ॥ म्हा० ८ ॥ अनित्य भावना भाई माता, निज आतमने तारीरे । केवल पामी मोक्ष सिधाया, ज्याने वंदणा हमारी रे ॥ म्हां० ९ ॥ मुक्ति का दरवाजा खोल्या, मरुदेवी मातारे । काल असंख्या रह्या उगाडा, जबू जड गया जाता रे

॥ म्हां० १० ॥ साल बहोत्तर तीर्थ ओसीयां, गयवर प्रभु गुण गायारे । मूरति मोहन प्रथम जिनन्द की, प्रणमुं पायारे ॥ म्हां० ११ ॥ इति पदम् ॥

८ श्री राणपुरे आदेश्वर भगवान्.

लडवाने आयो दुरो क्यों राख्यो तोरा दाशकों, लड० टेर. लखचोरासी मोहे सायब, रमता नव नव रंग; थारे मारे पीत्त पुरांणी, क्युं छोड्यो म्हारो संग हो ॥ ल० ॥ १ ॥ सुमती नारसे प्रीत करी तुम, में कुंमतिके साथ; इतना अन्तर कारणे सतुं, छोड भयो जगनाथ हो ॥ ल० २ ॥ मोहराजाके राजमे सरे, वधीयो म्हारो मान; चार गतिको भयो पावणो, भुल्यो आत्मज्ञान हो ॥ ल० ३ ॥ नाटक ज्यूंमें नाचियो सरे, भवमंडलके वीच; मुज सरिषो जगमें नहीं सरे, नीचनीचसे नीच हो ॥ ल० ४ ॥ ज्यूं ज्यूं दुख सभारु सायब, नैणा टपके नीर; थारी मारी देख अवस्था, लगे कलेजे तीर हो ॥ ल० ॥ ५ ॥ सुत्तो जाणी मोहरायकों, छाने आयो भागी; राणपुरे रिसहेश्वर भेट्या, प्रीत पूराणी जागी हो ॥ ल० ॥ ६ ॥ कहालग कहूं दर्दकी वतीया, सुणीये मित्र मेरा; सौ वाताकी एक वात है, रग लगादे तेरा हो ॥ ल० ॥ ७ ॥ तेरा ओलम्बा मेरे शिरपे, माफी करदो मुजको; सर्व वात को जाणो सायब, केहना पडे न तुजको हो ॥ ल० ॥ ८ ॥ श्रद्धा खडग

हाथमें लीनो, मिथ्या मोह विदारी; भाग गई सब फोज मोहकी, मिलगई सुमति नारी हो ॥ ल० ॥ ६ ॥ लोक लडाई करे जगतमा, निकले नहि कछु सार; मेरा प्रभुसे करी लडाई, हाथ पकड दीयो तार हो ॥ ल० ॥ १० ॥ पोष सुदी आठम चोवोतर, संघ चतुर्विध आयो; ज्ञानसुन्दर जिनभक्तिको रंग, रांणपुरे वरपायो हो ॥ ल० ॥ ११ ॥

९ श्री समीनाखेडा पार्श्वनाथ.

हां पास मन लागे प्यारो, ज्ञानसुन्दरकों जल्दी तारो, उदयापुरके पासमे समीनाचालोरे. टेर. सेहर सादडीसे मे आया, सघ चतुर्विध साथे लाया, जाता केशरीयानाथके, समीनें आयारे ॥ पास ॥ १ ॥ सम्प्रतिराजा मन्दिर करायो, पूरण पुण्यभंडार भारायो, यात्रा कीनी नाथकी मन आनन्द आयोरे ॥ पास ॥ २ ॥ शान्तमुद्रा मोहनगारी, आगी रचाई श्रावक भारी; एक नानाके मांयने तार्या नरनारीरे ॥ पास ॥ ३ ॥ आतमअनुभव चयोपसम जागी, कुमतिनार गइ जद भागी, सुमति सखीकी सेजमे पीतडली लागीरे ॥ पास ॥ ४ ॥ सिद्धचक्रकी पूजा भणीजे, आनन्द रगमंगल वरतीजे; ज्ञानसुन्दर रसप्रेमका भरप्याला पीजेरे ॥ पास ॥ ५ ॥ इति.

१० श्री धुलेवा केशरीयानाथ

हा केशरीयो कामणगारो, मनडो मोह्यो नाथ हमारो;

॥ म्हां० १० ॥ साल बहोत्तर तीर्थ ओसीयां, गयवर प्रभु गुण गायारे । मूरति मोहन प्रथम जिनन्द की, प्रणमुं पायारे ॥ म्हां० ११ ॥ इति पदम् ॥

८ श्री राणपुरे आदेश्वर भगवान्.

लडवाने आयो दुरो क्यों राख्यो तोरा दाशकों, लड० टेर. लखचोरासी मोहे सायब, रमता नव नव रंग, थारे मारे पीत्त पुरांणी, क्युं छोड्यो म्हारो संग हो ॥ ल० ॥ १ ॥ सुमती नारसे प्रील करी तुम, में कुंमतिके साथ; इतना अन्तर कारणे सतुं, छोड भयो जगनाथ हो ॥ ल० २ ॥ मोहराजाके राजमे सरे, वधीयो म्हारो मान; चार गतिको भयो पावणो, भुल्यो आतमज्ञान हो ॥ ल० ३ ॥ नाटक ज्यूंमें नाचियो सरे, भवमंडलके वीच; मुज सरिपो जगमें नहीं सरे, नीचनीचसे नीच हो ॥ ल० ४ ॥ ज्यूं ज्यूं दुख सभारु सायव, नैणा टपके नीर; थारी मारी देख अवस्था, लगे कलेजे तीर हो ॥ ल० ॥ ५ ॥ सुत्तो जाणी मोहरायकों, छाने आयो भागी; राण-पुरे रिसहेश्वर भेट्या, प्रीत पूराणी जागी हो ॥ ल० ॥ ६ ॥ कहांलग कहूं दर्दकी वतीया, सुणीये मित्र मेरा; सौ वातांकी एक वात है, रंग लगादे तेरा हो ॥ ल० ॥ ७ ॥ तेरा ओल-म्बा मेरे शिरपे, माफी करदो मुजको; सर्व वात को जाणो सायव, केहना पडे न तुजको हो ॥ ल० ॥ ८ ॥ श्रद्धा खडग

हाथमें लीनो, मिथ्या मोह विदारी; भाग गई सब फोज मोहकी, मिलगई सुमति नारी हो ॥ ल० ॥ ९ ॥ लोक लडाई करे जगतमां, निकले नहि कछु सार; मेरा प्रभुसे करी लडाई, हाथ पकड दीयो तार हो ॥ ल० ॥ १० ॥ पोष सुदी आठम चोवोतर, संघ चतुर्विध आयो; ज्ञानसुन्दर जिनभक्तिको रंग, राणपुरे वरपायो हो ॥ ल० ॥ ११ ॥

९ श्री समीनाखेडा पार्श्वनाथ

हां पास मन लागे प्यारो, ज्ञानसुन्दरकों जल्दी तारो, उदयापुरके पासमे समीनावालोरे. टेर. सेहर सादडीसे मे आया, संघ चतुर्विध साथे लाया, जाता केशरीयानाथके, समीने आयारे ॥ पास ॥ १ ॥ संप्रतिराजा मन्दिर करायो, पूरण पुण्यभंडार भारायो, यात्रा कीनी नाथकी मन आनन्द आयोरे ॥ पास ॥ २ ॥ शान्तमुद्रा मोहनगारी, आंगी रचाई श्रावक भारी; एक नावाके मायने तार्या नरनारीरे ॥ पास ॥ ३ ॥ आतमअनुभव चगोपसम जागी, कुमतिनार गइ जद भागी; सुमति सखीकी मेळमे पीतडली लागीरे ॥ पास ॥ ४ ॥ सिद्धचक्रकी पूजा भणीजे, आनन्द रंगमगल वरतीजे; ज्ञानसुन्दर रसप्रेमका भरप्याला पीजेरे ॥ पास ॥ ५ ॥ इति.

१० श्री धुलेवा केशरीयानाथ

हा केशरीयो कामणगारो, मनडो मोह्यो नाथ हमारो;

पूरण लागी प्रीतडी धुलेवावालोरे ॥ केश० ॥ टेर. जंगल झाडी पर्वत गेहरा, जिस विच आप किया है डेरा; तीन लोकमे वाज रह्या प्रभु डंका तेरारे ॥ केश० ॥ १ ॥ देश देशका यात्रु आवे, दर्शन करके आनन्द पावे; देखी मुद्रा नाथकी मनडो ललचावे रे ॥ केश० ॥ २ ॥ केशर कीच मचे अति भारी, आंगी रचावे सम्मकितधारी; जगतारण जिनराजने, पूजे नरनारीरे ॥ केश० ॥ ३ ॥ मयूर मग्न ज्यूं घनको रसीयो पुष्पअलिके ज्यूं चित धसीयो, कामणगारो सायबो, मुज मनमें वसीयोरे ॥ केश० ॥ ४ ॥ ओर कामण तो विपसे भरीयो, तूं मुज कामण कबुअ न करीयो; अबके करीयो नाथजी म्हे दरीयो तरीयोरे ॥ केश० ॥ ५ ॥ कामणको फल पूरो पायो, सेहजे नाथ हाथमें आयो; अब नहीं छोडू बापजी, क्यूं रंग लगायोरे ॥ केश० ॥ ६ ॥ फागण सुद एकम रग वरसे, धुलेवाकि यात्र करसे; ज्ञानसुन्दर सुखसेजमें, शिवनारी वरसेरे ॥ केश० ॥ ७ ॥

११ श्री धुलेवा केशरीयानाथ.

केशरीयो मारो राज विराजे पाहडीदेशमें ॥ केश ॥ टेर. लचचोराशीमें भम्यों सरे दुख पायो छू पूरो, आण वहि नहि ताहरी सरे, जीणसे रहगये दूरो हो ॥ केश० ॥ १ ॥ इतना दिन तो उदेय कर्मके, अन्तराय फीरी आडि, कृपा आज आपकि सायब कूटपीटके काढी हो ॥ केश० ॥ २ ॥

सेहर सादडी गोडवाडमें, संघ चतुर्विध साथ, माघ सुद तेरसने भेट्या, राणपुरे जगनाथ हो ॥ केश० ॥ ३ ॥ भांणपुरे सायरे भेट्या, नंदामांमे नाथ, तीन मन्दिर घोगुदे भेट्या, उदयपुर आदि नाथ हो ॥ केश० ॥ ४ ॥ भव्य तीर्थंकर पद्मनाभादि, चोगांन्यो मन्दिर बाजे, समीनेखेडे आंगीपूजा, भेट्या पार्श्व मुक्ति काजे हो ॥ केश० ॥ ५ ॥ गौरघन विलास स्वामिवात्सल, कायार्चोंकी आया, तीडी और प्रसाद होके, धुलेवे दर्शन पाया हो ॥ केश० ॥ ६ ॥ शान्त मुद्रा श्याम वर्णकी, मूर्ति लागे प्यारी, रोम रोम हरखायो मारो, अद्भुत रचना थारी हो ॥ केश० ॥ ७ ॥ पूजा माहे पाप थतावे, गई हीयारी फूट, एक ल्हेरमें कोड भवाका, पातक जावे छूट हो ॥ केश० ॥ ८ ॥ पार्श्व संतानीया रत्नप्रभसूरि, कमला पती निनिराजे, ज्ञानसुन्दर जिनभक्ति करता, जीत नगारा वाजे हो ॥ केश० ॥ ९ ॥

१२ श्री धुलेवा केशरीयानाथ

मनमोहन ओलूआरही, कद भेटूं हे सखी केशरीयो आय ॥ म० ॥ १ ॥ में तो अती उमंगे आवीयो, कीधी कीधी हे सखी यात्रा एह; प्रभु पूजी चित हरखीयो, वूठा २ हे सखी दूधा मेह ॥ म० ॥ १ ॥ दादारा दरबारमें, रयारया हे सखी दीवस बे चार; काल गयो जाण्यो नही, लागोलागो हे सखी

अधिको प्यार ॥ म० ॥ २ ॥ वलतां 'पग पाछो पडे, नही नही हे सखी जाणो सूहाय; छाति फाटे हीयो; हूबके, डबडब हे सखी नैण भराय ॥ म० ॥ ३ ॥ में तो चणभर जूदो नही रहूं, रहूं रहूं हे सखी दादाको दाश; हाथ जोडी करुं वीनती वेगी वेगी हो प्रभु पूरजो आस ॥ म० ॥ ४ ॥ बालक जाणी तेडजो, कृपा कृपा हो प्रभु कीजो नाथ; ज्ञानसुन्दर जिन चरणमें, माथे माथे हो प्रभु फेरजो हाथ ॥ म० ॥ ५ ॥

१३ श्री पर्युषण स्तवन.

पर्व पर्युपण आये मेरे प्यारे २ सब संघ मीली हरखाये मेरे प्यारे पर्व० टेर. सूरवर गण मीली मीलीके सारा, द्विप नन्दिश्वर जावे; नृत्य करे जिनवरके आगे, आंगी पूजा रचावे मेरे ॥ प्यारे ॥ १ ॥ जे सूरवर वंच्छे नरभवने, ते अवसर मुज लाधो; पर्वपर्युपण आया जांणी, निज आत्मने साधो मेरे ॥ प्यारे ॥ २ ॥ आठ दिवस अठाईमोहत्सव, आरंभ सहु परिहरीये; खंडण पीसण धोवण सारा, वीणज वेपार न करीये मेरे ॥ प्यारे ॥ ३ ॥ प्रातः उठीने जिनवर पूजो गुरुमुख वाणी सुणीये; प्रभावना प्रमौद सूकीजे दांन देईने भव तीरीये मेरे ॥ प्यारे ॥ ४ ॥ दोनू काल प्रतिक्रमणो कीजे, वैरभाव परिहरीये; अष्टम करके कल्पसूत्रकी, नव वाचना चित सुणीये मेरे ॥ प्यारे ॥ ५ ॥ चैत्य परिवाटी सहुसंघ मीलके,

देव जूहरवा जावे; सवत्सरी प्रतिक्रमणो करके, सर्व जीव च्चमावे मेरे ॥ प्यारे ॥ ६ ॥ इण विध पर्व आराधो प्यारे, आछो मेलो मीलीयो; सगपण मोटो साधर्मीको, ज्ञान कल्प-तरु फलीयो मेरे ॥ प्यारे ॥ ७ ॥

१४ श्री पर्युषण स्तवन

हां पर्व पर्युषण आया, जैनांके दिल हरख सवाया; द्विप नन्दिश्वर जायके, सूर आनन्द पायारे ॥ पर्व ॥ टेर ॥ आठ दिवस समतारस चाखो, जूठ वचन मुखसे मत भाखो; पालो शील अखंड जीवकी यत्ना राखोरे ॥ पर्व ॥ १ ॥ जिन मन्दिरमें मोत्सव कीजे, मुनिको दान सुपात्र दीजे, चंचल माया जाणके नरभव फल लीजेरे ॥ पर्व ॥ २ ॥ कल्पसूत्रकों घर लेजावो, ज्ञानजागरणा रात जगावो, मोटो महोत्सव मांडके, वरघोडो लावोरे ॥ पर्व ॥ ३ ॥ अष्टम भक्त सुभ भावे कीजे, नववाचना कल्प सूणीजे, जन्ममहोत्सव वीरको, करता सिव लीजेरे ॥ पर्व ॥ ४ ॥ समत्सरी प्रतिक्रमणो कीजे, लच्च चोरासी जीव च्चमीजे; राखो उज्वल भावना, जिम कारज सीजेरे ॥ पर्व ॥ ५ ॥ एक स्थान मीलीये सघचारों, चैत्य प-रिवाडी देव जुहारो, सामीवत्सल प्रभावना करी आतम तारोरे ॥ पर्व ॥ ६ ॥ रुडी रीते पर्व आराधो, नीठ नीठ मानव भव लाधो, ज्ञानचिंतामण पायके निज आत्म साधोरे ॥ पर्व ॥ ॥ ७ ॥ इति.

१५ धर्म महात्म स्तवन.

जगमे मीठोरे मीठो मीठो केवलीयोंरो धर्म, जगमें मीठोरे ॥ टेर ॥ कल्पवृक्ष मनःवंच्छितपुरे, चिंतामणि सवचिंताचुरे, पुरे मनोरथ माल जगमे मीठोरे ॥ १ ॥ कामकुंभ जिम कामनापुरे, चित्रावेल्लि रहे नही दुरे, सुखसपत्ति श्रीकार, जगमें मीठोरे ॥ २ ॥ तीन दिवसको भुखो प्राणी, खीरखंड जीमे आनन्द आणी, प्यासाने सुधारस पान, जगमें मीठोरे ॥ ३ ॥ अनन्तकालको चउगति भमतो, दंडक माहे नाटक करतो, आज मील्यो शुद्ध धर्म, जगमें मीठोरे ॥ ४ ॥ शुद्ध देवगुरु धर्म परखीयों आगम कसोटीकर ओलखीयो, ज्ञान सदा जयकार, जगमे मीठोरे, मीठो मीठो केवलीयोंरो धर्म जगमें मीठोरे ॥ ५ ॥ इति

जयवीयराय.

जय वीयराय जगगुरु, होउममं तुह पभावओभयवं ।
भव निव्वेऊ मग्गणु–सारिया इठ फल सिद्धी ॥ १ ॥
लोग विरुद्धचाऊ गुरुजण पूआ परत्थ करणंच ।
सुहगुरु जोगो तव्वय–णसेवणा आभवमखंडा ॥ २ ॥
वारिज्जइ जइवि निया–णबंधणं वीयराय तुहसमए ।
तहवि ममहुज्ज सेवा, भवे भवे तुम्ह चलणाणं ॥ ३ ॥

दुक्खखओ कम्मखओ समाहि मरणंच बोहिलाभोअ ।
संपज्जाऊ महएअं, तुहनाउ पणाम करणेणं
सर्व मंगल मांगल्यं, सर्व कल्याण कारणम्
प्रधान सर्व धर्म्माणं, जैनं जयति शासनम् ॥ ५ ॥

अरिहंत चेइयाणं करेमि काउस्सग्गं-वन्दनवत्तियाए पूयणवत्तियाए सकारवत्तियाए सम्माणवत्तियाए बोहिलाभवत्तियाए निरुवसग्गवत्तियाए सद्धाए मेहाए धिइए धारणाए अणुप्पेहाए वड्ढमाणीए ठामि काउस्सग्गं अन्नत्थ० । यहा एक नवकारका काउस्सग्ग करके नमो अरिहंताणं कहके काउस्सग्ग पारके नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः केहके एक स्तुति बोलना।

स्तुति,

ऋषभ अजित सभव अभिनन्दन, सुमतिपद्म सुपासजी
चन्द सुवधि शीतल श्रीयस, वासविमल पुरो आसजी
धर्म शान्ति कुंथु अरिमल्लि, मुनिसुव्रत नमि नेमि पासजी
वीर जिनेश्वर रंगे पुजो, पुरे मनोरथ आसजी ॥ २ ॥

खमासमणा देके यथाशक्ति पच्चक्खाण करना ।

॥ इति ॥



अथश्री

जैननियमावली

और

सुबोधनियमावली.

जैन-राग और द्वेष रूपि जो शत्रुहे जिन्होंको जितेहै उन्होंको जिन केहते है और सामान्य जिनके अन्दर भी अष्ट प्रतिहार चौतिस आतिश्यादि विभूतिवाले तीर्थकरोंको जिनेन्द्र केहेते है उन्होंके निर्देश कियेहूवे रहस्तेपर चलनेवालोंको जैन केहते है अनन्तकाल-परिभ्रमण करते हूवे जीवोंकों जैनधर्म कि प्राप्ती होना अति दुष्कर है परन्तु इस समय अच्छी सामग्री मीली है वास्ते प्रथम निम्न लिपीत गुणोंकों प्राप्त करना खास जरूरीका काम है ।



धर्मके सन्मुख होनेवालोंमें १५ गुण होना चाहिये।

१ नितीवान हो, कारण निती धर्मकी माता है।
२ हीम्मत बाहादुर हो, कायरोंसे धर्म नही होता है।
३ धीर्यवान् हो, हरेक कार्योमें आतुरता न करे।
४ बुद्धिवान् हो, हरेक कार्य स्वमति विचारके करे।
५ असत्यकों धीकारनेवाला हो।
६ निष्कपटी हो, हृदय साफ स्फटक माफिक हो।
७ विनयवान, और मधुर भाषाका बोलनेवाला हो।
८ गुणगृहाइहो, और स्वात्म श्लाघा न करे।
९ सत्यवान प्रतज्ञा पालक हो।
१० दयावान हो, और परोपकार कि बुद्धि हो।
११ सत्य धर्मका अर्थी हो।
१२ जितेन्द्रियहो। कषायकि मंदताहो
१३ आत्म कल्याण कि द्रढ इच्छा हो।
१४ तत्त्व विचारमें निपुण हो।
१५ जिन्होंके पास धर्म पाया हो उन्होंका उपकार कबी भुले नहीं। समयपाके प्रति उपकार करे।



जैनधर्मकें रहस्तेपर चढनेवालोंमें निम्न लिखत ३५ बोल आवश्य होना चाहिये।

मार्गानुसारीके ३५ बोल ।

(१) न्यायसंपन्न विभव–न्यायसे द्रव्य उपार्जन करना परन्तु विसवासघात, स्वामिद्रोही, मित्रद्रोही चौरी कुड तोल, कुड माप आदि न करे । किसीकी थापण न रखे खोटा लेख न बनावे महान् आरंभवाले कर्मादानादि न करे। अर्थात् लोक विरूद्ध कार्य न करे ।

(२) शिष्टाचार–धर्मीक नीतिक और अपने कुलकि मर्यादा माफिक आचार व्यवहार रखना । अच्छे आचारवालोंका सग और तारीफ करना ।

(३) सरिखे धर्म और आचार व्यवहारवाले अन्य गोत्रीके साथ अपने फर्जनका विवहा (लग्न) करना दम्पतिके आयुष्यादिका अवश्य विचार करना अर्थात् वाललग्न, वृद्धलग्नसे बचना और दम्पतिका धर्म–जीवन सामान्य धर्मसे ही सुखपूर्वक होता है । वास्ते सामान्यधर्म आवश्य देखना ।

(४) पापके कार्य न करना अर्थात् जिस्में मिथ्यात्वादिसे चिकने कर्मवन्ध होताहै या अनर्था दडपाप न करना और उपदेश भी नही देना ।

(५) प्रसिद्ध देशाचार माफिक वर्ताव रखना उदवट वैष या खरचा न करना ताके भविष्यमें समाधि रहै । आवादानी माफीक खरचा रखना ।

(६) कीसीका भी अवगुन वाद न बोलना जो अवगुनवाला हो तो उन्हीकि संगत न करना तारीफ भी न करना परन्तु अवगुण बोलके अपनि आत्माकों मलीन न करे ।

(७) जिस मकानके आसपासमें अच्छे लोकोंका मकानहो और दरवाजे अपने कब्जेमेंहो मन्दिर, उपासरा या साधर्मीभाइयों नजीक हो एसे मकानमें निवास करना चाहिये। ताके सुखसे धर्मसाधन करशके ।

(८) धर्म, निति, आचारवन्त और अच्छी सलाहके देनेवालोंकी संगत करना चाहिये ताके चित्तमें हमेशों समाधी बनी रहे ।

(९) मातापिता तथा वृद्ध सज्जनों कि सेवाभक्ति विनय करना, आपसे छोटा भी होतो उन्हीका भी आदर करना और सबसे मधुर वचनोंसे बोलना ।

(१०) उपद्रववाले देश, ग्राम या मकान हो उन्हीका परित्याग करना चाहिये जेसे रोग मरकी, दुष्काल आदिसे तकलीफ हो । ऐसे देशमें नही रेहना ।

(११) लोक निंदने योग्य कार्य न करना और अपने स्त्रि-पुत्र और नोकरोंको पेहलेसे ही अपने कब्जेमें रखना अच्छा आचार व्यवहार सीखाना ।

(१२) जेसे अपनी स्थिति है या पेदास हो इस माफिक खरचा रखना शिरपर करजा करके संसार या धर्म कार्य में नामून हासल करनेके इरादेसे बेभान होके खरच न करदेना, खरचा करनेके पेहला अपनिहासयत देखना।

(१३) अपने पूर्वजोंके चलाइ हूइ अच्छी मर्यादा या वेपकों ठीक तरहेसे पालन करना कीसीके देखादेख प्रवृत्ति या वेप नही वदलादेना।

(१४) आठ प्रकारके गुणोंकों प्रतिदिन सेवन करते रहना यथा (१) धर्मशास्त्र श्रवण करनेकि इच्छा रखना (२) योग मीलनेपर शास्त्र श्रवणमें प्रमाद न करना (३) सुनेहूवे शास्त्रके अर्थकों समझना (४) समझेहूवे अर्थकों याद रखना (५) उन्हीमे भी तर्क करना (६) तर्कका समाधान करना (७) अनुपेक्षा उपयोगमें लेना या उपयोग लगाना (८) तत्त्वज्ञानमे तलालीन होजाना शुद्ध श्रद्धा रखना दुसरेकों भी तत्त्वज्ञानमे प्रवेश करादेना।

(१५) प्रतिदिन करने योग धर्मकार्यकों संभालते रेहना, अर्थात् टईमसर धर्मक्रिया करते रहना। धर्महीकों सार समझना।

(१६) पेहले कियेहूवे भोजनके पचजानेसे फिर भोजन करना इसीमे शरीर आरोग्य रेहता है। और चित्तमें

(१७) अपच अजिर्ण आदि रोग होनेपर तुरत आहारका त्याग करना, अर्थात् खरी भूख लागनेपर ही आहार करना परन्तु लोलुपता होके भोजन करलेनेके बाद मीष्टानादि न खाना और प्रकृतिसे प्रतिकुल भोजनभि नही करना, रोग आनेपर औषदीके लिये प्रमाद न करना।

(१८) ससारमें धर्म, अर्थ, कामको साधतेहुये भी मोक्षवर्गको भूलना न चाहिये। सारवस्तु धर्मही समझना। और समय पाकर धर्मकार्योंमे पुरुषार्थ भी करना।

(१९) अतित्थ अभियागत गरीब रांक आदिकों दुःखी देखके करूणाभावलाना यथाशक्ति उन्हीकों समाधीका उपाय करना।

(२०) कीसीका पराजय करनेके इरादेसे अनितिका कार्यकों आरभ नही करना, विनों अपराद किसीकों तकलीफ न पहूचाना।

(२१) गुणीजनोंका पक्षपात करना उन्होंकों बहूमान देना सेवाभक्ति करना।

(२२) अपने फायदेकारी भी क्युंनहो परन्तु लोकों तथा राजा निषेद्ध कीयेहूवे कार्यमें प्रवृति न करना।

(२३) अपनी शक्ति देखके कार्यकों प्रारभ करना प्रारभ कियेहूवे कार्यकों पार पहूचादेना।

(२४) अपने अश्रितमें रहेहूवे मातापिता, स्त्रि, पुत्र, नोकरादिका पोषण ठीक तरहेसे करना । कीसीकों भी तकलीफ नहो एसा वर्ताव रखना ।

(२५) जो पुरुष वृत तथा ज्ञानमें अपनेसे वढाहो उन्हीकों पूज्य तरीके बहूमान देना, और विनय करना । तथा गुणलेनेकि कोषीस करना ।

(२६) दीर्घदर्शी–जो कार्य करना हो उन्हीमे पेहला दीर्घद्रष्टीसे भविष्यके लाभालाभका विचार करना चाहिये ।

(२७) विशेषज्ञ कोइभी वस्तु पदार्थ या कार्य होतो उन्हीके अन्दर कोनसा तत्त्व है वह मेरी आत्माकों हितकर्ता है या अहितकर्ता है उन्हीका विचार पेहले करना चाहिये ।

(२८) कृतज्ञ–अपने उपर जिस्का उपकार है उन्हीकों कभी भूलना नही, जहांतक बने वहांतक प्रतिउपकार करना चाहिये ।

(२९) लोकप्रीय–सदाचारसे एसी प्रवृति अपनी रखनि चाहियेकि वह सब लोकोंको प्रीय हों अर्थात् परोपकारके लिये अपना कार्य छोडके दुसरेके कार्यकों पेहले करदेना चाहिये ।

(३०) लज्जावन्त–लौकीक और लौकोत्तर दोनों प्रकारकि लज्जा रखना चाहिये कारण लज्जाहै सो नितिकि माता

है लज्जावन्ताकि लोक तारीफ करते है बहूतसी बखत अकार्यसे बचजाते है ।

(३१) दयालुहो=सब जीवोंपर दयाभाव रखना अपने प्राणके माफीक सब आत्मावोंको समझके कीसीकों भी नुकशान न पहूंचाना ।

(३२) सुन्दर आकृतिवाला अर्थात् आप हमेशो हस्तवदन आनन्दमे रेहना अर्थात् क्रुर प्रकृति या चीण चीण अत्य क्रोधमानादिकि वृति न रखना । शान्त प्रकृति रखनेसे अनेक गुणोंकि प्राप्ती होतीहै ।

(३३) उन्मार्ग जातेहूवे जीवोंको हितबोध देके अच्छे रहस्तेका बोध करना उन्मार्गका फल केहतेहूवे मधुर वचनोंसे समझाना ।

(३४) अन्तरग वैरी क्रोध, मान, माय, लोभ, हर्ष, शोक इन्होंके पराजय करनेका उपाय या साधनों तैयार करतेहूवे वैरीयोंको अपने कब्जे करना ।

(३५) जीवकों अधिक भ्रमन करानेवाले विषय (पांचेन्द्रिय) और कषाय है उन्हींकों दमन करना, अच्छे महात्मावोंकी सत्संग करते रेहना, अर्थात् मोक्षमार्ग बतलानेवाले महात्माही होतेहै सद्मार्गका प्रथम उपाय सत्संग है ।

यह पैंतीस बोल संक्षेपसेही लिखा है कारण कठस्थ

करनेवालोंको अधिक विस्तार कीतनी वखत वोजारूप होजातेहै वास्ते यह २५ बोल कंठस्थ करके फीर विद्वानोंसे विस्तारपूर्वक समझके अपनि आत्माका कल्याण आवश्य करना चाहिये । शम् ।



सम्यक्त्वमूल १२ व्रत.

। गतकालकि आलोचना ।

यह मेरा जीव गतानन्तकालसे भवभ्रमण करतेहूवे कुदेव, कुगुरु, कुधर्म, कुशास्त्र मानाहो श्रद्धाहो परूपना करीहो प्रवृति करीहो स्वपरात्मवोंको सद्‌रहस्तेसे छोडाके मिथ्यात्वमे डालेहो और २५ प्रकारका मिथ्यात्व सेवन कियाहो उन्हीकों आज म्हे मन, वचन, कायसे वोसिराताहु ।

यह मेरा जीव गतानन्तकालसे भवभ्रमण करतेहूवे जो नया नया शरीर धारणकरके उन्हीको छोडआया है उन्ही शरीरोंसे वनाहुवा अनेक प्रकारके शस्त्रादिसे अनेक आरंभसारंभ समारंभ होताहो उन्हीकि आतीहूइ क्रियावोंकों म्हे आज देव-गुरु सन्मुख मन, वचन, कायासे वोसिराताहू ।

यह मेरा जीव गतानन्तकालसे भवभ्रमण करताहूवा

प्रणातिपातादि १८ पापकर्म सेवन किया काराया करतेहुवे कोंसा हितादिहो उन्हीकों आज म्हे देवगुरु सन्मुख मन, वचन, कायासे वोसिरताहू ।

। सम्यक्त्वकि शुद्ध अधना ।

(१) देव=अरिहंत-वीतराग-सर्वज्ञ-केवली, अठारा दोष[१] रहित और बारहगुण[२] सहित, चौतीस अतिश्य पैतीस वाणिगुण संयुक्त केवलज्ञान केवलदर्शनमे लोकालोकके सर्व भावोंकों एक समयमें जाणे देखे एसे म्हारे देवहै । उन्ही देव और देवकी शान्त मुद्रा मूर्ति उन्होंका वन्दन पूजन उपासना मोक्षार्थे करना । इन्हीके सिवाय जगत्मे अनेक देव केहलातेहै वह रागी द्वेपी मानी मायि जिन्होंका चन्ह या मुद्रामे रहाहूवा राग द्वेप भय क्रुरता एसा लौकीक देवमे मेरी देवबुद्धि नही है न देव समझके उपासना करू ।

गुरू-पचमहाव्रत पचसमिति तीनगुप्तीका पालक सताबीस गुणोके धारक दशप्रकारे यति धर्माराधक कनककामणि-

---

१ १८ दोष-मिथ्यात्व, अज्ञान, अव्रत, राग, द्वेष, निंद्रा, मोह, दानान्तराय, लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय, वीर्यान्तराय, हास्य, भय, शोक, जुगप्सा, रति, अरति, एव १८ दोष ।

२ अनन्त चतुष्ट और अष्ट प्रतिहार एव १२ गुण ।

के त्यागी रागद्वेषकों जीतनेवाले यथाशक्ति भगवानकि आ-ज्ञासे उद्यम करनेवाले ऐसे मेरे गुरु है इन्हीके सिवाय जो दु-नीयोंके अन्दर गुरु नाम धरानेवाले सारंभी सपरिगृही भंग, गांजा, चडसके पिनेवाले कनककामानिके लालची उन्होंको गुरु बुद्धिकर गुरु नही मानणा ।

(३) धर्म–वीतरागदेवोंकि आज्ञा परिमाणे अहिंसा-मय धर्म है तथा साधुधर्म और श्रावकधर्म जिस्मे पूजाप्रभाव-ना स्वामिवत्सल सामायिक पौषद आदि करना यह शुद्ध धर्म है परन्तु लौकीकमें जो यज्ञ, होम, पंड, बलीदान, ऋतुदान आदि अधर्मकों धर्म मानरखा हैं उन्हीकों म्हे धर्म नही मानु।

(४) शास्त्र–जो श्रीअरिहंतदेवोंने अर्थरूप फरमाया और गणधरदेवोंने सूत्ररूप शंकलित कयेहुवे द्वादशांग तथा वर्तमानकालेमे जो वीतरागप्रणित् सूत्रसिद्धान्त है और भी उन्होंकी आज्ञानुस्वार पूर्व महाऋषियोंने प्रकरणादि रचे है जिस्में भी श्री वीतरागवाणीकों आगे रखी है वह शास्त्र मेरे मनना योग्य है । शेष कुराणपुरणादिकि जिस्मे परस्पर वृरु-द्धता है स्वस्वार्थ साद्य प्राणवद्धादि हो यह मेरे मानने लायक नही है

यह सम्यक्त्वकि शुद्ध श्रद्धारखनेवाले भवात्मा-योंको निम्न लिखत नियम आवश्य रखना चाहिये ।

(१) मांस (२) मदिरा (३) वैश्यागमन (४) चौरीकर्मका करना (५) शिकार खेलना (६) परस्त्रिगमन (७) जुवाका खेलना एवं ७ कुविशन लौक निंदनिक होनेसे परित्याग करना, तथा विसवासघात करनेका, राजविरूद्ध करनेका परित्याग करना।

१ वासीविद्वल अनन्तकाय अभक्षादि जोकि प्रचुर जीवोंके पिंड होताहे उन्हीका सदैव त्याग रखना।

२ महा आरंभ महा परिग्रह और कर्मादानादि वैपार जहाँतक बचे वहांतक बचाना चाहिये।

३ जहापर जिनेन्द्रदेवोंका मन्दिर हो वहापर प्रतिदिन भगवानका दर्शन करना।

४ साधु मुनियोंका योगहो तो मुनियोंके दर्शनकर व्याख्यान श्रवण करना चाहिये।

५ शालभरमें कमसेकम एक नये तीर्थकि यात्रा करना।

६ शालभरमें कमसेकम एक स्वामिवात्सल करना।

७ शालभरमें कमसेकम एक बडी पूजा कराना।

८ शालभरमें स्वइच्छा न्याय द्रव्यज्ञानखातामे लगाना

सम्यक्त्वके पांच अतिचार

(१) शका-जिनवचनोंमे ससय शंकाका रखना
(२) कक्षा-अन्यमतकि इच्छा अनुमोदनका करना
(३) वितगीच्छा करनीका फलके अन्दर शसय रखना

(४) पर पाखंडियोंकि प्रशंस्याका करना

(५) पर पाखंडियोंका अधिक परिचयका करना

इन्ही पांचों अतिचारोंको दूर करना चाहिये

। बारहव्रतांकि संक्षिप्त टीप ।

पांचाणुव्रत—मुनिमहाराजोंके महाव्रत होतेहै उन्होंकि अपेक्षा श्रावकोंके अनुव्रत अर्थात् छोटे व्रत है ।

। पेहला व्रत स्थुलप्रणातिपात ।

हलते चलते त्रस जीवोंकों मारनेका पच्चखांण जिस्मे आगार ।

(१) विना जाने (अजानपणे) मरजावेतो आगार

(२) विना देखे मरजावे तो आगार

(३) अनोद्धेरित उदेरणा न करतोंभी मरजावे तो आगार ।

(४) हितकारी बुद्धिसे जीवोंकों बचातेंहूवे मरजावेतो०

(५) अपराधी होतों सामना करनेका आगार है ।

पेहले व्रतकि रक्षणके लिये पांच अतिचार वर्जना

(१) रोसकेवसहो गाडा प्रहारकरना

(२) रोसकेवसहो गाडा बन्धन बांधना

(३) रोसकेवसहो चर्मका छेद करना

(४) रोसकेवसहो भात्तपाणी बन्ध करदेना

(५) लोभकेवसहो अति भार भरदेना

इन्ही पांचों अतिचारोंकों सदैव वर्जना चाहिये ।

। दुसरा व्रत स्थुल मृषावाद ।

राजदंडे, लौकभंडे जिसीसे श्रावकोंकि प्रतित न रहै एसा मोटका मृषावाद बोलनेका पच्चखांन ।

(१) कन्याके निमत्त अच्छीकों बुरी और बुरीकों अच्छी छोटीको बडी और बडीको छोटी केहना या विष कन्याकों निर्विष केहदेना २ । इत्यादि

(२) गाय प्रमुख पशुके निमत्त-पूर्ववत् ।

(३) भूमिकाके निमत्त-मकान या भूमिका दुसरेकि हो उन्हीकों अपनी करलेना इत्यादि

(४) स्थापीत द्रव्य-थापण रखीहूइकों नटजाना

(५) रीशवत् लेके असत्य गवाइयों भरदेना

। दुसरेव्रतके पांच अतिचार है ।

(१) कीसीपर कुडा कलंक देदेना

(२) कीसीकि गुप्तवार्तावोंकों प्रगट करना

(३) कीसीकों असत्य शलाहाकादेना

(४) स्त्रि आदिका मर्मकों प्रगट करना

(५) कीसीपर कुडा लेखका लिखना

इन्ही पांचों अतिचारको सदैव वर्जना चाहिये ।

तीसरा व्रत स्थुल अदत्तादान

राजदंडे, लौकभंडे, जिसीसे जैनधर्मकि लौकोंमे निंधा हो एसी चौरी करनेका पच्चखांन ।

(१) खात्रखीणी–कीसीकीभी तछपत फाडके चौरी करना ।

(२) कीसीकी गांट छोडके द्रव्य लेलेना ।

(३) कीसीके दीयेहूवे तालेपर दुसरी चाबी लगाके द्रव्य लेना ।

(४) आते जातेको रहस्तेमे लुटलेना ।

(५) चौरी करना तो दुररहा परन्तु रहस्तेमे पडीहूई कोइभी वस्तु धनी होनायर अपने छीपाके रखलेना॰ वहभी चौरीही कहीजाती है ।

। तीसरे व्रतके पांच अतिचार हैं ।

(१) चौरके लायाहूवे कि वस्तु मूल्यलेना ।

(२) चौरोंको साहिता (मदद) देना ।

(३) वस्तुमे भेल संभेल करना (दीखानाअच्छा देना खराब)

(४) राजविरूद्ध वैपार करना (राजाका हांसलादि चौरना)

(५) कुडा तोला कुडा मापाका करना ।
इन्ही पांचों अतिचारोंकों सदैव वर्जना ।

। चौथाव्रत स्थुल मैथुन ।

राजदंडे, लौकभडे दुःखके देनेवाली एसी परस्त्रिसेवन करनेका पचखान ।

(१) परस्त्रिका पचखान ।
(२) वैश्यादिका पचखान ।
(३) स्वस्त्रिकि भी मर्यादा ।
(४) दिनका मैथुनका त्याग करना ।
(५) अष्टमि चतुर्दशी पुर्णमादि दिनका नियम करना।

। चौथ व्रतके पांच अतिचार ।

(१) कोइभी ग्रहन न करी एसे कुमारी तथा वैश्यासे
(२) स्वल्पकालके लिये रखीहूइ नोकरादिसे गमन
(३) अनक क्रीडा वैश्या विधवादिसे गमन करना
(४) स्वसंवन्धी सिवाय पारके विवहा नाता करना
(५) कामभोगकि तीव्र अभिलाषा रखना
इन्ही पाचों अतिचारकों सदैव वर्जना चाहिये ।

। पान्चवा व्रत स्थुल परिग्रह ।

(१) घर-हाट-हवेली नोरा वाडा मकानातकि संख्या (   ) तथा किंमत रु

(२) क्षेत्र जमीन बागवगेचाकि संख्या (   ) किं रु
(३) धन-गीणमों तोलमों मापमों परखमों रु
(४) धान्य, अनाज प्रतिवर्षमें मण
(५) द्विपदजीव-दाशदाशी नौकरादि
(६) चौपद-हस्ती अश्व गाय भेस ऊंठ आदि सख्या
(७) सूवर्ण-गटीत अघटीत तथा वैपार
(८) चान्दी „ „ „ „
(९) कुंभीधात उपर लिखा तथा इन्ही के सिवाय घर विखरी कुंल स्टेट स्वइच्छा मर्यादा करना ।

। पंचमे व्रतका पांच अतिचार ।

(१) घर क्षेत्र के परिमाणसे अधिक रखना
(२) धनधान्यके परिमाणसे अधिक रखना
(३) द्विपद चतुष्पदके परिमाणसे अधिक रखना
(४) सुवर्ण चान्दीके परिमाणसे अधिक रखना
(५) कुंभीधातके परिमाणसे अधिक रखना
इन्ही पांचो अतिचारोंको सदैव वर्जना

तीनगुणव्रत-पांचाणुव्रत जावजीवतक लियेथे उन्होंके अन्दर भी सक्षेप करनेके लिये यह तीन गुणव्रत है ।

। छटा दिशाव्रत ।

(१) पूर्व दिशामें कोष   (२) पश्चिम दिशामें कोष

(३) उत्तर दिशामें कोप   (४) दक्षिण दिशामें कोप
(५) उर्ध्वे दिश तथा अधो दिशामें कोप

छटा व्रतका पांच अतिचार

(१) उर्ध्वदिशाके परिमाणसे अधिक जाना
(२) अधो ,, ,, ,,
(३) तीरच्छीं ,, ,, ,,
(४) एक दिशाकों कमकर दुसरी दिशामें अधिकजाना
(५) परिमाणसे ज्यादा होनेकि शका होनेपर आगेजान
इन्ही पांचो अतिचारोंकों सदैव वर्जना

सातमा उपभोग परिभोग व्रत

उपभोग अपने उपभोगमें एक दफे भोगनेमे आवे जो द्रव्यादि खानेमें आवे वह पदार्थ, और परिभोग वारवारं भोगमें आवे वस्त्रभूषण स्त्रिआदि इन्ही पदार्थोंका परिमाण करे जेसे जावजीव तक इतने द्रव्यसे जादा नही खाना एवंविगड, वस्त्रभूषण पेहरनेका गन्ध, पुष्प, चन्दन आदि विलेपनका परिमाण और भक्षाभक्ष वासी विद्वल मखन मधु और भी वस्तुओंका काल आदिका विचारपूर्वक व्रत लेना तथा विस्तार गुरुमुखसे सुनना

। सातवा व्रतका २० अतिचार ।

(१) भोजनापेक्षा पांच अतिचार

(१) सचित वस्तुवो रात्तीहूइभी अविधिसे भक्षणकरे

(२ , अचितवस्तु सचितसे प्रतिबध रहीहूइका भक्षणकरे

(३) बहूत कोमल वनस्पति आदिका अग्निपर पचाके भक्षण करे

(४) कची वस्तु सूक्षम जीवोंका पंड होतेहूवेभी भगण करे

(५) तुच्छ वस्तु तथा ज्यादा फेकना पडे और स्वल्प भक्षणमें काम आवे

(२) वैपार संबन्धी १५ अतिचार

(१) अग्निका महान् आरंभ कराके कोलसा इठके हुआदिसे आजीवका अर्थात् वैपार निमत्त करावे

(२) वन-बगेचा खेती आदिसे वैपार करे

(३) गाडा, स्टम्बर, रेल आदि कराके वैपारकरे

(४) वाडेकेलिये मकांन करना या पशुआदि रखना

(५) खांनोके पत्थर मट्टी तथा पृथ्वीकों खोदाना

(६) दान्तका वैपार करना (पचेन्द्रियकी घात होती है)

(७) लाखका वैपार करना (असंख्य जीवोत्पति-स्थान है)

(८) रस, मधु, तेल, घृत, गुल आदि (जिस्में पां-चेन्द्रियकिभी घात होजातीहै)

(९) केसवाले जीव– मनुष्य पशुआदि तथा जठउ-नादिका वैपार

(१० , विष सोमल, नागवरस, अफीम, बग, गंजा आदिका वैपार

(११) मीलों, चरखीयों, गाणी, यंत्र नीकलाना

(१२) मनुष्य या पशु आदि पुरुषकों नपुंसक कराना

(१३) अग्निआदिकों लगाना वन जलादेना

(१४) सरद्रह, तलाव, नदी आदिका जलकों शुपाने-का इजाएदि लेना

(१५) असतिकर्म करनेवालोंका पौपन करना वैपार-निमत्ते, जेस वैश्याकों नोकर रखके कुकर्म करना, शीकारीकों रख शिकार करना, उपर लिखे १५ कर्मादान श्रावकोंकों बी-लकुल त्याग करना चाहियें अगर वैपारवाली वस्तु जेसे गुल शकर, तेल, घृत, दान्त आदिसे बीलकुल नही त्याग कर-शक्तेहो तोभी मर्यादातों आवश्य करना चाहिये ।

यह २० अतिचार सदैव वर्जना चाहिये ।

आठवा व्रत अनर्थादंड

(१) आरतध्यान नही करना जो कार्य होताहै वः पूर्वकृत कर्मोसेही होताहै अगर चोकडीके उदयसे आ भीजा तोभी अनर्थादंडतो नहीज करना चाहिये, " जं जं भगवय दीठ्ठा तं तं परणंमिसन्ति "

(२) प्रमादके वस होके तेल, घृत, गुल, पाणी आ दिका भाजन खुल नरखे करण इन्हीमें पंचेन्द्रि मूषादि पडर मरजाते है ।

(३) हिंस्यकारी शस्त्रोंका तथा घरविखरागटी मूप लादि अनर्था संग्रह न करना कारण उन्होंसे होगा तब हिं स्याही होगा परन्तु दुसरे काममे नही आतेहै ।

(४) पापोपदेश–अनर्थ कोइको पापकारी कार्यमे प्रेरण नही करनी ।

आठवा व्रतका पांच अतिचार

(१) कदर्प उत्पन्नहो इसी कथाका करना
(२) कुचेष्टा कामविकारवाली चेष्टाका करना
(३) वाचालपणा दिनभर असंबन्ध वकता रहेना
(४ शस्त्रोंकि मजावट तैयार कराना
(५) उपभोगसे अधिक उपकरन संग्रह करना
यह पांचों अतिचार सदैव वर्जना चाहिये

च्यार शिक्षाव्रत प्रतिदिन करनेका है

नौवा सामायिकव्रत ।

(१) द्रव्यशुद्धि–शरीर तथा सामायिकके उपकरणशुद्ध
(२) क्षेत्रशुद्धि–मकांन रागद्वेषके कारणवाला नहो।
(३) कालशुद्धि–निवृतिभावका कालहो
(४) भावशुद्धि–दोय करण तीन योग शुद्धहोना
(५) सर्व सावद्ययोगोका निरूध होना

नौवा व्रतका पांच अतिचॉर

(१) मनकों सावद्य योगोंका विचारमे वरतायाहो
(२) वचनकों ,, ,, ,, ,,
(३) कायकों ,, ,, ,, ,,
(४) कम टैममे सामायिक पारिहो
(५) स्मरती न रखीहो तथा ३२ दोप न टालाहो
यह पाचों अतिचारोंका सदैव वर्जना चाहिये

दशवा व्रत दिशविगासी

जो छठा व्रतमें दिशाका तथा सातवा व्रतमें द्रव्यादिकि जावजीव मर्यादा करीथी उन्होंकों संक्षेप करनेके लिये प्रतिदिन १४ नियमका परिमाण करना तथा तीन महूर्त या दश महूर्तकि दिश विगासी करना

दशवा व्रतके पांच अतिचार है।

(१) मर्यादा बहारके क्षेत्रकि वस्तु मगानि
(२) मर्यादाके बहार क्षेत्रमें वस्तु भेजना
(३) शब्दकरके आम्नाय जनाना
(४) रूपकरके आम्नाय जनाना
(५) कंकारादि पुदगलोसें संकेत करना
यह पंचो अतिचारोंको सदैव वर्जना चाहिये

इग्यारवा पौषदव्रत

वर्षभरमें कमसेकम एक पौषद आवश्य करना चाहिये
(१) आहारका त्याग करना
(२) शरीरकि विभूषा स्नानादिका त्याग करना
(३) ब्रह्मचार्यका पालन करना
(४) वैपारआदि सावद्य वैपारसे निवृतना
(५) आत्माको धर्मकार्यसे पुष्टवनाना

इग्यारवा व्रतका पांच अतिचार

(१) शय्या संथारेको ठीक तरहसे प्रतिलेखन नकरे
(२) लघुनित वडिनित भूमिकाको प्रतिलेखन नकरे
(३) निद्रा विकथादि प्रमाद करे।
(४) पौषदमें आहारादिकि विचारना करे
(५) कालपूर्ण न होनेपरभी पौषद पारे।
यह पांचो अतिचार सदैव वर्जना चाहिये

बारहवा अतिथी संविभागव्रत

मुनिमहाराज तथा साध्वीजीका योग मीलनेपर उत्साव भावसे दानदेना, अन्यथा भावना करना, तथा श्रावक या सम्यग्द्रष्टीको भी अपने घरपर भोजन कराना

(१) मुनिमहाराज पधारनेपर सामनेजाना

(२) आदरपूर्वक आपने घरपर लाना

(३) साधुवोंके योग्य वस्तुकि आमन्त्रण करना

(४) उद्धारभावसे दांन अविलंभसे देना

(५) जातेहूवेकों पहूचानेकों जाना, और पधारनेकि विनन्ती करना

बारहवा व्रतके पांच अतिचार

(१) सचितवस्तु करके देनेकी वस्तु ढाकीहो

(२) देनेकीवस्तु सचितपर रखदीहो

(३) वस्तुके धणीकी मालकी फेरीहों

(४) मत्सरभावसे दानका देना

(५) काल अतिक्रमनके बाद–आमन्त्रण करना

यह पांचो अतिचारकों सदैव वर्जना चाहिये

यह संक्षेपसे १२ व्रतकि टीप लिखी हैं कि कोइभी श्रावक सुखपूर्वक व्रत लेशके। जिम रीतीसे व्रत लेतेहैं उसी रीतीसे व्रत पालन करना चाहिये व्रतोंके अतिचारभी साथमे लिखदीयाहै कारण व्रतपालनमे अतिचार टालना पुष्टीकारक

है वास्ते अतिचारपर पुरापुरा ध्यान रखना चाहीये । इस व्रतोंमें औरभी न्युनाधिक मर्यादा करनाहो या विस्तारसे लेना हो वह गुरुमहाराजके सन्मुख लेशक्तेहै

इन्ही बारह व्रतोंके अतिचारके सिवाय तप तथा वीर्यादिका अतिचारभी है उन्होंपरभी श्रावकवर्गकों ध्यान रखना चाहिये ।

श्रावकोंके १२४ अतिचार

५ सम्यक्त्वके पांच अतिचार है
६० बारहव्रतोंके प्रतिव्रतके पाचपंच अति०
१५ कर्मादानके अतिचार पन्दर
२४ ज्ञानके ८ दर्शनके ८ चारित्रके ८ एवं
२० तपके १२ वीर्यके ३ सलेखनाके ५

१२४ अतिचारोंको टालना जरूरत है

श्रावकवर्गकों निम्नलिखत नियम प्रतिदिन चितारणा चहिये ।

। चौदह नियमोंकी गाथा ।

सचित्त दव्व विग्गंइ पण्हा तंबोल
वाहण सयण विलेवण, बंभदिसि न्हाण

। क्षत

१ 'स सत्ता

जादि)

२ 'द्रव्य' जितनी चीज मूंहमें जावे उतने द्रव्य-जल, मंजन, दातन, रोटी, दाल, चावल, कढी, साग, मिठाई, पूरी, घी, पापड, पान सुपारी, चूरन मसाला आदि।

३ 'विगय'-६ जिनमेंसे मधु, मास, मक्खन और मदिरा ये ४ महाविगय अभक्ष्य होनेसे श्रावकको अवश्य त्याग करना चाहिये और शेष (५) घी, तेल, दूध, दहीं, गुड, खांड अथवा मीठा पक्वान।

४ 'उपानह'-जूता, बूंट, सिलीपर, मोजा आदि जो पांवमें पहना जाय।

५ 'तंबोल'-पान, सुपारी, इलायची, लौंग, पानका मसाला आदि।

६ 'वथ्थ'-वस्त्र (आभूषण 'जेवर' की संख्या भी इसी नियममें धारलेना चाहिये) पगडी, टोपी, साफा, अग-रखा, चोगा, कुडता, धोती, पायजामा, दुपट्टा, चद्दर, अंगोछा, रुमाल आदि मरदाना और जनाना कपडा जो ओढने पहेर-नेमें आवे।

७ 'कुसुमेसु'-फूल, फूलनकी चीजें जैसे-शय्या, पखा, सेहरा, तुरा, हार, गजरा, अत्तर जो चीज सूंघनेसे आवे।

८ 'वाहन'-सवारी-गाडी, फिटीन, सिगराम, हाथी, घोडा, रथ, पालखी, डोली, मोटर, साईकल, रेल, नाव, ज-हाज, स्टीमर आदि 'याने तरता-फिरता, चरता, और उडता'।

९ 'शयन'–कुरसी, टेवल, पट्टा, पलंग, गद्दी, तकिया, बिछोना, तखत, मेज, सुखासन आदि सोने वा बैठनेकी चींजे।

१० 'विलेपन'–तेल, केशर, चंदन, तिलक, सुरमा, काजल, उवटना, हजामत, ब्रुरश, कंगा, काच देखना, दवाई आदि जो चीज शरीरमें लगाई जावे।

११ 'बंभ' [ब्रह्मचर्य] स्त्री, पुरुष सुइ दोरेके न्यायसे श्रावक परदारा त्याग और स्वदारासे ही संतोष रखें. उसकाभी प्रमाण करे. इसी प्रकार स्त्रीयोंकाभी समझलेना चाहिये।

१२ 'दिसि' [१० दिशा] शरीरसे इतने कोश (लंबा, चौडा, ऊंचा, नीचा) जाना आना, चिट्ठी, तार इतने कोस भेजना, माल और आदमी इतने कोश भेजना तथा मंगाना।

१३ 'न्हाण' [स्नान] शरीरसें मोटा स्नान इतनी बेर करना (छोटास्नान) हाथ पैर इतनी बेर धोना।

१४ 'भत्तेसु'–अशन (अन्न), पान (पाणी), खादिम (मेवा–दूध), स्वादिम (पान–सोपारी आदि), ये चारो आहारमेंसे, खानेमें जितनी चीजें आवें सबका कुल वजन करना।

इन चौदह नियमोंके अलावा छकाय और तीन कर्म
[illegible] जाते है अतः पर्वोक्त

नियमोंके साथ इनकीभी मर्यादा करली जावे ताकि इनसेभी बहुतसे पाप रुकजाते हैं.

६ काय.

१ पृथ्वीकाय–मटी निमक आदि (खानेमें वा उपभोगमें आवे) उसका वजन ।

२ अपकाय–जो पानी पीनेमें या दूसरे उपयोगमें आवे उसका वजन पानीकी जात कूवा, बावडी, तलाव, नदी, नल और मेघ आदिका प्रमाण संख्या भी करना अच्छा है, पानीविना छाना कोइभी काममें न लाना तथा जीवानीका यत्न करना अत्यावश्यकीय है ।

३ तेउकाय–चून्हा, अगीठा, भट्टी, चिराक आदिका प्रमाण ।

४ वायुकाय–हिंडोले पंखे [अपने हाथसे वा हुकमसे] जितने चलते होवें उनकी संख्याका प्रमाण. ‘ रुमालसें या कागजसे हवा लेनी यह भी पंखेमें गिनी जाती है उसकी जयणा ’ ।

५ वनस्पतिकाय–हराशाक तथा फलादि इतनी जातके खाने घर संबधी मंगाने जीसकी गिनती तथा वजन ।

६ त्रयकाय–त्रसजीव अपराधी, विनापराधीका विचार करना । यह ६ कायका परिमाण करलेना ।

३ कर्म.

१ असी (शस्त्र और औजार) तलवार, बंदूक, तमंचा, बरछी, भाला आदि छुरी, कैंची, चक्क् और सरोता चिमटी आदि औजार।

२ मसी (लिखने पढनेका) कागज, कलम, दावात, पेंसील, बही, पुस्तक, छापा, टाइप आदि।

३ कृषी (कसी) खेती, बगीचे आदिका परिमाण, यह रोजके नियम धारनेकी विधि संक्षेपसें लिखी हैं विस्तार जितना अधिक करिये यांने नाम खोल खोलकर रखिये उतनाही जादा फायदा है.

उपरोक्त चौदह १४ नियम प्रतिदिन चितारणेवालोंके मेरु जितना पाप छुटकर सरसव जितना रहजाता है।

उक्त चौदह नियमोंमेंसे अपने चाहिये उतनी वस्तु रखकर श्रीसुगुरुके मुखार्विन्दसें पचखाण करले। यदि कभी गुरुमहाराजका योग नहीं हो तो निम्नलिखितानुसार पचखाण करलें।

॥ पच्चक्खाणका पाठ ॥

॥ नवकारसी ॥

उग्गएसूरे नमुकारसहियं मुट्ठिसहियं पचख्खाइ चउव्विहंपि आहार असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नथ्थणाभोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं,-विगइओ

पच्चक्खाइ अन्नथ्थणा भोगेण सहसागारेण लेवालेवेणं गिहथ्थसंसठेणं उक्खित्तविगेयेणं पडुच्चमक्खियेण महत्तरागारेण सव्वसमाहिवत्तियागारेणं, देसावगासियं उवभोगपरिभोगं पच्चक्खाइ अनथ्थणाभोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सव्वसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरे ।

॥ पच्चक्खाण पारनेका पाठ ॥

उग्गएसूरे नमुकारसहियं पोरिसिय मुट्ठिसहिय पच्चक्खाण किया चउव्हिहंपि आहारं पच्चक्खाण फासिअं पालिअं सोहिअं । तीरिअं किट्टिअ आराहिअं जं च न आराहिअं तस्स मिच्छामि दुकडं । पीछे एक नमस्कार मंत्र पढे । शम् ।

१ बिदल. जिस अन्नकी दो दाल (द्विदल) होजाय, और जिसमेंसें तेल नहीं निकले, उस अन्नको कचे दूध, दहीं, छाशके साथ अर्थात् मिलायके खाना बडा दोष कहा है. दहीं वगैरह खुब गरम करके खानमें विदलका दोष नहीं है ।

२ आचार सब तरहका (संधान) ३ रोज बाद अभक्ष्य होजाता है ।

३ कदमूल ३२ अनन्तकाय. यह सबसें जादे दोषकी चीज होनेसें बिलकुल छोडने लायक है ।

४ ऋतुधर्मवाली औरतोंको २४ पहर गृहकार्य न करना चाहिये ।

५ विवाह, सादीमें वैश्या, आतशबाजी आदि कुरिवाजका त्याग करना चाहिये।

६ खराब गालीयोंको गानेका कितनेही लोगोमें बहुत प्रचार है उसका भी त्याग करना चाहिये।

७ बाल लग्न और वृद्ध विवाह वा कन्याविक्रय आदि कुरीतीयांको मिटादेना चाहिये याने उपरोक्त प्रवृत्तिसे बहुत हानी होती है।

८ अपने बच्चे और कन्याओंको नीति और धर्मशास्त्रकी शिक्षाके लिये पाठशाला आदिका प्रबन्ध करना चाहिये।

प्यारे जैनी भाइयों! इस लघु किताब द्वारा नित्य देवगुरु वंदन या १४ नियम चितारके अवश्य लाभ लेना चाहिये। इति शम्.

अथश्री

जिनमन्दिरोंकि ८४ आशातना



शास्त्रकारोंने २५ प्रकारका मिथ्यात्व बतलायेहै जिस्में आशातनाकोंभि मिथ्यात्व मानाहै वास्ते जिनेन्द्रदेवोंके भक्त जिनमन्दिरमे जाते समय निम्न लिखत आशातनावोंको आवश्य वर्जना चाहिये, आशातना उन्हीका नाम है कि जो पूर्वाचार्योंने जो जो कायदा बान्धा है उन्हीसे खीलाप वर्तन करना या वेअदबी, वेदरकारी रखना इन्ही आशातनावोंसे भवान्तरमे जीव दुर्लभबोधी होताहै वास्ते भवभिरू आत्मावोंकों आशातना टालके बहू मानपूर्वक जिनभक्ति करना चाहिये जिनभक्तिका फल शास्त्रकारोंने यावत् मोक्षका बतलायेहै ।

८४ आशातना

(१) जिनमन्दिरमें मुहका खेल खखारडालना
(२) ,, जुवे पत्ता चोपट सतरुजादिका रमना
(३) ,, आपसमे कलेश कदाग्रह गलीगुस्सा देना
(४) ,, धनुपादि ससारीक कला सीखना सीखावना

(७६) ,, कांटा भुरट जुवे आदि डालदेवेतों
(८०) ,, भोजन करना पाणीपीना तमाकु सुघनादिसे
(८१) ,, वीगर अदवीसे वस्त्रादिका पेहरना कि जिन्हों-
से दुसरेको सरमानापडे
(८२) ,, क्रियविक्रियकरे वैद्यक ज्योतीपादिका कामकरे
(८३) ,, मन्दिरजीके पाटपाटलादिपर सेवेतो
(८४) ,, पाणी पीनेकेलिये मटका रखे या मन्दिरजीके
पनालसे पानी जेलके अपने घरके काममे
लेवे तथा मन्दिरजीमे स्नान करनेकी जगा
वनावे

इत्यादि आसातना होतीहै इन्हीको मोक्षार्थी भव्यात्मा आवश्य ख्यालमे लेके आप आसातना न करे और दुसरा करताहो तो मधुर वचनोसे समझाके आसातना टलावेगा तो बहुत लाभका करन और भवान्तरमे सुलभबोधी होगा

कितनेक लोक सामान्य आसातनावोंको टालते है परन्तु महान् आसातना जेसे भगवान्के नामसे भाडासके लिये मकान वनाना वाग वगेचे ऊंट गाडीयो आदिका कारखाना खोल देतेहै । और मन्दिरजीका मकान भी कीतनेक स्थानपर तों एसे लोगोंको भाडे दीये जातेहै की जैनोंको नकरनेयोग कार्य उन्ही मकानोंमे होतेहै तो क्या यह
नजाने उन्हो लोकोंको क्या लोभाग्नि जगृत हु

फरमान हैं कि मन्दिर मूर्ति मोक्षार्थीयोंकों एक मोक्षमार्गका साधनभूतहै परन्तु लोभानन्दीयोंके हाथमें ममत्त्व भावसे उलटी बादक होजाते हैं वास्ते आत्मार्थी भाइयोंकों लोभवृति त्यागकर आसातनागोंसे बचना चाहिये ।

कीतनेक स्थानपर श्रावकलोक बीलकुल आलसी और प्रमादी पुरुषार्थ हीनबन बेठहै और मन्दिरजी नजाने सेवक भोजक ब्राह्मण माध रावल लोकोंको रजिष्टर ही करदीयाहो वह मिथ्यात्वी लोक अपने मनमाने वरताव मन्दिरजीमें करते है सेठजीतों दर्शन करनेको भी नासते भागते आतेंहै अगर पूजाभी करनीहोतों केशर चन्दन तैयार रेहतेंहै झट एक टीकी इदर दुसरी उदर देके अपनी वेगर निकालदेते है जहा देखाजावे वहा मिथ्यात्वी पूजेरोंका इतनातो फेल वदगयाहै की कीसी प्रकारकी आसातना करनेपरभी कोइ कहेनेवाले नही मीलतेहै अगर कोइ कहेतोभी दुसरेभाइ कहदेतेहैकि यह पूजारी नाराज होजायगातो मन्दिरजी कोनपूजेगा क्या जैनोंकी बाहदुरीहै जिन्हीके जरिये अपनी आत्माका कल्याण मनतेहै ओर उन्ही मन्दिरोंकी कुच्छभी सार नही करना क्या यह इसभव और परभवमें हितकारीहोगा ? आत्मबन्धुवों यह काम नोकरोंसे लेनेका नहींहै किन्तु इस्मे आत्मकल्याण समझके अपने हाथमें करनेकाहै नोकरोंसेतों कचरा नीकलाना वरतन वसाना या बाहारका कामलों मूल गुभारामें अपने हाथसे सब काम करना चाहिये किमधिकम् ।

भगवानके समोसरण या मन्दिर तथा साधुओंके व्याख्यानमें जानेवाले भाइयोंको अव्वल पांच अभिगम और दश त्रिकको ध्यानमें रखना चाहिये ।

पांच अभिगम

(१) सचितपदार्थ–अर्थात् अपने उपभोगकी सचित वस्तुयें पुष्पोंका हार गजरा, गुच्छा, मालादि तथा खानेका पान औरभी कोइप्रकारका सचित द्रव्यहो उन्हींकों बाहार रखना चाहिये ।

(२) अचितपदार्थ–अपनेपासमें जो अचित्त पदार्थ हे वहभी अन्दर लेजाने योग्यहो वह अन्दर लेजावे और बाहाररखने योग्य जो मुकट चमर छत्र जूता तलवारादि शस्त्रकों बाहर रखदे जो पास्मे वस्त्रादि रहे वहभी देशचाल माफीक जेसे राजादिपास जातीवखत शोभनिय वस्त्रभूषण पेहरेजातेहैं वैसे उन्सकोभी ठीक संभालके रखे ।

(३) एक शाहिका उत्रासन–द्रव्यभावसे शौचहोके मन्दिर जावे उन्सीवखत अच्छे वस्त्र जोकी वीचमे खीलाहूवा नहो उन्सीका उत्रासन करे ।

(४) प्रभुकि शान्तमुद्रा देखतेही दोनोहस्त जोडके मस्तकपर चडाना और नमस्कारकर अच्छगुणोंयुक्त भगवानकि स्तुति करे ।

(५) मन, वचन, कायाके योग्योंको सावद्य वैपारसे रोकके भगवानकि भक्तिमे तल्लीन वनादेवे।

। दशत्रिक–मन्दिरजीमें रखनेकाहै ।

(१) निस्सिहीत्रिक–जिनमन्दिरमें जानेवाले आत्मबन्धुवोंको तीन स्थानपर निस्सिही शब्दका उच्चारण करना चाहिये यत् (१) मन्दिरजीके द्वारपर पहूचतेंही " निस्सिही " कहना मतलबकि अवमें संसारसबन्धी कार्यसे निवृतिहूवाहू फिर कीतनाही काम क्युं नहो परन्तु ससारसंबन्धी कुच्छभी वार्तालाप नकरना (२) प्रदिक्षणा देनेकेबाद " निस्सिही " कहना कारण पहले निस्सिहीमें संसारकार्य छोडाथा परन्तु मन्दिरजीकी फूटटूट कचारादि आसातना टलाना श्रावकका फर्जहै वह सब करना या देखना राहाथा वहकरके अब दुसरीदफे " निस्सिही " मे उन्हींसें भी निवृततहू (३) द्रव्यपूजा करनेकेबाद " तीसरी निस्सिही " जो दुसरी निस्सिहीमें घर और मन्दिरजीके कार्यसे निवृतिहूवाथा परन्तु द्रव्यपूजा करनाथा वहभी होजानेके बाद निस्सिही कहके अबमै द्रव्यपूजासेंभी निवृततहूं फिर भावपूजाकरे यह निस्सिहीत्रिकके माफीक वर्ताव रखना चाहिये।

---

१ आचार्योका मत्तहैकी घरसे निकलतेंही " निस्सिही " कहना चाहिये फिर रहस्तेमे भी ससार सबन्धी वार्ता न करना चाहिये ।

(२) प्रदिक्षणात्रिक–मन्दिरजीमे प्रवेशहोतेंही भगवानको नमस्कारकर स्तुति करना बादमे ज्ञान दर्शन चारित्रपद आराधनार्थे प्रभुके दक्षाणावृतन तीन प्रदिक्षणादेवे मतलब तीनलोकका भवभ्रमण मीटाके ज्ञानादिकी प्राप्तीहो । एसी भावना रखे ।

(३) नमस्कारत्रिक–नम्रतापूर्वक पंचांग नमाके तीन दफे नमस्कार करें इन्हींसे निच गौत्रका नास और उच्च गौत्रकी प्राप्ती होतीहै ।

(४) पूजात्रिक–" अंगपूजा " सुगन्ध द्रव्यसे विवध प्रकारसे प्रभुकि नवांग पूजा करे " अग्रपूजा " अच्छे स्वच्छ प्रभुयोग्य पुष्प फल नैवद्य धूप आदि प्रभुकों चडाना ' भावपूजा " चैत्यवन्दन स्तवनादिक प्रभुके गुणोंका स्मरणकर अपनि आत्माकों पवित्र बनाना ।

(५) अवस्थात्रिक–प्रभुकि तीन अवस्थाका ध्यान (१) पिंडस्थावस्था० (२) पदस्थ० (३) रूपातीत० जिस्मे पिंडस्थावस्थाके तीन भेदहै (१) जन्मावस्था (२) राज्यावस्था (३) श्रमणावस्था इन्होंका विचार करना और पदस्थावस्था जोकी केवलज्ञानोत्पन्न होनेपर समोसरनमें देशना देतेहुवेका ध्यान और सिद्धपद निरंजननिराकारका ध्यान करना उन्होंको रूपातीतावस्था कहतेहै इन्होंका भिन्न भिन्न ध्यान करना ।

(१०) प्रणिधानत्रिक- १) जिनवन्दन० जावंति चेइ-आइं दि (२) मुनिवन्दन० जावंतिकेविसाहुंदि (३) प्रार्थना० जयवीयराय यावत् आभवमखंडा तक केहना ।

जिनमन्दिरमें पुरुष जीमणेपासे वैठके प्रभुकोवन्दे और स्त्रियों डावेपासे वेठकेवन्दे । दोनों भगवानसें जघन्य ६ हाथ उत्कृष्ट ६० हाथ दुर वैठकेवन्दे । वन्दन भी तीन प्रकारके है जघन्य एकाद स्तुति कहके शक्रस्तव कहे या अरिहंत चेइआणीवा कहके एक स्तुति कहना । उत्कृष्ट पांच दंडक सहित जयवीयरायतक और जघन्य तथा उत्कृष्टके अन्दरका वन्दनहै उसे मध्यम चैत्यवन्दन कहतेहै ।

इस लघु कीताबके अन्दर लिखीहुइ ८४ आसातना टालके पाचाभिगम धारनकरे और दशत्रिककों अमलमेंलाके प्रभुपूजा करनेवाला भव्यात्मा जघन्य तीन और उत्कृष्ट पन्दरा भवमे अक्षय सुखको प्राप्त करताहै प्रभुपूजाकेलिये भी एक लघु कीताब लिखीगइहै उन्हीकोभी आवश्य पढना चाहिये इत्यलम् ॥

। समाप्तम् ।



अथश्री

॥ जिनस्तुति ॥

—※(◎)※—

(१)

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धिश्चसिद्धिस्थिता,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः ।
श्रीसिद्धान्त सुपाठकामुनिवराः रत्नत्रयाराधकाः ।
पञ्चैते परमेष्टिनःप्रतिदिनं, कुर्वन्तुवोमङ्गलम् ॥ १ ॥

(२)

किंकर्पुरमयं सुधारसमयं किं चन्द्ररोचिर्मयं
किं लावण्यमय महामणिमयं कारुण्य केलीमय
विश्वानन्दमयं महोदयमयं शोभामय चिन्मयं
शुक्लध्यानमयं विपुर्जिनपतेः भूयाद्भवालम्बनम् ॥

(३)

पूर्णानन्दमयं महोदयमय कैवल्यचद्ङ्मय
रूपातीतमयं स्वरूपरमण स्वाभाविकीश्रीमयं ।
ज्ञानोद्योतमय कृपारसमयं स्याद्वाद् विद्यालयं
श्रीसिद्धाचलतीर्थराजमनिशं वन्देऽहमादीश्वरम्

(४)

नेत्रानन्दकरी भवोदधितरी, श्रेयस्तरोमञ्जरी
श्रीमद्धर्ममहानरेंद्रनगरी व्यापल्लताधूमरी ।
हर्षोत्कर्षशुभप्रभावलहरी रागद्वेषांजित्वरी
मूर्तिः श्रीजिनपुंगवस्यभवतु श्रेयस्करीदेहिनाम्

(५)

वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधाःसंश्रिता
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो, वीरायनित्यंनमः ।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्यघोरंतपो
वीरेश्रीधृति कीर्तिकान्ति निचयश्रीवीरभद्रंदिशः ॥

(६)

देवोऽनेक भवार्जितोर्जित महापाप प्रदीपानलो
देवः सिद्धि वधू विशाल हृदयाऽलंकारहारोपमः ।
देवोऽष्टा दशदोष सिंधुर घटानिर्भेद पंचाननो
भव्यानां विदधातु वांछितफलं श्रीवीतरागोजिनः

(७)

ख्यातोऽष्टापद पर्वतो गजपद सम्मेत शैलाभिधः
श्रीमान् रैवतकः प्रसिद्ध महिमा शत्रुंजयो मंडपः ।
वैभार कनकाचलोऽर्बुदगिरिः श्रीचित्रकूटादय
स्तत्रश्रीऋषभादयो जिनवराः कुर्वन्तुवो मंगलम्

(८)

विश्वव्यापीयशः प्रभात्र विभवं सद्भूतभक्त्यानता,
प्रातानल्प विकल्पजल्पकमला, संकल्पकल्पद्रुमम् ।
स्फूर्जत्कज्जल मञ्जुलच्छवितनं श्रीपार्श्वदेवस्तवे
जीरापल्लिपयोधिनेमिमहिला भालस्थलालङ्कृतिः ।

(६)

ग्रामस्वाम्यमरो मरीचिरमृताहार परिव्राजकः
योदाचामृतभुकभवोऽतिबहुलः श्रीविश्वभूतिर्मरुम्
विष्णुर्नैरयिको हरिश्चनरके भ्रान्तिर्भवान्तेवहु
श्चक्रीनाकिवरोऽथनन्दननृपःस्वर्गेऽवतात् त्रैशलः

(१)

जगत्रयाधार कृपावतार दुर्वार मसार विकारवैद्य
श्रीवीतरागत्त्वयिमुग्धभावाद्विज्ञप्रभोविज्ञापयामिकिंचित् ।

(११)

किं वाललीला कलितोनवालः पित्रोःपुरो जल्पति निर्विकल्पः।
वथा यथार्थं कथयामिनाथ निजाशय सानुशयस्तवाग्रे ॥

(१२)

दत्तं नदान परिशीलितंच नशालिशील नतपोऽभितप्त ।
शुभो नभावोऽप्यभवद्भवेऽस्मिन् विभोमया भ्रात महोपुर्धव

(१३)

वैराग्यरगः परवचनाय, धर्मोपदेशो जनरजनाय

मादाय विद्याऽध्ययनंचमेऽभूत् कियद्ब्रुवेहास्यकरं स्वामीश ॥

(१४)

परापवादेन मुखं सदोषं, नेत्रं परस्त्री जनवीक्षणेन ।
चेतःपरापाय विचिंतनेन, कृतं भविष्यामिकथं विभोऽहम् ॥

(१५)

किं भावी नरकोऽहं किमुत बहुभवो दुरभव्योनभव्यः
किंवाहं कृष्णपक्षी किमुचरमगुणस्थानकः कर्मदोषात् ।
वन्हि ज्वालेवशिक्षा व्रतमपिविपवत् खड्गधारा तपस्या
स्वध्यायःकर्णशूची यमइव विषमः सयमो यद्विभाति ॥

(१६)

तुभ्यं नमस्त्रि भुवनार्तिहरायनाथ
तुभ्यंनमः क्षितितलामलभूषणाय
तुभ्यं नमस्त्रिजगत. परमेश्वराय
तुभ्य नमोजिन भवोदधि शोषणाय

(१७)

श्रीसर्वज्ञ ज्योतीरूपं विश्वाधीशदेवेन्द्रं
काम्यागार लीलागार साध्वाचारंश्रीतारम् ।
ज्ञानोद्धारं विद्यासारं कीर्तिस्फारं श्रीकारं
गीर्वाणैर्वन्द्यांसानन्दभक्त्यावन्देश्रीपार्श्वम् ॥

(१८)

सरसशान्ति सुधारस सागर शुचितरं गुणरत्नमहाकरम् ।

भविकपङ्कज बोधदिवाकरं प्रतिदिन प्रणमामिजिनेश्वरम् ॥

(१६)

यदीय सम्यक्त्वबलात्प्रतीमो भवादशानां परम स्वभावं ।
कुवासनापाशनिनाशनाय नमोस्तुतस्मै तवशासनाय ॥

(२०)

भव्याम्भोज विबोधनैकतरणे विस्तारिकर्मावली
रम्भासमाज नाभिनन्दन महानष्टापदाभासुरैः ।
भक्त्या वन्दितपादपद्मविदुषासपादय प्रोज्झिता
रम्भासामजनाभिनन्दनमहानष्टापदभासुरैः ॥

(२१)

विपुलनिर्मलकीर्तिभरान्वितो, जयति निर्जरनाथनमस्कृतः ।
लघुविनिर्जितमोहधराधिपो जगतियःप्रभुशान्तिजिनाधिपः ॥

(२२)

विहित शान्तसुधारसमज्जन, निखिलदुर्जयदोष विवर्जितम् ।
परमपुण्यवता भजनीयतां गतमनन्तगुणैः सहितसताम् ॥

(२३)

सुवर्णवर्ण गजराज गामिन प्रलम्बबाहुं सुविशाललोचनम् ।
नरामरेन्द्रैःस्तुतपादपङ्कजं नमामिभक्त्याऋषभंजिनोत्तमम् ॥

(२४)

आशोकवृक्षः सुरपुष्पवृष्टि र्दिव्यध्वनिश्चामरमासनञ्च ।
भामण्डलंदुन्दुभिरातपत्रं सत्प्रातिहार्याणि जिनेश्वराणाम् ॥

(२५)

अनन्त विज्ञान विशुद्धरूपं निरस्तमोहादि परस्वरूपम् ।
नरामरेन्द्रैः कृतचारुभक्ति नमामि तीर्थेशमनन्तशक्तिम् ॥

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमः प्रभुः
मंगलं स्थूल भद्राद्या, जैनोधर्मोऽस्तु मगलं । १
भवबीङ्कुरजनना, रागाद्या' चयमुपागता
यस्य· ब्रिह्मावा विष्णुर्वा, हरो जिनोवा नमस्तस्मै । २
अद्यमेसफलं जन्म, अद्यमे सफलाक्रिया ।
शुद्धोदिनोदयोदेव, जिनेन्द्र तवदर्शनात् ॥ ३ ॥
अद्यमेचालितगात्र, नेत्रेच विमलेकृते
स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु, जिनेन्द्र तवदर्शनात् ॥ ४ ॥
अद्य मिथ्याअन्धकारश्च, हतोज्ञान दिवाकरः ।
उदेतिस्म शरीरेऽस्मिन्, जिनेन्द्र तवदर्शनात् ॥ ५ ॥
युगादि पुरुषेन्द्राय, युगादि स्थितिहेतवे ।
युगादि शुद्ध धर्माय, युगादि मुनयनम' ॥ ६ ॥
दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनं ।
दर्शन स्वर्गसोपान, दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥ ७ ॥
दर्शनेन जिनेद्राणाम्, मुनिनापाद सेवया ।
नतिष्टते चिरंपापं, मामपात्रमिवांभसा ।. ८ ॥
पाताले यानि विंबानि, यानि विंबानि भूतले ।

स्वर्गेच यानि बिंबानि, तानि वन्दे निरन्तरम् ॥ ९ ॥
जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति दिने दिने ।
सदामेस्तु सदामेस्तु, सदामेस्तु भवेभवे ॥ १० ॥
नहित्राता नहित्राता, नहित्राता जगत्रये ।
वीतराग समो देवो, नभूतो न भविष्यति ॥ ११ ॥
नमस्कार समो मन्त्र, शत्रुंजय समोगिरि ।
वीतराग समो देवो नभूतो न भविष्यति ॥ १२ ॥
ॐकार बिंदु सयुक्तं, नित्य ध्यायन्ति योगिनः ।
कामद मोक्षदं चैव, ॐकाराय नमोनमः ॥ १३ ॥
इन्द्रोपन्द्रौ पुनर्नत्वा, जिनेन्द्रमथ नेमिनम् ।
प्रारेभाते स्तोतुमेव, गिराभक्ति पवित्रया ॥ १४ ॥
सर्वारिष्ट प्रणाशाय, सर्वाभीष्टार्थदायिने ।
सर्वलब्धि निधानाय, गौतमस्वामिनेनमः ॥ १५ ॥
पार्श्वनाथ नमस्तुभ्यं, विघ्न विध्वंसकारिणे ।
निर्मलं सुप्रभातंते, परमानन्ददायिनः ॥ १६ ॥
अश्वसेनावनीपाल, कुक्षि चूडामणे प्रभो ।
वामासुनो नमस्तुभ्यं, श्रीमत्पार्श्व जिनेश्वरः ॥ १७ ॥
नमो दुर्वार रागादि, वैरि वार निवारिणे ।
अर्हते योगिनाथाय, महावीराय तायिने ॥ १८ ॥
ॐनमो विश्वनाथाय, जन्मतो ब्रह्मचारिणे ।
कर्मवल्लीवनच्छेदनेमयेऽरिष्टनेमय ॥ १९ ॥

कल्याणपादपारामं, श्रुतगङ्गा हिमाचलम् ।
विश्वत्रयेशितारंच त वन्दे श्रीज्ञातनन्दनम् ॥ २० ॥
श्रीमान्नाभि कुलादित्य, मरुदेव्यङ्गजप्रभो ।
संसाराब्धि महापोत, जयत्वं वृषभ ध्वज ॥ २१ ॥
पान्तुवः श्रीमहावीर, स्वामिनो देशनागिरः ।
भव्यान मान्तरमल, प्रक्षालन जलोपमाः ॥ २२ ॥
पन्नगेच सुरेंद्रेच, कौशिके पादसस्पृशि ।
निर्विशेष मनस्काय, श्रीवीरस्वामिनेनमः ॥ २३ ॥
वीरंदेवं नित्यंवन्दे, जैनाःपादायुष्मान् पान्तु. ।
जैनं वाक्यंभूयाद्भूत्यै, सिद्धादेवीदद्यात्सौख्यम् ॥२४॥
सर्व मंगलं मांगल्य, सर्व कल्याण कारकम् ।
प्रधानं सर्व धर्माणाम् जैनं जयति शासनम् ॥ २५ ॥



प्रभु दरसन सुखसंपदा, प्रभु दरसन नवनिध ।
प्रभु दरसनसे पामीए, सकल पदारथ सिद्ध ॥ १ ॥
भावे जिनवर पूजीए, भावे दीजे दान ।
भावे भावना भावीए, भावे केवलज्ञान ॥ २ ॥
जीवडा जिनवर पूजीए, पूजाना फल जोय ।
राजा नमे प्रजा नमे, आण न लोपे कोय ॥ ३ ॥
प्रभु नामकी औषधी, सचे दीलसे खाय ।
रोग शोक व्यापे नही, महा दोष मीटजाय ॥ ४ ॥

जे दर्शन दर्शन विनों, ते दर्शन निर्पेक्ष ।
जे दर्शन दर्शन हुवे, ते दर्शन सापेक्ष ॥ ५ ॥
प्रभु पूजनकों म्हैं चल्यो, चोवा चंदन घनसार ।
नव अंगे पूजा करी, सफल करू अवतार ॥ ६ ॥
पांच कोडीके पुष्पसे, पाम्या देश अठार ।
कुमारपाल राजा थयो, वरत्यो जयजयकार ॥ ७ ॥
श्रीजिनवरके चरणमें, उत्कृष्ट परिणाम ।
करतों पूजा पामीए, मोक्ष सर्गकों धाम ॥ ८ ॥
भवदव दहन निवारवा, जलद घटासम जेह ।
जिनपूजा युक्ते करी, पामीजे भवछेह ॥ ९ ॥
पूंजा कुगतिनी अर्गला, पुन्य सरोवरपाल ।
शिवगतिनी साहेलडी, आपे मंगल माल ॥ १० ॥
जलभरी संपुट पत्रमें, युगलीक नरपूजंत ।
ऋषभ चरण अंगुटडे, दायक भवजल अन्त ॥ ११ ॥
तीर्थंकरपद पुन्यथी, त्रीभुवनजन सेवंत ।
त्रीभुवन तिलकसमा प्रभु, भाल तिलक जयवन्त॥१२॥
उपदेशक नवतत्त्वना, तिणे नव अंग जिनेन्द्र ।
पूजो बहु विधरागसे, कहे शुभवीर मुनेन्द्र ॥ १३ ॥
काल अनादि अनन्तसे, भवभ्रमन नहींपार ।
ते भ्रमन निवारवा, प्रदक्षिण त्रीणसार ॥ १४ ॥
भमतिमें भमतोंथकों, भवभावठ दुर पलाय ।
दर्शन ज्ञान चारित्ररूप, प्रदक्षिणा तीन देवाय ॥१५॥

दर्शन ज्ञान चारित्रका, आराधन करो सार ।
सिद्ध शिलाके उपरे, होमुझ वास श्रीकार ॥ १६ ॥
चाडी चपो मोगरो, सोवन कुपलीयो ।
पार्श्व जिनेश्वर पूजसो, पांचों अंगुलीयो ॥ १७ ॥
प्रभुका नाम अमूल्यहै, वहामे लगतन मूल्य ।
नफा बहुत तोटानहीं, भरभर मुखसे बोल्य ॥ १८ ॥
कुंभे बाध्यो जलरहे, जलविन कुंभ नहोय ।
ज्ञाने बान्ध्यो मन रहे, गुरुविन ज्ञान नहोय ॥ १९ ॥
गुरुदीवो गुरुदेवता, गुरुविना घोर अन्धकार ।
जेगुरु वाणी वेगला, ते रडवडीया संसार ॥ २० ॥
ज्ञानसमो कोइ धननहीं, समत्तासम नही सुख ।
जीवतसम आसा नही, लोभसमो नही दु.ख ॥ २१ ॥
ज्ञान वडो संसारमें, ज्ञान परमसुख हेत ।
ज्ञानविनो जगजीवडा, नल्है तत्त्व संकेत ॥ २२ ॥
तुजविनो इण संसारमें, सरणो नही कोइ स्वाम ।
तुज चरणोंथी पामीये, अनन्तसुखोको धाम ॥ २३ ॥
जगतारण जगवालहो, तुजग जयजयकार ।
जो तुजसरणे नित्यरहे, ते तरीया संसार । २४ ॥
डुगरजी अरजी करू, तुछे दीनदयाल ।
मुझ अधमने तारवा, कर कृपा कृपाल ॥ २५ ॥
त्रिजगनायक तु धणी, महामोटो महाराज ।
महा पुण्यथी पामीयो, तुम दरसन हुं आज ॥ २६ ॥

आज मनोरथ सहु फल्या, प्रगटियो पुन्य कीलोल ।
पापकर्म दुरे टल्यो, नाठा दुःख दंदोल ॥ २७ ॥
सुखदाता प्रभु तुं वडो, तुम सम अवरन कोय ।
करम मल दूरे कर्या, पाम्या शिवपद सोय ॥ २८ ॥
ज्ञानावर्णिय च्चय करी, दरसनावर्णिय कर्म ।
वेदनियकर्म दुरो करी, टाल्यो मोहनि भर्म ॥ २९ ॥
आयुष्यकर्म ने नामकर्म, गौत्र अने अन्तराय ।
अष्ट करम इणीपरे, दुर कर्या महाराय ॥ ३० ॥
दोप अठारा च्चय गया, प्रगट्या पुन्य अनन्त ।
अन्तरंग सुख भोगवे, निश्चल धीर महन्त ॥ ३१ ॥
कल्पवृच्चने कामकुंभ, पुरे मनना कोड ।
प्रभुसेवाथी ज्हे मीले, जो वंच्छा होय अडोल ॥ ३२ ॥
त्रिभुवनमे तुं वडो, तुम सम अवरन कोय ।
इन्द्र चन्द्र चक्री हरि, तुजपद सेवे सोय ॥ ३३ ॥
प्रभुसेवा भावे करे, प्रेमधरी मन रंग ।
दुःख दोहग दुरे टले, पामे सुख मनचंग ॥ ३४ ॥
पूजा करतों प्राणीया, पोते पूजनिक होय ।
इणभव परभव सुख घणा, तस्म तोले नही कोय ॥ ३५ ॥
जीवडा जिनवर पूजिये, जिन पूज्या सुख थाय ।
दुःख दोहग दूरे टले, मनवंच्छित सुखपाय ॥ ३६ ॥
द्रव्यभावथी अतिघणो, हेंडे हरप न माय ।
इणविध जिनवर पूजतों, शिवसपत्त सुख थाय ॥ ३७ ॥

। श्रीरस्तु कल्याणमस्तु इति समाप्तं ।

अथश्री

प्रभुपूजा.



प्रभुपूजाकाहेतु.

प्रभुपूजा करना जैनसिद्धान्तोसे मोक्षका कारणहै और जितने जीव मोक्षमे गयेहैं वह सब प्रभुपूजा करकेही गयेहैं चाहे मनुष्यके भवमे करीहो चाहे देवतोंके भवमें करीहो परन्तु प्रभपूजा आवश्यकरीहै वास्ते मोक्षार्थी भाइयोंको अपना मनुष्यजन्म पवित्र बनानाहो तो प्रभुपूजा आवश्य करना चाहिये। प्रभुपूजाके फलकेलिये शास्त्रकार क्या फरमा रहेहैं जरा इधर भी देखीये।

सूत्रश्री रायपसेनजी और जीवाभिगमका पाठः

,, पुव्वंपच्छा ,, इसभवमे या परभवमे फल
,, हियाए ,, हितकारक फल होगा दोनोंभवोंमे
,, सुहाए ,, सुखकारक फल होगा दोनोंभवोंमे
,, खमाए ,, कल्याणकारक फलहोगा ,,
,, निस्सेसियए ,, यावत् मोक्षप्राप्ती होगा
,, आणुगामिताए ,, प्रभुपूजाका फल भवोभवसाथ चलेगा

इस तीर्थंकरोंके महा वाक्यसे निशंक सिद्ध होताहैकि प्रभुपूजा अक्षय सुखरूपी फलदेनेमें कल्पवृक्ष सामानहे। किन्तु सुख कब मीलताहे कि जेसे कोइ बेमार मनुष्य अपनि विमारी दूर करनेके हेतुसे कुच्छ औषधी लेनाचाहे तब वह डाक्टरके पास जाये वह डक्टर योग्य दवादेवे और उसीपर परेज रखना बतलावे ओर विमार डाकटरकी दीहुइ दवालेवे और केहना माफीक परेज रखेतों रोगकि चिकीत्साहोवे परन्तु विमार पूर्णतय परेज नरखेंतो वह अच्छी दवा रोगमीटानेकि निष्पत् रोगकि वृद्धिदाता होतीहै। इस उपनय अर्थात् रोगी–संसारी-जीवोंके अनादिकालसे कर्मोंका रोग लगाहै। डक्टर सद्गुरु-महाराजने प्रभुपूजारूपी दवा दीवीहे साथमे दवा लेनेकि (प्रभुपूजाकरनेकि) विधि बतलाइहै और दवालेनेपर परजे (अविधि आसातना अतिचारादि) रखना–अयोग्याचरना न करना इत्यादि हितशिक्षाके माफीक वर्तोन करनेसे भावरोग (कर्मो) का शीघ्रही क्षय होजाताहै वास्ते भव्यात्मावोंको विधिपूर्वक प्रभुपूजा करनेमे विशेष पुरुषार्थ करना चाहिये भगवानने फरमायाहै कि " यत् "

विहिकुज्जाकिरियाओ अविहिम हऊ

आजकाल कीतनेहि देशोंमें मुनिमहाराजोंका विहार कमहोनेसे कितनेकलोक प्रभुपूजादि धर्मकृत्यकि विधिसे अज्ञातहै उन्ही भाइयोंको एक लघु कितावकि आवश्यताहै इसी

हेतुसे यह लघु किताब लिखीजातीहै आसाहै कि हमारे आत्म-बन्धु स्वल्प परिश्रमद्वारा महान् लाभ आवश्य प्राप्त करेगा।

प्रभुपूजामे शुद्धिकि आवश्यक्ता

प्रभुपूजाकरनेवाले सज्जनोंको प्रथम चार प्रकारकि शुद्धिकि खासावश्यक्ताहै यथा-(१) द्रव्यशुद्धि (२) क्षेत्रशुद्धि (३) कालशुद्धि (४) भावशुद्धि।

(१) द्रव्यशुद्धिके तीन भेदहै (१) शरीरशुद्धि (२) पूजाकी सामग्रीशुद्धि (३) पूजामे जो द्रव्य खरच कियाजाताहै वह (धन) शुद्ध

जिस्मे प्रथम शरीरशुद्धि-प्रभुपूजाकरनेवालों सज्जनोंको पेस्तर यह भावना रखनिचाहियेकि आज मेरा अहोभाग्यहै कि जगतोद्धारक परमेश्वरोकि पूजाकरनेका समय मुझे मीलाहै परन्तु मेरा शरीर मलमूत्र या स्त्रियोंदिके परिचयसे अशौचहै और गृहस्थाचारभी है कि पवित्रकार्य पवित्रतासेही कियाजाताहै तों त्रीलोक्य पूजनिय प्रभुपूजामें तों पवित्रताकि खासावश्यक्ताहै इत्यादि भावनासे श्रावकवर्ग उपयोगसंयुक्त एक प्रकाशवाला भाजनकों दृष्टीसे वह वस्त्रसे प्रतिलेखनकरके घट कपडासे गलाहूवा निर्मलजल वहभी अधिकनही किन्तु कीसी अच्छे गृहस्थोंके वहा पावणा (मेहमान) आयाहूवेकों

---

१ उत्सर्गमार्गमें प्रभुपूजाकरनेवाला गरम जलसे स्नान करतेहै और अपवादमे शीतलजलसेभी करशक्तेहै।

खुले दीलसे नृतपुरसे, तात्पर्य यहहै कि जल इतनाहो कि जिससे साफ–स्वच्छ होजानेपर बेफायदे पाणी नजाना चाहिये। स्नानकरनेकास्थान बीलकुल शूकाहूवा जहापर सूर्यकि आताप पडतीहो एसास्थानमें या उन्ही स्थानपर एक चौकी (बाजो-ट) जिसके चौतर्फ वेदिक और बिचमें एक नालीहो उन्ही नालीके नीचे एक भाजन रखादियाजायकि वह स्नानकापाणी उन्ही भाजनमे एकत्रहोजाय वह पाणी साफ निर्जीवभूमिका-पर यत्नासे परठदियाजायाकि तत्काल शूकजावे ताकेजीवोकि उत्पतिनहो कारण श्रावकवर्ग हमेशां यत्नासेही प्रवृतिकरने-वाले होतेहै " जयणा धम्मस्स जणणीश्रो "

स्नानकरतेसमय पएडपोपकवृति नरखनी चाहिये किन्तु आत्मकल्याण भावना रखनिचाहिये यथा–आज मेरा सफल दिनघडीहै कि मुझे जगतारक जिनेश्वरोके चरणकमल भेटने-का समय मीलाहै कि।

" जे आसऽवातेपरिसऽवा " भगवतीवचनात्

इन्द्रादिकतों भगवानका न्हवण (प्रक्षाल) मेरूसीख-रपर कराके अपनी जन्म पवित्र करतेहै क्याकरू मेरी इतनी शक्ति नहीहै म्है आज यहापरही मेरूसीखर समझके मेरा जन्म सफल करूगा। प्रभुपूजा करनेवाले अच्छे साफ स्वच्छ पुरुषोंकों दोय वस्त्र स्त्रीयोंकों तीन वस्त्र नित्य धोयेहुवे रखना चाहिये और मुखकोश आठ पडवाला रखना चाहिये कारण

अपने शरीरकि वायु भगवानके नलगनी चाहिये । कितनेक लोग रेस्मी मुगटादि पूजाके अन्दर उपभोगमे लेतेहै उन्ही आत्मबन्धुवोंकों विचार करनाचाहियेकि । रेस्म केसा अपवित्र है और किस घोर अत्याचारसे पेदा होताहै उन्हीकों अपनके सा पवित्रकार्यमें लेतेहै हे सज्जनो त्रसजीवोंकों अग्निपर पचाके उन्होका तार बनातेहै उन्ही तारोंका रेस्मी वस्त्र बनायाजातेहै तो क्या वीरपुत्रोको सुनतेही घृणा नआवेगा ? इस समय लोक अपने संसारीक कार्योंमेंभी रेस्मीवस्त्रोंकों देशोटन देदीयेहै तों अहिंस्या पालनकरनेवाले वीरपुत्र प्रभुपूजा समय एसा अपवित्र रेस्मीवस्त्रकों क्युकाममें लेतेहै अर्थात् रेस्मीवस्त्र काममे नहीलेनाचाहिये । साफ सूत-कपासका पवित्र वस्त्रही पूजासमय वापरना चाहिये ।

जब कबी पूजाकरनेवालोंके स्नानका स्थान देखाजाताहै तों असंख्य त्रसजीव कलवलाट करतेहै और निलणफुलनकातो पूछनाहीक्या तों परमेश्वरके भक्त पूजाकरनेवालेको इतनाही ख्याल नही होताहैकि हमलोकोंका कितना प्रमादहै कि जिन्होंके जरिये अनन्ते जीवोंका निर्थक प्राणनाश होजातेहै जब पूजाकरनेवालोंके कर्तव्यपर दृष्टीपात करतेहै जब मालम होतेहै कि नामतो प्रभुपूजाका और पौपण स्वइन्द्रियोंका क्युकि स्नानके साथ तेल मेट साबुका लगाना दाढीमुच्छोंका जमाना इतनाही नही बल्कि दाढीमुच्छ जमानेमें और तीलकादि करनेमें अद्धघंटा पुरा होताहै और प्रभुपूजा पांचसात

मीन्टमे एक टीकी इदर दुसरी उदरदेके अपनि वेगार निकाल-
देतेहै इतनेमें जो घडीकि टैम दिखपडेतो यहही भावना होती
है कि अहो टैमतो बहुत होगइहै आजतों दुकांन जलदीजानाहै
कोन पाचाभिगम करतेहै कोन दशत्रीककों जानतेहै कोन
चौरासी आसातना टालतेहै कोंन भावना सहित चैत्यवन्दन
करतेहै क्या भगवानकेभक्त श्रावकों एसाही होताहोगा ?
नही ? नही। कचीनही। यह हमारा लिखना सर्व जिन्होंकों
नहीहै परन्तु प्रमाद करनेवालोंकोंहीहै।

(प्रश्न) तांक्या पूजा नही करना चाहिये ?

(उ) बस काटीका और आगडातकहीहै। प्यारे आ-
त्मबन्धुवों श्रावकलोगोंका कृतव्यहै कि यथाशक्ति प्रभुपूजा-
किये सिवाय अन्न जलभी लेना उचित नहीहै कारण प्रभुपू-
जा करनेसे चित्तवृति निर्मलहोती शासनपर दृढश्रद्धा रेहतीहै
शंकाकचादि दोषणोंसे वचजातेहै यावत् परम्पदकि प्राप्ती
होतीहै आपही विचारेकि हमने उपदेश कियाहै यह पूजा न
करनेकाहै या विधिपूर्वककर अक्षय सुखप्राप्ती करनेकाहै देखिये
शास्त्रकार क्या फरमातेहै।

यथा--आणाइतवो आणाइसंजमो, तहदाणपूयाओ
आणाराहियोधम्मो, पलालपुलव्व परिहई ॥१॥

भावार्थ--वीतरागकि आज्ञा सयुक्त तपजप संयम दान

भावार्थ—जहा आरंभहै वहा दया नहीहै, जहा स्त्रीपरिचयहै वहां ब्रह्मचार्यकुशल नहीहै, जहां शांकाकत्ताहै वह सम्यक्त्व नहीहै और जहा द्रव्यका ग्रहनहीहै वहा कुच्छभी नहीहै अब सुहृदयसे विचारीयेकि यत्नाकों शास्त्रकारोंने कितनी प्रधानमानीहै ? वास्ते यत्नापूर्वक धर्मक्रियावो करनेसेही जिनाज्ञापालन होशक्तीहै ।

(प्र) आरभमे दयानहींह तों पूजाकरनेमेतो हिंस्या होतीही ?

(उ) क्या आपकोंभी कीमी ढुंढकभाइयोंका स्पर्शहुवाहै

(प्र) नही नही परन्तु आपने काहाथा " आरंभे नथी दया " इसपरसे हमने यह प्रश्न कियाहै इस्मे किसीके स्पर्शका क्या कामहै ?

(उ) हे भव्य हिंसा तीन प्रकारकि होतीहै (१) हेतुहिंस्या (२) स्वरुपहिंस्या (३) अनुबन्धहिंस्या जिसे अनुबन्धहिंस्यातो यत्ना करताहुवाभी जिनवचनोंकों न्युनाधिक कहै वह भवभ्रमन करानेवालीहै तथा जों हेतुहिस्याहै वह गृहकार्य तथा अयत्नासे प्रवृति या धर्मकार्य प्रमादसे करनेपर हिंस्या होतीहै और स्वरूपहिंस्या जिनाज्ञा संयुक्तधर्म साधनक्रिया जेसें मुनिका विहार आहार निहार नाचावैठना नदी उत्तरना पूंजन प्रतिलेखन करना श्रावकोंकों पूजाप्रभावना स्वामिवत्सल-

ल गुरुवन्दनादि क्रियाकरतो । स्वरूपसे हिंस्या देखनेमे आतिहै परन्तु उन्होंका विपाक कडवा नहींहै वह बन्धहोतोंभी पुन्यानूबन्धी पुन्यका बन्धहोगा जिसे भवान्तरमे धर्मसे नजीक करेगा वास्ते पूजादि धर्मकरणी यत्नापूर्वक करनेसे शास्त्रकारोंने आरंभ नही काहाहै कारण यहा परिणमधर्मका शुभहै यथा—

यत् " सुभ जोगपडूच नोआयारंभा, नोपरारंभा, नोतदुभयारंभा अणारंभा " भगवतीसूत्रवचनात् ।

भावार्थ—जहां धर्मके इरादासे शुभयोगोंकि प्रवृति होतीहै वहां आत्माकारंभ परकाआरभ आत्मा या परकाआरंभ नही होताहै किन्तु अनारंभहि कहाजाताहै हां अगर प्रमादसे अशुभयोगोंसे धर्मक्रियाहीकिजावेतों उन्होंको शास्त्रकारोंने आरंभकाहाहै ।

(प्र) अच्छा अगर हम प्रभुपूजा अविधिसेही करेगे तो हमको क्या नुकशानहै कारण हमारा नामूनतों होजायगाकि सेठजी पूजाकरतेहै और कबी कामभी पडेगातो इन्ही विसवाससे हमारा ससारीक कार्यभी निकलजायगा ।

(उ) हे आत्मबन्धु इसमें आपका बडाभारी नुकशान होताहै जेसे किसी मनुष्यने एक वैपार कराहै उन्हीमे एक लक्ष रूपइया नफाका मिलताहै वह प्रमादके वसहोके उन्ही नफाकि दरकार नही रखताहुन' केहताहैकि अगर नफा न

(प्र) अच्छा साहिब हमसे वनेगा यहांतक हम य त्नापूर्वक विधिसेही करनेकि कोपीश करंगे परन्तु आप इस लेखमे ॥ स्नानकरनेकि विधि वतलाइहै तो क्या साधुवोंको एसा उपदेश करनाभी काहांपर लिखाहै ?

(उ) हे महानुभाव–उपदेशके तीन विकल्प होतेहै (१) विधिप्रदर्शक (२) कल्पप्रदर्शक (३) आदेशप्रदर्शक जिस्मे पूर्व महाऋषियोंके कथनानुस्वार मेने स्नानकि विधि वतलाइ है उन्हीमे हेतुहै कि अविधिसे अधिक पापका भागी होताहै उन्होसे वचनेकि विधि वतलाना साधुका फर्जहै देखिये प्रज्ञापनासूत्रके पेहलेपदमे आर्य वैपार आर्यकलावोंका प्रतिपादन कीयाहै तो उन्होका हेतुहैकि अनार्य वैपार व कलावोंमे अधिकपापहै उन्होंसे वचना कारण सिवाय शास्त्रोके विधिका जानना असंभवहै वास्ते यह मेरा आदेश नही किन्तु विधिदर्शक उपदेशहै इत्यादि उपयोग संयुक्त यत्नापूर्वक शरीरशुद्धिकि आवश्यकताहै ।

(२) पूजाकिसामग्री शुद्ध–पूजाके उपभोगमे आतेहुवे पदार्थ

(१) जलशुद्ध–घटवस्त्रसे गलाहुवा निर्मलजल

(२) चन्दन–शुद्ध सुगन्धी साफ ओरीसेपर घसाहुवा चन्दन

(३) पुष्प–चम्पा चमेली गुलाब मोगरादि तत्कालके लाये हुवे

(४) फल–भगवानको चढनें योग्य आम्र नालेयर बदामादिफल

(५) नैवद्य-तत्काल बनाया हुवा उत्तम मिष्टान्न या मेवा

(६) धूप-अगर तगरादि दशांगधूप सौगन्धीकधूप

(७) दीप–पूजा समय अच्छा घृतका दीपक

(८) अक्षत–शुद्ध पवित्र अखंडित अक्षत

और भी जो वस्त्रके अगलुणे आदि सब सामग्री साफ–शुद्ध होनेकी जरूरत है ।

(२) द्रव्यशुद्धि–न्यायोपार्जित द्रव्य प्रभुभक्तिमें वापरना जरूरी है हालके जमानेमें कितनेक भाइयोंका कर्त्तव्य व्यापार वे-पारादि देखा जावे तो इन्ही प्रतिज्ञाका पालन होना दुष्कर है उन्ही आत्मबन्धुओंको एक खाना ऐसा रखना चाहिये कि जो न्यायसे पैसा पैदा होता है वह उन्ही खानेमें अलग रखें. धर्मकार्यमें पैसा वापरना हो वह उस न्यायोपार्जित द्रव्य काममें लगावें एसे या कीसी अन्य प्रकारसे ही परन्तु जहातक बन सके शुद्ध न्यायोपार्जित द्रव्य ही धर्मकार्यमें लगाना चाहिये । यह तीनों प्रकारकी द्रव्यशुद्धि है यह भावशुद्धिका कारण है इति द्रव्यशुद्धि ।

(२) क्षेत्रशुद्धि—जिस क्षेत्रमें वीतरागकी मूर्ति हो उन्हीको क्षेत्र कहाजाता है, जिस्में भी वीतरागकी मूर्ति अगर अन्यमति लोग अपने देवालयमें स्थापन कर ली हो तथा अपने कब्जे कर ली हो वह क्षेत्र अशुद्ध है. यथा—

" नोकप्पइ अन्नतिथयाणं अन्नतिथय देवीयाणं अन्नत्थी परिग्गहिय अरिहंत चेइयाणीवा " उपासकदशाग वचनात् ।

भावार्थ—नहीं कल्पे अन्य तीर्थी तथा अन्य तीर्थीयोंके देव हरि हलधरादि और जो अरिहंतोंकी मूर्ति है किन्तु अन्य-तीर्थी लोकोंने अपने देव तरीके अपने कब्जेमें कर ली हों वास्ते एसा स्थानोंको क्षेत्राशुद्धि कहते है ।

स्वतीर्थीयोंके जो चैत्य (मन्दिर मूर्ति) है वह भी दो प्रकारके होते है (१) विधिचैत्य (२) अविधिचैत्य । जिस्में अविधिचैत्य यथा—

(१) अभिमानके लिये चैत्य बनाया हो

(२) यश कीर्तिके लिये ही चैत्य बनाया हो

(३) इर्षा द्वेषादिके लिये चैत्य बनाया हो

(४) अन्यायादि अकृत्य कर द्रव्योपार्जनसे चैत्य बनाया हो

(५) पासत्था द्रव्यलिंगीयोंके द्रव्यसे चैत्य बनाया हो ।

यह पांच प्रकारके चत्य चतुर्विध संघको अवन्दनीय है औरभी जहापर लोकव्यवहार अशुद्ध हो ममत्व कदाग्रहादि हो

यह भी क्षेत्र अशुद्ध है। और पांच प्रकारके चैत्योंको क्षेत्रशुद्ध कहते है. यथा—

(१) एक गच्छकी निश्रायके बनाये हुवे चैत्य

(२) सर्व नगरके संघकी निश्राय बनाये हुवे चैत्य

(३) मंगलचैत्य–मन्दिरजीके दरवाजेपर मूर्ति होती है

(४) भक्तिचैत्य–अपने घरके अन्दर देरासर होता है

(५) शास्वत चैत्य–देवलोकोंमे तथा द्विप या पर्वतों पर है।

यह पांचो प्रकारके चैत्य चतुर्विध संघको वन्दनपूजन करने योग्य हैं इन्होंको क्षेत्रशुद्धि कहते है। इति क्षेत्रशुद्धि।

(२) कालशुद्धि–अपने शरीरकी कायाचिंता टट्टी पेसाब आदिसे नही निवृते, लेनदेनवालोंका टंटाफीसाद पीछे घूमताही रहै, राजका तथा नियातका बोलवा फीरता ही रहै यह सब काल अशुद्धि है क्योंकि पीछला विकल्प बना रहनेसे प्रभु पूजामें बरोबर ध्यान नहीं लगता है एक तरेहाकि वेगारके माफीक आतुरता रहती है वास्ते उक्त कार्योसे निवृति होना यह कालशुद्धि है इतना अवश्य ख्याल रखना चाहिये कि यह संसारिक कार्य तो मेने अनतिवार किया है यह सब परकार्य है परन्तु मेरी आत्माके हितकारीतो एक प्रभु पूजाही है तो इस टाइम पहिलेसेही कोइ तरेहका विघ्नभूत कार्य रखनाही नहीं चाहिये।

सूर्योदय होनेके पहिले तथा सूर्यास्त होनेके बाद पूजा पचालन कराना भी कालअशुद्धि है। शास्त्रकारोंका फरमान है कि परमेश्वरके भक्त त्रीकाल पूजा करते है जिस्में सूर्योदय होनेके बादमें धूप वासक्षेप फल नैवद्य और अक्षतपूजा करते है और पहिले दिन जो भगवानकी पूजा अंगी मुकुट आदि धारण कराये हैं वह ठीक मर्यादा माफीक नगर निवासी चतुर्विध संघ भगवानके दर्शन करे वहांतक रखना चाहिये कि परमेश्वरों के दर्शनाभीलाषीयोंका दर्शन कर हृदय हर्षित हो। परन्तु कितनेक लोग अपने स्वार्थ के लिये बहुत ही जल्दी प्रक्षु-प्रक्षालन करा देते हैं जब साधु साध्वी श्रावक श्राविकादि भगवानके दर्शन करनेको आते है उस समय नोकर-पूजारीलोक बेदरकारीसे इधर उधर भगवानके पास फीरते ही रहते और अंगलुखादि करते है वह लोगोंको बताते है कि हम भगवानकी पूजा करनेवाले है परन्तु यह ख्याल नहीं कि दर्शनार्थीयोंको भगवानकी मुद्राके बदले हमारी पूठका ही दर्शन होते है यहां पर कुच्छ विचारना चाहिये कि यह भगवानकी आशातना और दर्शनार्थीयोंकी अन्तराय कौनसा कर्मको पुष्ट बनाती है अर्थात् मोहनीय कर्म और अन्तराय कर्मका बन्ध होता है। जब महान् लाभका कार्यमें इतना नुकशान क्यों उठाना चाहिये वास्ते जिन्हीं प्रभुभक्तोंकों जलदि हो वह वासक्षेप धूप अक्षतादिकि पूजा करे और पीछे यथासमयपर अंग और अग्र पूजादि करके अपना कालको शुद्ध बनावे।

दुसरी अग्रपूजा जो नगर निवासी चतुर्विधसंघ दर्शन कर लिया हो बादमें भगवानकी अग्रपूजा अंगपूजा करना यह विधि आगे चलके लिखेंगे ।

तीसरी कल्याणआरति–जोकि कुच्छ सूर्य दीखता है एसा सायकालमें धूपादिसे आरति करना और देववन्दन चैत्यवन्दनसे भावपूजा करना श्रावकोंका कर्तव्य है तत्पश्चात् मन्दिरजीका पटमगल होना चाहिये ।

(प्र०) सायंकालमें अगर मन्दिरजीके पटमगल कर दिया जावे तो भगवानकी भक्ति किस समय करनी चाहिये ?

(उ) भगवानकी आज्ञा हो उस समय भक्ति करना चाहिये.

(प्र०) सूर्यास्त होनेके बाद रोशनाइ करके भगवानकी भक्ति करनेकी शास्त्रकारोंकी आज्ञा हे या नही ?

(उ) शास्त्रकारोंकी तो आज्ञा है कि सायकाल कल्याण आरति कर देववन्दन करके गुरुमहाराजके पास जाके अपने दिनके अन्दर लगे हुवे व्रतोंके अतिचार या कीया हुवे पापारंभकी आलोचना करनेकों प्रतिक्रमण करना चाहिये तत्पश्चात् गुरुमहाराजोंसे आत्मकल्याणके लिये तत्त्वज्ञान प्राप्त करना चाहिये यह आज्ञा है । परन्तु रात्री समय रोशनाइ करना कि जिससे असख्य त्रस प्राणीयोंका बलीदान होता है इतना ही

नही बल्कि कितने ही लोक तो इतने विवेकशुन्य होते है कि खास धर्मसाधन करनेके चतुर्मासके दिनोंमे खुब रोशनाइ करते है कि जिन्होंसे छाब छाब भरे त्रसजीवोंका बलिदान हो जाता है ! तो क्या भगवानने एसी आज्ञा दी है ? हे भव्य भगवानने तो अहिंसामय धर्म फरमाया है हां, भगवानकी भक्ति करना चतुर्विध संघका कल्याण है परन्तु यत्नके साथ करना कल्याण है । प्रतिक्रमण और नवा नवा ज्ञान करना यह उन्ही भक्तिरूप वृक्षकी मजबूत जडों है पूर्व महा ऋषियोंने भी रात्रीको मन्दिरजीमें दीवा करना मना लिखा है परन्तु अन्यमतियोंके देखादेख जैनोंमे भी चैत्यवासी लोकोंने यह पृथा शरु करी है.

(प्र०) कीतनेक लोग प्रतिक्रमण नही करते है रात्रीको गुरुके पास भी नही जाते हैं और अनेक प्रकारकी विकथा परनिंदामें अपना समय क्षय कर देते है ऐसे लोग रात्रीको मन्दिरजीमें भक्ति करे तो हरजा है ?

(उ०) एसे मनुष्योंको प्रथम तो आत्मकल्याणके स्वरूप समझाना और भगवानकी आज्ञाधर्म पर लाना, कारण एकके देखादेखी दुसरे भी आलसी बनजाते है इतनेपर भी आत्मज्ञानपर रूचि नहीं होती हो तो हालके जमानेमें शास्त्रोंकी और मुनियोंकी तो आज्ञा नहीं है परन्तु अपवादरूपसे अगर शुद्धोपयोगसे यत्ना करता हूवा भक्ति करता हो तो हमको

यहापर मौनव्रतका ही स्वीकार करना अच्छा हैं। अगर कालको शुद्ध बनाना हो तो भगवानकी आज्ञा हम उपर लिख आये हैं इति कालशुद्धि ।

(४) भावशुद्धि—प्रभुपूजा करनेवालोंका अन्तःकरण निर्मल और निःस्पृही और केवल मोक्षके लिये ही होना चाहिये। परन्तु इस लोकमें राजऋद्धि पुत्र कलत्र धनधान्यादि पौद्गलीक सुखोंकी तथा परलोकमें देवादिकी ऋद्धिकी इच्छा न रखनी चाहिये । कितनेक लोक ज्ञानशुन्य होते है कि व्यापारमें भगवानका भाग रखते हैं तथा कष्ट आनेपर पूजा, शान्तिस्नात्र तथा तीर्थयात्राकी बोलावा और घृत तेलकी अखंड ज्योत करना तथा अपना यश कीर्ति नमूनादिके लिये भी कराते है इत्यादि महान् लाभका कार्य था उन्हीकों तुच्छ सुखोंके लिये वह महान् लाभको खो बैठते हैं शास्त्रकारोंने तो इन्हीको विषक्रिया कही है अर्थात् नफेके बदले नुकशान उठाना पडता है कारणके लोकोत्तरपक्षकी क्रिया करके लौकीक सुखकी अभिलाषा रखना यही तो प्रगट ही विपरीत श्रद्धा है और विपरीत श्रद्धावालोंको सिद्धान्तकारोंने मिथ्यात्वी कहा है तो दीर्घद्रष्टीसे विचारीये कि यह तुच्छ सुखोंका निदान करनेसे भवान्तरमें आराधक कैसे हो सक्ता है। दशश्रुतस्कन्धमें कहा है कि मोक्षपक्षकी क्रिया करके इस लोकके सुखका निदान करते है उन्होंको भवान्तरमें वीतरागके धर्मका श्रवण भी नहीं मीले।

हे भव्य! सुख और दुःख तो पूर्वकृत कर्मोंके अनुसार ही मीलता है परन्तु अशुभ कर्मोदयके समय भी धर्मकी तीव्र भावना होनेसे कर्मोंमें परावर्तन अर्थात् अशुभ कर्म भी शुभपणे परिणमते है परन्तु अशुभ कर्मोदयके समय उक्त अशुभ भावना अभिलाप करनेसे तो अग्निमे घृत जैसा हो जाता है वास्ते कभी भूलचूकके भी लोकत्तर क्रियासे लौकीक सुखोंकी अभिलापा नहीं करनी चाहिये। क्योंकि शुभ भावनासे अशुभ कर्म अपने आपमे ही नष्ट हो जायगा तब शुभ ही शुभ कर्मोदय होगा अगर कोइ आफत न सहन करते हूवे अपवादका अवलंबन किया भी हो तोभी सेवन करने योग्य नहीं है क्योंकि भगवानकी पूजादि भक्ति मोक्षके लिये करनेमे मोक्षकी प्राप्ति होती है और संसारके लिये करनेसे संसारकी वृद्धि होती है "यादृश भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी" वास्ते बुद्धिमानोंको चाहिये कि एकान्त कर्मनिर्जराके लिये ही भगवानकी पूजादि भक्ति करे " नन्नत्थनिज्जराठयाए " इति भावशुद्धि।



प्रभुपूजा स्वहस्तोंसे ही करनी चाहिये।

प्रभुपूजा करनेवाले अपने घरसे निकले तथा मन्दिरजीके प्रथम पागोतीये पग देनेके पहिला " निस्सिही " तीन दफे कहे और भावना रखे कि अब मैं संसारीक कार्योंसे नि-

वृत्त होता हूं अर्थात् अन मै ससारव्यवहारकी किसी किसमकी बात न करूंगा। तत्पश्चात् मन्दिरजीके अन्दर कोइ भी फुटतुट कचरा आदि और भी कार्य करना हो तो आप करे और दुसरोंसे करावे बादमें रंगमंडपमें जाके दुसरीवार "निस्सिही" तीन दफे कहे अन मन्दिरजीके कार्यसे निवृत हुवा हूं। रंगमंडपमें जानेपर श्री त्रिलोक्य पूजनीय जगतारक परमेश्वरकी शान्तमुद्राके दर्शन करते ही हृदयकमलमें आह्लाद आनन्द लाते हुवे अहोभाग्य समझना और खडे खडे दोय च्यार यावत् १०८ स्तुतियोंसे स्तवना करना बादमें तीन प्रदक्षिणा देना और भावना रखना कि मैं आज तीन लोकका भवभ्रमणका विध्वंस करता हूवा ज्ञान दर्शन चारित्र यह रत्नत्रयिकी आराधना करता हूं। तत्पश्चात् द्रव्यशुद्धिमें कहे माफीक (१) शरीर (२) वस्त्र (३) पूजाकी सामग्री (४) मन (५) वचन (६) कायाके योग (७) न्यायोपार्जित द्रव्य यह सातों प्रकारसे शुद्ध होके आप स्वयं ही पूजाप्रक्षालन अगलोणा करे किन्तु आप भगवानके आगेही सेठजी बनके नोकरों पर हुकुम न लगावे "क्यारे पक्षाल होगइ" एसा न करना चाहिये कारण पूर्वभवोंमे पूर्वोक्त पूजा न करनेसे ही तो भवभ्रमण करना पडता है कारण नोकरलोगोंको तो मात्र पैसोंका ही लोभ है वह भगवानकी भक्ति या आशातना क्या क्या समझते हैं वास्ते उन्होंसे तो बाहारका ही कार्य लेना चाहिये।

और प्रभुपूजा तो अपने ही हाथोंसे कर जन्म पवित्र करना चाहिये। भगवानके पास जाते समय आठ पडवाला मुख-कोश रखना चाहिये।

प्रभुपूजाकी विधि।

प्रथम मयूरपीन्छीसे प्रभुप्रतिमाको प्रमार्जन करना, बादमें निर्मल तत्कालका लाया हूवा जल वह भी घट वस्त्रसे गला हूवा सुगन्धी मिश्रित जलसे प्रभुपक्षाल करावे उन्ही समय भावना कि आज मैं मेरा अनादि कालका कर्ममलको धो रहा हूं और भगवानकी जन्मावस्थाकी भावना रखना बाद अच्छे श्वेत निर्मल सुकुमाल वस्त्रसे प्र-भुके अंगलोणा करना भावना और मेरे चैतन्य जी को आज मैं निर्मल बनाता हूं एसा कहते ध्यान रखना कि गतकालका लेप कहीपर भी रह नही जावे।"

नोट–कितनेक लोग पुरुषार्थहीन बनजाते हैं या पूजा-रीयोंके वीश्वासपर रह जाते है वहां पर एकादिन जलका कलश लाते है उन्होंसे ३–४–८ दिनतक पक्षाल करतें है तो उन्ही महान् आशातनाको खास मीटा देना चाहिये जहां हो वहांसे।

(२) बादमें सुगन्धी चन्दन साफ शीलापर स्वच्छ घ-अच्छी कटोरीमे लेके भगवानके नव अंग (चरण अंगुष्ट

ढींचण, हस्त, स्कन्ध, मस्तक, ललाट, कण्ठ, हृदय, उदर)×
का पूजन और भावना सहित काव्य बोलना ।

नोट—हालमे विदेशी केसरका प्रचार बहुतसा बढ गया
है अगर उन्होंकी तलास कि जाय तो पशुओंका रुधीर और
दारू मिश्रत है एसा बिलकुल अपवित्र द्रव्यसे त्रीलोक्य पूजनिक
परमेश्वरोंको स्पर्श होना कितनी बडी आशातना है जैनागमोमें
(रायपसेणी, जीवाभिगम, ज्ञाता, महानिसिथादि) चन्दनही
की पूजाका लेख है बात भी ठीक है कि मैं कषाय रुपी अग्नि
से जल रहा हूं हे प्रभु! आपको यह शीतल चन्दनसे अर्चन कर
के मै शीतलता चाहता हूं यह भावना पूजकोंकी होती है
परन्तु केसर तो स्वयं ही गरमागरम है जो पाषाण के बिंब
वह गल जाते है धातु के बिंबों को काले काले छाटा ल
जाते हैं इसी से भगवान को नव अंगो पर धातुकी वाटकी
चाडी जाती है इन्होंसे पूजारीयोंको नव अंग भेटनेसे वचत
ना पडता है वास्ते सुज्ञ पुरुषोंको जिनाज्ञा माफीक चन्द
पूजा करना चाहिये न कि केसर क्यों कि विद्वान लोगो
अपने घरकार्यमें भी केसर वापरना बन्ध कर दीया
भगवानको तो चडा ही कैसे सक्ते है अर्थात् नहींज
" अस्तु "

× पूजकोंके चार अग ललाट कण्ठ हृदय उदर
चाँदि (टीक) करना चाहिये.

(३) फलपूजा—नालयेर, सुपारी, बदाम, आम्र आदि उच्च फल जो कि भगवतके चडने योग हो वेसा फल चडाके भावना. हे प्रभु! मैं विष फलोंको भोगवता हुवा अनादि काल से भव भ्रमण कर रहा हूं आज मैं यह फल चडाके मोक्षका फल कि याचना करता हू।

नोट—कितनेक गामडेके अज्ञात लोक जो काकडी, मतीरा, पुंकपली, तीमंडी, तौरू आदि फल भी ठाकुरजी के माफीक भगवानको चडा देते हैं यह भक्ति नहीं किन्तु एक कीसमकी आशातना है।

(४) पुष्पपूजा—चंपा चमेली गुलाबादि के स्वच्छ तत्कालके यत्नपूर्वक लाये हुवे पुष्प भगवानको चडाके भावना रखनी कि हे भगवान यह सुगन्धी पुष्प चडाके मैं आपसे रत्नत्रयी रूप पुष्पोंकी याचना करता हूं।

नोट—कितनेक अज्ञात लोक मजुरोंसे मालनोंसे मूल्य देकर पुष्प लेते हैं जिस्में भी वह औरते शुद्धि अशुद्धिका ख्याल तो दूर रहा परन्तु ऋतुधर्मादिका भी परेज नहीं रखती हैं तो एसे अपवित्र पुष्प भगवानको चडाना लाभके बदले कितनी नुकशानी हैं अगर मूल्यका ही लेना हो तो पुरण खातरी करलेना चाहिये कि इतनी टैमका लाये हुवे यह शुद्ध पुष्प है एसा योग न हो तो लवंगादिको भी शास्त्रकारोंने पुष्प माना है शुद्ध पुष्प खातरीबन्ध चडानेका निषेध नहीं है।

(५) नैवेद्यपूजा—अच्छे सुगन्धवाले मेवा मिष्टान मोदकादिसे नैवेद्यपूजा करते भावना रखनी कि हे भगवान मैं अनन्तकालसे इन्ही लोकमें परम् अशुची पौद्‌गलोंका आहार करता हूं आज आपकी यह नैवेद्यपूजा कर आपसे अनाहारी पदकी याचना करता हूं।

नोट—कितनेक अज्ञान लोक जो कि रोटी शाक तो क्या परन्तु मृत्युके पीछे किया हुआ भोजन जो अच्छे समझदार मनुष्य भी नहीं खाते हैं वह सीरा पुरी आदि, पवित्र भगवानके मन्दिर चडाते हैं क्या यह महान् आशातना नही है। यह खराब रीवाज अन्य लोकोंके देखादेख जैनमें भी घुस गयी है परन्तु अब तो इनका परित्याग करना चाहिये।

(६) दीपपूजा—अच्छा सुगन्धीत घृतका दीपकसे पूजा करते हुए भावना रखना कि हे भगवान मै अनादि कालसे मिथ्यात्व रुप अन्धकारमें गोता खा रहा था आज आपकी यह दीपकपूजा कर ज्ञानउद्योत चाहता हूं-याचना करता हू।

नोट—कितनेक लोभान्धतृष्णाप्रेरीत अपने ससारीक पुत्र कलत्र धन सन्मानादिके लिये मूल गुभारेमें अखंडित ज्योत कराते है जिन्होंसे मूल गुंभारा धुवासे श्याम पडजाता है गृष्मऋतुमें जब गुभारेके कमाड बन्ध कर दीये जाते हैं तब खुन गरमी हो जाती है तो क्या यह भक्ति है या महान् आशा-

तना, यह तो चैत्यवासी लोगोंने अपनी स्वार्थवृत्तिसे प्रवृतियां करी है शास्त्र और पूर्व महात्र्षियों पुकार कर रहे है कि रात्रीमें दीपक मन्दिरमें नहीं रखना।

(७) धूपपूजा—सुगन्धी दशाङ्गी धूपपूजा करते भावना रखनी कि हे प्रभो मेरे अन्दर अनेक खराब वासनायें अनादि कालसे भरी हूइ है उन्होंको दुर कर आपके गुणरूपी वासनाकी याचना मै करता हूं।

नोट—कितनेक लोभानन्दी घरखरचा विवाहसादिमें हजारोंका पाणी कर देते है और मन्दिरजीमें धूपादिका काम पडता है तव स्वल्प मूल्यवाला धूप वापरते है तो क्या इसीको उदारता कही जाती है।

(८) अक्षतपूजा—सुपेत अच्छा अखंडत अक्षतसे साथीया करतों भावना रखनी, हे भगवान मैं कारमा असाश्वत सुखोंमे मुग्ध वन चौरासीकी सहेल करता परम दुःखका अनुभव कीया है आज आपकी यह अक्षतपूजा कर मै अक्षय सुखोंकी याचना करता हूं।

नोट—कितनेक सेठजी अपने खानेके लिये किमति चावल खरीद करते है और मन्दिर चडानेको हलके भावके। वाजे वाजे तो मन्दिरजीके पाटेपर कितनेक त्रस जीवोंका भी कल्याण हो जाता है।

इत्यादि जो जो पूजाकी सामग्री चाहिये वह उदारता पूर्वक आत्मकल्याण समझके भावना पूर्वकही पूजन करना चाहिये ।

जब द्रव्य पूजा होजावे तब बादमें तीसरी "निस्सिहि" कहते भावना रखना कि अब मैं द्रव्यपूजासे विराम होता हूं द्रव्य-पूजा करते अगर कीसी प्रकारसे अयत्ना प्रवृत्तिसे जीवोंको तकलीफ हुइ हो तो शुद्धोपयोग संयुक्त इरियावही पडिक्कमना बादमें चैत्यवन्दन रूप भाव पूजा करना और भावपूजा हो जावे तब भगवानसे प्रार्थनारूप भावना रखना कि आज मेरा अहो-भाग्य है कि मेरे निर्विघ्नपणे प्रभु पूजा हुई है एसा दिन हमेशा हो कि मेरे प्रभुपूजा होती रहे ।

पूजा करके गुरुमहाराजके पास जाके धर्मदेशना का मंगलीक सुने और भोजनके समय भावना रखे कि धन्य है जो महानुभाव मुनिमहाराजोंको या साध्वीजीको [illegible] देते है अपने घरपर पधार जावे तो आदर [illegible] दे के अपना जन्म सफल करे । भोजनादिके [illegible] का अवश्य विचार करे परन्तु लोलुपताके वश [illegible] चाहिये । बादमें न्यायपक्षमे गृहकार्यके [illegible] हने, करे यह गृहस्थाचार है.

मनुष्य जन्मको पवित्र बनाते हूवे जिनाज्ञाका आराधक बने इन्होंसे जघन्य तीनभव उत्कृष्ट १५भवोमें अवश्य मोक्ष होता है

हे भव्यात्मा ! इस कलीकालमें प्रभुप्रतिमा और प्रभुपूजा मानो एक कल्पतरूके माफीक मनोवाच्छित फलदाता है अन्य पदार्थोंसे कोइ समय परिणामोंकी हानि बृद्धि होती है परन्तु प्रभुप्रतिमा और प्रभुपूजा पांचमाराके अन्त तक अमोघ शासन अवस्थीत भावसे चलेगा और अनेक प्राणीयोंका कल्याण होगा वास्ते शुद्ध अन्तःकरण भावोंसे प्रभुपूजा करके शीघ्र मोक्ष प्राप्त करो यह हमारी भावना है न्युनाधिक मतिदोषकी सज्जन पुरुषोंसे क्षमाकी याचना करता हुं ॥

मुनि ज्ञानसुन्दर.

॥ श्रीरस्तु कल्याण मस्तु ॥ शम् । इति ॥

—•३(◎)३•—

अथ श्री

तीर्थयात्रा स्तवन.

(देशी—ख्यालकि).

जिन यात्रा करतां, हुइ पवित्र म्हारी आत्मा । ऐ टेर । जिनवर जीत्या रागद्वेषने, जिनके निक्षेपाचार; विशेष उपगारी आगम बोले, स्थापना निक्षेप विचारहो ॥ जि० ॥ १ ॥ भाव निक्षेपे जिनवर बैठा, स्थापना रुप शरीर; देखीने प्रतिबोधे प्राणी, वाणी वदे महावीर हो ॥ जि० ॥ २ ॥ जिनप्रतीमाने जिनवर जाणी, यात्रा करे भविप्राणी; कर्म बापडा फिरे भागता, जीव वरे शिवराणी हो ॥ जि० ॥ ३ ॥ अन्तरायको पाटो मूंडे, बांधी भवमें भमीयों; दूरो कीनो तीर्थ ओसीया, महावीर मेरे मन गमीयो हो ॥ जि० ॥ ४ ॥ नगर ओसीया वीर भेटीया, तिवरी मंदिर दोय, दोय मंदिर लोहावटमांहे, भेट्या आनन्द होय हो ॥ जि० ॥ ५ ॥ पांच मंदिर फलोधी चोमासे, जेसलमेर किलेमें आठ; दोय मंदिर है सहर माहिने, लगे पूजाका थाट हो ॥ जि० ॥ ६ ॥ अमरतसरमें तीन

१ स. १९७३ का चातुर्मास फलोधीमें हुवा था.

मंदिर है, लोदरवे पार्श्वनाथ, तीन मंदिर पोकरणमें भेट्या, खीचंदमें जगनाथ हो ॥ जि० ॥ ७ ॥ मंडार मांहे तीन जिनालय, जोधाणेमें आठ; तीन मंदिर हे शहरवारने, चौमासो गेघाट हो ॥ जि० ॥ ८ ॥ रोयीटमेट पालीमें आये, पांच मंदिर मन मोहे; भाखरीपर भगवान भेटीया, तीन भुवन जग सोहे हो ॥ जि० ॥ ९ ॥ वुसी भेट नाडोलमें आया, जिन मन्दिर तीन विराजे; बीजावा वरकाणा माहे, मेलाका वाजा वाजे हो ॥ जि० ॥ १० ॥ एक राणी एक स्टेशन उपर, खिमेल मन्दिर दोय; धर्म तीर्थंकर देख धणीमें, आणंद वर्त्यो मोय हो ॥ जि० ॥ ११ ॥ मूंडारामें दोय मन्दिर है, पांच सादडी सोहे; धणी विराजे राणपुरामें, जग दीपक मन मोहे हो ॥ जि० ॥ १२ ॥ भांणपुराने ढोल सायरे, नादामाये चार; तीन मन्दिर गोगूदे भेट्या, वरत्यो जय जयकार हो ॥ जि० ॥ १३ ॥ उदयपुरमें पद्मनाभादि, संमीने खेडे एक; धणी विराजे धूलेवामें, केसरीयो राखे टेक हो ॥ जि० ॥ १४ ॥ केसर कीचमचे अति भारी, अंगीकी छवी न्यारी; पुन्य पवित्र यात्रा कीनी, दर्शनकी बलीहारी हो ॥ जि० ॥ १५ ॥ पालमें श्री शान्तिनाथजी, ईडर मन्दिर पांच; किल्ला उपर करी यात्रा, लगी कर्मोंको आच हो ॥ जि० ॥ १६ ॥ अमनगरमें तीन मन्दिर है, प्रांतेजमें एक; छाला प्रातीया नरवाडामें, मारी

१ १९७४ का चातुर्मास जोधपुरमें हुवा था.

कर्मोंपर मेख हो ॥ जि० ॥ १७ ॥ अहमदावाद आनन्दसे आया, वसे जैन आबाद; जिन मन्दिरोंकी रचना देखी, पाम्या चित अहल्लाद हो ॥ जि० ॥ १८ ॥ संभवनाथने आदेश्वरजी, वाडीमें भगवन्त; पचवीस दिन तक करी यात्रा, तोय न आया अन्त हो ॥ जि० १९ ॥ जैतलपुर खेडा मातरमें; साचा स्वामी भेट्या; देवा सोजतरा सुन्दरा में, भटादरे दुःख मेट्या हो ॥ जि० ॥ २० ॥ पेटलाद ने वोरसदमें, तीन तीन मन्दिर भारी, खेडासर गंभीरा मांहे, दर्शनकी बलीहारी हो ॥ जि० ॥ २१ ॥ मुजपुर मांहे एक मन्दिर है, पादरेमें तीन, वडोदरे भगवान भेटीया, हो भक्तिमें लीन हो ॥ जि० ॥ २२ ॥ मकरपुरमें घर देरासर, इंटालामें आया; मियागाव मजामें भेट्या, करजण दर्शन पाया हो ॥ जि० ॥ २३ ॥ पालेजमें परमेश्वर भेट्या, जीणोरमें जगनाथ, अगालेसर घर देरासर, झघडीये आदिनाथ हो ॥ जि० ।.२४॥ लींबेठ मांगरोल कठोरमें, कतारमें किरतार; साहेब विराजे सुरत माहे, शिवरमणी भरतार हो ॥ जि० ॥ २५ ॥ साल पचतर रया चौमासे, यात्रा करी श्रीकार; कृपा रत्नगुरुकी मुझपर, वरते जयजयकार हो ॥ जि० ॥ २६ ॥ सिद्धक्षेत्रकी यात्रा कारण, कतार गाममें आया; सायण किम कसुंबा होके, अकलेश्वर दर्शन पाया हो ॥ जि० ॥ २७ ॥ भरुचनगरमें भेटीया सिरे, मुनिसुव्रत भूनाथ; सवाली आमोद भेटीया, जबूसर जगनाथ हो ॥ जि० ॥ २८ ॥ कावी कृपानाथ विराजे, जहा में दर्शन

पाया; स्थंभण पार्श्वनाथ भेटया, खंभायत नगरे आया हो ॥ जि० ॥ २९ ॥ मनोहर देखी बिंब जिनन्दका, हुलस्या अंगोपांग; अनन्त कालकी भांगी कुमती, वरत्यो आनंद रग हो ॥ जि० ॥ ३० ॥ वेरुदा से आया पींपळी, जिनवर मन्दिर एक; धोलेरावमें धणी विराजे, आदेश्वर राखे टेक हो ॥ जि० ॥ ३१ ॥ वलवाडामें एक मन्दिर है, वलामें जगनाथ; पालडी परमेश्वर भेट्या, सिहोरमें शान्तिनाथ हो ॥ जि० ॥ ३२ ॥ वरतेजमें एक मन्दिर है, भावनगर भगवान; देवगणकी करी यात्रा, पहूंचा श्रीं सिद्धस्थान हो ॥ जि० ॥ ३३ ॥ श्री सिद्धक्षेत्रसे सिद्धी मांगी, गर्भावास मिटावो; सोना केरो सूरज उग्यो, विमलाचल भेटायो हो ॥ जि० ॥ ३४ ॥ पचवीस दिन तक करी यात्रा, कर्म मैल सब धोयो; आदेश्वर दादाके आगे, भर भर नेणा रोयो हो ॥ जि० ॥ ३५ ॥ थारे म्हारे प्रीत पुराणी, कैसी दशा हमारी; आतम गुण एकसो जिणमें, हूँ गयो अनन्त गुण हारी हो ॥ जि० ॥ ३६ ॥ वस्तु स्वभाव द्रव्य गुण जिणमें, फेरफार नवी होवे; तो किम अन्तर इतना साहब, दाता दास कर जोवे हो. जि० ॥ ३७ ॥ अब मत राखो अन्तर साहब, बराबरी कर लीजे; घटे न गुण आपको साहब, तो मुझको दे दीजे हो. ॥ जि० ॥ ३८ ॥ ओसवंसके स्थापन मेरे, उपगारी गुरुराज; रत्नप्रभसूरिश्वर इण गिरी, सार्या आत्म काज हो. ॥ जि० ॥ ३९ ॥ जिनकी पादुका विमल

चसीमें, जातां डावे हाथ, मूल मन्दिर के वारखे सिरे, जिहां नया आदेश्वर नाथ हो. ॥ जि० ॥ ४० ॥ देवगुरुकी यात्रा करके, जन्म सफल कर लीनो; अब हम अमर भये न मरेंगे, दादे परवानो दीनो हो. ॥ जि० ॥ ४१ ॥ सिद्धाचल से पीछा चलतां, तेहीज मारग जाणो; बरवाला चाकी खरल, धंधूके नाथ पिछाणो हो. ॥ जि० ॥ ४२ ॥ फेदरा में एक मन्दिर हैं, उतेलीया में नाथ; कृपानाथ कोट में भेटया, गगारमें जगनाथ हो ॥ जि० ॥ ४३ ॥ बावला भोंडया मांहे; सरकेज मन्दिर एक, अहमदाबाद वाडीमें भेटया, अरिहंत बिंब अनेक हो. ॥ जि० ॥ ४४ ॥ दूजी वार तो करी यात्रा, अधिको आनन्द आयो; सुरत जाय झघडीये आयो, सुखे [1]चौमासो ठायो हो ॥ जि०॥४५॥ आदेश्वरकी कृपा पूरी, मनमान्यो फलपायो; तिणहिंज रस्ते यात्रा करता, अहमदाबाद आयो हो. ॥ जि० ॥ ४६ ॥ अमदाबादसे खोरज आयो, शेरीसर सुख पायो पंच बिंब भूमिसे प्रगटया, वस्तुपाल भराया हो. ॥ जि० ॥ ४७ ॥ कलोल कृपानाथ भेटीया, पानसर में आयो; वीर प्रभूका दर्शन करता, रोम रोम हुलसायो हो. ॥ जि० ४८ ॥ आतम अनुभव रसका प्याला, पीना समिति हाथ, तीन मं कडीमें भेटया, मोयणी मल्लीनाथ हो ॥ जि० ॥ ४९ ॥ ... टाणेमें तीन मन्दिर है, दश मैसाणे दीपे, मन घोडे अ

१ १९७६ का चातुर्मास झघडीये हुआ था.

हो चेतन, मोहरायको जीपे हो. ॥ जि० ॥ ५० ॥ विसनगर में दश मान्दिर हैं, दर्शन दशा जगाई; वडनगर में चार देरासर, कुमती कूट भगाई हो. ॥ जि० ॥ ५१ ॥ खरेल दोय जिनालय भारी, कर्म गये सब हारी; कुमारपाल बनाये मन्दिर, तारंगे बलीहारी हो. ॥ जि० ॥ ५२ ॥ अजितनाथको ऊंचो मन्दिर, करे गगन से वात; अनुभव खडग हाथमें लीनो, करी मोहकी घात हो. ॥ जि० ॥ ५३ ॥ वाव भेट भलासण भेव्या, दांते दीनानाथ; विमलसाहने बिंब भराया, कूंभारीये कृपानाथ हो. ॥ जि० ॥ ५४ । गुण अनन्ता जिनेन्द्रका सिरे, आतम अटल अरूप; लेइ कारण निज आतम भापे, स्मर्ण सिद्ध स्वरुप हो ॥ जि० ॥ ५५ ॥ खराडीमें एक मन्दिर है, देवलवाडे दीनानाथ; उर्द्धगती अंकुलेश्वर पकडयो, शिवरमणीको हाथ हो. ॥ जि० ॥ ५६ ॥ भीणी भीणी कोरणी सिरे विमलसाहनो पक्ष; देराणी जेठाणीका आलीया सिरे, खर्च अठारे लक्ष हो, ॥ जि० ॥ ५७ ॥ अचलगढ ऊंचो घणो सरे, जिहां चौमुखजी छाजे; मन मेरा ललचायो जाऊं, जिहांपर सिद्ध विराजे हो. ॥ जि० ॥ ५८ आबूराजकी करी यात्रा, आतमभाव हुलसायो; द्रव्यगुण पर्याय प्रभूका, दर्शन भाव दरसाया हो. जि० ॥ ५९ ॥ आणंदरा गामेटा मांही, एक एक मन्दिर सारा; नगर सिरोही चवदे मान्दिर, दर्शन बहोत मजारा हो. ॥ जि० ॥ ६० ॥ अजरअमर अविनाशी

प्रभुजी, धेय ध्याता थइ ध्याऊं; शान्त मुद्रा कारण पामी, हूं पण धेयपद पाऊ हो. ॥ जि० ॥ ६१ ॥ पालडीमें परम जगदगुरु शिवगंज शिवका दाता; मन्दिर आठ कर्मको काटे, मिले अटल सुखसाता हो ॥ जि० ॥ ६२ ॥ कोरटनगर ने और ओसीया मूर्ति श्री महावीर, एक दिनमें करी प्रतिष्टा, रत्नसूरी जगधीर हो. ॥ जि० । ६३ ॥ ते तीर्थनी करी यात्रा, मान्दिर छे तिहां चार; वांकली भगवान भेटीया, आणी हर्ष अपार हो. ॥ जि० ॥ ६४ ॥ चन्तिखरा चमानन्दीमें, दूजाणे दीनानाथ, करुणासिंधु कोसेलावमें, झाल्यो शिव वधू हाथ हो. ॥ जि०॥ ६५ ॥ गाम नाडोलमें एक मन्दिर है, गुणगिरवा गुदोज; नवलखाजी पाली भेव्या, मोक्ष कारण मनमोज हो. ॥ जि० ॥ ६६ ॥ रोयीट होय सेलावस आयो, जगतारक जग छाजे, जोधपुर ने तिवरी ओसीया, मेलाका बाजा बाजे हो. ॥ जि० ॥ ६७ ॥ वीर प्रभूकी करी यातरा, रोम रोम हुलसायो; संघ चतुरविध मिलके सारा, भक्ति ठाठ मचायो हो. ॥ जि० ॥ ६८ ॥ भक्ति द्रव्य भाव दोय भेदे, कारण कारज जाणो; चार निक्षेपा भक्ति केरा, भेदाभेद पिछाणो हो ॥ जि० ॥ ६९ ॥ चार नयकी भक्ति कीनी, बार अनन्ती आगे; तोपण गरज सरी नही साहेब, किमकर कुमती भागे हो. ॥ जि० ॥ ७० ॥ जिहां देखूं तिहां धमाधम है, कारण धर्म आरोपे; गाडरी प्रवाह कुलाचारले, मूल मार्ग ने गोपे हो. ॥ जि० ॥ ७१ ॥ अध्यातम उलस्यो नहीं साहेब, तुज आणा

नहीं जाणी; गतानुगतीकी प्रवाह मांहे, निष्फल विलोयो पाणी हो. ॥ जि० ॥ ७२ ॥ आतमभाव अध्यात्मशैली, आसन मुद्रा असंगी; एक एक प्रदेशके अन्दर. लहरां रंग तरंगी हो. ॥ जि० ॥ ७३ ॥ शहर २ में यातरा करतां, अनुभव अमृत पीनो, अब हम अमर भये न मरेंगे, जातराको फल लीनो हो. ॥ जि० ॥ ७४ ॥ लोहावट ने खीचंद भेव्या, नगर फलोधी आयो; जातरा करतां साल सीतंतर, सुखे चौमासो ठायो हो ॥ जि० ॥ ७५ ॥ भगवतीसूत्र बचे व्याख्याने, श्रोता मधुकर जेवा; आचारांग अनुक्रम आगम, वीर वचन सुख मेवा हो. जि० ॥ ७६ ॥ पांच वर्षकी यात्रा मेरी, अनुमोदूं मन रंगे; सुमति सखी संग ज्ञान बगीचे, चेतन खेले चंगे हो. जि० ॥ ७७ ॥

दोहा—उगणीसे सीतोतेर, द्वितीय श्रावणमास; कृष्ण एकादशी सोमदिने, रह्या फलोधी चौमास ॥ १ ॥

[कलश.]

वामानंदन त्रिजगवंदन, पार्श्वनाथ दिनेश्वरं । शुभदत्ते ने हरीदत्ते गिरवा, आर्य सम्रुद्रे अलवेश्वरं ॥ पाट चौथे केशी श्रमणं, सयंप्रभसूरीश्वरं । रत्नप्रभसूरी पाद पकज, ज्ञानसुन्दर शिवसुखवरं ॥ १ ॥



अथश्री

जैन दीक्षा.

—※(◎)※—

जैन दीक्षा अनन्त सुखरूपी मोक्षफलकी दाता है। जितने जीव मोक्षमें गयें हैं वह सबके सब जैन दीक्षा आराधन करके ही गयें हैं इसलिये मोक्षार्थी आत्मबन्धुकों द्रव्य और भावसे जैन दीक्षा धारण कर आत्मकल्याण करना चाहिये।

जैन दीक्षाको धारण करनेवाले तीर्थंकर चक्रवर्ति बलदेव और बडे बडे राजा महाराजा शेठ सेनापति गाथापति आदि हो गयें हैं जिन्होंका इतिहास जैन सिद्धान्तोमे मोजुद है. बात भी ठीक हैं कि जिस वस्तुके योग्य मनुष्य होता हैं उसी को वह वस्तु दीजाती हैं अगर अयोग्य को वस्तु दिजावे तो वह लाभकी निष्वत् नुकशानको ही प्राप्त करनेवाली होती है।

सूत्र श्री स्थानायांग ठाणे तीजे तथा बृहत्कल्प उद्देशा तीजामें अयोग्यको दिक्षाका निषेध कीया है और सविस्तर श्री प्रवचनसारोद्धारमें हैं उक्त आगमोंका सक्षीप्त सारांश यहापर लिखा जाता है।

(१) दीक्षा लेनेवाला छोटी उम्रवाला-बालक हो उसको यह ख्याल नही हो सक्ता कि दीक्षा क्या वस्तु है जैसे एक लघु शीष्यको गुरुने पूछा कि हे शीष्य ? दीक्षा कैसी है उस समय वह लघु शीष्य मीष्टान्न भोजन करता था । उत्तर दिया कि गुरुमहाराज दीक्षा मीठी (मधुर) है। वास्ते बालक दीक्षाके अयोग्य है। (प्र०) अमाताकुमरको भगवानने दीक्षा दी थी या बज्रस्वामी भी बालक ही थे। (उ०) वह दीक्षाके देनेवाले आगमविहारी थे भविष्यकालके लाभको जानते थे और छद्मस्थोंके लिये उन्होंने भी मना कीया है वास्ते बेहोश बालक दीक्षाके अयोग्य है।

(२) दीक्षा लेनेवाला वृद्ध हो जिसकी शरीरकी हालत संयम पालनेमें विहार करनेमें क्रिया करनेमें या परिसह सहन करनेमें समर्थ न हो वह भी दीक्षाके अयोग्य है।

(३) दी० नपुंसक हो जो कि स्त्री-पुरुष दोनोंकी अभिलाषा रखनेवाला हो या अनेक कुचेष्टा कर स्व-परात्माओंको नुकशान पहुंचाता है वह भी दीक्षाके अयोग्य है ।

(४) दी० पुरुषकृत नपुसक हो जिसको मोहनीय कर्मका प्रबल उदय होनेसे स्त्री देखते ही विषय वासना उत्पन्न होती है । वह भी दीक्षाके अयोग्य है ।

(५) दी० जंडमूढ-जड तीन प्रकारके होतें है (१) भाषाजड (२) शरीरजड (३) करणजड । जिस्में भाषा-

जड-जैसे पाणीमें डूबते हूनेकी माफीक नडबड करते ही बोले, तथा बोलते हूवे गुस्सेसे भरा हूवा क्रोधसे बोले, और बकरेकी माफीक दिनभर बोलता ही रहे, वह भी स्पष्ट मालम न पडे गुगाकी माफीक बोले (२) शरीरजड-जिसका शरीर भारी हो, हलनचलन क्रियामे आलसु-प्रमादी हो, समयपर बराबर क्रिया न कर सके (३) करणजड-हिताहितका ख्यालही न हो अगर हित शीक्षा देनेपर गुस्सा करे और गुरु-महाराजका वचनका उल्लंघन करता हो वहभी दीक्षाके अ-योग्य है।

(६) दी० जिसके शरीरमें श्वास खांसी जलंदर भगंदर कोढ अर्गदका रोग हो वह अयोग्य है कारण रोगी हो वह आप पुरण सयम न पाले और दूसरे साधुओंको संयम पालने न दे (प्र०) अगर दीक्षा लेनेके बादमें रोग हो जावे तो क्या करना (उ०) अच्छे दीलसे उनकी वेयावच करना परन्तु पहिलेसे रोगीको दीक्षा देनेका हूकम नहीं है।

(७) दी० गृहस्थावासमें चौरी करी हो, लोकोंमें अप्रतित हो वहभी दीक्षाके अयोग्य है कारण साधुओंको भिक्षादिको हरवख्त गृहस्थोंके वहा जाना पडता है अगर एसा साधु होतो लोगोंको अविश्वास होता है (प्र०) प्रभवादि चौरोंने दीक्षा तो लीथी (उ०) वह देनेवाले चार ज्ञान-श्रुत केवली थे भविष्यकालको जानते थे.

(८) दी कृतघ्नी या द्रोही हो राजा सेठ या माता पिता या मंत्री आदिका द्रोही हो वहभी दीक्षाके अयोग्य है कारण राजादिको द्वेष उत्पन्न होता है की यह सब साधु एसेही होगा अगर दीक्षा लेनेके बाद भी ताजनादि मारे या शासनकी हीलना होती है । वास्ते एसोंको दीक्षा न देना चाहिये ।

(९) दी० उन्मत्त घेलो गांडो बावलो बेभान हो तथा जिन्हीका शरीरमें भूत प्रेत पिशाच आदि हो वह दीक्षाके अयोग्य है कारण दुसरे साधुवोंको या दुनीयाको तकलीफकारी हो जाता है.

(१०) दी० अन्धा बेहरा मुंगा काणा खोडा तथा कीसी प्रकारका अंग हीना हो अथवा कम दीखता हो वहभी दीक्षाके अयोग्य है । कारण चलते हुवे काट खीला लग जावे या खाइमें गीरजाना इत्यादि ।

(११) थीणद्धि निद्रावाला हो या मृगी आदिका रोग हो वहभी दीक्षाके अयोग्य है । कारण इस निद्रावाले संग्रामादि या अनुचित भोजन भी करलेते है इन्हीसे शासनकी हीलना होती है । दीक्षा लेनेके बाद उक्त अंगहीन हो तो एकस्थानपरही स्थिर रहे ।

(१२) दुष्ट हो (१) कषायदुष्ट, दीर्घकाल कषायवन्त हो जैसेकि कषायके मारे एक शीष्यने मृतक गुरुका दान्त पाडे थे (२) विषयदुष्ट, स्त्रि आदि देखनेसे विषय व्याप्त हूवा अनेक

प्रकारके अत्याचार करते है जिन्हीसे धर्मपर कलंक लगता है वास्ते वहभी दीक्षाके अयोग्य है।

(१३) मुढ हो हिताहितको न जाने अर्थात् अज्ञानी अविवेकी हो संसारमें भी अज्ञानसे अनेक दुष्ट कार्य कीया हो तथा तत्त्वमें अज्ञात हो (प्र०) दीक्षा लेनेके पहले ज्ञान और तत्वका जाणकार केसे हो सक्ता है (उ०) जिनेन्द्र भगवान की दीक्षा मूर्खोके लिये नहीं किन्तु बडेही विचक्षणोंके लिये है ज्ञानी ओर तत्त्वके जानकार दीक्षा लेगा वही स्वपर आत्माओंका कल्याण कर सकेगा पहलेसे ही चिन्ह दीखाइ देता है कि यह भविष्यमें केसा होगा इत्यादि देखकेही दीक्षा देना। (प्र०) संप्रतिराजाके पूर्वभव भिक्षाचरको दीक्षा दी थी। (उ०) वह आगमविहारी थे और उन्होंने ही फरमाया है कि हमने कीया वैसे मत करो परन्तु हम कहे वैसे करो।

(१४) ऋणी हो-जो दीक्षा लेवे उन्हीके शिरपर पारका करजा हो वह भी दीक्षाके अयोग्य है कारण लेनदार दाव-फरियादि करे। (प्र०) देना दीलवादे तो क्या हर्जा है। (उ०) मूल्य देके या दीराके शिष्य करना मना है और मूल्यके शिष्य कीतने दीन ठेरनेका है क्या वह परिग्रह सहन कर सकेगा ? वास्ते वैरागवालोंको दीक्षा देना उचित है।

(१५) दी० जाति, कर्म, शरीरसे दोषीत हो। जाति दोषीत जैसे घोबी कोली भील मेणा नाइ मोची के जिस्के

हाथका पाणी वैश्य ब्राह्मण न पीता हो और जिस्की जातिमें मांसमदिरादि अनुचित वस्तु खानेमें आति हो। कर्मदोषीत जिन्होंने पेस्तर लोकविरुद्ध कार्य वह अनार्य वैपारादि दया-रहित प्रणामवाले किये हो। शरीरदोषीत–हाथ पग नाक कान तुटा हो लुला लंगडा कुबडादि दोषीत हो वह दीक्षाके अयोग है कारण शासनकी हीलना होती हैं।

(१६) दी० अर्थलोभी हो, रुपीया पैसा लेनेवाला हो या विद्यामंत्र आदि सीखनेके लिये थोडी मुदतके लिये दीक्षा लेता हो वह भी दीक्षाके अयोग्य है।

(१७) कीसे दीक्षा लेनेवालेको कीसी सहूकारका पैसा देना है वह शेठकों अमुक दीन आपकी नोकरी कर पैसा वसुल करदुंगा उन्हींकों दीक्षा देना अयोग्य है कारन पैसा लेनेवालोंको अप्रतित होती है या दीक्षा लेनेके बाद भी लेनदार आनेपर लज्जीत होना पडता है। सरकारकी कोरटमें भी जानेका समय पहुंच जाता है वास्ते ऋणीकों भी दीक्षा न देना चाहिये।

(१८) दीक्षा लेनेवालेके मातापिता या कुटुम्बकी विना रजा दिक्षा देना यह भी अयोग्य है कारण उन्होंके मातापितावोंको बडा ही दुःख होता है उन्होंका कारण दीक्षा लेनेवाला होता है अगर एसी तस्करवृत्तिसे दीक्षा दीजावे तों बहूतसे लोगोंका धर्मसे प्रणाम (श्रद्धा) पडे (उतरे) जावे

तो दीक्षा देनेवाला भवान्तरमें दुर्लभबोधी होता है और जगतमें जैन मुनियोंकी भी अप्रतित होती है दुनीया कहने लगजाती है कि साधु पाटपर विराजे व्याख्यान देते है तब दुसरोंको चौरी करनेका त्याग कराते है और आप खुद चौरीयों करते फीरते है शास्त्रकारोंका क्या फरमान है वह दशवैकालिक अध्ययन चोथा आचाराग सूत्र श्रुतस्कन्ध दुजा अ० पन्दरवा तथा प्रश्नव्याकरण सूत्रमें विना आज्ञा दीक्षा देना बीलकुल मना कीया है तो क्या दीक्षा लेनेवाले लोभीयोंको भगवानकी आज्ञामें भी यह लोभवृत्ति अधिक प्यारी हो गइ है सूत्र पाठ यथा—

अहावरे तचभंते महव्वए अदिन्नादाणाओ वेरमणं सव्व भंते अदिन्नादाणं पचक्खामि से गामेवा नगरेवा रन्नेवा अप्पवा बहुवा अणूवा थूलंवा चित्तमत्त वा अचित्तमत्तं वा नेव सय अदिन्न गिह्विज्जा नेवन्नेहिं अदिन्न गिन्हाविज्जा अदिन्न गिण्हतेऽवि अन्नेन समणु जाणेजा जावज्जीवाए तिविह तिविहेण मणेणं वायाए काएणं न करेमि नकारवेमि करतऽपि अन्नेन समणु जाणामि तस्सभंते पडिक्कमामि नंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ॥

भावार्थ—तीसरे व्रतमें चौरी करनेका त्याग करनेवाला साधु कहते है हे भगवन् मैं ग्राम नगर वन [जंगल] के अन्दर स्वल्प या बहूत छोटी या वडी अर्थात् दान्त सोधनेके

लिये तृणसीली मात्रभी चौरीसे न लेउंगा तथा सचित जीव सहित वस्तु [शष्पादि] अचित वस्त्रपात्रादि मैं वगर रजा न लेउंगा अन्योंमे न लीराउंगा लेते हूवेको अन्छाभी न समझुंगा यह नियम जावज्जीवतक हे अगर पहले संसारमें पूर्वोक्त वस्तु चौरीसे लीहो उन्हीकों गुरु साखसे आलोचन कर मेरी आत्मासे उन्ही पापको वोसिराता हूं। इस पाठसे निःशंक सिद्ध होता है कि दीक्षा लेनेवालेको कुटुंबकी रजा सिवाय दीक्षा देनेकी भगवानने सख्त मना करी है।

अगर विना आज्ञा दीक्षा देनेवालोंको बृहत्कल्पसूत्रमें नवी दीक्षाका प्रायश्चित बतलाये है सो पाठ—

तओ अणुवठप्पा पणंत्ता तंजहा सहम्मियं तीणकरमाणे परधम्मियं तीणकरमाणे हत्थोहत्थ दलमाणे।

भावार्थ—अगर कोइभी साधु या आचार्य स्वधर्मीकी चौरी परधर्मीकी चौरी करे तथा कीसी शीष्यादि साधुको हाथसे दंडासे या डोरसे मारे इन्ही तीन कारणसे चाहे सो वर्षकी दीक्षा क्यों न हो परन्तु इन्ही कारणोंसे फीरसे दीक्षा लेनी पडती है दीक्षा लेनेसेही भगवानके आज्ञाका आराधक होता है इसीसेभी खुला फरमान है कि विगर रजा दीक्षा मत दो।

[प्र०] मातापिता या स्त्री अपनी खुशीसे कब आज्ञा देंगे? और कीसीका परिणाम दीक्षा लेनेका हूवा तो फीर उन्हीका कल्याण केसे हो सकता है?

(उ०) दीक्षा लेनेवालोंको अगर अन्तरगसे भवभ्रमणका भय और ससारसे उद्वेग हूवा हो तथा वैरागकी भावना हृदय कमलमें उत्पन्न हूइ हो तो वह अपने माता पिता स्त्री आदिको उपदेशद्वारा शान्तकर आज्ञा ले आनेगा अगर आज्ञा न लावें तो साधुवोंको अपने तीसरा व्रतको तलाञ्जली दे के परजीवोंका उपकार करना कीसने बतलाया है।

(प्र०) साधुवोंको तो इसमे कुच्छभी लोभ नही है परन्तु भव्यात्मावोंका कल्याण करनाभी तो साधुवोंका फरज है।

(उ०) यह बात सचे दीलसे कही जाती है या लोगोंमें सच बननेको जहापर सूत्रोंमे अधिकार आता है वहा "जहा सुहँ" क्या आते हैं। क्या पूर्व महा ऋषियों इस माफीक दीक्षा न दे सक्ते थे और क्यों एसा कायदा बांधते अगर आपके दीलमें परात्मावोंके तारनेकी बुद्धि हो तो भगवानकी आज्ञा माफीक दीक्षा देके "तिन्नाण तारयाण" बनना चाहिये किन्तु अपनी पलटन बढानेकी लोभदशासे वीचारे गृहस्थलोगोंके बेसमझ अज्ञान लडकोंको इदर उदर भगाके शिरमुडन करनेसे तो "डुबाणं डुबियाण" के सिवाय कुच्छभी फल नहीं होता है। इसका परिणाम क्या आता है जोकी जैनमुनियोंकी छाप जगतपर असर करती थी वह आज इस तस्कर वृतिसे जैनोंकोही यह वृत्ति जम जेसी मालम होती है और जा-

हिर पत्रोंद्वारा पुकारे जाते है की अमुक साधु वेष छोडके भाग गयें है, अमुक ग्राममें साधुवोंसे क्लेष उत्पन्न हूये है, अमुक नगरमें अत्याचार हूवे है, अमुक शहेरमें पाद्विके लिये दंडा उड रहा है, क्या यह सब अयोग और धर्मादीयावोंका फल नहीं है ? शासन लोपकों! इन्हीका फल कल्मद्वारा कहांतक लिखा जावे। अलम् पूर्वोक्त। १८ प्रकारके पुरुष, जैन दीक्षाके अयोग माना गया है और स्त्रीयों २० प्रकारकी दीक्षाके अयोग है जिसमे १८ प्रकारे तो पुरुषवत्ही समझना (१९) गर्भवती हो या उदरमे बहूतरोजसे छोड हो हमेशां रौद्रचलतीहो। (२०) जिन्ही स्त्री के बच्चा (लडका) छोटा हो पयपान करता हो इन्ही २० प्रकारकी स्त्रीयोंकोभी जैनदीक्षा न देनी चाहिये। और जन्म नपुंसक के लिये जमाने हालमे दीक्षा देना बीलकुल मना है और कृत नपुंसकके लिये शास्त्रकारोंका फरमान है की १० प्रकारके नपुसक दीक्षाके अयोग है देखो "प्रवचन सारोद्धार"

अगर कोइ अतिशयज्ञान या आगमविहारी हो और भविष्यमें अच्छे फल जानते हो वह ज्ञानसे जानके दीक्षा देभी सक्ते है उन्होंके लिये यह कायदा लागु नहीं पड सक्ता है परन्तु जिन्होको दुसरोंकी तो क्या किन्तु खुद अपनाही भविष्यमें क्या होगा इतना ज्ञान नहीं वह इन्ही फायदा माफीक वरताव अवश्य करे उन्होंके लिये कीसको दीक्षा देना चाहिये वहभी लिखदीया जाता है।

(१) जातिवन्त हो-जिन्होके माताका पक्ष निर्मल हो कारन माताके वंसका एक अंस पुत्रमेंभी होता है ।

(२) कुलवन्त-जिन्होके पिताका पक्ष निर्मल हो अर्थात् जिन्होके कुलमें कुच्छभी कलंक न हो लोकमान्य कुल हो ।

(३) रूपवन्त हो-जिन्होका अंगोपांग शोभनीय हो ।

(४) बलवन्त हो—सयम भार वहन समर्थ हो ।

(५) विनयवन्त हो-संघ शासन गुरवादिका विनय करे कारण मूल प्रकृति विनयकी हो वही विनय करेगा ।

(६) लज्जावन्त हो—लौकीक और लोकोत्तर लज्जावन्त होगा उन्होंसे कबी अकार्य न होगा पुर्व विचारही करता रहेगा ।

(७) ज्ञानवन्त हो-ज्ञानवन्त होगा तो कबी अस्थिर हूइ आत्माको ज्ञानके जरिये स्थिरीभूत कर सकेगा ।

(८) दर्शनवन्त हो-दृढश्रद्धा होनेसे कीसी प्रकारसे उपसर्गसे धर्मश्रद्धासे चलायमान न होगा ।

(९) यत्नावन्त हो-संयमके अन्दर भलीभांति यत्न करता हो ।

(१०) उदार चित्तवाला हो-उदारचित्त और गंभीरतावन्त होगा तो सब साधुओंका निभाव करनेमें समर्थ होगा ।

(११) संसारमें प्रशंसनीय कार्य किया हुवा हो।

(१२) जैनशासनपर परम राग हो-अन्दर हाड हाडकी मीजी रंगाइ हो कीसी प्रकारसे देवादि भी चलित न कर सके।

(१३) दीक्षा लेनेवाले बंधुवोंको एकान्तमें बेठके अपना आत्माको पुछना चाहिये। हे आत्मन्! क्या तेरेमें जैन दीक्षा लेनेकी योग्यता है? क्या तेरे १५ प्रकृतियों (अनन्तानुबंधी चोक, अप्रत्याख्यानि चोक, प्रत्याख्यानि चोक, मिथ्यात्वमोहनि, मिश्रमोहनि, सम्यक्त्वमोहनि एवं १५) का क्षय तथा उपशम हुवा है? अगर सचा दीलसे आत्मा साक्षी देता है तो दीक्षा लेना उचित है कारण यह हस्तीयोंका वजन उठाना कोइ सहजही नही है पीछेही तो देश काल संघयण आदिका नाम लेना पडेगा तो इन्हीको पहलेही सोचो, शास्त्रकारोंने तो साधुधर्म और श्रावकधर्म दोनोंमें मोक्षका रस्ता बतलाया है अगर सचे दीलसे श्रावकधर्म पालनेवाले भी आराधी हो सक्ता है वह १५ भवोंसे अधिक नहीं करता है और जो साधु होके भी आराधी न होगा तो भवभ्रमणका अन्त न होगा। इन्हीसे यह न समझना कि दीक्षा लेनेकी मना करते है हम मजबुती करते है कि योग्यता हांसलकर कुच्छ दिनतक गृहस्थावासमें आत्माका साधन करो फीर दीक्षा लेके स्वपर आत्माओंका कल्याण करो यह हमारी भावना है।

दीक्षा लेनेवालेको बाह्य और अभितर परिग्रहका त्याग करना चाहिये (१) बाह्यपरिग्रह धन धान्य रुपा सुवर्ण द्विपद (मनुष्यादि) चतुष्पद (पशुआदि) क्षेत्र (बागबगेचा खेतखला) वत्थु (हाटहवेली मकानादि) कुंभी धातु सर्व घरमें मणि मोती रत्न लोहा कासी पितल आदि सर्व वस्तुमे रहीत होना (२) अभितर-हास्य भय शोक दुर्गच्छा रति अरति क्रोध मान माया लोभ स्त्रिवेद पुरुषवेद नपुंसकवेद मिथ्यात्व एव १४ प्रकार इन्ही दोनों परिग्रहको त्याग करना चाहिये। अब जो संयमकी रक्षा निमित्त धर्म उपकरण रखा जाता है वह भी लिखदिया जाता है।

जैन साधु दोय प्रकारके होते है (१) स्थविरकल्पी (२) जिनकल्पी, जिस्में जिनकल्पी महात्मा जंगलमें रहते है वह पाणीपात्र लब्धिवाले होते है एक रजोहरन दुसरी मुख-वस्त्रिका रखते है और बिलकुल नग्न रहते है (२) दुसरे स्थविरकल्पी साधु होते है उन्होंके लिये बृहत्कल्पसूत्र तीजे उद्देशेके १४ वा सूत्रमें लिखा है कि जब दीक्षा लेते है उन्हींकों रजोहरन मुखवस्त्रिका तीन वस्त्र (एक हाथका पना चौवीस हाथका लंबा एक वस्त्र होते है) अगर साध्वी हो तो च्यार वस्त्र इन्ही वस्त्रोंसे चदर चोलपटा झोली मंडला पडला आदि सर्व उपगरण बनजाता है। पात्रा ३ तथा पात्रोंके बाधनेका गुच्छा। (प्र०) तीनही पात्र रखना क्या एसा लेख है?

(उ०) आचारांगसूत्र २। ५ में वस्त्रका अधिकारमें तीन वस्त्र कहा है और २। ६ में पात्रके अधिकारमें वस्त्रकी भोलावण दी है तथा उत्पातिकसूत्रमें उणोदरी अधिकारमें लिखा है कि एक वस्त्र और एक पात्र रखनेवालेको उणोदरी कही है विचारीये कि स्वादको जीतनेके लिये साधु हूवे है तो एक पात्रमें रोटी दुसरेमें शाक और तीसरेमें पाणी लेवे तो फीर चोथाकी क्या जरुरत है। निशिथसूत्रमें लिखा है कि कीसी साधुका हाथ पग नाक कान तुट जावे-छेदा जावे तो उन्हीको एक पात्र अधिक देना चाहिये। कंबली संथारीया रखना दशवैकालिकमें कहा है और ज्ञान दर्शन चारित्रकी वृद्धिके लिये दंडासन आदि उपकरन भी रखाजाते है और वृद्ध होजानेपर कारणसे और भी उपकरण रखसक्ते है परन्तु उन्हीपर ममत्वभाव नहीं रखना चाहिये। अधिक उपाधि रखनेसे संयमकी विराधना होती है प्रतिलेखन बन नहीं सक्ती है चौरादिका भय रहता है विहारमें पोटलीया-मजूर रखना पडता है बाजे बाजे तालाकुंची भी रखनी पडती है और दुनियां महावीरजीके पोठीयेके नामसे भी बतलाने लगजाती है। (प्र०) यह जो आचार बताये है वह तो चोथा आराके साधुवोका है अबी तो पंचमो काल मंद संघयण है वास्ते अधिक भी रखना पडता है। (उ०) आपके उपर कीसने वजन रखा था कि आपको दीक्षा लेनाही पडेगा अगर आप इस बातको पहलेही सोच-

लेते कि अभी पांचमा आरा है दीक्षा लेती वखत माता पिता स्त्री आदि समझते थे उन्ही समय तो चोथा आरा होगया था अब एक घर छोडके हजार घरोंकी उपाधी उठाती वखत पांचवा आरा होगया है यह कलीकालकी अद्भुत लीला नहीं तो क्या है आज भी नास्ति नही है संयमकी यथाशक्ति खपकरणेवाले भूमंडलपर विचरते है । (प्र०) एसे तो दीक्षा लेनेवाले अल्पही मीलेगा । (उ०) इस्की फीकर आप न करे वीरप्रभुका शासन २१००० वर्ष तक अमोघ चलता रहेगा । सिंह स्वल्पही होते है परन्तु जिस वखतपर धरतीपर गर्जना करते है तब बहुतसी गाडरीयोंके झूडको दिशे दिश भगादेते है पूर्व महाऋषियोंने तप संयम और आत्मबलसे हजारों लाखोंकी सख्यामें नयं जैन बनाये थे और आज शीतल प्रवृतिवालोंसे नये जैन बनाना तो दूर रहा परन्तु जो जैन है उन्हीकों संभालना या रक्षण करनाही नहीं बनता है और शीतलवृति देखदेखके लोकोंकी श्रद्धा शीतल होजाती है । वास्ते आप उग्र विहारी बनके योग्य पुरुषोंको दीक्षा दे उन्हीकोभी उग्रविहारी बनावो ताके स्वपर आत्माओंका कल्याण करे । दीक्षा देनेकि विधि गच्छ गच्छकि भिन्न भिन्न है वास्ते यह नहीं लिखी है स्व स्व गच्छ मर्यादासेही दीक्षा देनी चाहिये ।

दीक्षा देनेके बाद गुरु महाराज अपने शीष्यको हितकारी शिक्षा देवे अर्थात् ग्रहणशिक्षा—ज्ञानादि सेवन

शिक्षा दे। हे शिष्य यह अनन्त कल्याणकारी दीक्षा तुजे मीली है इसमें यत्नापूर्वक हलना चलना बोलना भोजन करना साधुक्रियामें सावधान रहना किंतु प्रमाद न करना।

प्रथम नवदीक्षतको साधु समाचारीमें हुशीयार कर देना बादमें जेसी जेसी योग्यता देखे वेसे वेसे सिद्धान्तोकि वाचना दे कारण जहांतक आचारांग ओर निशिथ सूत्र न पढा हो वहांतक साधुको गोचरी जाना व्याख्यान वांचना या कीसीसे वार्तालाप भी करना मना है या आगेवान होके विहार करना भी। देखो व्यवहारसूत्र ३०८ सूत्र १२ वामें साफ मना करी है।

कीतनीक प्रवृति एसी भी देखनेमें आती है की नवदीक्षितको दीक्षा देनेके बाद गुरुजीको तो गप्पोंसे ही मन मीले तब अपने नवदीक्षीत शीष्योंको मिथ्यात्वीयोंके सुप्रत कर दीया जाते है बस विनय भक्ति आदि तो प्रथमसेही नष्ट हो जाती है साधुतो क्या पण नवजवान साध्वीयों भी तो उन्ही ब्राह्मणोंके पास पढती है तो कहा उन्हीका आचार कहां व्यवहारकी शुद्धि कहां गुरुभक्ति विनय कहां उन्होंकि वैरागभावना कहां उन्होंकि ब्रह्मचर्य गुप्ती शीलकि वाडों परन्तु बादमें उन्ही गुरुमहाराज कोही तकलीफ उठानी पडती है हाथोहाथ फल मीलता है।

जैनसिद्धान्तमें परम वैराग्यरस और विनय भक्ति आदि

भरी है की दीक्षा लेते ही यह गुटीका दी जावे तो सारी ऊमर तक यह असर उन्ही शिष्यके हृदयसे कभी नहीं नीकलती है ।

दीक्षा लेनेवाले शिष्यकोभी चाहियेकी मेरे अनन्त भवोंका पुन्योदय और कर्मोका क्षयोपशम हूवा है की यह चारित्र चुडामणि मेरे हाथमें आया है यह सब गुरुमहाराजकीही कृपाका फल है वास्ते गुरुमहाराजकी विनयभक्ति कर तत्त्वज्ञान प्राप्ती करूं एसी भावना हमेशां रखना चाहिये ।

जैन सिद्धान्त अनेकान्त पक्षवाला है परन्तु जिस समय जिसकी व्याख्या की जाती है उन्हींकी पुष्टीमें हेतुयुक्तिभी वही दी जाती है की पूर्व पदार्थको पुष्टी मीले इसालियेही यह जैनदीक्षा नामका प्रथम अंक लिखा गया है अब दीक्षा लेनेके बाद क्या करना वह दुसरे अंकमे लिखा जावेगा ।

॥ इति प्रथम अंक जैन दीक्षा ॥



श्रीरत्नप्रभसूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नम ।

अथश्री

प्रतिमाछत्तीसी ।



दोहा.

अरिहंतसिद्धने आयरिया, उवझाया अणगार । पंचपरमेष्ठी एहने, वंदुं वारंवार ॥ १ ॥ च्यार निक्षेपा जिनतणा, सूत्रोमें वंदनीक। भोला भेद जाणे नहीं, जिनआगम प्रत्यनिक ॥ २ ॥ बत्तीससूत्रके मांहने, प्रतिमाको अधिकार । सावधान थइ सांभलो, पामो समकितसार ॥ ३ ॥ समकित विन चारित्र नहीं, चारित्र विन नहीं मोक्ष । कष्टलोच क्रिया करी, जन्म गमायो फोक ॥ ४ ॥

ढाल—आदर जीव क्षमागुण आदर ए देशी ॥ प्रतिमा छत्तीसी सुणो भविप्राणी । सूत्राके अनुसारजी ॥ टेर ॥ आचारांग दूजे श्रुतखंधे । पंदरमे अध्ययन सुभारजी ॥ पांच भावना समकित केरी। नित्य वंदे अणगारजी ॥ प्रति० ॥ १ ॥ दूजे सूयगडांग छठे अध्ययने । आर्द्रनाम कुमारजी ॥ प्रतिमा

देखी ज्ञान उपनो । पाम्यो भवनो पारजी ॥ प्रति० ॥ २ ॥
ठाणायंगके चोथे ठाणे । सत्यनिक्षेपा चारजी ॥ दशमें ठाणे
' ठवणासचे ' । इम भाष्यो गणधारजी ॥ प्रति० ॥ ३ ॥
अंजनगिरिने दधिमुख । नदीश्वर द्विप मुझारजी ॥ बावन
मंदिर प्रतिमा जिनकी । वंदे सुर अणगारजी ॥ प्रति० ॥ ४ ॥
स्थापना चारज चोथे अंगे । द्वादश ठाणामायजी ॥ सतरमे
समवायग जंघाचारण । प्रतिमावंदन जायजी ॥ प्रति० ॥ ५ ॥
शतक तीजो उदेशो पहेलो । भगवतीमें सारजी ॥ चम्रइंद्र
सरणा लइ जाने ॥ अरिहंत जिन अणगारजी ॥ प्रति० ॥ ६ ॥
शाश्वति अशाश्वति प्रतिमा वंदे । दुगचारण मुनिरायजी ॥
शतक वीश उदेशे नवमे । चहुवचन कह्यो जिनरायजी ॥ प्रति०
॥ ७ ॥ सती द्रौंपदी प्रतिमा पूजी । ज्ञातासूत्र मुझारजी ॥
आणंद श्रावक अंगसातमे । सुणो तेहनो अधिकारजी ॥ प्रति०
॥८॥ अन्यतीर्थी ने उणोरी प्रतिमा । नहीं वदुं यावज्जीवजी ॥
स्वतीर्थारी प्रतिमा वंदी ज्यारी । निर्मल समकित नीवजी ॥
॥ ६ ॥ अतगढने अणुतरोवाड । प्रथम उपांगरी साखेजी ॥
अरिहंत चैत्ये नगरिया शोभे श्रीजिनमुखमे भाखेजी ॥ प्रति०
॥ १० ॥ प्रश्नव्याकरण पहले संवर । पूजा अहिंसा नामजी ॥
प्रतिमा व्यावच तीजे सवर । करे मुनि गुणधामजी ॥ प्रति०
॥ ११ ॥ विपाकमें सुबाहु प्रमुख । आणंद सरीखा जोयजी ॥
उववाइ अरिहंत चेइयाणि । अंबड प्रतिमा वदी सोयजी ॥

प्रति० ॥ १२ ॥ रायपसेणी सुरियाभे पूजी । जीवाभिगम विजयसुरंगजी ॥ 'धूवंदाउणं' जिणवराणं । ठवणे साची चोथे उपंगजी ॥ प्रति० ॥ १३ ॥ प्रथम तीर्थंकर मोक्ष सिधाया। स्थूभ कराया तीनजी ॥ जंबूद्वीप पन्नति देखो । सुर होय भक्तिमें लीनजी ॥ प्रति० ॥ १४ ॥ जंभकदेवता प्रतिमा पूजी। शाश्वता सिद्धायतन वहु जाणजी ॥ चंद्रपन्नत्ति सूर्यपन्नत्ति । प्रतिमा कही वैमानजी ॥ प्रति० ॥ १५ ॥ निरियावलिका पुफियामांहे । चंपानगरी जाणजी ॥ उववाइमें वर्णन कीधो । अरिहंत चैत्य प्रमाणजी ॥ प्रति० ॥ १६ ॥ तीजेवर्गे दशोंही देवता । पूजा नाटक विधि जाणजी । चोथेवर्गे दशोही देवी । प्रतिमा पूजी बहुमानजी ॥ प्रति० ॥ १७ ॥ पांचमेवर्गे द्वारकानगरी । बारह श्रावक जोडजी ॥ चंपानीपरे नगरी शोभे । जिनपूजा होडाहोडजी ॥ प्रति० ॥ १८ ॥ दशमे अध्ययने गौतमस्वामी । तीर्थ अष्टापद जायजी ॥ उत्तराध्ययन अढारमे देखो । कह्यो उदाइ रायजी ॥ प्रति० ॥ १९ ॥ प्रभावती राणी नाटक कीनो । जिनभक्तिसे रागजी ॥ गुणतीसमे अध्ययने चैत्यवंदनको । फल भाष्यो वीतरागजी ॥ प्रति० ॥ २० ॥ दशवैकालिक सिज्झंभवभट्ट । प्रतिमाथी प्रतिबोधजी ॥ जाणगभवियशरीर निक्षेपा । अणुयोगद्वार ज्यों शोधीजी ॥ प्रति० ॥ २१ ॥ स्थुभ कह्यो श्रीनंदीसूत्रे । मुनिसुव्रत विशालामाहजी ॥ [illegible] आलोचणले । मुनि प्रतिमा पासे जायजी ॥

ढालचोपइयां । प्रतिमा देवो गोपजी ॥ तीजो महाव्रत चवडे भांगो । जिन आज्ञा दिनीलोपजी ॥ प्रति० ॥३३॥ एक अक्षर उत्थापे जिनको । वढे अनंत संसारजी ॥ सूत्रका सूत्र नहीं माने । ए डुबे डुबावण हारजी ॥ प्रति० ॥ ३४ ॥ बत्तीस सूत्रोमें प्रतिमा बोले । चतुरा लीजो जोयजी ॥ भावदया मुज घटमें व्यापी । उपकार बुद्धि छे मोयजी ॥ प्रति० ॥ ३५ ॥ प्रतिमाछत्तीसी सुणो भव्य प्राणी । हृदये करो विचारजी ॥ पक्ष छोडी समकित आराधो । पामो भवनो पारजी ॥ प्रति० ॥ ३६ ॥

कलस—राय सिद्धार्थ वंशभूषण, त्रिशलादेवी मायजी । शासननायक तीर्थ उशिया, रत्नविजय प्रणमे पायजी ॥ साल बहोंतेर जेष्ट मास, सुद पंचमी गुरुवारजी । गयवर शरणो लीयो तोरो, सफल भयो अवतारजी ॥ ३७ ॥ इति संपूर्णम् ॥

—•<:(○):>•—

अथ श्री

लिंगनिर्णयबहुत्तरी.

दोहा—

आदिनाथ आदि करी, चौवीसमा महावीर ।
ऋषभसेण गणधरथकी, गौतमवीर वजीर ॥ १ ॥
ब्राह्मी सुन्दरी साधवी, चन्दनबाला गुणखाण ।
शुद्धलिंग जिनराजसे, पामीपद निर्वाण ॥ २ ॥
श्रेयंससे श्रावक हुवा, आनन्दादिक जाण ।
सुव्रतासे हुइ श्राविका, सुलसातक पहेचाण ॥ ३ ॥
शुद्ध साधु श्रावकतणो, लिंग कह्यो जिनराय ।
सुरनरने सुन्दर लगे, निरखत नयन ठराय ॥ ४ ॥
हुंडा सर्पिणी योगसे, जैनमें मच्यो फेल ।
लुंके उत्थापि प्रतिमा, लवजी वदल्यो वेन्ह ॥ ५ ॥
भस्मीग्रह उतर्या पछी, संघराशी धूमकेत ।
तेपण हीव उतरी गयो, संघहुवो सावचेत ॥ ६ ॥
हठ कदाग्रही जीवडा, पकडी न छोडे वात ।
जेहने शिवसुख चाहिए, तो तजीये पक्षपात ॥ ७ ॥
शुद्धलिंगमे मुनिवरा, कुलिंगसे कुसाध (साधु)
आगममे निर्णय करू, सुणजो तजी प्रमाद ॥ ८ ॥

ढाल पहेली

(देशी—भुंडीरे भुख अभागणी, त्राला खाणी नाम लालरे.)

शुद्धलिंग तुमे सांभलो, आगमके अनुसार ॥लालरे॥ शुद्ध लिंग तुमे सांभलो ॥ दशमा अंगे भाखीयों , ओघ निर्युक्ति जाण लालरे ॥ बृहत्कल्प अंग पहेलडे, भाख्यो श्री जगभाण ला० ॥ शु० ॥ १ ॥ एक वेंत च्यार अंगुली, मुख वस्त्रको मान ला० रजोहरण अगुल बत्तीसको, दडो परिमाण कान ॥ ला० ॥ शु० ॥ २ ॥ चोलपटो हाथ पांचको, दोनों चोडा खुला होय ला० साडातीनसे पांच हाथकी, तीन पीच्छोवडी जोय ला० ॥ शु० ॥ ३ ॥ डावी कावमें ओघो रहै, मुखवस्त्रीका जीमणे हाथ ॥ ला० ॥ खंधा उपर रहे कंबली, दडो रहे नित्य साथ ॥ ला० ॥ शु० ॥ ४ ॥ गुप्त झोलीमें पातरा, उपर पडिला तीन ला० कमंडल नाम है तरपणी, [1]व्यवहारे निर्णय कीन ॥ ला० शु० ॥ ५ ॥ जीमणे हाथ निचे थकी, चदर ओडे साध (मुनि) ला० यथायोग्योपकरणकी, राखेजिन मर्याद ॥ ला० शु० ॥ ६ ॥ परम्परा इम चालती, आयो पंचमो काल ला० पन्दरासो एकतीसमे, बेठो धूमकेतु विकराल ॥ ला० ॥ शु० ॥७॥ जिनभक्ति उत्थापवा, प्रगटी लुंपकजाले[2] ला० लिंगराख्यो सव जैनकों, श्रद्धापहुची पाताल ॥ला०॥

---

१ व्यवहारसूत्रके मूलपाठमें कमडलका लेख है ।

२ लुपक मतियाकी उत्पत्ति देखो सिद्ध प्रतिमा मुक्तावली.

शु० ॥ ८ ॥ अक्षर शुद्ध जाणे नहीं, आगम केम वंचाय ला० पायचन्द्रसूरितणो, सरणो लीधो जाय ॥ला०॥ शु० ॥ ९ ॥ उक्तसूरि इम बोलीया, जो जावो जिन प्रासाद ला० जिनप्रतिमा मानों जिनतुल्य, एवी पालो मर्याद ॥ला० ॥शु०॥१०॥ तो तुमने टीका थकी, टवो देउ बनाय ला० मंजुर करी सब बातकी, सूरि टवो रह्या बनाय॥ ला० ॥ शु० ॥ ११ ॥ टवो हुवो जाणी करी, लुंपको लोपीकार ला० हिंस्या हिंस्या करता फीरे, केइ मूढ हुवा त्हेनी लार ॥ ला० ॥ शु० ॥ १२ ॥ संवत् सत्तरासें आठमें, लुपक बजरंग साध ला० तेहनो शिष्य क्रोधसे, लवजी कीयो उन्माद॥ ला० ॥ शु० ॥ १३ ॥मुहडे बांधी मुहपत्ती, दंडो धरीयो दुर ला० लटकती झोली हाथमें, गुरु निन्दक भंडसूर ॥ ला० । शु० ॥ १४ ॥ गुरु बहुत समजावीयो, ताही न मान्यो मूढ ला० दीसे वेष डरावणो, नाम धर्यो लोको ढुढ (ढुंढीया) ॥ ला० ॥ शु० ॥ १५ ॥ धर्मदास ढुंढक हुवो, अज्ञानमें सीरदार ला० पायचन्द्र टबा थकी, विप्रीत नीकल्यो सार ॥ ला० ॥ शु० ॥ १६ ॥ जहा जिनमन्दिर प्रतिमा, अर्थ दिया उलटाय ला० अनन्त संसार पोते किया, बहुतने दिया डुबाय ॥ ला० ॥ शु ॥ १७ ॥ टीकासे टबो हुवो, दोनोंमें प्रतिमा जान ला० ज्ञान साधु बगेचो किये, तो ढुंढकने मानसी कोन ॥ ला० ॥ शु० ॥ १८ ॥

आज परंपर दोनोंतणी, यतिलुंकाना जाण ला० लवजीका ढुंढक फीरे, तेहना सुनो यह नाण ॥ ला० ॥ शु ॥ १६ ॥ वेष श्रद्धा जुदी जुदी, नाम धरावे संत ला० संवत् अठारा पन्दडोतरे, प्रगटयो भिखम पन्थ ॥ ला० ॥ शु० ॥ २० ॥ जुदी पकाइ खीचडी, दयादान उत्थाप्या दोय ला० मूढ चुका कहे वीरने, रुगनाथ गुरु दीयो रोय ॥ ला० ॥ शु० ॥ २१ ॥ पंथी साधु सिवायने, जो कोई देवे दान ला० एकान्त है तेहमें जोवो, कुमत्योंको अज्ञान ॥ ला० ॥ शु० ॥ २२ ॥ नवप्रकारे पुन्य बांधे, दश प्रकारे दान ला० दानछत्तीसी वांचने, हृदय आणो ज्ञान ॥ ला० ॥ शु० ॥ २३ ॥ जीव मार्यो पाप एक छे, बचायो कहे अठार ला० जिनवचनोंके उपरे, मारे मूढ कुठार ॥ ला० ॥ शु० ॥ २४ ॥ जीवरचा जड जैनकी, अनुकंपा छत्तीस जोय ला० निरचर भट्टाचार्य ज्हांने शरम न आवे कोय ॥ ला० ॥ शु० ॥ २५ ॥ राखोड्यो पाणी पीवे, नितरियों काचो नीर ला० आधाकर्मीनी भावना, क्रिया मुकी पेले तीर ॥ ला० ॥ शु० ॥ २६ ॥ अजीवपन्थी अलगा पड्या, नहीं माने धान्यमें जीव ला० विचरे पंजावके देशमें, जुदी ढुंढकसे नीव ॥ ला० ॥ शु० ॥ २७ ॥ आठ कोटी गुजरातमें, सामायिकना पच्चखाण ला० गुलाबपन्थ नगुरो थयो, जीण

१ लुपकयति प्रतिमा पूजते है।

२ स्त्रियोंको सामायिक पोसह नहीं होता है एसी मान्यता थी।

लोपी ढुंढकनी आण ॥ ला० ॥ शु० ॥ २८ ॥ कुडापन्थी करडा घणा, जिन प्रतिमासें द्वेप ला० पंचांगी उत्थापत[१], जाणे न आगम रहस्य ॥ ला० ॥ शु० ॥ २९ ॥ मतवाला इम बोलीया, थारे चौरासी गच्छ ला० तेहने उत्तर दिजिये, सब जिनका चाल्या गच्छ ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३० ॥ चोथे अंमे चाल्या, आदि जिनका चौरासी गच्छ ला० यावत कह्या श्रीवीरना, इग्यारे गणधर नवगच्छ ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३१ ॥ पंचांगी प्रतिमा विषे, श्रद्धा सहुनी एक ला० लिंग पण सहुनो सारखो, समझो आणी विवेक ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३२ ॥ सामान्य विशेप क्रिया, देशीने चमके मूढ ला० पण जिनाज्ञा सहु वहे, दुरे राखीछे ढुंढ ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३३ ॥ देशीकी जड काटवा, प्रदेशी लीयो अवतार ला० आप थापी अभिमानीया, आडंबर पूजावणहार ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३४ ॥ स्थानकमें उत्तरों नहीं, उष्णोदकमें बतावे पाप ला० मूल्य भाडे गृहस्ती घर रहे, गुप्त पाणी पीवे सेवे पाप ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३५ ॥ लम्बो रजोहरण राखतों, प्रायश्चित निशिथमें होय ला० गाति गाठ चदरतणी, यमपालण आयो जाणे कोय ॥ ला० ॥ शु० ॥ ३६ ॥

---

१ "उसभस्स आइ कोसलस्स उसभसेण पमुक्खाण चउरासी गण चउरासी गणहारा होत्था × × ×" समणे "भगव महवारिस्स नवगण एकारस्स गणहरा होत्था" समवायाग सूत्र वचनात्।

२ ढुढीयोंमें फिरका दो है. (१) देशी साधु. (२) परदेशी साधु।

दोहा.

मोटी बांधे मुपत्ती, धोवे पेसावसे आवे वास ।
तपसी नाम धरावतो, अद् विलोइ पीवे छास ॥ १ ॥
मोटा डाकी पातरा, तेह पण तीन वताय ।
असूची तेहमें करे, तीणमें लाइ खाय ॥ २ ॥
ऋतु धर्म हो साध्वी, वांचे तेह सिद्धान्त ।
जिन शासन निंदावता, पाटे वेसी वाजे महान्त ॥३॥
सूत्र अर्थके उपरे, शाही सपेतों पूर ।
करे आगम आसातना, कृतघ्नी ने क्रूर ॥ ४ ॥
वासी विदल टाले नही, नही टाले ऋतु धर्म ।
ओघड जीम आचरणा, केइ छाने करे कुकर्म ॥ ५ ॥

ढाळ २ जी.

चतुर नर समजो ज्ञानविचार ॥ ए देशी ॥

दया दया मुखसें रटेजी, करे हिंसाकाजी काम, दिन रात मुडो बांधतोजी, समुर्छिम उपजे तीणे स्थान, ढुंढकों तज दो कुलिंगको वेप ॥ १ ॥ टेर ॥ (धोवण विपय) दुध आटो ओला राखतोजी, अथवा रस चलित होय, कीडा अन्दर कलवलेजी, परठो तळाव कुवे जाय ॥ ढुं० ॥ २ ॥ अनन्त जीव निगोदनाजी, विफर्से जाय विरलाय, उत्कृष्ट देशीथकीजी,

---

१ एक दूसरे स्पर्शसे जीव मृत्यु पामते हैं वहा अनन्त जीवोंकी हिंसा है ।

फिर रह्या फेल मचाय ॥ ढुं० ॥ ३ ॥ निंदक कुमरनी ढुंढणी-योंजी, इन्हीं ज पेटामें जाण, काइक अधिकाइ कपटनीजी, तीजो आदि पेच्छाण ॥ ढु० ॥४॥ मुढणी अक्षर जाने नहींजी क्लेश करण हुसीयार, काम पडे उत्तर तणोजी, रात्रीमें करे जो विहार ॥ ढुं० ॥५॥ लिखतोंही लाजा मरुंजी, केसा कर रही काम, चरित्रका चीणा कर्योजी, क्रियाकि न वटे छ दाम ॥ ढुं० ॥ ६ ॥ पारवती हुइ ढुंढणीजी, समजाइ आतमाराम, इण समय गइ करुंजी, आगे म कर एसा काम ॥ ढुं० ॥ ७ ॥ सब ढुंढक नहीं खीजसोजी, कीधाका फल जोय, वात सुणो कुलिंगनीजी, एकाग्रचित्त होय ॥ ढुं० ॥ ८ ॥ मोटी चर्चा मुपत्तीजी, लेवे शक्र इन्द्र नाम, सूरियाभनी पूजातणोजी, गीणे देवनो काम ॥ ढुं० ॥ ९ ॥ भगवती शतक सोलमोंजी, मूलको दुजो उदेश, शक्र इन्द्र भाषा विषेजी, मुख वान्धण नही लेश ॥ ढुं० ॥ १० ॥ हस्त वस्त्र मुख आगलेजी, राखीने बोले जोय । निर्वद्यभाषा जिन

---

१ मूर्तिसिद्धिमें प्रतिमा सिद्धि गयवरविलासादि बनचूकी है। ढुढक सूरियाभदेवकी पूजाकों तो देवतोंकी करणी है एसा कहके वहादेते है और मुखवस्त्रिकाके समय शक्रेन्द्रका पाठको अगाडी मोरचे लाते है । तो जेसा शक्रेन्द्रका पाठ है वेसाही सूरियाभका पाठ है दोनोंरोही मानना चाहिये ।

यत " तुब्भेणं भंते मुहपत्तीयए मुहबधही तएणं भगव गोयममियादेवीए एव वुता समाणे मुहपत्तीयए मुहवधेइ २ " विपाकसूत्र अ० १ वचनात

कहीजी, खुले मुख सावद्य होय ॥ ढुं० ॥ ११ ॥ खुले मुख नहीं बोलणोजी, बोले जेहनो प्रमाद, रातदिन तोबड बन्धतो जी, मिथ्याहठ उन्माद ॥ ढुं० ॥ १२ ॥ प्रमादकी आलोचनाजी, किरिया होवे शुद्ध, पण कुलिंग कदाग्रहीजी, मिथ्या छे तस बुद्ध ॥ ढुं० ॥ १३ ॥ कहे आगे मुपत्ती बान्धताजी, अन्त गढकिज वात, आमंतो झाली अंगुलीजी, गौतम बोल्या तेहनी साथ ॥ ढुं० ॥ १४ एक हाथ पकडी लीयोजी, झोली रही दुजे हाथ, खुलेमुख बोले नहीजी, केसे करी वह वात ॥ ढुं० ॥ १५ ॥ झोली हाथ कोंणी परेजी, मुख वस्त्रिका रही हाथ, जैनमुनि आज देखलोजी, मुखसे किनि वात ॥ ढुं० ॥ १६ ॥ गौतमस्वामि विपाकमेंजी, मृगाकुमर देखण जाय, मृगाराणी इम कहेजी, मुपत्ती बान्धो मुनिराय ॥ ढुं० ॥ १७ ॥ जो पहेला बन्धीहुतीतो, राणी कीम कहेती बन्ध, लुंपक लवजी इहा नहीजी, परस्पर होय विरोध ॥ ढुं० ॥ १८ ॥ आचारांग श्रुत स्कन्ध दुसरेजी, तीजा अध्ययनकी वात, छींकादिक हुवे ध्यानमेंजी, मुनि म्होंडे दे हाथ ॥ ढुं० ॥ १९ ॥ कहे उपयोग रहे नहींजी, खुले मुख वायु हणाय, जेहथी मुहडो बान्धणोजी, आयो मारी दाय ॥ ढुं० ॥ २० ॥ उपयोग दूरो मुकनेजी, मुखबान्धी हुवा निःशंक, तो संयम किमपालसोजी, 'थें तो पुरो छो शंख ॥ ढुं० ॥ २१ ॥ चौस्पर्श भाषा कही जी, वायु शरीर स्पर्श आठ, जीव मरे नहीं तेहथुं जी, मत करो मनका थाट ॥ २२ ॥ होठसे होठ' मिलियो

कहेजी, अठ स्पर्श होजाय, हिंस्या हुवे वायुतणीजी जेहथी मुख बन्धाय ॥ हुं० ॥ २३ ॥ कीसासूत्रमें एह कहीजी, के मुखसे किनी थाप, न्युनाधिक प्ररूपतोंजी, आज्ञा भंग वज्र पाप ॥ हुं० ॥ २४ ॥ थारें कहनेसे अठ स्पर्शी हुवेनी, तो मुख बान्ध्यो शुं थाय, पुद्गल तो रहे नहींजी, लोकान्त शुद्धि जाय ॥ हुं० ॥ २५ ॥ मुखपत्ती सूत्रें कहीजी, हाथपत्ती न कहेवाय, थें आहार लोच निंद्रा करोजी, तो खीली केम मेलाय ॥ हुं० ॥२६॥ धरती राख्यो धरतीपत्तीजी, पाटेपाटापत्ती होय, रही नही वहमुखपत्तीजी, हेतुगणा जगजोय ॥ हु० ॥ २७ ॥ रजोहरण सूत्र कहेजी, तो रजहरो दीनरात, के कामपडयो लो काममेंजी, तो मेलो मुपत्तीसाथ ॥ हु० ॥ २८ ॥ दशवैकालिक सूत्रमेंजी, पांचमे अध्ययन पहेलो उदेश, गाथा त्यासी (८३) तीजेपदमेंजी, "हत्थगं" बोले समझो रहस्य ॥ हु० ॥ २९ ॥ थारें मारे वाद छेजी, तीजो मत देवे साख, तो हठ कीम बातकोजी, परभवको डर राख ॥ हुं० ॥ ३० ॥ वैद्यव्यासजी इम कहेजी, शिवपुराण अध्याय एकवीस,[1] जैनवस्त्र राखे हाथ-

---

१ देखिये ढुंढकजो ! वेदव्यासजी शिवपुराण अ० २१ में जैन मुनियोंके लिये क्या कहते है यथा—

मुंड मलीन वस्त्र च, कुंडीपात्र समान्वितम् ।
दधान पुञ्जीका हस्ते, चालयन्ते पदे पदे ॥ १ ॥
वस्त्रयुक्त तथाहस्त, क्षिप्यमाणं मुखे सदा ।
धर्मेति व्यवहारान्त, त नमस्कृत्य स्थितं हरेः ॥२॥

जी सिद्ध हुइ वीसवावीस ॥ ढुं० ॥ ३१ ॥ जेसे सिद्ध हुइ हपत्तीजी, इम सवबोल पेच्छाण, संक्षेपे इतना मांहेजी, बुद्धिन्त लेसी जाण ॥ ढुं० ॥ ३२ ॥ एकतो समकित बावनीजी, जी दर्पण ज्ञान, कर्ता कहन्यो एकनोजी, दुजो हीरो अज्ञान ॥ ढुं० ॥ ३३ ॥ प्रेरक तीजी ढुंढणीजी, वले ढुंढकजीके साध साधु) आग्रे ढुंढक श्रावकोजी, लीजो एह प्रसाद ॥ ढुं० ॥ ३४ ॥ जो आगे वडके लिखोजी, तेह मुझ दिजो एक, टोले टोले जुदी जुदीजी, महिमा लिखुं अनेक ॥ ढुं० ॥ ३५ ॥ सुख सदा संपत्त थकीजी, फुट दुःखनोजी मूल, उन्नति करो धर्मकीजी, जिनाज्ञा अनुकुल ॥ ढु० ॥ ३६ ॥

कलश.

वामानन्दन जगतवन्दन तीर्थंकर तेवीसमो ।
नहीं देव दुजो त्रीकाल पूजो फलोधीमंडनवाल हो ॥
चउसंघ आयो वरघोडो लायो पांचो वाजा वाजतो ।
उपकेश राजे रत्न सुछाजे ज्ञानघन ज्युं गाजतो ॥१॥

समाप्तं ।



और पारवती नामकी ढुढणीने भी अपनी ज्ञानदीपिका नामके पुस्तकके १४ वा पृष्टमें लिखा है कि वज्रागजी ढुढकके शिष्य लवजीने स० १७०८ में मुहपती मुंहको बन्धी है इति ।

अथश्री

ककावत्तीसी ।

दोहा

सद्गुरु चरण सरोजरज, मुझ शिर वमो हमेश ।
कवि नहीं कविता करूं, ककावत्तीसी लेश ॥ १ ॥
अक्षर अक्षर अनन्त भव, अरट घटिका माल ।
सुमति सखी हित कारणे, दे उपदेश रसाल ॥ २ ॥
कका—कटक कर्मोतणो, चढआइ तुझ लार ।
अप्रमत्त गजारूढ हो, मतकर देर लिगार ॥ ३ ॥
खखा—खडग क्षमातणा, ज्ञानघोडे असवार ।
कर्मकटकको जीततां, लागे कितनी वार ॥ ४ ॥
गगा—गारव तीन है, मोहतणा सीरदार ।
तत्त्व तीन त्रीशुल ले, मर्दव दंड सुविचार ॥ ५ ॥
घघा—घौर कर देखिये, अपना घर है दूर ।
जागो मोहनिद्रा थकी, अब उगा है सूर ॥ ६ ॥
चचा—च्यार कषाय है, उत्तर भेद पचवीस ।
धन हरे दीर्घ कालसे, कब तुं इन्हसें बचीस ॥ ७ ॥

छछा–छिद्र पारका, मत धोवो पर मेल।
ज्ञान दीपकसे देखिये, निज आतमका खेल ॥ ८ ॥
जजा–जीतो आतमा, पर जीत्यां क्या होय।
निज दुश्मन निजमें वसे, और दुश्मन नहीं कोय ॥ ९ ॥
झझा–झूठ बोलो मति, झूठ पापको बाप।
सत्य शील धारण करो, छूटे भवसंताप ॥ १० ॥
टटा–टोटो है नहीं, निज खाताकों देख।
अनन्त खजाना अखूट है, प्रेम सहित तुं पेख ॥ ११ ॥
ठठा–ठाकुर निजतणो, सूतो काल अनन्त।
ललकारे सिंहनादकर, होय अरिको अन्त ॥ १२ ॥
डडा–डाकण जाणजो, कुलटा कुमति नार।
अनन्त जीव भक्षण कीये, अब तु मूरत संभार ॥ १३ ॥
ढढा–ढंग आच्छो रखो, ढंगसे सुधरे काज।
स्वसत्तामें रमणता, कर पामो स्वराज ॥ १४ ॥
णणा–रणतूर वाजीयो, चढ चालो रणखेत।
अन्त करण शुद्ध आठमें, शुक्लध्यान लो श्वेत ॥ १५ ॥
तता–तनको देखके, मत करिये अहंकार।
विनय भक्ति भजनकर, तन पाम्याको सार ॥ १६ ॥
थथा–थारो को नही, किनसे करिये प्यार।
ज्ञान दर्शनमें रमणता, करिये तत्त्व विचार ॥ १७ ॥
ददा–दमन करो सदा, पांचो इन्द्रियां चौर।

तेवीस योद्धा धनहरे, दोगो वावन मचावे शौर ॥ १८ ॥
धधा–धर्मदोय भेद है, सूत्र ओर चरित्र ।
शुद्ध श्रद्धासे कीजीये, नरभव जन्म पवित्र ॥ १९ ॥
नना–नाटक कर्म संग, नाच्यो काल अनन्त ।
निजघर आवो वाहला, सुमति कहे सुनों कन्थ ॥ २० ॥
पपा–पैसा पापसे, जोड्या लाख करोड ।
अगचेत्यों आसे रिपु, लेसे घांटो तोड ॥ २१ ॥
फफा–फूल सम देह है, चीण चीणमें चय थाय ।
पुन्य पूंजी ले आवियो, खाली खजाने जाय ॥ २२ ॥
वबा–वखत अमूल्य है, गइ न आवे कोय ।
वहां पें मूल्य करानीये, जहा कसोटी होय ॥ २३ ॥
भभा–भेद जाणों मति, आतम सिद्ध स्वरूप ।
भेद मीट्यो भर्म टल्यो, तव चैतन्य चिद्रूप ॥ २४ ॥
ममा–मर्म जाण्यो पछे, कर्म न वान्धे कोय ।
पूर्व कर्म प्रजालके, सिद्ध समाना होय ॥ २५ ॥
यया–यम नियम धरे, आसन समाधि ध्यान ।
नही जाणी निज आतमा, यह सबलो अज्ञान ॥ २६ ॥
ववा–वाणी जिनतणी, करो सुधारस पान ।
मीटे पीपासा भवतणी, प्रगट्यो परम निधान ॥ २७ ॥
ररा–रात वीती गइ, उग्यो अव दीनकार ।
भानु प्रगट्यो निजघरे, दूर भयो अन्धकार ॥ २८ ॥

लला–लटपट छोड दो, राखो एकही वात ।
वेश्यासम कुमति गीनो, पकडो शिववधु हाथ ॥ २६ ॥
शशा–शक्ति सिंहतणी, पिंजर दीधी रोक ॥
हाथल पटकी नाद कर, करे न कोइ टोक ॥ ३० ॥
षषा–षट् द्रव्य अरू, नय निक्षेप प्रमाण ।
तोडो पिंजर कर्मका, तब पहुंचो निर्वाण ॥ ३१ ॥
ससा–स्याद्वाद धोरी भला, शासन रथकों जोड ।
चाहे दुश्मन एक हो, चाहे लाख हो कोड ॥ ३२ ॥
हहा–हाः इति खेद है, हार्यो रत्न अमूल्य ।
सुमति तुम प्रसंगसे, चैतन्य भयो अतूल्य ॥ ३३ ॥
च्छच्छा–छिण छिण जात है, आयुष्य रंग पतंग ।
देर करो मतिवालहा, चलो शिवमन्दिरमें संग ॥ ३४ ॥
ज्ञज्ञा–ज्ञानसुन्दर करो, निज आतमका काम ।
चैतन्य सुमति संगसे, ज्ञान पाम निज धाम ॥ ३५ ॥
उगणीसे इठांतरे, कृष्ण तीज माघ मास ।
नगर फलोधीमें फली, मनवंच्छीत सब आश ॥ ३६ ॥

कलस.

पार्श्वनाथ वर पाट सोहे, शुभदत्त गीरुवा गणधरो ।
हरिदत्त ने भलो आर्यसमुद्र, केशी गणधर हितकरो ॥
सयंप्रभ ने रत्नप्रभसूरी, उपकेश गच्छ आनन्द करो ।
ज्ञानसुन्दर दास जिनका, सदा शिवसंपत्त वरो ॥ १ ॥

—※(◎)※—

अथश्री

ककाबत्तीसीका संक्षिप्तार्थ ।

दोहा.

सद्गुरु चरण सरोजरज, मुफ शिर वसो हंमेश ।
कवि नहीं कविता करू, ककाबत्तीसी लेश ॥ १ ॥

अर्थ— सन्मार्गके बतलानेवाले सद्गुरुमहाराजके चरण-कमलोंकी रजरूपी जो कृपा हमारे मस्तक उपर हमेशां बनी रहे यह प्रार्थना सदैव करता हूं। कारण जो वस्तुकी प्राप्ती होती है वह सब गुरुकृपासे ही होती है क्योंकि एक पाषाणका खंड होता है वह भी गुरुमहाराजके निर्देश किये हूवे विधिविधानसे उच्चासनको प्राप्तकर दुनियाके उद्धारके लिये बडा भारी साधन होजाता है अर्थात् यह सब रस्ते बतलानेवाले गुरुमहाराज ही है वास्ते मैं गुरुमहाराजको वन्दन नमस्कार कर सदैवके लिये कृपाकी ही याचना करता हूं।

यद्यपि मै कवि नहीं हू तथापि गुरुकृपासे बालक्रीडावत् ककाबत्तीसीकी कविता करनेमें साहस किया है यह भी गुरुकृपाका ही फल है। हे भव्य जीवो! ज्यादा विस्तारसे नहीं कहता हूवा साधारण मनुष्योंके भी सुखपूर्वक समझमें आ सके वास्ते लेशमात्र ही कहूगा। वास्ते चित्त स्थिरकर पढिये।

अक्षर अक्षर अनन्त भव, अरट घटिका माल ।
सुमति सखी हितकारणे, दे उपदेश रसाल ॥ २ ॥

अर्थ—चैतन्य राजाकी मुख्य दोय सखीयां है (१) धर्मराजाकी धर्मपुत्री जिस्का नाम सुमति सखी है (२) मोहराजाकी अधर्मपुत्री जिस्का नाम कुमति सखी है। इन्ही दोनों शोकोंके अन्दर मेल मीलाप-स्नेहाचार कभी भी नहीं रहेता है अर्थात् आपसमें हमेशां वैर-विरुद्ध खटपट चली ही करती है और एक दुसरीका छलछिद्र जोया करती हैं। अपनी अपनी कलाकौशल्य हास्य विनोदसे अपने पतिका प्रेम अपनी अपनी तर्फ आकर्षित करनेकी कोशीष हमेशां करती है जिस्में सुमति सखीका स्वभाव शान्त सरल दीर्घविचार नेकसलाह और अपने पतीका हित इच्छक है। और कुमति सखीका स्वभाव क्रूर मायायुक्त छल-कपट धूर्ततासे सदैव अपना पतिका अहित इच्छक है। यह बात तो प्रसिद्ध ही है कि जहांपर शोकों तरीके दोय सखीयां रहती है वहांपर आपसका स्नेह रहना असंभव है अर्थात् उन्हीकी खटपट हमेशा चलती ही रहती है। यही दशा सुमति कुमतिकी हो रही थी इसलिये चैतन्य राजाने इन्ही दोनोंको एकत्र न रहने देना इस इरादासे एक कायदा बांध दीया कि जहांतक सुमति रहें वहांतक कुमति न आ सके और जहांतक कुमति रहें वहांतक सुमति न आ सके। इस कायदाको दोनों सखीयोंने सहर्ष स्वी-

कार कर पालन करने लगी। इसीसे यह हुवा कि कुमति सखीने अपना पति चैतन्य राजाके निज आवासमें छावणी डालके निवास करादिया कि विचारी सुमति सखीकों चैतन्य राजाका दर्शनभी दुर्लभ होगया।

जब कुमति कीसी समय अपने कार्यवशात् अपने पिता मोहराजाके वहां जाती है तब चैतन्यराजाको अपनी शय्याके अन्दर पोढाके उपर एक बहु मूल्यसाडी (मोहनिद्रारूप) ढांकके जाती है। बस, अनन्तकालतक निःचेष्ट हुवा चैतन्य उन्ही शय्या (निगोदादि) में ही पडा रहता है। कभी सुमति सखी अपने कायदे माफीक पतिके पास आवे बतलावे तोभी घौर निद्रामें पडा हूवा चैतन्य बोलेभी क्यों। सुमतिका आदर तो दूर रहा परन्तु मुंह खोलके देखनाभी दुर्लभ था इसी निद्रामें चैतन्यजी अनन्तकाल व्यतित कर रहेथे।

एक समयकी बात है कि कुमति अपने पिताके वहा जानेके समय चैतन्यपर वह निद्रारूप साडी डालना भूल गइथी। कुमति जानेके बाद सुमति अपने पतिके कायदे माफीक पतिके पासमें आइ। चैतन्यने पहेचानी भी नही तथापि अपना स्वाभाविक गुण होनेसे सुमतिको आदर सत्कार देके अपने पास बैठाली और पुछा कि आप कौन हो ? स्वामिनाथ ! क्या आप मुझे भूल गये हों आपके निज आवासमें रहनेवाली सुमति हूं। इतना कहनेपर चैतन्यको अपना भान हूवा और

तही प्रेमपूर्वक आलिंगनकर विशेष आदर कीया । सुमतिने
ासरपाके कहा स्वामिनाथ ! में कीतनेही दफे आपके पास
इथी परन्तु में कमनसिवहूं वास्ते आपका देदारका दर्शन
कभी नहीं हूवा। तो क्या आप जैसे न्यायशील पुरुषोंको उचित
कि अनन्त कालतक एकही पक्षका पोषण करना और दु-
: पक्षका पोषण तो दूर रहा परन्तु आदरके बदले तीरस्कार
ना । इत्यादि प्रेमपूर्वक नम्रता के साथ चैतन्यराजाको उपा-
म दीया ।

सुमति सखीके स्नेह सहित मधुर वचन सुनके चैतन्य
च्छ मुंहको मलकाता—हसता हूवा अर्थात् अपनी तर्फसे स्नेह
ालाता हूवा बोला कि हे मृगनयनी ! में आपसे तीलमात्रभी
ाराज नहीं हूं । मै आपके सद्गुणोंको अच्छी तरहसे जानता
, परन्तु क्या करू अपने कायदाका पालन करनेके लिये
के यह बरताव करना पडा है, और वह कुमति स्थानान्तर
ाती है जब न जाने क्या जादु डालजाती है या किसी
कारका नसा दे देती है ताके मुझे किसी प्रकारका भान ही
हीं रहता है कि कौन आया और कौन गया । मैं क्या कृत्य
रता हूं या अकृत्य करता हूं । परन्तु आज न जाने क्या
ारण हूवा है कि में ठीक ठीक सावचेत रहा हू ॥

हे मधुर भाषिणी ! आज अच्छा अवसर मीला है,
ास्ते आप यहांपर ही निवास करें और इतने दिनमें निज

घरमें क्या क्या वरतावे हूवा है वह सब हाल मुझे सुनावो, कारण मैं आपकी मधुर भाषा द्वारा सब हाल सुनना चाहता हूं ॥

सुमति सखीने चैतन्यके सब हाल सुनके यह विचार किया कि जो मैं कल्पना करती थी कि मेरी शोक कुमति मेरे पति चैतन्यराजाको वशमें करलिया होगा, यह मेरी कल्पना बिलकुल असत्य है, परन्तु मेरे पिताजी और मेरा भाइ सद्बोध सदागम कहता था कि " आत्मा निमित्तवासी है " यह बात सत्य है। सुमतिने सुविचार किया कि जबतक कुमतिके दुर्गुणोंसे चैतन्यने अनन्तकाल तक दुःख सहन किया है, वह सब चैतन्यको न समझाये जाय, तबतक चैतन्यकी रूची कुमतिसे कभी हठेगी नहीं। और यह चैतन्य और भी कुमतिके वश हो नरक-निगोदके दुःखोंको सहन करेगा। वास्ते मुझे उचित है कि पहले यह भी हाल सुनादू

हे आत्मवीर! जबसे आप इस मोहराजाकी पुत्री कुमतिके वशमें हूवे हैं तबसे इस अपार संसारके अन्दर जन्म मरण रोग शोक आदि अनेक दुःखोंका अनुभव किया है और यह कुमति एक आपको ही नहीं किन्तु आप जैसे अनन्त जीवोंको हालमें भी दुःखोंका अनुभव करा रही है। यह आप देखते ही है कि यह पशवादि और कितनेक मनुष्योंको भी अत्याचारमें प्रेरणा करती है। यह वही कुमति है जो कि

आपको अनन्तकाल तक भवभ्रमण कराया है। आपका सबका सब दुःख तो मैं नहीं कह सक्ती परन्तु किंचित् वह भी आप ठीक तौरपर समझ सकें, वास्ते हेतु सहित ही कहती हूं आप सुनिये। इस संसारके अन्दर १४ स्वर और ३३ व्यंजन अनादिकालसे हैं इन्हीको लोग भाषामें अक्षर भी कहते हैं और जीतने जीव संसारमें जन्ममरण करते है उन्होंको पहेचाननेको अक्षरकी अपेक्षा रहती है। जैसे नारकी कहनेसे प्रथम न अक्षरकी अपेक्षा है। हे स्वामिन्! आप इन्ही कुमतिके संयोगसे एकेक अक्षरके नामवाले अनन्त अनन्त भव किये हैं अब आप स्वयं ही विचार करें कि इन्ही जन्ममरणका आपको कितना कष्ट सहन करना पडा है? मैं कहांतक कहूं!

चैतन्यने यह सुहितरूपी सुमतिके वचन सुनके दीलमें बडा ही दुःख कीया, और गभराता हुआ बोला कि हे प्राणेश्वरी! आपका वचन सत्य है मैंने इतना दुःख सहन किया है कि जिसका वर्णन नहीं हो सक्ता परन्तु अब भविष्य के लिये क्या करना चाहिये कि फीरसे इन्ही महान् दुःखोंका अनुभव न करना पडे।

हे स्वामीन्! जहांतक आप कुमतिका प्रेम बिलकुल त्याग न करोगे वहांतक भविष्यके लिये इन दुःखोंमे नहीं बचोगे। मैंने अभी ही मेरी दासीयों द्वारा सुना है कि मैं आपको पास आइ हूं यह सब

हाल कुमतिको पहूंच गया ह । यह वात सुनतेही कुमतिने अ-पने जनक मोहराजाके पास जाके आपकी और मेरी शीकायत करी है, उसपरसे मोहराजाने अपनी सर्व सेनाके साथ आपके उपर चडाइ करी है, एसा समाचार अभी ही सुना है ।

हे हितकारिणी सुन्दरी । जब मेरे सुसराजी मेरेपर सेना लेके आ रहे हैं तो अब मेरेको क्या करना चाहीये, और एसा उपाय वतलावो कि मैं मोहराजाका पराजय कर सकूं ।

हे आतमवीर ! आप घबरावे नहीं कारण मेरा पिता धर्मराजाके पासभी बहुतसी सेना है आपतो एक हो परन्तु आपके जेसे अनन्ते जीव इन्ही दुष्ट मोहराजाके पंजोसे छूडवायके मेरे पिताने अक्षयस्थानमें पहूंचा दीया है उन्होंके विषयमें तो मोहराजा अभीतक दांतोंको पीस ही रहा है आप एकाग्रचित्त होके मेरी अर्ज सुनिये ।

कका–कटक कर्मोतणो, चढआइ तुझलार ।
अप्रमत्त गजारूढहो, मतकर देर लिगार ॥२॥

अर्थ–हे स्वामिन् ! इन्ही कर्मकटकका अधिपति मोह नामका नरेन्द्र है जिन्होके कर्मकर्त्ता मिथ्यादर्शन प्रधान है और राग केसरी और द्वेष गजेन्द्र तथा सर्व २८ उमरावों और ज्ञानावर्णिय उपराजा पाच उमरावोंसे, दर्शनावर्णियराजा नव उमरावोंसे, वेदनियराजा दोय उमरावोंसे, आयुष्यकर्म राजा चार उमरावोंसे, नामकर्मराजा १०२ उमरावोंसे, गोत्रकर्म राजा

मूल दोय और साथमें सोले उमारावोंसे और अन्तरायकर्म राजा तो पांच महान् योद्धोंसे कटकके साथ है। हे स्वामिन्! मोहराजाके कटकमें पुरुष और स्त्रियां सभी उमरावोमें ही समावेश होता है। वह तीन लोकको त्रास देता हूवा आपके पीछे आ रहा है।

हे सुमति! में अकेला इन्ही महान् योद्धाओंको कैसे जीत सकता हूं।

हे स्वामिन्! आप चालिये मेरे पिताके घरपर वहांपर एक गन्धहस्ती है उन्हीपर आप विवेकरूपी अंबाडी और दोनों तर्फ स्याद्वाद रुप दो घंटा लगा दो और शुद्ध अन्तःकरणका वज्र-दंड हाथमें मजवुत पकडलो मै आपके अप्रमत्तरूपी गन्धहस्ती के उपर माहावत बन बेठजाउंगी फीर आप देखीये मोहका कटक आपके सन्मुखही क्यों आवेगा अर्थात् दुरहीसे भग जावेगा।

चैतन्य सुमतिकी वात सुन जिस माफीक मोहसे संग्राम करनेको तैयार हो गये उसी माफीक सर्व आत्महितेपीयोंको अपना स्वराज प्राप्त करना चाहीये।

खखा–खडग क्षमातणो, ज्ञान घोडे असवार।
कर्म कटकको जीतता, लागे कितनीवार॥ ४॥

अर्थ–इतनेमें मोहराजाका वडापुत्र द्वेष गजेन्द्रका वडा पुत्र निश्वानल अपने सुभटोंको साथमें लेके चैतन्यराजा पर चढाइ की थी उन्होंको देखके चैतन्य वहुत ही, घवराने लगा

और सुमतिको पुछाकि अब क्या उपाय करना चाहिये। तब सुमति बोली कि हे स्वामिन् आप क्यों घबराते हो, मेरा पिताके खजानेमें एक ऐसा चन्द्रहास खडग (क्षमारूपी खडग) है वह मानों दुश्मनोंके लिये एक सुदर्शन चक्र है और दुसरा कम्बोज देशका आकरणी जातिके अश्वकोभी लज्जित करनेवाला अश्व (ज्ञानरूपी अश्व) है उन्हीपर आप असवार होके वह खडग हाथमें धारण करो, फिर इन्ही जड कर्मोंको पराजय करनेमें क्या देर लगती है।

हे नाथ—क्षमारूपी खडग और ज्ञानरूपी अश्व अर्थात् ज्ञान सहित क्षमा करनेसे हजारों दुश्मनरूपी कर्मोंका एक श्वासोश्वासमें नाश हो जाता है। इन्ही सुमति सखीकि हित शिक्षाको धारण कर चैतन्य हिम्मत बाहादुर होते हूवे रिपुवोंका पराजय करनेको कम्मरकस तैयार हो गया है वास्ते सबको तैयार होना चाहिये।

गगा—गारव तीन है, मोहतणा सीरदार।
तत्त्व तीन त्रीशुलले, मर्द्दव दंड सुविचार॥ ५॥

अर्थ—इतनेमें तो मोहराजाके सीरदार जो रसगारव, ऋद्धिगारव, सातागारव, इन्होंकि मददमें मायाशल्य, निदानशल्य, मिथ्यादर्शनशल्य भी साथमें केसरीया करके चैतन्यपर चढाइ करीथी, एक दुसरेके साथमें अभिमान कर रहेथे, कि चैतन्यकि क्या ताकत है देखिये हम उन्हीको रसमें गर्द बना

देंगे, कुटम्ब धनामें लोभी बना देंगे, सुखशल्य बना देंगे, माया कपटाइ धूर्त्तताके लपेटामें ले लेंगे, इतने परभी वह मोह-रूपी पासमें न पडेगा तो उन्हीकि सर्व धर्मक्रियाका मैं नियाणा करा दूंगा, इतनेमें मिथ्यादर्शनशल्य बोलाकि तुम फीकर क्यों करते हैं, चैतन्यके असंख्याते प्रदेश है उन्हीसे मैं चुपकेसे कीसी२ प्रदेशोमें छावणी डालके अपने सबका निर्वाह कर दुंगा। अपने अपने मनके मोदक बान्धते हूवे चैतन्यकी तर्फ आने लगे, तब चैतन्यने सुमतिसे पुछा कि दुश्मन तो नजीक आ रहे है, अब क्या करना चाहिये। सुमतिने कहाकि हे प्राणेश मर्दवरूपी वज्रदंड लेके पेस्तरतो इन्ही तीनों गारवका मदको चकचुर करदो। बादमें शुद्धदेव शुद्धगुरु शुद्धधर्म रूपी यह तीनों तत्त्वोंकी तीक्ष्ण त्रीशुल है इन्हीको करकमलोंमे धारण कर तीनों शल्योंको अलग अलग त्रीशुलसे छेदन भेदन करदो कि इन्ही महान् दुष्टोंका फीर कीसीके परभी जोर जुलम न चले।

घघा–घोर कर देखिये, अपना घर हे दूर।
जागो मोह निंद्रा थकी, अब उगाहे सूर॥ ६॥

एक समय चैतन्यराजा कुमति सखीके छपर पलंगपर लेट रहा था उन्ही समय मोहराजाके प्रमाद नामके महान् योद्धा उन्होंकी पुत्री निंद्राने चैतन्यराजाको झकडके अपने आधिन बनालिया, उन्ही समय कुमति सखीका अन्तरापाके सुमति सखी अपने प्रितमके पास आके कहने लगी। हे नाथ!

आप अपने घरपर जानेका प्रयाण किया था तो इस विषम रस्तेमें क्यों लेट रहे.हो कारण अभीतक आपका घर (मोक्ष) बहुत दुर है वास्ते अब मोहनिद्राको जरा दुर करो अनन्तकाल हो गये है इन्हीं घोर अन्धकाररूपी रात्रीमें ही आप इदर उदरके धके खा रहे हो परन्तु जरा दुसालेको दुर कर मुंह बहार निकालोगे, तो आपको सूर्य (ज्ञान) दीख पडेगा फीर अपने मकानपर जाने योग्य रस्तेका स्वीकार कर निज स्थानपर पहुच जाना। चैतन्य यह सुमति सखीका वचन सुनके खडा हो वार्तालाप करने लगा। इतनेमें सुमति सखी चैतन्यसे कहने लगी हे स्वामीन् !

चर्चा—च्यार कषाय हैं, उत्तर भेद पचवीश।
धन हरे दीर्घकालसे, कब तुं इन्हसे बचीश ॥ ७ ॥

अर्थ—हे कन्थ! मुख्य च्यार कषाय है परन्तु इन्हीका उत्तर भेद पचवीश हैं।

४ अनन्तानुबन्धी—क्रोध, मान, माया, लोभ। सम्यक्त्व गुणको रोके।

४ प्रत्याख्यानि—क्रोध, मान, माया, लोभ। देशव्रत गुणको रोके।

४ अप्रत्याख्यानि—क्रोध, मान, माया, लोभ। सयम गुणकों रोके।

४ संज्वलनके—क्रोध, मान, माया, लोभ। वीतराग गुणको रोके।

६ हास्य, भय, शोक, जुगुप्सा, रति, अरति। शुक्लध्यानको रोके।

३ स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। अवेद गुणको रोके।

यह २५ कषाय प्रतिदिन आपके निज गुणरूपी धन जो ज्ञान दर्शन चारित्र है उन्हीको दीर्घकाल अर्थात् अनन्तकालसे हरण कर रहे है तो मेरी अर्ज है कि जब आपके धन हरण करनेवाले दुश्मन है, तो इन्ही दुश्मनोंके साथ आप प्रिति क्यों कर रखी है। क्या आप नहीं जानते हो कि, यह महान् दुष्ट अनन्ते जीवोंको विश्वास दे देके अपने कबजे कर, कैद कर दिये है। तो मै आपसे कहती हूं कि आप इन्होंसे कब प्रिति तोडोगे अर्थात् कब इन्ही दुष्टोंसे बचोगे, मै आपको हितकारी बात कहती हूं तथापि आप मेरी बातपर ख्याल नहीं करते हुवे इन्ही दुष्टोंके साथ गुपचुप प्रवृत्ति करते हो परन्तु वह मेरेसे छीपी हूइ नहीं है लो सुनलो।

छद्मा—छिद्र पारका, मत धोवो पर मेल।

ज्ञान दीपकसे देखीये, निज आतमका खेल ॥ ८ ॥

अर्थ—हे स्वामीन्! आप कुमतिके कबजे होके पारके छिद्र देख रहे है और रजक (धोबी) के पदको धारण कर

दुनियोंकी छती या अछती निंदा कर अपनी कुमति सखीका पोषण करते हो परन्तु क्या आप अनन्तकालके दुःखोंको भूल गये है कि पराछिद्र देखना और परनिंदा करना भवान्तरमें कितना दुःखका कारण होता है। भला आप दीर्घदृष्टिसे विचारीये कि इस्में आपको क्या स्वार्थकी प्राप्ति होती है । चैतन्य बोला कि हे सुमति ! इस्में मेरेको स्वार्थ तो कुच्छ भी नहीं है परन्तु मेरेको यह एक कीस्मका ईसक (स्वभाव) ही पड-गया है कि अब मेरेसे रहा नहीं जाता है। हे नाथ ! यह आपके हृदयमें दीर्घकालसे असर जमानेवाली कुमति है परन्तु आपको एसा ही इसक होगया हो तो मैं आपका इसक छोडाना नहीं चाहती हु किन्तु आप ज्ञानरूपी दीपक हाथमें लेके अपने आत्माका छिद्र देखीये कि यह आत्मा क्या क्या करता है और एक दिनमें कितने अकृत्य कार्य करता है। अकृत्य कार्य किये हुवेकि निंदा हमेशाके लिये करते रहो, अगर इस पाप का वजन कोइ कम करनेवाले (आपकी निंदा करनेवाला) मील जावे तो आपको खुशी मानके उन्ही उपगारी पुरुषोंका उपकार मानो, हे साहिब ! एसा इसक रखो कि जिन्होंसे भव-भवमें मेरी और आपकी प्रीति बनी रहे अगर आपका यह दुष्ट इरादा हो कि मै दुसरोंका छिद्र देख निंदा कर पराजय कर दूं तो यह भी आपका विचार खराब हैं इन्हीके लिये भी आप कान देके सुनिये ।

जजा-जीतों आत्मा, पर जीत्या क्या होय।
निज दुश्मन निजमें वसे, और दुश्मन नही कोय ॥९॥

अर्थ—हे चैतन्यराजा! आपको कुमतिने वडा भारी भर्म डाल दीया है वास्ते आप अपने दुश्मनोंको सज्जन मान अपने निजावासमें स्थान दे रखा है और जो आपके दुश्मन नही है उन्हींमें आपकी दुश्मनभ्रान्ति करादी है परन्तु जब आप मेरी शय्यामें आवोगे तब जान पडेगी कि " अप्पा म्मिरि होइ अणवठियस्स " + + " अप्पामित्तममित्तंच " इस वास्ते आप परको पराजय करनेका निरर्थक पुरुषार्थ क्यों करते है अगर आपको पुरुषार्थ ही करना हो तो आपका आत्माके अन्दर रागकेसरी और द्वेषगजेन्द्रके पुत्र क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, भय, शोक आदि अनेक दुश्मनों रहा हुवा है इन्होंके साथ युद्ध कर अपने कब्जे कर लोगा तो फीर दुनियांमें आपके कोइ भी दुश्मन नहीं है। हे सुमतिप्रिय! आपका कहना तो वहुत अच्छा है परन्तु इन्होंको पराजय करनेको एक शस्त्र एसा होना चाहिये कि प्रथमसे इन्ही दुश्मनोंका नायकको अपने आधिन बनाले। सुमति बोली कि हे नाथ! अपने घरमें वहुत शस्त्र है जिससे दोनों हाथोमें दो शस्त्र लो।

झझा—झुठ बोलो मति, झुट पापको बाप।
सत्य शील धारण करो, छुटे भव संताप ॥१०॥

अर्थ—हे स्वामिन् ! सर्व पापोंका बाप तथा नायक एक झुठ बोलना है कारण कि दुनियामें सब बातोंका इलाज हो सक्ता हे परन्तु झुठ बोलनेवालेका इलाज नहीं है और सर्व दुर्व्यसनोमें शिरोमणि कर्मदलिकमें अधिक तीव्रता रस डालनेवाला असत्य है और मिथ्यात्वके आगमनमें अग्रेश्वर मोहराजाके सर्व दुतोंमें यह एक नायक दुत है वास्ते आप इन्होंका पराजय करनेके लिये अपने निज खजानासे एक सत्य और दुसरा शील यह दोनों बडेही जोरदार शस्त्र धारण करके इन्ही पापके बापको अपने कबजे करलो कि फीरसे इसी चौरासीके अन्दर भव भ्रमनके तापरूपी संतापके संकटोंका मुह ही देखना न पडे अर्थात् भवभ्रमनको जलाजलि देके मोक्ष चले जावोगे फीर अपने अचलानन्दमें अव्याबाध सुखोंका अनुभव करते रहेंगे ।

हे स्वामिन् कुमतिने आपको यहभी भर्म डालाथा कि सुमतितो भीखारण हे निर्धन है इन्होंके पास जानेवाला बडा ही दुःखी हो जाता है क्योंकि सुमति अति प्रसन्न होती हे तब जगतके अच्छे सुन्दर पदार्थ खानेका पीनेका पहेरनेका मोजमजा रंगरागका तो प्रथमही त्याग करा देती है बादमें योगि बनाके घर घरमें भिक्षा मंगवाति है यह सर्व दालिद्रताकाही चिन्ह है वास्ते हे कामणगारा कन्त ! आप भुल चुकके सुमतिके प्रासादमें कभी नहीं जाना, अगर इन्ही कुमतिके कहनेपर आप विश्वास किया होतो अब सुनिये ।

टटा-टोटा है नहीं, निज खाताको देख ।
अनन्त खजाना अखुट है, प्रेम सहित तुं पेख ॥११॥

अर्थ-हे नाथ ! कुमतिने आपको अनादि कालसे अपने पक्षमें रखनेके लिये कभी कभी पौद्गलीक सुख देखाके नरक निगोदके दुःखोंसे आपके निजगुणोंकि हानि करी है इसीसे आपको जहां तहा टोटाही टोटा मालम होता है अर्थात् आपको पुन्यहिन बनाके बन्दरकी माफीक चतुर्गतिमें परिभ्रमन करा रही है । परन्तु हे स्वामिनाथ आप अपनि निज दुकानमें-पधारके अपना निजखाताको देखो, आपकी दुकानमें बिलकुल टोटा नहीं है । लो मैं आपको आपके निजघरका अखुट खजाना बतलाती हू देखिये आपके एकेक आत्मप्रदेशमें अनन्तज्ञान अनन्तदर्शन अनन्तचारित्र अनन्तवीर्यरूपी धन भरा हुवा है जोकि आप इन्हीको मेरी शय्याके अन्दर रहके सदैव उपभोग करते रहोगे तो यह खजाना अनन्तानन्त काल तक कभी खाली न होगा वास्ते मै अर्ज करति हूं कि एक दफे प्रेम सहित आप अपने खजानाको देखो । हॉ आपके इन्ही खजानेको लूंटनेवाले दुश्मन बहुतसे है परन्तु दुश्मनोंका जोर कब लगता है ? कि जब खजानाके मालिक घोर निंद्रामें सुता रहे तो चौर अवश्य मालका हरण करता है वास्ते अर्ज है कि-

ठठा-ठाकुर निजतणो, सुतो काल अनन्त ।
ललकारे सिंहनादकर, होय अरिका अन्त ॥ १२ ॥

अर्थ–हे प्रभो ! आपके निजानन्द नामका ठाकुर अनन्तकालसे कुमतिसखीकी साथ शय्याके अन्दर मोहनिद्रारूपी दुसाला ओडके सुता हुवा है। हे गुफावासी सिंह ! जरा हमारी अर्जपर ध्यान देके सम्यग्दर्शनरूपी हातल और ज्ञानरूपी गर्जना करिये। अर्थात् अनन्तवीर्यरूपी प्राक्रममे सिंहनादकि ललकार करिये तांके आपको अनन्तकाल तक अपने कब्जे रखके अनन्ते भव भ्रमन करानेवाले अरि (वैरी) को जड-मूलसे नष्ट होनेमें क्या देर लगति है। हे स्वामिन् जहांतक आप इन्ही दुश्मनोंसे घबराते रहोगे, वहां तक यह दुश्मन आपको कभी छोडनेवाले नही है बल्के आपको अधिकाधिक दुःख देंगे। हे स्वामिन् मै आपके दुश्मनोंका भी परिचय करा देती हूं। (१) केवल ज्ञानावर्णिय (२) निंद्रा (३) निंद्रा निंद्रा (४) प्रचला (५) प्रचला प्रचला (६) स्त्यानर्द्धि (७) केवल दर्शनावर्णिय (८) मिथ्यात्वमोहनीय (९) अन्तानुबन्धी क्रोध (१०) एवं मान (११) एवं माया (१२) एव लोभ १३–१४–१५–१६ प्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ १७–१८–१९–२० अप्रत्याख्यानी क्रोध मान माया लोभ एवं २० दुश्मनों आपके निजगुणोंकी सर्वथा घात करनेवाले है और (१) मतिज्ञानावर्णिय (२) श्रुतज्ञानावर्णिय (३) अवधिज्ञानावर्णिय (४) मनःपर्यवज्ञानावर्णिय (५) चक्षुदर्शनावर्णिय (६) अचक्षुदर्शनावर्णिय (७) अवधि दर्शनावर्णिय ८–९–१०–११ सज्वलनका

क्रोध मान माया लोभ १२ हास्य १३ भय १४ शोक १५ जुगुप्सा १६ रति १७ अरति १८ स्त्रिवेद १९ पुरुषवेद २० नपुंसकवेद २१ दानान्तराय २२ लोभान्तराय २३ भोगान्तराय २४ उपभोगान्तराय २५ वीर्यान्तराय एवं २५ दुश्मनों आपके निज मालको देशसे लुंटालुंट कर रहे हैं अर्थात् च्यार घातिकर्मोंकि ४५ प्रकृति है जिस्मे २० प्रकृति सर्व घाति है और २५ प्रकृति देशघाति है इन्होंने निजानन्दका अनन्तज्ञान गुण अनन्त दर्शन गुण, अनन्त चायकगुण, अनन्तवीर्य गुण इन्ही चारों गुणोंको अनन्त कालसे दवा रखा है । क्यों चैतन्यजी ! अब आपके नेत्रोंका पडल दुर हुवे हो तो एक सिंहनादकी ललकार करीये तांके आपकी भवोभवकी निंद्रा दुर होजाय फीर अच्छी तरहसे शिवसुन्दरीके साथ अव्याबाध सुखोंका अनुभव भोग करते सदैव आनन्दमय बन जाइये। इस मेरे कहने पर आप अवश्य विचार करेंगे । अगर इस अवसरभी आप पहिलेकि माफीक गफलत रखोगे तो में आपको सची सची वात सुना देती हूं ।

डडा–डाकण जाणजो, कुटीला कुमति नार ।
अनन्तजीव भक्षण किया, तुं अब सुरत संभार ॥१३॥

अर्थ–हे चैतन्यराज ! आप इन्ही कुटीला कुमतिके बाहारके हाव भाव रंग राग देखके इन्हीं दुष्टाके फन्दमें पड जाते हो तब यह कुमति आपको विश्वास उत्पन्न करनेको खान

पान एश आरामादि कार्योंमें प्रेरणा करती है और आपके हाथसे न करने योग्य अत्याचार कराति है कभी कभी तो आपके हृदयकमलमें निवास कर देति है और आपके प्रदेश प्रदेशमें अपना असर पहुचा देती है जिन्होंके जरिये आपको जडवत् बनादेती है । वास्ते महान् पुरुषो इन्ही कुटिला कुमतिको डाकनके नामसे पुकार रहें है । डाकन हो तो एक ही भवमें भक्षण करती है परन्तु यह कुमति डाकन तो भवोभवमें भक्षण करती है, हे नाथ! बिचारी डाकन तो एक दोय अथवा तीन जीवोंका भक्षण करती है परन्तु यह महान् दुराचारिणी कुमतिने तो अनन्ता जीवोंका भक्षण किया है इतनेपर भी तृप्त न हुइ और अनन्ते जीवोंका भक्षण कर रही है, और इन्हीके पञ्जोंमें आवेगा उन्होंको कभी नहीं छोडेगी, हे स्वामिनाथ! आप मेरी शय्याके अन्दर पधारे हो वास्ते मैं आपको नम्रतापूर्वक अर्ज करती हू कि आप अपनी दशाको ठीक ठीक समाल करते रहें कारण जहांतक इन्सान अपने ढंगपर चलते है उन्हों पर किसीका जोर नहीं चलता है वास्ते ही मैं आपको वार वार अर्ज करती हूं कि—

ढढा—ढग आच्छो रखो, ढगमे सुधरे काज ।
स्वसत्तामें रमणता, कर पामो स्वराज ॥ १४ ॥

अर्थ—हे स्वसत्ताविलासी! अनन्तकालकी कुमति दुर हो गइ है अब भी आपको चेतना हो तो आप अपना ढंग—

चलन अर्थात् नियम व्रत पच्चखान यह बाह्य ढंग है और परवस्तु जो पौदगलादि द्रव्य पांच है उन्हीको हेय पदार्थ समझके त्यागभाव रखो । अर्थात् आपके अच्छे ढंगको देखके कुमति बहुत कोपीत होके आपके अच्छे ढंगमें हजारों विघ्न करेंगी क्युं कि अच्छे ढगपर चलनेवालोको तो कुमति अपने दुश्मन ही समझती है । हे स्वामिनाथ ! आपकों मै पहलेसे ही इन्ही कुमतिकी आदतें बतला देती हूं आप कान देके सुनिये । आप जब अच्छे ढंग (चलन) पर चलेंगे तब कुमति दुर रहकर आपके शरीरमें व्याधि कर आपका ढंग छोडा देगी । कभी चोरीका माल बहुत सस्ता आपके पास भेजेगी वह आपसे स्वल्प मूल्यमें खरीद कराके कारागृहमें डलावेगी । कभी स्त्रीपर राग, कभी पुत्रपर राग, कभी मान-दशा, कभी निबिडमाया इत्यादि प्रपंच कर आपको अच्छे ढगसे भ्रष्ट कर अपनी शय्यामें पकड लेजावेगी । वास्ते मै आपसे निवेदन करती हुं कि आप अपनी सत्ता जो ज्ञान, दर्शन चारित्र और वीर्य इन्होंमें रमणता करो और स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल, स्वभावके दरवाजेसे कभी भूलचुकके पाव बहार न धरना, एसे जो वरताव रखोगे तो पराधिनपणासे मुक्त होके आप अपने असंख्य प्रदेश सत्तावाले नगरमें स्वराज करते हुए स्वतत्र सुखोंका अनुभव करोगे और मैं आपके इन्ही कार्यमें हमेशा मदद करती रहूगी ।

णणा--रणतुर वाजियो, चढ चालो रणखेत ।
अन्तःकरण शुद्ध आठमे, शुक्लध्यान लो श्वेत ॥ १५ ॥

अर्थ—हे निजानन्द ! मै आपसे पहले ही कहती थी कि यह कुमति आपके उपर कुपीत होगी, देखीये रणतुरकी अवाज आ रही है, अगर इस अवसरपर आप चुपचाप बैठ जावोगे, तो यह कुमति अपने बान्धवोंके साथ आपपर अपना हुमला करके आपको पकड अपनी शय्याके अन्दर लेजावेगी, तो फीर आपको अनन्तकाल तक नहीं छोडेगी । वास्ते आप अब पेस्तर मदचुर मुद्गल, विषय विध्वंसन बज्र, कषाय निकदन कुद्दाल, निद्रानष्ट स्मृतिशैल और विकथाभग चक्र हाथमें धारण करो इन्होंसे कुमतिके जितने योद्धे—मद, विषय, कषाय, निद्रा, विकथाका शिर छेदके अन्तःकरण शुद्धिरूपी निसरणी (श्रेणी) पर चढके आप एकदम शुक्लध्यानरूपी मेरा वृद्ध बन्धवके साथ वार्तालाप करो, वह आपकी पूर्णतया सहायता करेगा, और साथमें मै भी इस बातकी कोशीष करती रहुगी, देर न करीये पुरुषार्थरूपी रथ आपके लिये तैयार है इसपर विराजके रणखेतमें जल्दी चलिये ।

हे स्वामिन् अभी मेरे कानोंमे अवाज हुइ है कि हे सुमति ! तुं तेरे प्राणपतिको हितशिक्षा तो दे रही है परन्तु कभी २ कुमतिका एक छोटासा लडका चेतन्यके पास आता है इन्होंके

लिये रूकावटका करार चैतन्यसे पहेले कर लेना। इस वास्ते एक बात आप और भी सुन लिजिये।

तता–तनको देखके। मत करिये अहंकार।
विनय भक्ति भजनकर। तन पाम्याको सार॥ १६॥

अर्थ—सुमति चैतन्यसे कह रही है हे प्रीतमजी! आप इसी गौरे गौरे गात्र (शरीर) को देखके अहंकार न करिये, कारण यह शरीर हाड मांस रक्त मेद चरबी और मलमूत्रसे भरा हुवा उपरसे पतंगके रंगमाफीक लालीमा देख अहंकार कर रहा है परन्तु इन्हीका धर्म क्या है वह भी आप जानते है कि चणमात्रमें सडन पडन विध्वंसन हो जाता है। क्या आपने सनत्कुमार चक्रवर्तीका हाल नहीं सूना है? शरीरके सुन्दराकारका अभिमान करनेसे चणमात्रमें शोलारोग उत्पन्न हो गयाथा। आप प्रत्यत्त देखते है कि युवक अवस्थामें शरीरका रंग ढंग कुच्छ और ही होता है और वृद्ध अवस्थामें ज्वरा पिडित शरीरका हाल कुच्छ और ही देखाइ देता है। जोकि शिर कम्पने लग जाता है, मुहसे लाळें पडने लग जाती हैं, चमडी लटकने लग जाती है और उठने बैठने की भी शक्ति नही रहती है तो ऐसा नाशवंत शरीरका अहंकार आपको करना ठीक नही है। हे नाथ! इस शरीर पाने का सार यह है कि देव गुरु साधर्मी और मातापितादि सज्जनोंका

विनय करना, भक्ति करना, वेयावच्च करना, तथा परमेश्वरका भजन करना यह ही सार है। इन्होंसे ही यह मीलाहुआ नरभव रत्न चिंतामणि सफल होता है वास्ते आप अहंकारको छोडके सद्कार्यमें अपना शरीर अर्पण कर दो। हे स्वामिन्! कितनेक लोगोंका यह भी दुर्ध्यान है कि माता पिता पुत्र कलत्र धन धान्यादि मेरा है वास्ते यह शरीर उन्होंके कार्यमें लगादेते है वास्ते आप जरा इधर भी देखीये।

थथा–थारो को नहीं। कीससे करिये प्यार।
ज्ञानदर्शनमें रमणता। करिये तत्त्व विचार ॥ १७ ॥

अर्थ—हे चैतन्यराजा! इस दुनियांमें सभी प्राणी-चनीयेकी दुकानें और सरायके मेलाकी माफीक मुसाफरोंके रुपमें एकत्र हुवे है। नजाने कौनसा मुसाफर कीस देशसे आया है और कीस देशमें जावेगा, और कितनी वखत यहापर ठेरेगा और यह मेरी प्रित कितनेकाल पालन करेगी? जब इतनाही निश्चय नहीं है तो फीर उन्ही मुसाफरोंका विश्वास कर उन्होंके साथ प्रेम करना क्या उचित है? अर्थात् यह कुटुम्ब मेला है यह सब मुसाफर है यह तेरा नहीं है कारण जब तु परभव गमन करेगा तब यह सब यहापरही रहेगा और जब यहलोक परभव जावेगा तब तु यहापर रहेगा। तो ऐसा कारमी कुटुम्बसे प्रेम कर अपने अमूल्य मनुष्य-

जन्मको व्यर्थ क्षय करदेना आपको योग्य नहीं है। हे नाथ! यह बडी भारी कोशीशसे मीला हुवा नरभवरत्नका आपको पुर्ण यत्न करना चाहिये। जो अपनी वस्तुपर ही आपको प्रेम होतो आपके निज सम्बन्धी तो ज्ञान दर्शन है, उन्होंके अन्दर रमणता अर्थात् द्रव्यगुण पर्यायरूपी समुद्रमें कल्लोल करना चाहिये। हे आत्मानन्द! जरा नेत्रोंको खोलो, आपके असख्यात प्रदेशरूपी कोशके अन्दर एकेक प्रदेशमें अनन्त ज्ञानगुण अनन्त दर्शनगुण अनन्त चारित्रगुण अनन्त वीर्यगुण भरा हुवा है। उन्होंमें भी अगुरुलघु पर्याय अनन्त है वह आपको समय समय नये नये रूपसे देखाइ देगा। अगर आपको आपके मन्दिरपर प्रेम होतो इन्होंका दरवाजा जो सात नय, च्यार निक्षेप, अष्टपक्ष सप्तभंगी आदि अनेकान्तपक्ष दरवाजोंके स्याद्वादरूपी कीवाड खोलके अन्दर पधारे और निज परिवारके अन्दर तत्त्व रमणता करे तांकि वह नित्यपरिवारसे शाश्वता प्रेम बना रहे, यह ही आपका सज्जन है इन्ही तत्त्वज्ञानपर सदैव प्रेम सहित विचार करते रहो और इन्ही निजकार्यमें विघ्न करता जो आपके दुश्मन–चौर हे उन्हीको अपने कबजे बनानेकी कोशीष करो।

दद्दा–दमन करो सदा, पांचोइन्द्रिया चौर।
तेवीस योद्धा धनहरे, दोसोबावन मचावे शौर ॥१८॥

अर्थ–हे नाथ! आप जब कुमति सखीके वश हो गये

थे तबसे यह वेश्या समान पाचों इन्द्रियां जोकि श्रोत्रेन्द्रिय आपके अच्छे मनोहर विलासकारी शब्द श्रवण करनेमें प्रेरण कर रही है, चक्षुइन्द्रिय अच्छे सुन्दराकार तत्काल विषयोत्प करनेवाले रूप देखनेको खींच रही है, घ्राणेन्द्रिय अच्छे सुग न्धदार पुष्पादिकी सुवास लेनेकों निमन्त्रण कर रही है, रसे न्द्रिय अच्छे अच्छे भोजन करनेमें आपको बेभान बना देती हैं, कि जो भक्षाभक्ष, रात्रि है कि दिन है! इन्होंने भी आपक विकल बना देती है और स्पर्शेन्द्रिय सुखशय्या आदिमें अपन छटा दीखानेमें कुछभी कसर नहीं रखती है। हे महाराज! य पाचो इन्द्रिय अपनी विषय प्रतिकुल पदार्थमें आपको बडेही कुपी लभी बना देती है। केवल पाचों इन्द्रियांही नही किन्तु इन्होके २ पुत्रोंको भी साथमें रखती है। श्रोत्रेन्द्रियका जीवशब्द, अजी वशब्द, मिश्रशब्द, आदि चक्षुरिन्द्रियका श्याम, निला, लाल सफेत, श्वेत. घ्राणेन्द्रियका दोय सुरभिगन्ध दुरभिगन्ध. रसे न्द्रियका पांच तीक्त, कटुक, कषीत, आम्ल, मधुर और स्पर्शे न्द्रियका आठ कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष एवं २३ तथा इन्होका भी परिवार २५२ सुभट हैं+

+ श्रोत्रेन्द्रियके १२ विकार है। जैसे सुशब्द, दुःशब्द इन्होंके सचित्त, अचित्त, मिश्र करनेसे ६ इन्ही छे अच्छे होनेसे राग और बुरे होनेसे द्वेष एव १२ और चक्षुइन्द्रियके ६० विकार है। पाच शुभवर्ण, पाच अशुभवर्ण एव १० सचित्त, १०

वह चैतन्यजी ! आपके उपर हमेशां शौर मचा रहे हैं वास्ते पेस्तर आपको तपश्चर्यारूपी तलवार हस्तगत करके इन्ही पाचों इन्द्रिय, २३ विषय और २५२ विकारोंका शिरछेदन करके फीर समभावरूपी प्रासादमे अपनी वल्लभा सुमति सखीके साथ अनुभवपान करना उचित हैं। कारण आपके निज आवासके दरवाजेकी कुंजिये सब सुमतिके हाथमे हैं वह ही आपको बतलावेगी।

धधा–धर्म दोय भेद हैं, सूत्र और चारित्र।
शुद्ध श्रद्धासे किजिये, नरभव जन्म पवित्र ॥१६॥

अर्थ—प्रसन्न चित्त होके सुमति सखी कह रही है कि हे सुखविलासी ! आपके निज मन्दिरकी दोनों कुंजिया मेरे पास हैं वह लिजिये। धर्म दोय प्रकारका है (१) सूत्रधर्म (२) चारित्रधर्म। जिसमे सूत्रधर्म तो आचाराग, सूयगडायाग,

---

अचित्त, १० मिश्र एव ३०। अच्छेपर राग और बूरेपर द्वेष एव ६०। घ्राणेन्द्रियके १२ यथा सुगन्ध दुर्गन्धमें भी सचित्त अचित्त मिश्र एव ६ पर राग ६ पर द्वेष। रसेन्द्रियके पाच विषय और निमक एवं ६ अच्छे रस और ६ बूरे रस एव १२ सचित्त १२ अचित्त १२ मिश्र एव ३६ पर राग और ३६ पर द्वेष एवं ७२। स्पर्शेन्द्रियके ८ अच्छे विषय ८ बूरे एव १६ सचित्त, १६ अचित्त, १६ मिश्र एव ४८ पर राग, ४८ पर द्वेष एव ९६ सर्व १२–६०–१२–७२–९६ सर्व २५२।

स्थानायांग, समवायांग, भगवती, ज्ञाताधर्म कथा, उपासगदशांग, अन्तगडदशांग, अनुत्तरोववाइदशांग, प्रश्नव्याकरण, विपाक और दृष्टिवाद इन्होंके सिवाय वर्तमान जो उपांग, मूल, छेद आदि पूर्व महाऋषियोंके वनाये हुवे प्रकरणादि यह सर्व सूत्रधर्म है इन्होंके अन्दर पूर्ण श्रद्धा रखके पठन पाठन करना और चारित्रधर्म जो देशसे श्रावकव्रत और सर्वसे साधुव्रत है इन्होंको श्रद्धापूर्वक यथाशक्ति पालन कर अपना मीला हुवा मनुष्यजन्मको पवित्र बनाना। हे मोक्षाभिलाषी ! यह दोनों कुंजिये आपके निजावासकी है इन्हीको स्वीकार कर चलिये मेरे साथ आनन्दसे अनुभव करो। यह मेरा वारवार आमंत्रण है क्योंकि आप मेरेसे दीर्घकाल दुर ही रहे थे जैसे कि—

नना—नाटक कर्म संग, नाच्यो काल अनंत ।
निज घर आवो वालहा, सुमति कहे सुनो कन्त ॥२०॥

अर्थ—हे साहिबजी ! मैं अनन्तकाल हो गये आपकी राह देख रही हूं मेरी शय्या आपके सिवाय बिलकुल सुनी है परन्तु क्या करू ! आपके वन्धे हुवे कायदेसे मैं लाचार हूं। क्योंकि आप कुमतिके भ्रममें पडके इन्ही मोहराजाके राजमें नाना प्रकारके नाटक करते थे। वह मैं सब देखरही थी मुजे बडा दुःख होता था कि मेरा भरतार अनन्त शक्तिवाला

होनेपर भी बन्दरकी माफीक नाच रहा है परन्तु क्या करूं! आपका कायदा तोडनेको मै साहसीक नहीं थी। हे स्वामीन्! अब आपकी दासीकी अर्जको स्वीकार कर आपके निज महेलमें पधारो वहांपर मै आपकी सेवा करनेकी अभिलाषा करती हू अर्थात् मेरी अनन्तकालकी पीपासाकों पुरण करो। अगर मेरे इस कथनपर आप ध्यान न देंगे तो हे कन्थजी! जैसे कुमतिने आपको चौरासी चौटोंमे, कभी नरकमें तो कभी देवतावोंमें तो कभी हस्ती, कभी अश्व, कभी गद्धा, कभी श्वान, कभी सर्प, कभी मच्छ, कभी कच्छ, कभी गरुड, कभी मयूर, कभी कीडे-कुंथुवे तो कभी निगोदमे, कभी पृथ्वी, अप, तेउ वायु और कभी वनस्पति, कभी मनुष्यमें भी अनार्य उसमें भी आपकी कुमतिसखी देख रहीथी कभी लुला, लंगडा, काना, बेरा, मुंगा कभी दालद्री, कभी निर्धन, कभी कोष्टरोग, श्वासरोग, जलंदर भगंदर शुल ज्वर आदि रोगमें भ्रमण कराके कुमति खुश होतीथी। हे स्वामिन् आपको कभी राजा बनायाथा और मदिरा, मांस, शीकार, क्रुदंड आदि कराके आपके नाकमें रसा डालके नरकमें पहुंचा दीयाथा वहां पर परमाधामी देवतावोंने आपका छेदनभेदन कीयाथा वहांसे कभी सेठ सेठनापति-आदिमें नाटक नचायाथा तो कभी तेली, मोची, तंबोली, घांची, कुंवरा, खटीक, भील, मेणा, वडभुजादिके वेष कराके नाटक नचाया था। हे

स्वामिन् ! देखीये आपको कभी वैश्या, दूति, दासी, विधवा आदिके वेषमें नाच नचाया था। कभी देवतावोंमें परमाधामी-पणे कि विलकुल निर्दय, तो कभी व्यंतर पणे, कभी आसुरी-काय तो कभी क्रिनिषिया, कभी अभोगीक तो कभी कुतूह-लीक. हे स्वामिनाथ। मै कहातक इस आपके आत्महरण नाट-कका व्याख्यान करू। क्या उन्ही नाटकोंसे आप विस्मृत हो गये है ? क्या वह सब दु ख इतनेहीमें आप भुल गये हो। हे नाथ ! आपने तो उन्ही प्रेमसहित दुःखका अनुभव किया है परन्तु मैं तो आपका दुःख देखदेखके आधा शरीरवाली हो गइ हूं तो आपने फीर उन्ही दुःखों को मूल्य खरीद करने का इरादा करते हो यह बात मै ठीकतौरपर जानती हू परन्तु याद रखीये।

पपा पैसा पापसे। जोड्या लाख करोड।
अणचेत्यो आसे रिपू। लेसे घाटो मरोड ॥ २१ ॥

अर्थ—हे पुद्गलानन्दी। आप इतने दुःख देखनेपर भी इन्ही सुमडी मायासे प्रीत रखते हो परन्तु अभीतक आपने यह नही सुना होगा कि इस दुनियाके अन्दर महान् सत्वधारी महात्मावोंने इन्ही सुमडी मायाका कैसा बडा तीरस्कार कीया है उन्ही जगविनाशक मायाका आप आदर सत्कार करते है उन्हीके लिये राजाका हासल चोराते हो, मातपिता बन्धु सज्जनोंको धोखा दे देते हो, विश्वासघात करते हो, झूठ बोलते

हो, माया छल धूर्तता कुडतोल कुडमाप कुडलेख लिखते हो कृत्याकृत्यका भान भूल जाते हो, धर्मकर्मको उंचे धर भर्मे धक्का खाते हो, कभी कभी देवद्रव्य, गुरुद्रव्य, ज्ञानद्रव्य साधारणद्रव्य का भी प्रसाद कर जाते हो, हे लोभानन्द आयुष्यके अन्दर तुमनें इस सुमडी मायाको एकत्र करने के सिवाय कुच्छ भी प्रयत्न नही कीया है और लक्षों तथा क्रोडों की माया एकत्र करी है परन्तु इसीमे हूवा क्या ? भला तुं स्मृतिकर कि इन्ही नाशवंत मायाको सफल करनेके लिये तेरे हाथसे कभी सुकृत में एकपैसा भी लगाया था ? अरे ! आत्मवीर, जरा मेरे हाथमे हाथ दे के देखीये इस सुमडी मायामें कितने प्रधान लक्षण है । प्रेमका नाश करना, माता पिता बन्धु सज्जनोसे विरोध कराना, अकृत्य-अत्याचार कराना, सत्संग न करने देना, धर्मकार्यमे बाधा डालनी, मोक्षमार्गमें विघ्नभूत होना, कीसीपर अछते कलंकका दिराना, असत्य बोलना इत्यादि अनेक दुर्गुणोंसे अलकृत होनेपरभी जब कर्मोदयसे शरीरमे रोग होता है तब इन्ही मायाको पासमें लाके कहो कि हे अत्याचारिणी ! में तेरे लिये क्षुधा पीपासा शीतोष्णादि अनेक कष्ट सहन किया है । अब तुं मेरा रोगको नष्ट कर दे तो क्या वह माया रोगको नष्ट कर सक्ती है ? अरे ! तृष्णाके पुत्र ! तु जरा विचार तो कर कि जब तेरे रिपु-काल आवेगा तब यह माया तेरे साथमे चलेगी ? नही । बस, काल आतेही

तेरा धांटा मोटके तुजे ले चलेगा-और दुष्कृतकर जो माया एकत्र करी है उन्होंका फल तेरेको परमाधामीयोंसे दीरावेगा वहापर न तेरी माया काम आवेगी । न तेरे कायाके मजुग पुत्र कलीभी काम आवेगा । वहांपर निर्धन होके तुजे अकेलेको ही दुःख सहन करना पडेगा वास्ते हे नाथ ! आप इस सुमडीमाया-तृष्णाको दूर ही रखो । और इन्ही प्रधान शरीरमे बने वहातक अच्छे कार्य करो क्योंकि—

फफा-फुल सम देह है, क्षण क्षणमें क्षय थाय ।
पुन्य पुंजी ले आनियों, खाली खजाने जाय ॥२२॥

अर्थ-हे आत्मविलासी ! अगर यह प्रधान शरीर अर्थात् मनुष्य जन्म जो कि वहुत मुश्कीलसे मीला हुवा है वह भी प्रतिक्षण क्षय हो रहा है । इन्हीके लिये अगर आप जरा भी विचार न करोगे तो क्या यह प्रधान मनुष्यभव आपको वार२ मीलाही करेगा ? नही नही. यह नरावतार वडाही दुर्लभसे मीलता है । आजतक जो तुमने संसारके अन्दर भव किया है उन्होंका हीसाव किया जाय तो अनन्ते भव तीर्यचके करनेपर एक भव देवतावोंका मीला है और असंख्याते भव देवतावोंके करनेपर एकभव नरकका मीला है और असंख्याते भव नरकके करनेपर एक भव मनुष्यका मीला है अर्थात् एक भव मनुष्यका कव मीलता है कि असंख्याते नरकके भव, उन्होंसे असंख्यात गुणे देवतावोंका भव, उन्होंसे अनन्त गुणे तीर्यचके

भव किया है तव एक भव मनुष्यका मीला है। क्या एसा मनुष्यभव चिंतामणी रत्न, कामकुंभ, कल्पलता, चित्रावेली, और सुरतरूसेभी अधिक अमूल्य नहीं है ? अर्थात् इन्होंसेभी अमूल्य है ! अरे ! भर्मकी खाटपर पडे हुवे प्रीतमजी ! इन्ही नरदेहकी देवताभी इच्छा करते है तो फीर आप प्राज्ञ होके इस मनुप्यभवको रदी खातेमे क्यों निष्फल करते हो । हे स्वामिन् आप पूर्वभवमें पूर्ण पुन्योपार्जन किये वह साथमे लेके आयेथे कि जिन्होंके जरिये आपको आर्य क्षेत्र, उत्तम जाति, शरीर निरोग, पूर्णेन्द्रिय, दीर्घायुष्यवाला नरभव और सद्गुरूकी सेवा सिद्धान्तका श्रवण इन्ही आठ बोलों की सामग्री आपको मीली है परन्तु उसपर ठीक निर्मल चित्तसे श्रद्धा रखना और इन्होंमें पुरुषार्थ करना वह दोय कार्य आपके आधिन है । अगर इन्होंको आप नहीं करोगे तो पूर्व आठबोलोंके खजाना लायेथे उन्हीको यहांपर क्षयकर पुन्य रहीत नरक तथा तीर्यंच गतिमें चले जावोगे। फीर नरकमें अनन्त वेदना सहन करोगे तीर्यचमें हस्ती, उंट, अश्व, वेल होके दुसरोंकी असवारीका काम देना पडेगा । वास्ते आप इस अमूल्य समयको खेल तमासे हांसी ठठे अेस आराममें मत खोओ । मे आपसे वार वार पुकार करती हूं कि—

चवा—वखत अमूल्य है, गइ न आवे कोय ।
वहांपे मूल्य करावियें, जहांपे कसोटी होय ॥ २२ ॥

अर्थ—हे निजानन्द ! इस ससारके अन्दर जितने पौद्गलीक पदार्थ है वह गये हुवे फीर भी मील सक्ते है जैसे माता पिता पुत्र कलत्र नोकर चाकर राज सुवर्ण चादी हाट और यह शरीर भी किसी कालमे मील सक्ता है। किन्तु जो समयरूपी वखत जाता है वह फीरसे कबी नहीं मीलता है वास्ते इन्ही समयको व्यर्थ न खो देना चाहिये। हे चैतन्य ! तूं ज्ञान लोचनोंसे देख, जब किसी मनुष्यका १०० वर्षका आयुष्य होता है वह ५० वर्ष तो निद्रामें ही क्षय कर देता है शेष ५० वर्षोंके अन्दर दश वर्ष बाल्यावस्था और दश वर्ष वृद्धावस्थामें चले जाते है शेष ३० वर्ष रहता है जिस्में खानापीना वेपार करना विवाह-सादी आनाजाना सजन सनधी आदि कितने प्रकारकी उपाधीयां है उन्होंके लिये अगर १५ वर्ष छोडदिया जाय तो शेष सो वर्षोंके अन्दर पन्दर वर्ष आपके लिये जमा रहता है। अगर उन्होंको भी गफलतीमें खोर्दें तो क्या यह मनुष्यजन्मका साराश निकाला अर्थात् सोके सो वर्ष धूलमें खो दिया कहना क्या अनुचित होगा ? हे चैतन्य ! आपको इस मनुष्यभवके वखतकी किंमत न हो तो किसी सत्पुरुषोंके पास जावों कि जिन्होंके पास किंमत करनेकी कसोटी हो। वह आपको किंमत कर बतलायेगा कि इस समयकी इतनी किमत है। अगर आप अकेले नहीं जा सक्ते हो तो चलीये मैं आपके साथ चलू। सुमति और चैतन्य दोनो समयकी किंमत करानेको कसोटीवालोंके पासगये। वहांपर

जो अपने वखतकी किंमत कर अमूल्य समज रखी है वह महात्मा चैतन्यको एक हितशिक्षा देते हुवे बोले कि—

भभा–भेद जाणो मति, आतमसिद्ध स्वरूप ।
भेद मीट्यो भर्म टल्यो, तब चैतन्य चिदरूप ॥ २४ ॥

अर्थ—हे सुमति ! मुजे आश्चर्य होता है कि यह कुमतिका कन्थ आज तेरे हाथ कहांसे आगया ? साथहि में मुजे आनन्द भी होता है कि ऐसे अनादिकालके भ्रमण करते हूवे प्राणीयोंको अपना वखतकी किंमत कराने की अभिलाषा उत्पन्न हूइ है। हे धर्मपुत्री ! तुं तेरे पतिके हृदयकमलमें निवास करके अच्छी तरहसे चैतन्यको सुनाना जो कि मै कहता हूं । हे चैतन्य ! वखतका मूल्य तो अमूल्य है परन्तु कौनसा दर्जे पर है इन्हीका निर्णय करना खास जरूरी है। जहांतक प्राणीयोंको यह भर्म है कि मेरी आतमा और सिद्धों की आत्मामें भेद है। मैं दुःखी सिद्ध सुखी, मै अज्ञानी सिद्ध-ज्ञानी, मै रागी द्वेषी, सिद्ध अरागी अद्वेषी इत्यादि जो भेद समझता हो उन्होंके लिये वखत अमूल्य हैं परन्तु जब ज्ञानीयोंकी उपासना कर इन्ही भेद भावको मूलमे निकालदे और अभेदावस्थाकी प्राप्ती करले उन्होंके लिये वखत की किंमत नही है क्योंकि जिन्होंको कार्य करना हो वह समय की राह देखता हैं परन्तु सर्व कार्य सिद्ध कर लिया है उन्होंको समय की राह देखने की आवश्यक्ता नही है। वास्ते हे

सुमतिके भरतार ! अब आप अपनी आत्माको सिद्ध सामान्य समझो जैसे सिद्धोंका स्वभाव अनाहारी है तो मेरा भी स्वभाव अनाहारी है, सिद्धोंका स्वभाव शान्त है तो मेराभी स्वभाव शान्त है, सिद्धज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य रूप घनमय है वैसे मेरी आत्मा भी ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्यमय है, जैसे सिद्धोंको पर स्वभावमें रमणता नही है, वैसे मेरेभी परसत्तामें रमणता नही है । सिद्ध स्वसत्तामें रमणता कर रहे है वैसेही मुझेभी स्वसत्तामें रमणता करना चाहिये। ऐसे जो अभेद आत्मा हो गया है फेर कीसी प्रकारका भर्म नहीं रहता है अर्थात् भेद भाव मीट गया है तो चैतन्यको कीसी प्रकारका भर्म नही रहता है एसा होनेसे आत्मा चिदानन्द रूप होजाता है । हे चैतन्य—

ममा–भर्म जाएयों पछे कर्म न बान्धे कोय ।
पूर्वकर्म प्रजालके । सिद्ध समाना होय ॥ २५ ॥

अर्थ—हे आनन्दानन्द ! इस रौद्र संसारके अन्दर जीतने प्राणीयों शुभाशुभ कर्मोपचय करते है वह अभितक कर्मोंके मर्मसे अज्ञात है तथा आत्माके मर्म (अभितरके गुण) से अज्ञात है और जिन्हीं महापुरुषोंने कर्मोका मर्म जैसे जल-निवास करने वाली मच्छीयों के लिये प्रथम गोलीयों डालतें हैं उन्ही गोलीयोंकी लालचसे मच्छीगरकी जालमें अनेक मछलीयां फस जाती है, और मृग रागश्रवण कर, हस्ती सुन्दर

जो अपने वखतकी किंमत कर अमूल्य समज रखी है वह महात्मा चैतन्यको एक हितशिक्षा देते हुवे बोले कि—

प्रभा–भेद जाणो मति, आतमसिद्ध स्वरूप।
भेद मीट्यो भर्म टल्यो, तब चैतन्य चिदरूप ॥ २४ ॥

अर्थ—हे सुमति! मुजे आश्चर्य होता है कि यह कुमतिका कन्थ आज तेरे हाथ कहांसे आगया? साथहि में मुजे आनन्द भी होता है कि ऐसे अनादिकालके भ्रमण करते हुवे प्राणीयोंको अपना वखतकी किंमत कराने की अभिलाषा उत्पन्न हुइ है। हे धर्मपुत्री! तुं तेरे पतिके हृदयकमलमें निवास करके अच्छी तरहसे चैतन्यको सुनाना जो कि मैं कहता हूं। हे चैतन्य! वखतका मूल्य तो अमूल्य है परन्तु कौनसा दर्जे पर है इन्हीका निर्णय करना खास जरूरी है। जहांतक प्राणीयोंको यह भर्म है कि मेरी आतमा और सिद्धों की आत्मामें भेद है। मै दुःखी सिद्ध सुखी, मै अज्ञानी सिद्ध ज्ञानी, मे रागी द्वेषी, सिद्ध अरागी अद्वेषी इत्यादि जो भेद समझता हो उन्होंके लिये वखत अमूल्य है परन्तु जब ज्ञानीयोंकी उपासना कर इन्ही भेद भावको मूलसे निकालदे और अभेदावस्थाकी प्राप्ती करले उन्होंके लिये वखत की किंमत नही है क्योंकि जिन्होंको कार्य करना हो वह समय की राह देखता है परन्तु सर्व कार्य सिद्ध कर लिया है उन्होंको समय की राह देखने की आवश्यक्ता नही है। वास्ते हे

सुमतिके भरतार ! अब आप अपनी आत्माको सिद्ध सामान्य समझो जैसे सिद्धोंका स्वभाव अनाहारी है तो मेरा भी स्वभाव अनाहारी है, सिद्धोंका स्वभाव शान्त है तो मेराभी स्वभाव शान्त है, सिद्धज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य रूप धनमय हैं वैसे मेरी आत्मा भी ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्यमय है, जैसे सिद्धोंको पर स्वभावमें रमणता नही हैं, वेसे मेरेभी परसत्तामें रमणता नही हैं। सिद्ध स्वसत्तामें रमणता कर रहे है वैसेही मुझेभी स्वसत्तामें रमणता करना चाहिये। ऐसे जो अभेद आत्मा हो गया है फेर कीसी प्रकारका भर्म नही रहता है अर्थात् भेद भाव मीट गया है तो चैतन्यको कीसी प्रकारका भर्म नही रहता है एसा होनेसे आत्मा चिदानन्द रूप होजाता है। हे चैतन्य—

ममा—मर्म जाण्यों पछे कर्म न बान्धे कोय।
पूर्वकर्म प्रजालके। सिद्ध समाना होय ॥ २५ ॥

अर्थ—हे आनन्दानन्द ! इस रौद्र ससारके अन्दर जीतने प्राणीयों शुभाशुभ कर्मोपचय करते है वह अभितक कर्मोंके मर्मसे अज्ञात हैं तथा आत्माके मर्म (अभितरके गुण) से अज्ञात है और जिन्ही महापुरुषोंने कर्मोंका मर्म जैसे जल-निवास करने वाली मच्छीयों के लिये प्रथम गोलीयों डालते है उन्ही गोलीयोंकी लालचसे मच्छीगरकी जालमें अनेक मछलीया फस जाती है, और मृग रागश्रवण कर, हस्ती सुन्दर

जो अपने वखतकी किंमत कर अमूल्य समज रखी है वह महात्मा चैतन्यको एक हितशिक्षा देते हुवे बोले कि—

भभा–भेद जाणो मति, आत्मसिद्ध स्वरूप ।
भेद मीट्यो भर्म टल्यो, तब चैतन्य चिदरूप ॥ २४ ॥

अर्थ—हे सुमति ! मुजे आश्चर्य होता है कि यह कुमतिका कन्थ आज तेरे हाथ कहांसे आगया ? साथहि में मुजे आनन्द भी होता है कि ऐसे अनादिकालके भ्रमण करते हूवे प्राणीयोंको अपना वखतकी किंमत कराने की अभिलाषा उत्पन्न हूइ है। हे धर्मपुत्री ! तु तेरे पतिके हृदयकमलमें निवास करके अच्छी तरहसे चैतन्यको सुनाना जो कि मैं कहता हूं । हे चैतन्य ! वखतका मूल्य तो अमूल्य है परन्तु कौनसा दर्जे पर है इन्हीका निर्णय करना खास जरूरी है । जहांतक प्राणीयोंको यह भर्म है कि मेरी आतमा और सिद्धों की आत्मामें भेद है । मै दुःखी सिद्ध सुखी, मै अज्ञानी सिद्ध-ज्ञानी, मै रागी द्वेषी, सिद्ध अरागी अद्वेषी इत्यादि जो भेद समझता हो उन्होंके लिये वखत अमूल्य है परन्तु जब ज्ञानीयोंकी उपासना कर इन्ही भेद भावको मूलमें निकालदे और अभेदावस्थाकी प्राप्ती करले उन्होंके लिये वखत की किंमत नही है क्योंकि जिन्होंको कार्य करना हो वह समय की राह देखता है परन्तु सर्व कार्य सिद्ध कर लिया है उन्होंको समय की राह देखने की आवश्यक्ता नही है । वास्ते हे

अर्थ—हे परमानन्दमय ! इस दुनियांमें ऐसे भी ढोंगी धूर्त कुमति राणी और कदाग्रह पुत्रके वसीभूत हुवे मनुष्य देखनेमें आते है कि जिन्होंके हृदयसे अभी तक विषय कषायोंकी वासना दूर नहीं हुइ है। जिन्होंने वर्ष दो वर्ष कष्ट करनेपर भी अन्तिम सवाल करते है कि हमको यह वस्तु चाहती है। हे भक्तो ! तुम मुझको यह वस्तु-पदार्थ दीलादो अगर कितनेक ऐसे भी होते है कि बाह्य देखावमें विषयकषायसे निवृत्ति देखते है परन्तु अन्दरमें जीवाजीवको नहीं जानता है, बन्धहेतु जो मिथ्यात्व, अव्रत, कषाय, योग उन्होंको नहीं जाना है, निर्जराका हेतुको नहीं जाना है, मोक्षका हेतु जो सम्यक्ज्ञान, दर्शन, चारित्रको नहीं जाना है, एसा जो अज्ञानी जीव अष्टागध्यान जो यम नियम आदिसे ही स्वर्गकी इच्छा करते है। कथञ्चित् कष्टके जोरसे स्वर्गादिकके पौद्गलीक सुख मील भी जाते है तो भी इन्होंसे हुवा क्या ? जो संसारमें भवभ्रमणके तंतु थे उन्होंका तो छेद नहीं होता है। वास्ते महाऋषियोंने स्वसत्ता परसत्तामें अज्ञात लोगोंका उक्त कष्टादि सर्वको अज्ञानदशाकी चेष्टा मात्र मानी है। हे आत्मवीर ! आप पेस्तर सदागमसे प्रेमकर जीवाजीवको समझो। यह जीव कीस कारणसे अजीवके पासमें बन्धा है और कैसे छूट सकता है इन्होंका हेतु-कारणको ठीक ठीक समझके ही यम नियमादि अष्टागध्यानमें मग्न समाधिमें तल्लीन होजाना कि

रूपदेखके, भ्रमर सुगन्धी लेते हुवे. यह सब कर्मोंके मर्मसे अज्ञात होते हुवे चणमात्रके पौद्गलीक सुखके लिये अपनी जिंदगीको खो बैठते हैं। अर्थात् कर्मोंका मूल मर्म संसारके अन्दर परिभ्रमन करनेका है एमा समझ गये है फीरसे नये कर्म कबी नही बान्धेगा। जैसे कपील ब्राह्मण दो मास सुवर्ण के लिये राजाके पास गयाथा उन्हों की तृष्णा इतनी तो बढ गइ कि उन्ही राजाका सम्पूर्ण राज ले लेने-पर भी संतोष न हुवा जब इन्ही कर्मोंका मर्मको जान लिया तब आत्मभावनाके भुवनमें आते ही केवलज्ञानको प्राप्त करलिया। फीर नये कर्मोंको नहीं बांधे। जब नये कर्मोंका बन्ध नहीं होता है और अनशन, उणोदरी, भिक्षाचारी, रसपरित्याग, कायाक्लेश, प्रतिसंलीनता, प्रायश्चित, विनय, वैयावच्च, स्वाध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग, एवं बारह प्रकारकी तपश्चर्या करके पूर्वके शेष कर्मोंका क्षय करदेनेसे आत्मा सिद्ध सामान्य निर्मल होजाता है। हे चैतन्यराज! तब ही निज घरके सुखोंकी मालुम होती है परन्तु कितनेक लोक एकान्तवादको ही स्वीकार कर अनेक कष्टक्रिया करते हैं। कभी तुमको भी भर्ममें न डालदे वास्ते एक शिक्षा और भी सुनलो कि—

यथा-यम नियम धरे, आसन समाधि ध्यान।
नहीं जाणी निज आतमा, यह सघलो अज्ञान ॥२६॥

अर्थ—हे परमानन्दमय ! इस दुनियामें ऐसे भी ढोंगी धूर्त कुमति राणी और कदाग्रह पुत्रके वसीभूत हुवे मनुष्य देखनेमे आते है कि जिन्होंके हृदयसे अभी तक विषय कषायोंकी वासना दूर नहीं हुइ है। जिन्होंने वर्ष दो वर्ष कष्ट करनेपर भी अन्तिम सवाल करते हैं कि हमको यह वस्तु चाहती है। हे भक्तो ! तुम मुझको यह वस्तु-पदार्थ दीलादो अगर कितनेक ऐसे भी होते है कि बाह्य देखावमें विषयकषायसे निवृत्ति देखते है परन्तु अन्दरमें जीवाजीवको नहीं जानता है, बन्धहेतु जो मिथ्यात्व, अव्रत, कषाय, योग उन्होंको नहीं जाना है, निर्जराका हेतुको नहीं जाना है, मोक्षका हेतु जो सम्यक्ज्ञान, दर्शन, चारित्रको नहीं जाना है, एसा जो अज्ञानी जीव अष्टागध्यान जो यम नियम आदिसे ही स्वर्गकी इच्छा करते है। कथञ्चित् कष्टके जोरसे स्वर्गादिकके पौद्गलीक सुख मील भी जाते है तो भी इन्होंसे हुवा क्या ? जो संसारमें भवभ्रमणके ततु थे उन्होंका तो छेद नही होता है। वास्ते महाऋषियोंने स्वसत्ता परसत्तामें अज्ञात लोगोंका उक्त कष्टादि सर्वको अज्ञानदशाकी चेष्टा मात्र मानी है। हे आत्मवीर ! आप पेस्तर सदागमसे प्रेमकर जीवाजीवको समझो। यह जीव कीस कारणसे अजीवके पासमें बन्धा है और कैसे छूट सकता है इन्होंका हेतु-कारणको ठीक ठीक समझके ही यम नियमादि अष्टागध्यानमे सहज समाधिमें तल्लीन होजावो कि

जिन्होंके जरिये आपको स्वसत्ता प्रगट हो सक्ती है। हे महात्मा! देखीये इन्हीं सबका कारण मैं आपको बतलाती हूं—

दुहा—वाणी जिनतणी, करो सुधारस पान।
मीटे पीपासा भवतणी, प्रगटे परम निधान। २७॥

अर्थ—हे हंसात्मा! इन्ही घोर समुद्रमें भ्रमण करनेवाले जीवोंको आकाश प्रदेशसे भी अनन्तगुणी तृष्णारूपी पीपासा लग रही है। उन्हींको शान्त करनेके लिये एसा कोइ भी संसारमें शान्तरस नहीं है कि उन्ही पीपासाको मीटा सके। परन्तु संसारके किनारे रहे हुवे जिनेन्द्र देवोंने शान्ति रसमय जिनवाणीरूपी सुधारस धाराका पान भव्यात्मावोंको कराया है और उन्ही सुधारसका पान करते हुवे अनन्ते जीव अपना निधान (केवलज्ञान) प्रगट कर स्वतंत्र बन गये है। हे चैतन्य! आपको भी वह ही पीपासा लग रही है जिन्होंके जरिये आप भी घर, हाट, महेल, धन, धान्यादिका संचय करनेमें समयको खो रहे है। परन्तु आप अन्तरात्मासे विचार करेंगे तो इन्ही नाशवंत पौद्गलीक सुखोंसे आपकी पीपासा नहीं मीटेगी परन्तु यह तो दिन दिन अधिक वढती जावेगी "यथा लाभो तथा लोभो" वास्ते आपकी दासी सुमति मैं आपको अर्ज करती हूं कि आपको अनन्तकालकी पीपासाको मीटाना हो तो आप एक दफे इन्ही जिनवाणी सुधारसका पान करो और हर समयानुभव

फर इन्हीके स्वादको समझो कि आपको कैसा आनन्द होता है इतना ही नही बल्कि आपके निज घरमें निधान-खजाना (केवलज्ञान, केवलदर्शन) आपसे प्रगट हो जायगा, ऐसा होनेपर यह पीपासा आपमे मुह छीपाती फीरेगी अर्थात् कभी भी आपके पास नहीं आवेगी जीससे आत्मा आनन्दमय हो जायगा।

ररा-रात गिति गइ, उगो अब दिनकार।
भानु प्रगट्यो निज घर, दुर भयो अन्धकार ॥२८॥

अर्थ—हे चैतन्य ! अनन्तकाल हो गया है कि आप मिथ्यात्वरूपी अन्धकारमें इधर के उधर गोता खा रहे हो, नरकसे तीर्यच, तीर्यचसे मनुष्य, मनुष्यसे देव, देवसे तीर्यच, तीर्यचसे निगोद इत्यादि अमावास्याकी रात्रीमें आप रमते रमते अनन्त दुःख सहन किया है। हे नाथ ! कुमतिने कुच्छ भी कमर नही रखी है। एसा कोइ भी लोकाकाश प्रदेश नहीं छोडा है कि आपने उन्ही आकाशप्रदेश पर जन्ममरण नहीं किया हो। परन्तु अब आप इन्हीं सदागमके उपासक बने हो और मैं भी आपके लिये पुण्य कोशीष करती हूँ कि अमावास्याकी रात्री पूर्ण हो गइ है और सम्यक्तरूपी सूर्य उदय हो गया है। अब आप अपने अन्तरआत्माका पडलको दूर करो कि आपके निज घरमें इन्ही सूर्यका प्रकाश पडे और सूर्यके प्रकाश पडनेसे आपके निज घरमें जो अनन्त खजाना

भरा हुवा है वह आपको दिखाई पडे। तांके फीर आपको इस अन्धकारमें फीरनेकी जरूरत ही न पडे। परन्तु यह खजाना कब मीलेंगे कि आप जब दृढ निश्चय करले कि मुझे तो मेरा घर ही को देखना है। परन्तु मैं जानती हूं कि आप मेरी इतनी शिक्षा सुननेपर भी कभी कभी कुमतिके साथ भी बोलते है। परन्तु सुनिये—

लला–लटपट छोड दो, राखो एकही वात।
वेश्या सम कुमति गीनो, पकडो शिववहू हाथ ॥२६॥

अर्थ—हे स्वामिन्! अनादिकालसे आप चपलता करते हुए पूर्ण दुःखका अनुभव किया हे तथापि आप अपना स्वभावको क्यों नही छोडते हो। और भी लटपटकी दुकानदारी जमा रखी है। कारण कभी आप मुझे आदर करते है, कभी कुमतिका आदर करते है तो क्या आप भुल गये है जेसे वेश्या होती है वह पैसा लूंटती है, शरीरको चीण बनाती है, इन्सानोंमें इज्जत गमाती है, परभवमें नरक दीखाती है और भी उन्होंका स्वार्थ नहीं होनेपर अपना मजुर बनाती है। इत्यादि विटम्बना जैसे वेश्या करती है उन्होंसे भी अनन्तगुणी विटम्बना करनेवाली कुमतिसे अभीतक आपको राग नही गया है यह कितना विचारकी बात है। आज मै आपको सच सच कह देती हूं कि आपकी यह पोलीसी अब चलनेकी नही है। अब तो आपको एक तर्फ निश्चय करना ही होगा। अबी भी मेरी तो

सलाह है कि आप कुमतिका मुंह कालाकर इसतिफ़ा दे दीजीये और आत्मारामकी साचीमे आप दृढ विश्वास करके जो अनन्तकाल तक अव्याबाध आनन्द–सुख देनेवाली "शिव-सुन्दरी" के हाथमें हाथ मीलाके उन्हीके शिवमन्दिर पर पधारीये। फीर आपको इन्ही कुटीलाकुमति जो अनन्ते जीवोंको दासकी माफीक नाटक कराती है उन्होंकी मालुम पड जायगी.

गाथा–शक्ति सिंहतणी, पिंजर दीधि रोक।
हालत पटकी नादकर, करे न कोइ टोक॥ ३०॥

अर्थ—हे मुग्ध! तुझे कर्मोरूपी पिंजरमें रोक देनेसे क्या मेरे अन्दर अनन्त ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य रूप जो सिंह शक्तिथी उन्होंका कीसीने हरन कर लिया होगा। क्या एसा तुझे भर्म है या तेरे अन्दर शक्ति है उन्होंसे कर्मरूपी पंजरमें अधिक शक्ति है। एसे तुमको भर्म हुवा है या मेरा बल चीण हो गया है एसा तुमको भर्म है। इन्हीके सिवाय भी कीसी कीस्मका अगर तुमको भर्म हुवा भी हो तो मैं आपको निःशंक दावाके साथ कहती हूं कि बिचारे कर्मोकी क्या ताकत है कि तेरी शक्तिके सामने भी दृष्टी कर सके। हा, कर्मोने तुझको पींजरामें रोका है परन्तु हाथल पटकके सिंह-नाद करना तो मना नहीं कीया है तो अब आप अपने असली स्वरूपको स्मरण करो कि मैं एक सिंहोकी गीनतीका सिंह हूं।

चैतन्य अनन्तशक्तिवाला होने पर क्या कीसीकी ताकत है कि मुझे कोइ रोक सके। नहीं नहीं नहीं, कभी नहीं रोक सक्ता है। मैं खुद ही भर्ममें आके रूका हुवा पडा हूं। वास्ते अब सिंहशक्ति देखाते हुवे हाथल पटक सिंहनाद करनेपर आपको कोइभी टोक नहीं सकेगा। सुमतिका यह वचन सुनके चैतन्य विचार करने लगा। इतनेमें सुमति बोली—

षषा–षटद्रव्य अरू. नय निक्षेप प्रमाण।
तोडो पिंजर कर्मका, तब पहूंचो निर्वाण ॥ ३१ ॥

अर्थ—हे चैतन्यजी! आप इतना क्या विचार करते हो। लो मैं आपको सीधा ही उपाय बतला देती हूं। जो आपके निज घरमें शक्ति भरी हुइ है उन्हींको विचारो। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल यह षट् द्रव्य है। जिस्में पाच द्रव्य तो जड -अचैतन्य है और जीव है सो चैतन्य है. तो क्या आप जड पदार्थसे भी इतना गभराते हो। यह आपकी बहादुरी? देखीये चैतन्यजी यह पांचों द्रव्य आपके सन्मुख दास बनके रहते है क्योंकि आप चलते हो तब धर्मास्तिकाय आपको चलनेमें दास बनके सहायता देता है, अधर्मास्तिकाय आप जब स्थिर रहते हो तब सहायता देता है और आकाशास्तिकाय आपके अवगाहन सहायतामें हाजर रहता है तथा पुद्गलद्रव्यतो आपके तांड दास हुवे रहते है और कालद्रव्यतो आपकी सेवासे क्षणमात्रभी

दुर नही रहता है अर्थात् पाचोंद्रव्य आपकी हाजरी भरते है। परन्तु आपतो इन्ही पांचो द्रव्यके ठाकुर हो वास्ते किसीभी द्रव्यकी नोकरी नही करते हो। तो क्या आप अपने नोकरोंके रोकनेपर कभी रूक सक्ते हो। हे निजानन्द! कभी आपको यह भर्म होता हो कि नोकर असंख्य है और मै अकेला हु तो इन्होंके लिये मैं आपको एक एसा यत्र देती हूं कि आप अपनी या शेष पचद्रव्योंकी शक्तिरूपी तत्त्वका विचार कर सक्ते हो। उन्ही यंत्रका नाम शास्त्रकारोंने 'नय' रखा है। वह नय मुख्य-दो प्रकारका है (१) द्रव्यास्तिकनय (२) पर्यायास्तिकनय जिस्मैं जो द्रव्यको ग्रहन करते है उन्होंको द्रव्यास्तिकनय कहते है जिन्होंका चार भेद है यथा-नैगमनय, संग्रहनय, व्यवहार-नय, ऋजोसूत्रनय, और द्रव्यके पर्यायको ग्रहन करे उन्होंको पर्यायास्तिकनय कहते है जिन्होंका तीन भेद है, शद्धनय सभी-रूढनय और एवंभूतनय एवं कुल मीलके ७ नय है इन्होका स्वभाव भिन्न भिन्न है।

(१) नैगमनय-सामान्यार्थको ग्रहण करते हूवे एका शको वस्तु माने।

(२) सग्रहनय-सत्ताको ग्रहणकर सामान्य वस्तुकोभी वस्तु माने।

(३) व्यवहारनय-दीसती वस्तुकी प्रवृत्तिको वस्तु माने।

(४) ऋजोसूत्रनय-वर्तमान वरतति वस्तुको वस्तु माने।

(५) शब्दनय–निजवस्तुका मुख्यगुणोंको वस्तु माने ।

(६) संभिरूढनय–वस्तुके गुण प्रगट होगये परन्तु अंश कम होने परभी वस्तु माने ।

(७) एवंभूतनय–संपूर्ण वस्तुके गुण प्रगट होनेमे वस्तु माने ।

इन्ही नयद्वारा आपको अनन्त द्रव्योंकी शक्ति मालम हो जायगी और शीघ्रता पूर्वक देखना हो तो निक्षेपद्वारा देख लिजिये यथा–(१) नाम निक्षेप (२) स्थापना निक्षेप (३) द्रव्य निक्षेप (४) भाव निक्षेप । जैसे कि–किसी जीवाजीव वस्तुका नाम दे दीया उन्ही वस्तुमें वह गुण हो या न हो परन्तु उन्ही नामसे बोलाना वह नाम निक्षेपा है और उन्ही नामसे किसी पदार्थकी स्थापना करना और उन्ही नामसे स्थापनाको उ-देश करना यह स्थापना निक्षेप है और भूतकालमें पदार्थ था तथा भविष्यकालमें होनेवाला है वर्तमान भाववस्तु शुन्य है उन्हीं को द्रव्य निक्षेप कहते है, तथा नाम स्थापना द्रव्य सं-युक्त भाववस्तुके गुण संयुक्त है उन्हीं को भाव निक्षेपा कहते है जैसे कि—

(१) नाम महावीर–वह नाम निक्षेपा है.

(२) स्थापना महावीर–शान्त मुद्रा मूर्त्ति स्थापन करना.

(३) द्रव्य महावीर–महावीर होनेका निश्चय हो गया था मरीचीके भवमें, वहांसे महावीरका द्रव्य निक्षेपा है.

(४) भाव महावीर-सिद्धार्थ राजा और त्रीसलाराणी के पुत्र तीर्थ रुप होनेसें।

इसी माफीक धर्मास्ति आदि पट् द्रव्यपर भी निक्षेपा लगा लेना चाहिये। अब विशेष ज्ञान होनेके लिये प्रमाण बतलाते है। वह प्रमाण च्यार प्रकारके हैं। प्रत्यक्ष प्रमाण, आगम प्रमाण, अनुमान प्रमाण, उपमा प्रमाण, जिस्में प्रत्यक्ष प्रमाणका दोय भेद हैं (१) इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण, (२) नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण। जिस्में इन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण जो कि इन्द्रियद्वारा प्रत्यक्ष ज्ञान होना कि यह वस्तु एसी हैं जिन्होंका पांच भेद है यथा-श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय। और नोइन्द्रिय प्रत्यक्षज्ञान जो कि इन्द्रियकी अपेक्षा बिगर ज्ञान होना उन्होंका दोय भेद है। (१) सर्वसे (केवलज्ञान) (२) देशसे मनःपर्यवज्ञान, अवधिज्ञान और आगम प्रमाणके १२ भेद है। आचारांगसूत्र, सूयगडायांगसूत्र, स्थानायांग, समवायांग, भगवती, ज्ञाताधर्मकथा, उपासकदशांग, अन्तगडदशांग, अनुत्तरोववाइ, प्रश्न व्याकरण, विपाकसूत्र और दृष्टीवाद तथा दृष्टीवादके विभागरूप उपांगादि आगम है वह सब आगम प्रमाण हैं तथा अनुमान प्रमाणके तीन भेद है। पुव्वं, सासवं, दिठ्ठिसामन्नं, जिस्में अपना सजन दीर्घकालमे मीलने पर तीलमसादि के अनुमानसे पहेचाने उसे 'पुव्व' कहते है तथा सासवके पांच भेद है।

(१) कज्जेण-हस्ती अश्वादिको शब्दसे पहेचाने।

(२) कारणेणं, जैसे घटका कारण मटी, पटका कारण तंतु।

(३) गुणेण, जैसे पुष्पोंमे सुगन्धीका गुण, वस्त्रमे स्पर्शका।

(४) आसरेणं, बुकके इसारासे सरदार जाणे धुमसे अग्नि जाणे।

(५) आवयवेण, जैसे दंताशुलसे हस्ती, काव्य रचनासे पंडित चित्रपाखोंसे मयूर इत्यादि एक अंगसे वस्तुका ज्ञान होना।

और द्रीष्टी सामन्नं जैसे सामान्यसे विशेष जाने और विशेषसे सामान्य जाणे और उपमा प्रमाण-जैसे ज्वार मोतीके माफीक, सरोवर कोटरके माफीक, द्वार देवलोक माफीक इत्यादि प्रमाणसे भी जड और चैतन्य इन्ही दोनोंकी शक्तीको पहेचान सक्ते हो.। हे आत्मवीर! इन्ही तीनन शस्त्रद्वारा कर्मोका पिंजरको तोडफोड नष्ट बना दोगे, तब ही आपका निर्णय होगा। अगर इतनेपर भी आपकी चैतन्यता प्रगट न हो तो आप आगे चलीये। आपके लिये मैंने वडी भारी तजवीज कर रखी है।

ससा-स्याद्वाद धोरी भला, शासन रथको जोड।
चाहे दुश्मन एक हो, चाहे लाख हो कोड ॥३२॥

अर्थ—हे सदानन्द प्रीतमजी ! जीस रथपर बैठके अनन्ते जीव निजावासमें पहुंच गये है वह ही रथ आज आपके लिये तैयार किया है। इन्हीका परिचय स्थुलदृष्टिमे आप कर लिजिये। जैसे जैनशासनरूपी रथ बडा ही मजबुत है कि जिन्होंकी तुलना कोइ भी मतवादी कर नहीं सक्ता है और दोनों धोरी अर्थात् दोनों बलद इतनी शीघ्र गतिवाला हैं कि जिन्होंके सामने कीसी प्रकारके सवारोंका वेग काममें नहीं आता है। आपके सुसराजी (मोह) के लश्करमें अनन्ते सुभट (कर्मवर्गणायें) है परन्तु आप जो उक्त रथ द्वारा एकेक सुभटको अलग अलग पकडना चाहते हो तो उन्हींको पकड सक्ते हो। क्यों कि इन्ही धर्मराजाके धोरी सिवाय इस दुनियामें इन्ही अनन्ते सुभटोंको अलग अलग पकडनेवाला कोइ भी नहीं है। हे स्वामिन् ! एक पदार्थमें अनन्त धर्म है उन्होंको सापेक्ष स्याद्वादसे ही जान सक्ते है न की एकान्त पक्षी। जैनशासनकी गंभीरता और वस्तु धर्म प्रतिपादन शैली है तो एक स्याद्वादमें ही है। जैसे एक वस्तुमें एक ही समय स्वगुणकी अस्ति है उसी समय परगुणकी नास्ति है शास्त्र-कारोंने इन्होंके ७ भांगे किये है।

(१) स्यात् अस्ति—स्वगुणापेक्षा अस्ति है।

(२) स्यात् नास्ति—उन्ही समय परगुणापेक्षा नास्ति है।

(३) स्यात् अस्ति नास्ति—दोनों गुण एक समयमें है।

(४) स्यात् अवक्तव्यं-एक समयमें वक्तव्यता करना असंभव है।

(५) स्यात् अस्ति अवक्तव्य-अस्ति होनेपर भी एक समयमें कह नही सक्ते वास्ते अवक्तव्य है।

(६) स्यात् नास्ति अवक्तव्यं-नास्ति होनेपर भी एक समयमें कह नहीं सक्ते।

(७) स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्यं, जिस समय अस्ति है उन्ही समय नास्ति है अर्थात् जीस समय स्वगुणकी अस्ति है उन्ही समय परगुणकी नास्ति है यह युगपत् समय दोनों गुण एक द्रव्यमें है परन्तु वचनोच्चारणमें असंख्यात समय लगजाता है वास्ते एक समयमें दोनों गुण वक्तव्यताके अयोग्य है।

हे नाथ! इसी शासनरूपी रथके स्याद्वादरूपी बलदोंको जोडके आप अपने शुद्ध अन्तःकरणके असख्य अध्यवसायरूपी बाण और पुरुषार्थकी धनुष्य हाथमें लेके तैयार हो जाइये, फीर चाहे एक दुश्मन हो चाहे लत्त, क्रोड, संख्य, असंख्य और अनन्त हो आपके सन्मुख कौन आ सक्ता है। हे नाथ! एक बात औरभी आप लक्षमें रखिये, इन्ही सुभटोंने धूर्तविद्याभी बहुत सीख रखी है। जब चैतन्यका जौर शौर होता है तब मोहके सुभट अचेत-चेष्टा रहित होके गुपचुप मृत्युके माफीक पड जाते है अर्थात् प्रकृति

योंका उपशम होता है-इतनेपर दयानन्त, कोमल हृदयवाला चैतन्य इन्ही दुष्टोंपर रहीमतालाको छोड देते हैं और आप इग्यारवे गुणस्थानवाले उपशान्त वीतरागी हो जाते हैं। फीर वह धूर्त मोहके सर्व दूत एकत्र होके चैतन्यको प्रथम गुणस्थानके कारागृहरूपी निगोद तक पहुचा देते है, वास्ते आप इन्ही धूर्तबाजीसे बचके सब शत्रुओं (कर्मों) का शिर छेदते हुवे आठवां गुणस्थानसे जो आपके निजावास पहूचनेकी क्षपकश्रेणीसे आरूढ होके शत्रुवोंका शिरछेदन करते हुवे सिधे ही बारहवा गुणस्थानपर चले जाना। वहापर तुटे लंगडे बिलकुल कमजोर तीन उपराजा बैठे हुवेको एक हुंकार शब्दसे गीराके आप अपने निजसत्ता (केवलज्ञान) को प्राप्त कर लेना यह मेरी आन्तिम अर्ज है वास्ते आप कृपा कर स्वीकार कीजिये।

दुहा—हाः इति खेद है, हार्यो रत्न अमूल्य।
सुमति तु प्रसंगसे, चैतन्य भयो अतूल्य ॥ २२ ॥

अर्थ—सुमति सखीके हृदयकी हिताशिक्षा द्वारा चैतन्य अपनी शुद्ध दशाका भान करता हुवा जेसे कोइ मनुष्य नसाके अन्दर क्रोडो द्रव्य खो देनेके बादमें शुद्ध दशा आनेसे निःश्वासके साथ खेद करता है इसी माफीक चैतन्यने भी अपने अनन्त भवोंमें आत्मशक्तिको मोह नमामें खो दीथी परन्तु सुमतिसखी द्वारा अपना हाल सुनते ही बडा भारी निःश्वास लेते हूवे मुर्च्छित हुवा तब सुमतिने अश्वासना देके सावचेत किया। तब

चैतन्य बोला कि—हा· इति खेद है। अहो, अहो मैं दुर्भागी एसी हितकारिणी सुमति सखीकी शय्यामें मैंने प्रेम सहित कभी अनुभव नही कीयाथा और कुमतिकी शय्यामें मुग्ध बनके मैं मेरा अमूल्य नररत्न तथा ज्ञानादि रत्नको खो बैठा था इन्हीका ही मुझे बडा दुःख है। साथहीमें महान् हर्ष इस बातका है कि मेरे सुभाग्योदयसे आज इतना टाइम तक सुमतिके साथ वार्तालाप करनेका प्रसंग मीला है। इतने दीन हुए सुमतिके गुणोंको मैंने आजही पेहचाना है और इन्ही हितवादिनी द्वारा मेरा चैतन्यका अतूल्य गुणोंसे आज ही परिचय कीया है। अहो अहो! कुमतिका क्या भर्म है कि हरवखत मुझे दुसरोंकी सेवामें और तावेदारीमें जोड देतीथी परन्तु आज साफ साफ मालुम हो गया है कि मेरे चैतन्यका वल अतूल्य है एसा कोइभी पदार्थ नही है कि मैं कीसी दुसरोंसे याचना करुं अर्थात् सब मेरा घरमें ही मोजुद है। एसा अनुभव-विचार करता हुवा चैतन्य सबसे पहला सुमतिका ही उपकार मानता हुवा बोला कि हे सुमति! मै आज आपके सद्गुणोंसे ठीक ठीक ज्ञात हुवा हूं। अब मेरा इरादा है कि आप क्षण मात्रभी मेरेसे दूर न रहें। कारण कि हमारे कायदे माफिक जहां तक आप मेरे पासमें निवास करोगी वहांतक कुमतिका मुंहभी देखना नही चाहता हूं वास्ते यह मेरा कहना स्वीकार करो—

दुहा—छीन छीण जात है, आयुष्य रंग पत्तंग।
देर करो मति वालहा, चालो शिवमन्दिरमें संग ॥ ३४ ॥

अर्थ—चैतन्यके एसे सुवाक्य श्रवणकर सुमतिसखी आनन्दकी अवाज करती हुइ बोली कि हे प्राणेश्वर ! आज मैं अपना टाइमको सफल मानती हू कारण कि मैं एक आपकी दासी तूल्य हू परन्तु आपने मेरे वचनोंपर आरूढ होके अपनी स्वसत्ताको प्रगट करदी हैं बस यह ही मेरा मुख्य उदेश था। परन्तु हे स्वामिन् अब मेरेको निःशंक होके कह देना उचित है कि आप मनोर्थसेहि कार्यको सिद्ध करना चाहते हो तो एसा मैने हजारो नही बलके असंख्य चैतन्योंकों देखा है कि कीसी हितकारी शिक्षाको श्रवणकर मनोर्थ कर लेते है परन्तु पुरुपार्थकी वखत पीछे हट जाते हुवे फीर भी कुमतिकी शय्याका सेवन कर लेते है वास्ते आपको अगर सच्चा रंग लगा हो तो मेरी अर्ज सुनों। यह नर देह बडा ही नाजुक है और क्षीण क्षीणमें आयुष्य जैसे पतंगका रंग तथा पाणीका वेगकी माफीक क्षय हो रहा है। इसीमें न जाने मोहका दूत 'काल' कीस समय धाड पाडेगा। वास्ते लो मैं भी आपके पुरुपार्थ करनेमें अच्छी अच्छी सलाहोकी मदद देनेको तैयार हूं आप पुरुपार्थ रूपी गजपे आरूढ हो जाइये. हे स्वामिन् ! मेरा भी दील हो रहा है कि एसे पवित्र पुरुषोंके साथ ही शिवमन्दिर (मोक्ष)की सुख शय्यामें आनन्दका अनुभव करु इसलिये हे वालमजी ! आप देर न करे अर्थात् पुरुषार्थ कर कर्म-शत्रुवोंका पराजय जल्दी ही कर मोक्षमे चलें मै भी

आपके संग चलूगी परन्तु अपने दोनोको रास्ता बतलानेवाला एक तीसरा भी होना चाहिये ।

ज्ञ्ञा-ज्ञानसुन्दर करो, निज आत्माका काम ।
चैतन्य सुमति संगमे, ज्ञान पाम निज धाम ॥ ३५ ॥

अर्थ-इस अपार संसारके अन्दर मोहराजाको मदद करनेवाली ओर अज्ञानको सहायता करनेवाली कुमतिने सर्व लोकमें अज्ञानका साम्राज्य फेला दीया था और धर्मचारित्र राजाके मददगार ज्ञानको सहायता करनेवाली सुमतिने कुमति के फन्दसे अनन्तमा भाग जीवोपर ज्ञानका साम्राज्यका झुंडा फरका रही थी । अपने अपने पक्षको पुष्ट बनानेमे दोनों कटिबद्ध हो प्रयत्न कर रही थी । उन्ही समय सुमति चैतन्य के साथ वार्तालाप कर रही थी, इतनेमें ज्ञान इदर उदर फीर रहा था परन्तु कुमति की सहायतासे अज्ञानका साम्राज्यमें ज्ञानका आदर करे कौन ! उलटा तीरस्कारसे त्रास पाता हुवा ज्ञान सुमतिके पासमें जा रहा था इतनेमे तो रास्तेमे सुमतिका मीलाप हो गया । ज्ञानकी दशाको देखके सुमतिने कहा कि हे भ्रात ! आप इदर उदर फीरते हुवे अपनी कमजोरी क्यों बतलाते हो । आप अपना स्वरूपको सुन्दर बना लों क्योकि आप कोइ सामान्य व्यक्ति नहीं है आपके जरिये अनन्ते जीव निवृत्तिपुरीमें आनन्द कर रहे है और भी बडे बडे ऋषि मुनि और विद्वान् लोक आपके लिये तन तोड अभ्यास कर रहे है । और तीनो लोकमें आपकी यशोकीर्तिकी जयध्वनीकी

अवाजोंसे अज्ञान बिचारा भागता फीर रहा हैं। तो आप क्यों उधर उधर फीरके इन्ही कुमति द्वारा आपका अपमान कराते हैं। हे बन्धु! मेरी तो आपसे नम्रतापूर्वक अर्ज है कि आप किसीके फन्दमें न पडके आप अपना स्वकार्य ही साधन करो। मैं एसा भी सुनति हुं कि आप कभी कभी कुमतिके बच्चोंको गुप्तपणे अपने निजावासमें स्थान देते हो अर्थात् उपशमभाव जो कि निपाकों तो ज्ञान ही है किन्तु प्रदेशों अज्ञान भी रहता है उन्होंको क्षयोपशमीक ज्ञान कहते हैं तो आप जैसे निःस्पृहीयोंको यह मायावृत्ति क्यों होना चाहिये। हे वीर! आप सर्वथा प्रकारे अपना ज्ञान सुन्दर बनावों अर्थात् क्षायकभाव आठवा गुणस्थानसे क्षपकश्रेणी तक आ पहुचो और हम और हमारे प्रीतमजी निवृत्तिपुरमें जानेवाले हैं वास्ते आप भी साथमें चलीये और हमको रस्ता ठीक ठीक बतलाइये। नम! यह सुमतिका अमृतमय वचन श्रवण करते ही ज्ञानने अपने मन्दिरके अन्दर जो कुच्छ प्रदेशों अज्ञानदलके थे उन्हींको सुमतिके सपाटेमें ही बिलकुल नष्ट कर चैतन्य और सुमतिके साथ आठवें गुणस्थान क्षपकश्रेणी चढके नववे गुणस्थानसे दशवा और दशवामे सीधा ही बारहवे गुणस्थानपर चले गये। वहापर ज्ञानावर्णिय, दर्शनावर्णिय और अन्तराय इन्ही तीनों योद्धोंको एक ही चोटमें क्षय कर तेरवें गुणस्थान पहुचा दीये। वहा जा के ज्ञान

बोला कि हे सुमति! यह अपने विश्रामका स्थान है और यहां पर सब लोक निवृत्ति करके जानेवाले ही हैं। वास्ते किसी प्रकारका विघ्न नहीं है वास्ते आपको अगर ठहरना हो तो टापु की सहल करीये नहीं तो चलो अपने निजानन्द प्रासादमें पहुच जावे। सुमतिका इरादा तो हो गया परन्तु चैतन्यको निवृतिपुर देखनेकी बडी ही आतुरता थी वास्ते वहासे चउदवे गुणस्थान जाते हुये ही अयोगावस्था स्वीकार करते हीं ज्ञान सहित चैतन्यजी निज धामपर पहूंच गये और सादि अनन्त भागेमें स्थीत हो गये।

उगणीसे इठांतरे। कृष्ण तीज माघ मास ॥
नगर फलोधीमें फली। मन वंछित सब आस ॥२६॥

अर्थ—मरूस्थल नामका देश, साडा पचवीश आर्य देशोंके अन्दर एक आर्य देश है जिन्होंका गौरव-महत्व शास्त्रकारोंने बडे ही विशालतासे बतलाया है जैसे कि बडे बडे मुनि मतंगजोंको मरुस्थलके धोरी-बैलोंकी उपमा दी गइ है। ऐसे महत्ववाले देशमें फलवृद्धि (फलोधी) नामका अच्छा सुन्दर रमणीय नगर है। जीस नगरकी शोभामें वृद्धि करनेवाले अलंकार समान शीखरबन्ध पांच जिनालय बडे ही मनोहर और संसार समुद्रमें नावके माफीक शोभते है। उसी हि जिनालयोंकी सेवा भक्ति करनेवाले श्रावक गणोंकी विशाल संख्या और धनधान्यसे

परिपूर्ण है। इसी नगरमें संवत् १९७८ के माघ मासके कृष्ण-पक्षकी तीज सोमवारके रोज अपने मनोवंछित फलोंको प्राप्त किया है। अर्थात इन्ही ककावत्तीसीको निर्विघ्नपणे समाप्त करी है।

॥ कलस ॥

पार्श्वनाथ वर पाट सोहे। शुभदत्त गीरुवा गणधरो।
हरिदत्तने वली आर्य समुद्र। केशी गणधर हितकरो॥
स्वयप्रभने रत्नप्रभसूरी। उपकेशगच्छ अलंकरो।
ज्ञानसुन्दर दास जिनका। सदा शिव संपत्त वरो॥ १॥

अर्थ—श्री त्रेवीशमा तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथ प्रभुके पाटपर श्री शुभदत्त नामके गणधर च्यार ज्ञान और चौद पूर्व धारक अनेक गुण समूहसे सुशोभित हूवे थे। उन्हींके पाटपर श्री हरिदत्त नामके आचार्य आगम समुद्रके पारगामि हुवे थे। उन्हींके पाट पर श्रीआर्यसमुद्रसूरि महाराज हूवे थे। इन्होंके शासनमें बुद्धकीर्ति साधुसे बौधधर्म चलाथा। इन्होंके पाटपर श्री केशीश्रमणाचार्य हूवे थे उन्ही महान प्रभाविक आचार्य महाराजने प्रदेशी आदि १२ राजाओंको प्रतिबोध दे के जैनधर्ममें स्थापन किये थे। उन्ही के पाटपर श्री स्वयंप्रभसूरि हूवे। उन्ही महा ऋषियोंके चरण-कमलोंकी सेवा अनेक देवदेवीयां करती थी जिसमें भी चक्रेश्वरी, अम्बिका, पद्मावती और सिद्धायिका ये मुख्यथी। इन्ही आचार्यश्रीने भीनमाल नगरमें ९०००० घरोंको प्रतिबोध दे के श्री-

माली तथा पद्मावति नगरीमें ४५००० पोरवाल जैन बनाया था औरभी अनेक प्रकारसे शासनकी बडी भारी उन्नति करी थी, इन्होंके पाटपर श्री रत्नप्रभसूरि जोकि विद्याधरवंशके भूषण समान थे और अनेक विद्याओंसे भूषित थे उन्होंने उपकेशपट्टन अर्थात् हालमें ओशीयानगरीमें ३८४००० राजपुत्रोंको प्रतिबोध देके ओसवाल जैन बनाया था। जिन्होंके अठारह गोत्र स्थापन कीयेथे (विस्तार देखनेवाले आत्मबन्धुओंको पार्श्वपटावली देखनी चाहिये) और ओशीयामें श्री वीरप्रभुके बिंबकी प्रतिष्ठा स्वहस्तसे करी थी। वह मन्दिर आजभी मौजूद है। इन्ही आचार्यश्रीसे इस गच्छका नाम उपकेश गच्छ पडा है। इन्होंकी पाट परम्परामें भी बडे२ आचार्य हुवे है (वह सब विस्तार देखो उपकेश पट्टावली) इन्ही महान् पुरुषोंके चरणकमलोंका दास " ज्ञानसुन्दर " गुणी जनोंका गुण गा कर अपनी आत्माको पवित्र करी है। हे प्रभो ! मेरी मनोकामना पुरण करो अर्थात् शिवरुपी संपत्त बक्षीस करो। मै आपकी अनुग्रह-कृपासे यह " कका बत्तीसी " स्वपरात्मावोंके कल्याणार्थ बालक्रीडावत् प्रयत्न कीया है। इसमें अगर मतिदोष तथा दृष्टिदोष रहा हो तो सज्जन पुरुषोंसे क्षमा चाहता हूं। ॥ श्रीरस्तु ॥ कल्याणमस्तु ॥

॥ इति ककाबत्तीसी समाप्तम् ॥

—⁂—

अथ श्री

व्याख्याविलास ।

भाग २ जो.

संघोऽयं गुणरत्नरोहणगिरिः संघः सतां मडनं ।
संघोऽयं प्रबल प्रताप तरणिः संघो महा मंगलम् ॥
संघोऽभीप्सितदानकल्पविटपी संघो गुरुणां गुरुः ।
संघः सर्वजमाधिराजमहितः संघश्चिरं नन्दतात् ॥१॥

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्न गुप्त धन ।
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः ॥
विद्या बन्धुजनो विदेश गमने विद्या पर दैवतं ।
विद्या राजसु पूज्यते न तु धन विद्याविहिनः पशुः ॥२॥

विद्या नाम नरस्य कीर्तिरतुला भाग्यक्षये चाश्रयो ।
धेनुः कामदुघा रतिश्च विरहे नेत्रं तृतीय च सा ॥
सत्कारायतन कुलस्य महिमा रत्नैर्विना भूषण ।
तस्मादन्यमुपेक्ष्य सर्वविषयं विद्याधिकारं कुरु ॥ ३ ॥

यद्यपि भवति विरूपो, वस्त्रालंकार वेपपरिहीणः ॥
सज्जन सभां प्रविष्ट, शोभामुद्वहति सद्विद्यः ॥ ४ ॥
न चोर हार्यं न च राजहार्यं, न भ्रातृ भाज्यं न च भारकारि ।
व्यये कृते वर्द्धत एव नित्यं, विद्या धनं सर्व धनं प्रधानम् ॥५॥
बालादपि हितं ग्राह्यममेध्यादपि काञ्चनम् ॥
निचादप्युत्तमां विद्यां, स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि ॥ ६ ॥
काव्यशास्त्र विनोदेन, कालो गच्छति धीमताम् ॥
व्यसनेन हि मूर्खाणां, निद्रया कलहेन वा ॥ ७ ॥
सन्तोषस्त्रिषु कर्तव्य., स्वदारे भोजने धने ॥
त्रिषु चैव न कर्तव्यो, दाने चाध्ययने जये ॥ ८ ॥
श्लोकार्धं श्लोकपादं वा, समस्त श्लोकमेव वा ॥
अवन्ध्यं दिवस कुर्याद्, दानाध्ययनकर्मणि ॥ ९ ॥
अनभ्यासे विषं शास्त्र-मजीर्णे भोजनं विषम् ॥
विषं सभा दारिद्रस्य, वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥ १० ॥
विषं कुपठिता विद्या, विषं व्याधिरुपेक्षित ॥
विषं गोष्ठी दारिद्रस्य, वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥ ११ ॥
लक्षणेन विना विद्या, निर्मलापि न शोभते ॥
युवतीरूपसंपन्ना, दारिद्रस्येव वेश्मनि ॥ १२ ॥
सुलभानीह शास्त्राणि, गुर्वादेशस्तुदुर्लभः ॥
शिरोवहति पुष्पाणि, गन्धं जानाति नासिका ॥ १३ ॥

काकचेष्टा बकध्यानं, श्वाननिद्रा तथैव च ॥
स्वल्पाहारः स्त्रियास्त्यागी, विद्यार्थी पञ्चलक्षण ॥१४॥

पठतो नास्ति मूर्खत्वं, जपतो नास्ति पातकम् ॥
मौनिनः कलहो नास्ति, न भयं चास्ति जाग्रतः ॥१५॥

सुश्रूषा श्रवणं चैव, ग्रहण धारण तथा ॥
ऊहापोहोऽर्थविज्ञानं, तत्त्वज्ञान च धीगुणाः ॥ १६ ॥

विद्या विनयतोग्राह्या, पुष्कलेन धनेन वा ॥
अथवा विद्यया विद्या, चतुर्थी नैव विद्यते ॥ १७ ॥

सुखार्थी त्यजते विद्यां, विद्यार्थी त्यजते सुखम् ॥
सुखार्थिनः कुतोविद्या, सुखं विद्यार्थिनः कुतः ॥ १८ ॥

आलस्येन हता विद्या, आलापेन कुलस्त्रियः ॥
अल्पबीजं हतं क्षेत्र, हतं सैन्यमनायकम् ॥ १६ ॥

आरोग्यबुद्धिविनयोद्यमशास्त्ररागाः ।
पञ्चान्तराः पठनसिद्धिकरा भवन्ति ॥
आचार्यपुस्तकनिवाससुसंगभिक्षा ।
बाह्यास्तु पञ्चपठन परिवर्धयन्ति ॥ २० ॥

न च राजभय न च चौरभय, इह लोकसुखं परलोकहितम् ॥
वर कीर्तिकर नरदेवनत, श्रमणत्वमिदं रमणीयतरम् ॥ २१ ॥

येषा न विद्या न तपो न दान, न चापि शील न गुणोऽपि धर्मः॥
ते मृत्युलोके भुवि भारभूता, मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥२२॥

अक्रोधवैराग्यजितेन्द्रियत्वं, क्षमादयासर्वजनप्रियत्वं ॥
निर्लोभदाता भयशोकमुक्ता, ज्ञान प्रबोधे दशलक्षणानि ॥२३॥

एकाक्षरोऽपि दातारं, यो गुरुनैव मन्यते ॥
श्वानयोनिशतं गत्वा, चाण्डालेष्वपि जायते ॥ २४ ॥

गुरुत्यागे भवेद्दुःखी, मन्त्रत्यागे दरिद्रता ॥
गुरुमन्त्रपरित्यागे, सिद्धोऽपि नरकं व्रजेत् ॥ २५ ॥
स्वरूप पुरुषं दृष्ट्वा, भ्रातरं पितरं सुतं ॥
स्रवन्ते योनयः स्त्रीणां, मामपात्रमिवाम्भसि ॥ २६ ॥

अहिंसा सर्वजीवेषु, तत्त्वज्ञैः परिभाषितम् ॥
इदं हि मूलं धर्मस्य, शेषस्तस्यैव विस्तरम् ॥ २७ ॥
नाहं स्वर्गफलोपभोगतृषितोनाभ्यर्थितस्त्वंमया ।
सन्तुष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव ॥
स्वर्गं यान्ति यदा त्वया विनिहिता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो ।
यज्ञं किं न करोषि मातृपितृभिः पुत्रैस्तथा बान्धवैः ॥२८॥

छाया हंसविना नदी जलविना दाता विना याचका ।
भ्राता स्नेहविना कुलं सुतविना धेनुश्च दुग्धं विना ॥
दान पात्रविना निशा शशिविना पुण्यं विना मानवाः ।
एते सर्वे न शोभते इह तथा वाणी च सत्यं विना ॥२९॥

लिङ्गिनां परमाधारो, वेश्यानां परमो निधिः ॥
वणिजा परमा नीति, मृषावाद नमोस्तुते ॥ ३० ॥

यस्मिन् गृहे सदा नार्या, मूलकः पच्यते जनैः ॥
स्मशान तुल्यं तद्वेश्म, पितृभिः परिवर्जितम् ॥ ३१ ॥

विद्यावृद्धास्तपो वृद्धा, ये च वृद्धा बहुश्रुताः ॥
सर्वे ते धनवृद्धस्य, द्वारि तिष्टन्ति किङ्कराः ॥ ३२ ॥

न ज्ञानतुल्यः किल कल्पवृक्षो, न ज्ञानतुल्यः किल कामधेनुः ॥
न ज्ञानतुल्य' किल कामकुम्भो, ज्ञानेन चिंतामणिरप्यतुल्यः ॥३३॥

निद्रा मूलमनर्थानां, निद्रा श्रेयो विघातिनी ॥
निद्रा प्रमादजननी, निद्रा ससारवर्द्धिनी ॥ ३४ ॥

धनधान्यप्रयोगेषु विद्यासंग्रहणेषु च ॥
आहारे च विहारे च, त्यक्तलज्जः सुखी भवेत् ॥३५॥

यदि वहति त्रिदंण्ड नग्नमुण्डं जटां वा ।
यदि वसति गुहाया वृक्षमूले शिलाया ॥
यदि पठति पुराणं वेदसिद्धान्ततत्त्वं ।
यदि हृदयमशुद्धं सर्वमेतन्न किञ्चित् ॥ ३६ ॥

अपरीक्षितं न कर्तव्यं, कर्तव्य सुपरीक्षितम् ॥
पश्चाद्भवति सन्तापो, ब्राह्मणी नकुलं यथा ॥ ३७ ॥

हस' श्वेतो बकः श्वेतो, को भेदो बक हंसयोः ॥
नीरक्षीरविभागे तु, हंसो हंसो बको बकः ॥ ३८ ॥

नवीनोमधुमासेन, अन्तरं पिककाकयोः ॥
वसन्तश्च पुनः प्राप्ते, काकः काकः पिकः पिकः ॥३९॥

परविघ्नेन सतोषं, भजते दुर्जनो जनः ॥
लभेदग्निः परांदीप्ति, परमंदिर दाहतः ॥ ४० ॥

दुर्जनः परिहर्त्तव्यो, विद्यया भूषितोऽपिसन् ॥
मणिना भूषितः सर्पः, किमसौ न भयंकरः ॥ ४१ ॥

नाहं काको महाराज, हंसोऽहं विमले जले ॥
नीचसंगप्रसंगेन, मृत्युरेव न संशयः ॥ ४२ ॥

मित्रद्रोही कृतघ्नश्च, ये च विश्वासघातकाः ॥
ते नरा नरकं यान्ति, यावच्चन्द्र दिवाकरौ ॥ ४३ ॥

क्षमाधनुः करे यस्य, दुर्जनः किं करिष्यति ॥
अतृणे पतितोवह्निः, स्वयमेवोपशाम्यति ॥ ४४ ॥

अतिपरिचयादवज्ञा, संततगमनादनादरो भवति ॥
मलये भिल्लपुरन्ध्री, चन्दनतरुकाष्टमिन्धन कुरुते ॥४५॥

असंतुष्टा द्विजानष्टाः, संतुष्टश्च महीपतिः ।
सलज्जा गणिका नष्टाः निर्लज्जा च कुलांगना ॥ ४६ ॥

अनाभ्यासे विषं शास्त्र-मजीर्णे भोजन विषम् ॥
मूर्खस्य च विषं गोष्टी, वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥ ४७ ॥

क्षणे तुष्टाः क्षणे रुष्टास्तुष्टा रुष्टाः क्षणे क्षणे ॥
अव्यवस्थितचित्ताना, प्रसादोऽपि भयंकरः ॥ ४८ ॥

उष्ट्राणां च विवाहेषु, गीतं गायंति गर्दभाः ॥
परस्परं प्रशसन्ति, अहो रूपमहोध्वनिः ॥ ४९ ॥

अनारम्भो मनुष्याणां, प्रथमं बुद्धि लक्षणम् ॥
आरब्धस्यान्तगमनं, द्वितीय बुद्धिलक्षणम् ॥ ५० ॥
धर्मार्थकाममोक्षाणा. यस्यैकोऽपि न विद्यते ॥
अजागलस्तनस्यैव, तस्य जन्म निरर्थकम् ॥ ५१ ॥
एकं दृष्ट्वा शतं दृष्ट्वा, दृष्ट्वा पञ्चशतान्यपि ॥
अतिलोभो न कर्तव्य, अक्रं भ्रमति मस्तके ॥ ५२ ॥
असङ्गसङ्गदोषेण सत्याश्च मतिविभ्रमः ।
एकरात्रप्रसङ्गेन, काष्ठघण्टाविडम्बना ॥ ५३ ॥
सुलभाः पुरुषा राजन्सततं प्रियवादिनः ॥
अप्रियस्य च पथ्यस्य परिणामः सुखावहः ॥ ५४ ॥
अल्पतयोश्चलत्कुम्भो ह्यल्पदुग्धाश्च धेनवः ॥
अल्पविद्यो महागर्वी कुरूपो बहु चोष्टितः ॥ ५५ ॥
उद्योगः कलहः कण्डूर्द्यूतं मद्यं परस्त्रियः ॥
आहारो मैथुन निद्रा, सेवनात्तु निवर्धते ॥ ५६ ॥
आचारोभावोधर्मो नृणां श्रेयस्करो महान् ॥
इहलोके पराकीर्त्ति, परत्र परमं सुखम् ॥ ५७ ॥
मातृवत्परदारांश्च, परद्रव्याणि लोष्टवत् ॥
आत्मवत्सर्वभूतानि, यः पश्यति स पश्यति ॥ ५८ ॥
आहारनिद्राभय मैथुनानि, सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् ॥
एकोविवेकोह्यधिकोमनुष्ये, तेनैव हीनाः पशुभिः समानाः ॥५९॥

आचारः परमोधर्म आचारः परमं तपः ॥
आचारः परमं ज्ञानमाचारात्किं न साध्यते ॥ ६० ॥

आशाया ये दासा-स्ते दासाः सर्व लोकस्य ॥
आशा येषां दासी तेषां दासायते लोकः ॥ ६१ ॥

इतोभ्रष्टस्ततोभ्रष्टः परमेकान्ति वेषभाक् ॥
न संसारसुखं तस्य, नैव मुक्तिसुखं भवेत् ॥ ६२ ॥

अश्वस्य लक्षणं वेगो, मदो मातङ्ग लक्षणम् ॥
चातुर्यं लक्षणं नार्या, उद्योगः पुरुषलक्षणम् ॥ ६३ ॥

उत्तमे तु क्षणं कोपो, मध्यमे घटिकाद्वयम् ।
अधमे स्यादहोरात्रं चाण्डाले मरणान्तिकम् ॥ ६४ ॥

जटिलो मुण्डी लुञ्चितकेशः, काषायाम्बरकृतबहुवेषः ॥
पश्यन्नपि च न पश्यति मूढ, उदर निमित्तं बहुकृत वेषः ॥६५॥

अधः पश्यति किं बाले, तव किं पतित भुवि ॥
रे रे मूढ न जानासि, गतं तारुण्य मौक्तिकम् ॥६६॥

गतानुगतिको लोकः, कुट्टिनिमुपदेशिनीम् ॥
प्रमाणयति नो धर्मे, यथा गोध्नमितिद्विजम् ॥ ६७ ॥

एकस्य कर्म संवीक्ष्य, करोत्यन्योऽपि गर्हितम् ॥
गतानुगतिको लोको, न लोकः पारमार्थिकः ॥ ६८ ॥

गतानुगतिको लोको, न लोकः पारमार्थिकः ॥
वालुका लिंगमात्रेण, गत ताम्रस्य भाजनम् ॥ ६९ ॥

गत शोको न कर्तव्यो, भविष्य नैव चिन्तयेत् ॥
वर्तमानेषु कार्येषु वर्तयन्ति विचक्षणाः ॥ ७० ॥

लक्ष्मीर्लक्षणहीनेषु, कुलहीने सरस्वती ॥
कुपात्रे रमते नारी, गिरौ वर्षति माधवः ॥ ७१ ॥

मात्रा समं नास्ति शरीर पोषण ।
विद्या सम नास्ति शरीर भूषणम् ॥
भार्या समं नास्ति शरीर तोषण ।
चिन्ता समं नास्ति शरीर शोषणम् ॥ ७२ ॥

अर्थातुराणां न गुरुर्नबन्धु , कामातुराणा न भयं न लज्जा ॥
क्षुधातुराणां न रुचिर्न पक, चिन्तातुराणां न सुख न निद्रा ॥७३॥

ज्वरादौ लङ्घन प्रोक्तं, ज्वरामध्ये तु पाचनम् ॥
ज्वरान्ते भेषजंदद्यात्सर्वज्वर निनाशकम् ॥ ७४ ॥

जामाता कृष्णसर्पश्च, पावको दुर्जनस्तथा ॥
विश्वासो नैव कर्तव्यः, पञ्चमो भगिनीसुतः ॥ ७५ ॥

भारतं पञ्चमो वेदः, सुपुत्रः सप्तमो रसः ॥
दाता पञ्चदशं रत्नं, जामाता दशमो ग्रहः ॥ ७६ ॥

जीर्णमन्न प्रशंसन्ति, भार्या च गत यौवनम् ॥
शूर विजितसंग्राम, पारंगत तपस्वीनम् ॥७७॥

अमृत दुर्लभ नृणां, देवानामुदक तथा ॥
पितृणा दुर्लभः पुत्रः, तक्रं शक्रस्य दुर्लभम् ॥ ७८ ॥

घृतं न श्रुयते कर्णे, दधि स्वप्नेऽपि दुर्लभम् ॥
मुग्धे दुग्धस्य का वार्ता, तक्रं शक्रस्य दुर्लभम् ॥७६॥

मूर्खोऽपि शोभते तावत्सभायां वस्त्र वेष्टितः ॥
तावच्च शोभते मूर्खो, यावत्किञ्चिन्न भाषते ॥ ८० ॥

निर्द्रव्यं पुरुषं सदैव विकलं सर्वत्रमन्दादरं ।
तातभ्रातृसुहृज्जनादिकुपितं दृष्ट्वा न सभाषितम् ॥
भार्या रूपवती कुरङ्गनयना स्नेहेन नालिङ्गते ।
तस्माद्द्रव्यमुपार्जयाशु सुमते द्रव्येण सर्वे वशाः ॥ ८१ ॥

दूरस्थः पर्वता रम्या वेश्या च मुखमण्डने ॥
युद्धस्य वार्ता रम्या च त्रीणि रम्याणि दूरतः ॥ ८२ ॥

गजं मत्त द्विजं भ्रष्टं वृषभं काममोहितम् ॥
नृपमन्तःपुरगतं दूरतः परिवर्जयेत् ॥ ८३ ॥

खर श्वानं गजं मत्त रण्डा च बहुभाषिणीम् ॥
राजपुत्र कुमित्र च दूरतः परिवर्जयेत् ॥ ८४ ॥

देहे पित्तं गृहे वित्तमेकचित्तं कुटुम्बिनाम् ॥
जेष्टपुत्र मतिश्रेष्टं न भवन्ति गृहे गृहे ॥ ८५ ॥

शकटं पञ्चहस्तेन, दशहस्तेन वाजिनम् ॥
गजं हस्तसहस्रेण, देशत्यागेन दुर्जनम् ॥ ८६ ॥

दैवं फलति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम् ॥
समुद्रमथनाल्लेभे हरिर्लक्ष्मींहरो विषम् ॥ ८७ ॥

अश्वप्लुत माधवगर्जित च स्त्रीणां चरित्रं पुरुषस्य भाग्यम् ॥
अवर्षणं चाप्यतिवर्षणं च देवान् जानाति कुतो मनुष्यः ॥८८॥

क्षणं चित्त क्षणं वित्तं क्षणं जीवति मानवः ॥
यमस्य करुणा नास्ति धर्मस्य त्वरितागतिः ॥ ८६ ॥

क्षान्ति तुल्यं तपो नास्ति संतोषान्न सुखं परम् ॥
नास्ति तृष्णा समो व्याधि र्न च धर्मो दयापरः ॥ ६० ॥

न च विद्या समो बन्धुर्न च व्याधि समो रिपुः ॥
न चापत्य समः स्नेही न च धर्मो दयापरः ॥ ६१ ॥

पुनर्वित्तं पुनर्मित्तं पुनर्भार्या पुनर्मही ॥
एतत्सर्व पुनर्लभ्यं न शरीरं पुनः पुनः ॥ ६२ ॥

यत्र विद्यागमो नास्ति तत्र नास्ति धनागमः ॥
यत्र चात्मा सुख नास्ति न तत्र दिवसं वसेत् ॥ ६३ ॥

न देवाय न धर्माय न बन्धुभ्यो न चार्थिने ॥
दुर्जने नार्जितं द्रव्यं भुज्यते राजतस्करैः ॥ ६४ ॥

नराणा नापितो धूर्तः पक्षिणा चैव वायसः ॥
चतुष्पदा शृगालस्तु स्त्रीणा धूर्ता च मालिनी ॥ ६५ ॥

पुस्तक प्रत्ययाधीतं, नाधीत गुरु सन्निधौ ॥
न शोभते सभा मध्ये, जारगर्भा इव स्त्रियः ॥ ६६ ॥

पिण्डे पिण्डे मतिर्भिन्ना, तुण्डे तुण्डे सरस्वती ॥
देशे देशे भिभाषास्यान्नानारत्ना वसुन्धरा ॥ ६७ ॥

दर्शनाद्धरते चित्तं, स्पर्शनाद्धरते चलम् ॥
संभोगाद्धरते वीर्यं, नारी प्रत्यक्ष राक्षसी ॥ ९८ ॥

उदारस्य तृणं वित्तं, शूरस्य मरणं तृणम् ॥
विरक्तस्य तृणं भार्या, निस्पृहस्य तृणं जगत् ॥ ९९ ॥

अज्ञानात्कुरुते श्राद्धं योऽमिश्रवण वर्जितम् ॥
श्राद्धहन्तामवेल्कर्ता, निराशाः पितरोगताः ॥ १०० ॥

नीचाश्रयो न कर्तव्यः कर्तव्यो महदाश्रयः ॥
अजा सिंहप्रसादेन, आरूढा गज मस्तके ॥ १०१ ॥

विरला जानन्ति गुणान्विरला कुर्वन्ति निर्धन स्नेहम् ॥
विरला रणेषु धीराः परदुःखेनापि दुःखिता विरलाः ॥१०२॥

खलः सर्षपमात्राणि, परच्छिद्राणि पश्यति ॥
आत्मानो बिल्वमात्राणि, पश्यन्नपि न पश्यति ॥ १०३ ॥

राजपत्नी गुरोःपत्नी, मित्रपत्नी तथैव च ॥
पत्नीमाता स्वमाता च, पञ्चैता मातरः स्मृताः ॥१०४॥

प्रत्यक्षे गुरवःस्तुत्याः, परोक्षे मित्रबान्धवाः ॥
कार्यान्ते दासीभृत्याश्च, पुत्रो नैव मृताः स्त्रियाः ॥१०५॥

प्रथमेनार्जिता विद्या, द्वितीयेनार्जित धनम् ॥
तृतीये न तपस्तप्तं, चतुर्थे किं करिष्यति ॥ १०६ ॥

लालयेत्पञ्चवर्षाणि, दशवर्षाणि ताडयेत् ॥
प्राप्ते तु षोडशेवर्षे, पुत्रं मित्र वदाचरेत् ॥ १०७ ॥

पुस्तकं वनिता वित्तं, परहस्तं गतंगतम् ॥
यदि चेत्पुनरायाति, नष्टं भ्रष्टं च खण्डितम् ॥ १०९ ॥
पुस्तकेषु च या विद्या, परहस्तेषु यद्धनम् ॥
संग्रामे च गृहमन्य, त्रयं पुंसां विडम्बनम् ॥ ११० ॥
पात्रे त्यागी गुणे रागी, संविभागी च बन्धुषु ॥
शास्त्रे बोद्धा रणे योद्धा, पुरुषाः पञ्चलक्षणाः ॥१११॥
पूर्वदत्तेषु या विद्या, पूर्व दत्तेषु यद्धनम् ॥
पूर्वदत्तेषु या भार्या, अग्रे धावति धावति ॥ ११२ ॥
दाने तपसि शौर्ये वा, विज्ञाने विनये नये ॥
विस्मयो नहि कर्तव्यो, बहुरत्ना वसुन्धरा: ॥ ११३ ॥
भार्या रूपवती शत्रुः पुत्रः शत्रुरपण्डितः ॥
ऋणकर्ता पिता शत्रुर्माता च व्यभिचारिणी ॥ ११४ ॥
विपत्तौ किं विषादेन सपत्तौ हर्षणेन किम् ॥
भवितव्य भवत्येव कर्मणामीदृशीगतिः ॥ ११५ ॥
खण्डे खण्डे च पाण्डित्यं क्रयकृत च मैथुनम् ॥
भोजन च पराधीन त्रय पुसां विडम्बनम् ॥ ११६ ॥
दिनान्ते पिबेद्दुग्ध निशान्ते च पिबेत्पयः ॥
भोजनान्ते पिबेत्तक्रं किं वैद्यस्य प्रयोजनम् ॥ ११७ ॥
शैले शैले न माणिक्य मौक्तिकं न गजे गजे ॥
साधवो न हि सर्वत्र चन्दनं न वने वने ॥ ११८ ॥

यतः सत्यं ततो धर्मो यतोधर्मस्ततो धनम् ॥
यतो रूपं ततः शीलं यतो नागास्ततो जयः ॥ ११९ ॥

मंत्रे तीर्थे द्विजे दैवे दैवज्ञे भेषजे गुरौ ॥
यादर्शी भावना कुर्यात्सिद्धिर्भवति तादृशी ॥ १२० ॥

दृष्ट्वा यतिं यतिः सद्यो वैद्यो वैद्य नटं नटः ॥
याचको याचकं दृष्ट्वा श्वान वहु गुरायते ॥ १२१ ॥

काके शौचं द्यूतकारे च सत्यं क्लीबे धैर्यं मद्यपे तत्त्वचिन्ता ॥
सर्पे क्षान्तिः स्त्रीषु कामोपशान्तिः राजामित्रं केन दृष्टं श्रुतवा ॥१२२॥

अशक्तस्तु भवेत्साधुर्ब्रह्मचारी च निर्धनः ॥
व्याधितो देवभक्तश्च वृद्धा नारी प्रतिव्रता ॥ १२३ ॥

देशाटनं पण्डित मित्रता च वाराङ्गना राजसभाप्रवेशः ॥
अनेकशास्त्राणि विलोकितानि चातुर्यमूलानि भवन्ति पञ्च ॥१२४॥

शनैः पन्थाः शनैः कन्था शनैः पर्वतलङ्घनम् ॥
शनैर्विद्या शनैर्वित्तं पञ्चैतानि शनैः शनैः ॥ १२५ ॥

शठं प्रति शठ कुर्यादादरं प्रति चादरम् ॥
तत्र दोषो न भवति दुष्टे दुष्टं समाचरेत् ॥ १२६ ॥

अविद्या जीवनं शून्यं दिक्शून्याचेदवान्धवा ॥
पुत्रहीनं गृहशून्य सर्वं शून्या दरिद्रता ॥ १२७ ॥

सुखस्यानन्तरं दुःख दुःखस्यानन्तरं सुखम् ॥
न नित्य लभ्यते दुःख न नित्य लभते सुखम् ॥ १२८ ॥

उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः ॥
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः ॥१२९ ॥
दयाम्भसा कृतस्नानः सन्तोषशुभवस्त्रभृत् ।
विवेकतिलकभ्राजी भावनापावनाशयः ॥
भक्तिश्रद्धानघुसृणोमिश्रपाटीर रजद्रवैः ।
नव ब्रह्माङ्गतो देवं शुद्धमात्मानमर्चय ॥ १३० ॥
निर्ममो निरहङ्कारो निस्सङ्गो निःपरिग्रहः ॥
रागद्वेषविनिर्मुक्तस्तं देवं ब्राह्मणो विदुः ॥ १३१ ॥
पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु ॥
युक्तिमद्वचन यस्य, तस्य कार्यः परिग्रहः ॥ १३२ ॥
मनोविशुद्धपुरुषस्य तीर्थं, वाक्संयमश्चेन्द्रियनिग्रहश्च ॥
एतानि तीर्थानि शरीरजानि, मोक्षस्य मार्गं च निदर्शयन्ति—॥१३३॥
मरुस्थलीकल्पतरूपमानं, मोहान्धकारोच्चयनित्यभानुम् ॥
संसारवारांनिजयानपात्रं, तं वीक्ष्यजातः प्रमदैकपात्रम् ॥१३४॥
सत्यब्रह्म तपोब्रह्म, ब्रह्मश्चेन्द्रियनिग्रहः ॥
सर्वभूतदयाब्रह्म, एतद् ब्राह्मण लक्षणम् ॥ १३५ ॥
जितेन्द्रिय सर्वहितो, धर्मकर्म परायणः ॥
यत्र तिष्टन्ति तत्रैव, सर्व तीर्थानि देवताः ॥ १३६ ॥
गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते, पितृवंशो निरर्थकः ॥
वासुदेवं नमस्यन्ति, वसुदेवं न ते जनाः —॥ १३७ ॥

किं भावी नारकोऽहं किमुत बहुभवी दूरभव्यो न भव्यः ।
किं वाऽहं कृष्णपक्षी किमचरमगुणस्थानकं कर्मदोषात् ॥
वह्निज्वालेव शिक्षाव्रतमपि विषवत्खड्गधारा तपस्या ।
स्वाध्यायः कर्णसूची यम इव विषमः संयमो यद्विभाति ॥१३८॥

सर्पदुर्जनयोर्मध्ये, वरं सर्पो न दुर्जनः ॥
सर्पो दशति कालेन, दुर्जनस्तु पदे पदे ॥ १३९ ॥

दुर्जनं प्रथमं वन्दे, सज्जनं तदनन्तरम् ॥
मुखप्रक्षालनात्पूर्वं, गुदप्रक्षालनं यथा ॥ १४० ॥

लोभः पितातिवृद्धो, जननी माया सहोदरः कूटः ॥
कुटिला कृतिश्च गृहिणी, पुत्रो दम्भस्य हुंकारः ॥१४१॥

अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलोभता ॥
अशौचं निर्दयत्वं च स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः ॥ १४२ ॥

यस्यभार्या शुचिर्दक्षा भर्तारमनुगामिनी ।
नित्यं मधुरवक्त्र च सारंभा न रमा रमा ॥ १४३ ॥

सार सार गृहीत्वैव, निःसार परिवर्जयेत् ॥
इक्षुयन्त्रोऽपि गृह्णाति, रसमेव न चापरम् ॥ १४४ ॥

गुणारविन्दमाला ये, धारयन्ति नरोत्तमाः ॥
वन्दनीया नरेशानां, भवन्ति गुण धारिणाम् ॥ १४५ ॥

कृपणाधनासाद्य, कृतकष्ट परंपराः ॥
परार्थद्रोपिण' खिन्ना, स्वयं नैवोपभुञ्जते ॥ १४६ ॥

भक्तो मातापितृणा स्वजनपरजनानन्ददायी प्रशान्तः ।
श्रद्धालुः शुद्धबुद्धिर्गतमदकलहः शीलवान् दानवर्षी ॥
अक्षोभ्यः सिद्धगामी परगुणविभवोत्कर्षे हृष्टः कृपालुः ॥
सचेश्वर्याधिकारी भवति किलनरो दैवत मूर्तमेव ॥ १४७ ॥

पाषाणेषु यथा हेमं, दुग्धमध्ये यथाघृतम् ॥
तिलमध्ये यथा तैलं, देहमध्ये तथा शिव ॥ १४८ ॥

न देवपूजा नच पात्रपूजा, नश्राद्ध धर्मश्च न साधु धर्मः ॥
लब्धापि मानुष्यमिदं समस्तं, कृत मयारण्य विलापतुल्यम् ॥१४९॥

सर्व मगल मांगल्य सर्व कल्याण कारणम् ॥
प्रधान सर्व धर्माणा जैनोधर्मोऽस्तु मंगलम् ॥ १५० ॥

॥ इति शम् ॥



अथश्री

व्याख्याविलास.

भाग ३ जो.

अप्पा चेव दम्मेयाव्वो, अप्पाहु खलुदुदम्मो ॥
अप्पादंतो सुहीहोइ, अस्सिंलोए परत्थय ॥ १ ॥
एगया खत्तिश्रो होइ, तश्रो चंडाल बुकसो ॥
तश्रो कीड पयंगोय, तश्रो कुंथु पिप्पीलिया ॥ २ ॥
कम्मसंगेहि संमूढा, दुक्खिया बहु वेयणा ॥
श्रमणुस्सासु जोणिसु, विणिहम्मंत्ति पाणिणो ॥ ३ ॥
तेणे जहा संधिमुहेगहिए, सकम्मुणा किचेइ पापकारी ॥
एव पयापेच्च इहं च लोए, कडाणकम्माण न मोक्ख अत्थि ॥४॥
जहा कांगणीए हेऊ, सह संहारेए नरो ॥
अपत्थ अवंगंभुचा, राया रज्जं च हारए ॥ ५ ॥
जे लक्खणं सुविणं च, अंगविज्जं च जे पऊजंति ॥
नऊते समणावुचन्ति, एवं आयरिय मक्खायं ॥ ६ ॥
जहालाभो तहालोभो, लोभा लोभं पवड्ढइ ॥
दोमासा कणीयं कज्ज, कोडिए वि न निट्ठिए ॥ ७ ॥
जो सहस सहसाण, संगामे दुजए जणे ॥
एगो जिणिज्जा अप्पाणं, एमस्स परमो जश्रो ॥ ८ ॥

सुव्वन्न रूप्पस्स उ पव्वया भवे ।
मियाहु केलास समा असंख्खाय ॥
नरस्स लुद्धस्स न तेहिं किंचि ।
इच्छाओ आगास समा अणन्तिया ॥ ९ ॥
सल्लंकामा विसंकामा, कामा आसी विसोवमा ॥
कामेय पत्थेमाणा, अकामा जन्ति दोग्गइं ॥ १० ॥
अहो ते अजवंसाहु, अहो ते साहु मद्दवं ॥
अहो ते उत्तमा खन्ति, अहो ते मुत्ति उत्तमा ॥ ११ ॥
दुमपत्तए पंडुरे जहा, निवडइ रायगणाण अच्चाए ॥
एव मणुयाण जीविय, समय गोयम म पमायए ॥१२॥
कुसग्गे जह ओसबिन्दुए, थोवं चिठइ लनमाणए ॥
एव मणुयाण जीवियं, समय गोयम म पमायए ॥१३॥
एव भवसंसारे संसरइ, सुहासुहेहिं कम्मेहि ॥
जीवो पमाय बहुलो, समयं गोयम म पमायए ॥ १४ ॥
नहु जिणे जिणे अज्ज दिस्सइ, नहुमए दिस्सइ मग्गदेसिए ॥
सपइ नेयाउए पहे, समयं गोयम म पमायए ॥ १५ ॥
सव्व विलंनियं गीयं, सव्वनटं विडवणा ॥
सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा ॥ १६ ॥
अह पचहिं ठाणेहिं, जेहिं सिख्खा न लब्भई ॥
थभामोहा पमाएण, रोगेणा आलसेण य ॥ १७ ॥
चेचा दुपयच चउप्पय च, खेत्तं गिहं धण धन्न च सर्व्वं ॥
सकम्म बीओ अवसो पयाइ, पर भवं सुंदर पावग वा ॥१८॥

खण मेत सुक्खा बहुकाल दुःक्खा, पगाम दुक्खा अनिगाम सुक्ख
संसार मोक्खस्स विपक्खभूया, खाणी अणत्थाणउ कामभोगा॥१६
इम च मे अत्थि इमं च नत्थि, इम च मे किच्चा इम अकिच्चं ॥
तं एवमेवं ललप्प माणं, हरा हरंति त्ति कह पमाए ॥ २० ॥
धम्मारामे चरे भिक्खू, धिइमं धम्मसारही ॥
धम्मारामे रते दन्ते, बंभचेर समाहिए ॥ २१ ॥
देव दाणव गन्धव्वा, जक्ख रक्खस किन्नरा ॥
बभयारिं नमसन्ति, दुकरं जे करान्ति ते ॥ २२ ॥
बहुमाई य मुहरी, थद्धे लुद्धे अणिग्गहे ॥
असंविभागी अवयत्ते, पावसमणे त्ति वुच्चई ॥ २३ ॥
जे केइ पव्वइए निदासीले पगामसो ॥
भोचा पिचा सुहं सुवइ, पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥ २४ ॥
दुद्ध दहि विग्गइओ, आहारइ अभिक्खणं ॥
अरइ तवो कम्मेणं पावसमणे त्ति वुच्चइ ॥ २५ ॥
अभयं पत्थिवा तुब्भं, अभयदाया भवाहि य ॥
आणिच्चे जीवलोगम्मि, किं हिंसाए पसज्जमि ॥ २६ ॥
चइत्ता भारहं वासं, चक्कवट्टी महड्डिओ ॥
सन्ति सन्तिकरे लोए, पत्तो गइ मणुत्तरं ॥ २७ ॥
करकण्डू कलिंगेसु, पचालेसुय दुम्मुहो ॥
नमीराये विदेहेसु, गन्धारेसु य नग्गई ॥ २८ ॥
साहुस्स दरिसणे तस्स, अज्झवसाणंमि सोहणे ॥

मोहगयस्स मन्तस्स, जाइसरणं समुपन्न ॥ २६ ॥
जम्मं दुक्खं जरा दुक्ख, रोगाणि मरणाणि य ॥
अहो दुक्खो हु संसारो, जस्थ कीसन्ति जतवो ॥ ३० ॥
खेतं वत्थु हिरणणं च, पुत्तं दार च बन्धवा ॥
चइत्ताण इमं देहं, गन्तव्वमवसस्स मे ॥ ३१ ॥
जहा किंपाक फलाण, परिणामो न सुंदरो ॥
एवं भुत्ताणभोगाणं, परिणामो न सुंदरो ॥ ३२ ॥
जहा गेहे पलित्तम्मि, तस्स गेहस्स जो पहु ॥
सारभंडाणि नीहणेइ, असारं अवउज्झइ ॥ ३३ ॥
वालुयाकवलो चेव, निरस्साए ओ संजमो ॥
असीधारागमण चेव, दुक्करं चरउ तवो ॥ ३४ ॥
सरीर माणसा चेव, वेयणाओ अणन्तसो ॥
मए सोढाओ भीमाओ, असइ दुक्खभयाणि य ॥३५॥
तत्ताहिं तंव लोहाइं, तउयाइं सीसपाणिय ॥
पाइओ कलकलन्ताइं, आरसन्तो सुभरं ॥ ३६ ॥
जारिसा माणुसे लोए, ताता दीसन्ति वेयणा ॥
एत्तो अणन्तगुणिया, नरएसु दुक्ख वेयणा ॥ ३७ ॥
जहा मियस्स आतंके, महारणंमि जयइ ॥
अच्चन्तं रुक्खमूलंमि, को ण ताहे तिगिच्छई ॥ ३८ ॥
लाभालामे सुहे दुहे, जीविए मरणे तहा ॥
समो निंदा पसंसेसु, तहा माणावमाणओ ॥ ३९ ॥

सिद्धाणं नमो किच्चा, संजयाण च भावओ ॥
अत्थ धम्म गइ तच्चं, अणुसुठिं सुणेह मे ॥ ४० ॥
अप्पणा वि अणाहोसि, सेणिया मगहाहिवा ॥
अप्पणा अणाहो सन्तो, कस्स नाहो भविस्ससि ॥ ४१ ॥
अप्पा नदी वेयरणी, अप्पा मे कूड सामली ॥
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नन्दणवणं ॥ ४२ ॥
अप्पा कत्ता वि कत्ताय, दुक्खाण य सुहाण य ॥
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय सुप्पट्ठिओ ॥ ४३ ॥
चिर पिसे मुंड रुइ भवित्ता, अथिर वय तव नियमेहि भट्ठे ॥
चिरं पि अप्पाण किलेसइत्ता, न पारए होइ हु संपराए ॥४४॥
पुल्लेव मुठ्ठी जहा से असारे, अयन्तिए कूडकहा वणे वा ॥
रढामणि वेरुलियप्पगासे, अमहग्घाए होइ य जणाइसु ॥४५॥

विसं तु पीयं जहा कालकूडं ।
हणाइ सत्थं जह कुग्गहीय ॥
एसो वि धम्मो विसओ ववन्नो ।
हणाइ वेयाल इवा विवन्नो ॥ ४६ ॥
उद्देसिय कीयगडं नियाग ।
न मुञ्चइ किंचि अणेसणिज्ज ॥
अग्गीविव सव्वभक्खी भवित्ता ।
इत्तो चुए गच्छइ कट्टु पावं ॥ ४७ ॥
न त अरी कंठ छेत्ता करेइ ।
जं से करे अप्पाणिय दुरप्पाया ।

मे नाहइ मन्त्रु मुह तु पत्ते ॥
पच्छएणु तावेण दया निहुणा ॥ ४८ ॥
तं पासीउणं सवेगं, समुद्दपालो इणमब्ब वि ॥
अहो असुभ कम्मणं, निज्जाणं पावगं इमं ॥ ४९ ॥
अहा सा रायवर कन्ना, सुसीला चारु पेहणी ॥
सव्व लक्खण संपन्ना, विज्जु सोय मणिप्पभा ॥५०॥
कस्स अट्ठा इमे पाणा, एते सव्व सुहोसिणो ॥
वाडेहिं पञ्जरेहिं च, संनिरुद्धा य अच्छहिं ॥ ५१ ॥
अह सारही तओ भणइ, ए ए भद्दाओ पाणिणो ॥
तुज्झं विवाह कज्जमि, भोयावेओ बहु जेणं ॥ ५२ ॥
जइ मज्झ कारणा, एए हम्मन्तिसु बहु जिया ॥
त मे एयंतु निस्सेसं, परलोगे भविस्सइ ॥ ५३ ॥
सो कुंडलाण जुयल, सुत्तगंच महाजसो ॥
आभरणाणि य सव्वाणि, सारहिस्स पणामए ॥५४॥
केसीकुमार समणे, गोयमे य महायसे ॥
उभओ निसएणा सोहन्ति, चन्द सूर समप्पभा ॥ ५५ ॥
पुरिमा उज्जुजड्डाओ, वंकजडाओ पच्छिमा ॥
मज्झिमा उज्जुपन्नाओ, तेण धम्मे दुहा कए ॥ ५६ ॥
पुरिमाण दुव्विसोज्झोओ, चरिमाणं दुरणु पालोओ ॥
कप्पो मज्झिमगाणतु, सुविसोज्झो सुपालओ ॥ ५७ ॥
एगप्पा अजिए सत्तु, कसाया इन्दियाणि य ॥
ते जिणित्ता जहानायं, विहरामि अहं मुणी ॥ ५८ ॥

रागद्दोसा दओ तिन्ना, नेहपासा भयंकरो ॥
ते छिन्दित्ता जहानाय, विहरामि जहाकमं ॥ ५६ ॥
भव तण्हा लया वुत्ता, भीमा भीम फलोदया ॥
तमुद्धरित्ता जहानाय, विहरामि जहासुहं ॥ ६० ॥
कसाया अग्गिणो वुत्ता, सुयसील तवो जले ॥
सुयधाराभिहया सन्ता, भिन्ना हु न दहन्ति मे ॥६१॥
मणो साहसिओ भीमो, दुट्ठासो परिधावइ ॥
तं सम्मंतु निगिण्हामि, धम्मसिक्खाइ कन्थगं ॥ ६२ ॥
कुप्पवयण पासण्डी, सव्वे उमग्ग पट्ठिया ॥
सम्मग्गं तु जिणक्खायं, एस मग्गे हि उत्तमे ॥ ६३ ॥
जरामरणेगे वेगे, वुज्झ माणाण पाणिणं ॥
धम्मो दीवो पइट्ठाय, गई सरणमुत्तमं ॥ ६४ ॥
सरीरमाहु नावा त्ति, जीवे वुच्चइ नाविओ ॥
ससारो अण्णवो वुत्तो, जं तरन्ति महेसिणो ॥ ६५ ॥
उग्गओ खीण संसारो, सव्वन्नू जिण भक्खरो ॥
सो करिस्सइ उज्जोयं, सव्व लोयंमि पाणिणो ॥ ६६ ॥
इरियाभासेसणादाणे, उच्चारे समिइ इय ॥
मणगुत्ती वयगुत्ती, कायगुत्ती य अट्ठमा ॥ ६७ ॥
नवि मुंडए ण समणो, ओंकारेण न बंभणो ॥
न मुणी रण्ण वासेणं, कुम्म चीरेण तवसो ॥ ६८ ॥
समयाए समणो होइ, बभचेरेण बंभणो ॥
नाणेण ओ मुणी होइ, तवेण होइ तवसी ॥६९ ॥

पढम पोरसी सज्झायं, बीयणंजाझियायई ॥
तइयाए भिक्खायरियं, पुणो चउत्थीय सज्झाय ॥७०॥
पढम पोरसी सज्झायं, बीयझाणं झायायइ ॥
तइयए निद्दा मोक्खंतु, पुण चउत्थीय सज्झाय ॥ ७१ ॥
पुढवी आउकाए, तेउ वाऊ वणस्सइ तस्साण ॥
पडिलेहणा पमत्ते, छन्नंपि निरहाओ होइ ॥ ७२ ॥
वेयणा वेयावचे, इरियाट्ठाए संजमट्ठाए ॥
तह पाण वत्तियाए, छट्ठं पुण धम्म चित्ताए ॥ ७३ ॥
आयङ्के उवसग्गे, तितिक्खया बभचेर गुत्तीसु ॥
पाणिदया तव हेउ, सरीर वोछणट्ठाए ॥ ७४ ॥
जारिसा मम सीसाओ, तारिसा गलि गद्दहा ॥
गलिगद्दहे जहित्ताणं, दढं पगिण्हई तव ॥ ७५ ॥
नाण च दंसण चेव, चरित्तं च तवो तहा ॥
एय मग्गमणुप्पत्ता, जीवा गच्छन्ति सोग्गइ ॥ ७६ ॥
धंम्मो अधंम्मो आगासं, कालो पुग्गल जन्तवो ॥
एस लोगो त्ति पन्नत्तो, जिणेहि वर देसियं ॥ ७७ ॥
गइ लक्खणो धम्मो, अधम्मो ठाण लक्खणो ॥
भायणं मव्व दव्वाणं, नहं ओग्गहा लक्खण ॥ ७८ ॥
वत्तणा लक्खणो कालो, जीवो उवओग लक्खणो ॥
नाणेण दसणेणं च, सुहेण ना दुहेण य ॥ ७९ ॥
जीवाजीवय बन्धो य, पुण्णं पावासवो तहा ॥
संवरो निज्जरा मोक्खो, सन्तए तहियानव ॥ ८० ॥

निसग्गुंवएसंरुइ, अणाँरुई सुत्ते बीयरुइ ॥
अभिगमँ वित्थाररुँई, किरिया संखेवं धम्मंरुई ॥ ८१ ॥
नत्थि चरित्त सम्मत्तविहुणं, दंसणे उ भइयव्वं ॥
सम्मत्त चरित्ताइ, जुगवं पुव्वं च मम्मत्तं ॥ ८२ ॥
नादंसणस्स नाणं, नाणेण विणा न हुन्ति चरणगुणा ॥
अगुणिस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि मोक्खस्स निव्वाणं ॥८३॥
जहा महातलायस्स, सन्निरुद्धे जलागमे
उस्सिंचणाए तवणाए, कमेणं सोसणा भवे ॥ ८४ ॥
नाणस्स सव्वस्स पगासणाए, अन्नाण मोहस्स विवज्जणाए॥
रागस्स दोसस्स य संखएणं, एगन्त मोख समुवेइ मोक्खं ॥८५॥

नवा लभेज्जा निउणं सहायं ।
गुणहियं वा गुणओ समं वा
एगो वि पावाइं विवज्जयन्तो
विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणा ॥ ८६ ॥

जहा य अंडप्पभवा बलागा
अंड बलागप्पभाव जहाय
एमेव मोहायतणं खु तण्हा
मोहं च तण्हायतणं वयन्ति ॥ ८७ ॥

रागो य दोसो विय कम्मबीयं ।
कम्मं च मोहप्पभवं वयन्ति
कम्मं च जाइ मरणस्समूलं
दुक्खं च जाइ मरणं वयन्ति ॥ ८८ ॥

दुक्खं हय जस्स न होइ मोहो ।
मोहो हयं जस्स न होइ तण्हा ॥
तण्हा हया जस्स न होइ लोहो ।
लोहो हयो जस्स न किंचणाई ॥ ८६ ॥

पञ्चासवप्पवत्तो तिहिं अगुत्तो छसुं अविरओय ।
तिव्वारंभ परिणामो खुद्दो साहसिओ नरो ॥ ९० ॥
निद्धन्धसपरिणामो, निस्संसो अजिइन्दिओ ।
एय जोग समाउत्तो, किण्ह लेसं तु परिणामो ॥ ९१ ॥
ईसा अमरिसा अतवो, अविज्जमाय अहीरिया ।
गिद्धी पओसे य सढे पमत्ते, रस लोलुए सायगवेसए ॥९२॥
आरंभओ अविरओ, खुद्दो साहसिओ नरो ।
एय जोग समाउत्तो, निललेसं तु परिणामो ॥ ९३ ॥
वंके वंक समायरे, नियडिल्ले अणुज्जुए ।
पलिउंचगओ वहिए, मिच्छादिट्ठी अणारिए ॥ ९४ ॥
उप्फासग दुट्ठवाइ य, तेण य वि य मच्छरी ।
एय जोग समाउत्तो, काऊलेसं तु परिणामो ॥ ९५ ॥
नीयावत्ती अचवले, अमाइ अकुतुहले ।
विणीय विणए दन्ते, जोगवं उवहाणवं ॥ ९६ ॥
पिय धम्मे दढ धम्मे, वज्जभीरू हिएसए ।
एय जोग समाउत्ते, तेउ लेसंतु परिणामो ॥ ९७॥
पयाणु कोहमाणाय, माया लोभ य पयाणुए ।

पसन्त चित्ते दन्तप्पा, जोगवं उवहाणय ॥६८॥
तहा पयाणुवाई य, उवसन्ते जिइन्दिए ।
एय जोग समाउत्तो, पम्ह लेसंतु परिणामो ॥६६॥
अट्ट रुद्दाणि वज्जिता, धम्म सुक्काइज्झायए ।
पसन्त चित्ते दन्ताप्पा, समिए गुत्तेय गुत्तीसु ॥१००॥
सरागे वीयरागे वा, उवसन्ते जिइन्दिय ।
एय जोग समाउत्ते, सुक्कलेसंतु परिणामो ॥ १०१ ॥
मणोहरं चित्तहरं, मल्ला धूवेण वासियं ॥
सकवाडं पण्डुरुलोयं. मणसावि न पत्थए ॥ १०२ ॥
अचणं रयणं चेव, वन्दणं पूयणं तहा ॥
इड्ढी सकार सम्माणं, मणसावि न पत्थए ॥ १०३ ॥
जिणवयणे अणुरत्ता, जिणवयणं करन्ति भावओ ।
अमला असंकिलिट्ठा, ते होन्ति परित्त संसारे ॥ १०४ ॥
कन्दप्प कुकुयाइं तह, सील सहावह रुण विग्गहाइं ।
विम्हवेन्तो वि परं, कन्दप्पं भावणं कुणइ ॥ १०५ ॥
मन्ताजोग काउं भूइकम्मं च जे पउञ्जन्ति ।
सायरस इड्ढिहेउ, अभिओग भावणं कुणइ ॥ १०६ ॥
नाणस्स केवलीण, धम्मायरियस्स संघ साहूणं ।
माई अवण्णवाई, किब्बिसियं भावणं कुणई ॥ १०७ ॥
अणुनद्धरोसपसारो, तह य निमित्तंमि होइ पडिसेवी ।
एए हि कारणेहि, आसुरियं भावणं कुणइ ॥ १०८ ॥

सत्थगाहणं विसभक्खणं च, जलणं च जलपवेसो य ॥
अणायार भंडसेवी, जम्मण मरणाणि बद्धन्ति ॥१०९॥
धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो ॥
देवा वि तं नमसन्ति, जस्स धम्मे सयामणो ॥११०॥
वत्थगन्धमलंकारं, इत्थिओ सयणाणि य ॥
अच्छंदा जे न भुंजन्ति, न से चाइ त्ति वुच्चइ ॥ १११ ॥
जेय कन्ते पिय भोए, लद्धे विप्पिठिकुव्वइ ॥
साहीणे चयई भोए, सेहु चाइ त्ति वुच्चइ ॥ ११२ ॥
आया वयंति गिम्हेसु, हेमंतेसु अवाउड ॥
वासासु पडिसलीणा, संजयसु समाहिया ॥ ११३ ॥
जयं चरे जयं चिट्ठे, जय मासे जय सए ॥
जयं भुंजंतो भासन्तो, पावकम्मं न बन्धइ ॥ ११४ ॥
पढमं नाणं तओ दया, एवं चिट्ठइ सव्व संजया ॥
अन्नाणी किं काही, किंवा नाही सेय पावग ॥११५॥
सोचा जाणइ कल्लाणं, सोचा जाणइ पावगं ॥
उभयपि जाणइ सोचा, ज सयं तं समायरे ॥११६॥
उग्गम सय पुच्छेज्जा, कस्सट्ठा केणवा कड ॥
सोचा निसंकिय सुद्धं, पडिग्गहिज्जा संजए ॥११७॥
अहो जिणेहिं असावज्जा, वित्ती साहुण देसिया ॥
मोक्खस साहुण हेउस्स, साहु देहस्स धारणा ॥११८॥
दुल्हाओ मुहा दाइ, मुहा जीवी विदुल्लहा ॥
मुहा दाइ मुहा जीवी, दोवी गच्छन्ति सुगइ ॥११९॥

सिणेहि पुप्फ सुहुमं च, पाणुत्तिंग तहेव य ॥
पणगं बीयं हरियं च, अण्ड सुहुमं च अट्टमं ॥१२०॥
जरा जाव न पीडेइ, वाहि जाव न वड्ढइ ॥
जाविंदिया न हायन्ति, ताव धम्म समायरे ॥ १२१ ॥
कोहो पीयं पणासेइ, माणो विणय नासिणो ॥
माया मित्ताणि नासेइ, लोभो सव्व विणासणो ॥१२२॥

आसी विसो वा वि परं सुरुट्ठो ।
किं जीव नासाओ परंतु कुज्जा ॥
आयरिय पाय पुण अप्पसन्ना ।
अबोहि आसायणा नत्थि मोक्खं ॥ १२३ ॥
सिया हु सीसेण गिरं पि भिंदे ।
सिया हु सीहो कुविओ न भक्खे ॥
सिया न भिंदेज्जा वसत्ति अग्गं ।
न आवि मोक्खो गुरु हीलणाए ॥ १२४ ॥
जस्सान्तिए धम्म पयाइं सिक्खे ।
तस्सान्तिए विणइयं पउञ्जे ॥
सक्कारए सिरसा पंजलिओ ।
काय गिराभो मणसाय निच्चं ॥ १२५ ॥

सघट्टाइत्ता काएणं, तहा उवहीणामावि ॥
खमेह अवराहं मे, वएज्जा न पुणोत्तिय ॥ १२६ ॥

—❀(◎)❀—

भगवान गोतमस्वामी कण्ठ विनिर्गत मुक्ताफलमाला।

(गोतमकुलक)

लुद्धानरा अथ्थपरा हवंति, मूढानरा कामपरा हवंति ।
बुद्धानरा खंतिपरा हवंति, मिस्सानरातिन्निवि आयरंति ॥१॥
ते पंडिया जे विरया विरोहे, ते साहुणो जे समयं चरंति ।
ते सत्तिणो जे न चलंति धम्म, ते बंधवा जे वसणे हवंति ॥२॥
कोहाभिभूया न सुहं लहति, माणसिणो सोय पराहवंति ।
मायाविणो हुंति परस्सपेसा, लुद्धामहिच्छा नरयं उविंति ॥३॥
कोहो विस किं अमयं अहिंसा, माणो अरि किं हिय मप्पमाओ ।
माया भयं किं सरण तु सच्चं, लोहो दुहो किं सुहमाहतुट्टि ॥४॥
बुद्धि अचंडं भयए विणीयं, कुद्ध कुसीलं भयए अकीत्ति ।
संभिन्नचित्तं भयए अलच्छी, सच्चेट्ठियं सं भयए सिरीय ॥५॥
चयंति मित्ताणि नरं कयग्घं, चयंति पावाइं मुणि जयंतं ।
चयंति सुक्काणि सराणि हंसा, चयंति बुद्धि कुवियं मणुस्सं ॥६॥
अरोइ अत्थ कहीए विलावो, असं पहारे कहीए विलावो ।
विखिप्तचित्ते कहीए विलावो, बहु कुसीसे कहीए विलावो ॥७॥
दुट्ठाहिवा दंड परा हवंति, विज्जाहरा मंत परा हवंति ।
मुख्खानरा कोव परा हवंति, सुसाहुणो तत्त परा हवंति ॥८॥

सोहा भवे उग्ग तवस्स खंती, समाहि जोगो पसमस्स सोहा।
नाणं सुझाणं चरणस्स सोहा, सीसस्स सोहा विणए पवित्ति ९॥
अभूसणो सोहइ बंभयारी, अकिंचणो सोहइ दिक्खधारी।
बुद्धिजुओ सोहइ रायमंती, लज्जाजुओ सोहइ एगपत्ति ॥ १० ॥
अप्पा अरी होइ अणवट्ठिअस्स, अप्पा जसो सीलमओ नरस्स।
अप्पा दुरप्पा अणवट्ठिअस्स, अप्पा जिअप्पा सरणं गईय ॥११॥
न धम्मकज्जा परमत्थिकज्जं, न पाणि हिंसा परमं अकज्जं।
न पेम रागो परमत्थिबंधो, न बोहिलाभो-परमत्थिलाभो ॥१२॥
न सेवियव्वा पमया परक्का, न सेवियव्वा पुरिसा अविज्जा।
न सेवियव्वा अहिमानिहीणा, न सेवियव्वा पिसुणा मणुसा ॥१३॥
जे धम्मिया ते खलु सेवियव्वा, जे पंडिया ते खलु पुच्छियव्वा।
जे साहुणो ते अभिवंदियव्वा, जे निम्ममा ते पडिलाभियव्वा॥१४॥
पुत्ताय सिसाय समं विभत्ता, रिसीय देवाय सम विभत्ता।
मूरुखातिरिक्खा च समं विभत्ता, मुआदरिद्दाय समं विभत्ता ॥१५॥
सव्वकला धम्मकला जिणाइ, सव्वाकहा धम्मकहा जिणाइं।
सव्वं बलं धम्म बलं जिणाइ, सव्व सुहं धम्मसुहं जिणाइं॥१६॥
जूए पसत्तस्स धनस्स नासो, मसं पसत्तस्स दयाइ नासो।
मज्ज पसत्तस्स जसस्स नासो, वेसा पसत्तस्स कुलस्स नासो॥१७॥
हिंसा पसत्तस्स सुधम्मस्सनासो, चोरी पसत्तस्स सरीरस्सनासो।
तहा परत्थिसु पसत्तयस्स, सव्वस्स नासो अहमागइ य ॥१८॥
दाण दरिद्दस्स पहुस्सखंति इच्छानिरोहो य सुहोइयस्स।
तारुण्णए इंदिय निग्गहो य, चत्तारीए आणि सुदुकराणि ॥१९॥

अमासयं जीवीय महुलोए, धम्मचरे साहु जिणोवईड ।
धम्मोयताणं सरणं गइय, धम्मं निसेविचु सुहं लहंति ॥२०॥

सयल कल्लाण निलयं, नमिऊण तित्थनाहा पयकमलं ॥
परगुण गहण सरूवं, भणामि सोहग्गसिरि जणयं ॥ १ ॥
उत्तम गुणाणुराओ निवसइ हिययंमि जस्स पुरिसस्स ॥
आतित्थयार पयाओ न दुल्लहा तस्स रिद्धीओ ॥२॥
जइवि चरसि तव विउलं, पडसि सुय करिसि विविह कट्ठाइं ॥
न धरसि गुणाणुरायं, परेसु ता निप्फलं सयलं ॥ ३ ॥
जो परदोसे गिण्हइ, संतासतेवि दुट्ठ भावेणं ॥
सो अप्पाणं बन्धइ, पावेण निरत्थएणावि ॥ ४ ॥
सो देसो तं नगरं, तं गामो सो अ आसमो धन्नो ॥
जत्थ पहु तुम्ह पाया, विहरंति सयावि सुपसन्ना ॥ ५ ॥
जा रिद्धि अमरगणा, भुंजंता पियतमाइ संजुत्ता ॥
सापुण कित्तियामित्ता, दिट्ठे तुम्ह सुगुरु मुह कमले ॥ ६ ॥
अट्ठमि चउद्दसीसु, सव्वाए नि चेइयाइ वंदिज्जा ॥
सव्वेवि तहा मुणिणो, सेसदिणे चेइअं एक ॥ ७ ॥
जिणचलणकमल सेवा, सुगुरु पाय पज्जुवासणं चेव ॥
सज्झायवायरडतं, लब्भंति पभूय पुण्णेहिं ॥ ८ ॥
दाणं सोहाग्ग कर, दाण आरुग्ग कारणं परम ॥
दाणं भोग निहाणं, दाण ठाणं गुणगणाण ॥ ९ ॥

जिणभुवण विंब पुथ्थय, संघ सरुवेसु सत्तखेतेसु ॥
ववित्रं धणंपि जायइ सिवफल यमहो अणंतगुणं ॥ १० ॥
सीलं उत्तमं वित्तं, सीलं जीवाण मंगलं परमं ॥
सीलं दोहग्गहरं, सीलं सुख्खाण कुलभवणं ॥ ११ ॥
अथिरंपि थिरं वकंपि, उजुअं दुल्लहंपि तह सुलहं ॥
दुस्सज्झंपि सुसज्झं तवेण संपज्जए कज्जं ॥ १२ ॥
निच्चुंओ तंबोलो, पासेण विणा न होइ जह रंगो ॥
तह दाण सील तव भावणाओ अहलाओ सव्व भावविणा ॥१३॥
अहा कम्मं उद्देसिय, पूइकम्ममिस जाएय ॥
ठवणा पाउडियाए, पाउर कीयपामिच्चे ॥ १४ ॥
परियट्टे अभिहडे भिन्ने मालोहडे (भूमिमालोहडे) ॥
अच्छिज्जे अणिसिट्ठे अज्झोयरसोलस उग्गमदोसा ॥ १५ ॥
धाइदूइ निमित्ते आजीवे वणिमगतिगिच्छे ॥
कोहे माणेमायालोभे हवंति दसदोसाए ॥ १६ ॥
पूव्वं पच्छासंथव विज्जामंतचुन्नजोगेय ॥
उप्पायणाएदोसा सोलसमेमूलकम्मेय ॥ १७ ॥
संकिए मक्खिए निक्खित्ते पेहियसाहरिया ॥
दायगोम्मिसे अपरिणित्त लित्त छड्डुए एसणादसहाहुंति ॥१८॥
संजोयणापमाणे इंगालेधूमकारणे ॥
एएसायालीसा दोसा वज्जयंति महामुणी ॥ १९ ॥

॥ समाप्तम् ॥

अथश्री

व्याख्याविलास-भाग ४ था.

(भाषाविभाग)

(१)

शासनपति अरिहंत, कर्मोंको कियो अन्त ।
सूरि पाठक अनगार, नमो तपचारको ॥
स्थविरगण कुल संघ, क्रियावन्त शुद्ध लिंग ।
जंघा विद्याचारण मुनि, जिनकल्प धारको ॥
जिन बिम्ब जिन ज्ञान, तप शील भाव दान ।
आत्म समाधि ध्यान, नमो सुखकारको ॥
शासनको नमस्कार, करत हजारवार ।
ज्ञानसेती प्रीत धार, तीरो संसारको ॥

(२)

जीवदया जगसार, धर्मरूची अनगार ।
मेतारज मुनि सार, पाया भवपारको ॥
मेघरथराय जान, पारेवाको राख्यो आन ।
शान्तिनाथ भगवान, तार्यो संसारको ॥

तेवीसमा जिनराज, नागको सुधार्यो काज ।
राजुलके शिरताज सुनी, पशुकी पोकारको ॥
जिन आज्ञा परधान, जीवदया शुभ ध्यान ।
सुन्दर सुजान ज्ञान, पावे पद सारको ॥

(३)

जो अरि मित्त बराबर जानत, पार्श्व ओर पाषाण जो दोही ।
कनक कीच समान कहे जिम, निच नरेश्वरमें भेद न कोही ॥
मान कहा अपमान कहा, मत एसो विचार नहीं तस होही ।
राग अरु रोस चित्त नहीं जाके, धन्य अहो जगमें जन सोही ॥

(४)

ज्ञानी कहो अज्ञानी कहो कोइ, ध्यानी कहो मन माने ज्युं कोइ ।
योगी कहो भावे भोगी कहो कोइ, जाको जेसा मन भासत होइ ॥
दोषी कहो निर्दोषी कहो, पिंड पोषी कहो कोइ अवगुन जोइ ।
राग अरु द्वेष नहीं सुन जाकुं, धन्य अहो जगमें जन सोही ॥

(५)

साधु शान्त महान्त कहो कोइ, भावे कहो निर्ग्रन्थ सुप्यारे ।
चोर कहो कोइ ढोर कहो कोइ, सेव करो कोइ जाण भलेरे ॥
विनय करी कोइ उच्च बेठावे, ज्युं दूरथी देख कहे कोउ जारे ।
धर्म मदा समभाव चिदानन्द, लोक कहावत सुनत नारे ॥

(६)

लज्जा विनो रूप रंग होय तो भी राखरूप ।
लज्जा विनो धूल जेसा सबही निधान है ॥

लज्जा विनो विनय विचार रह सके नहीं ।
लज्जा विनो मोटाइको खोटो अभिमान है ॥
लज्जा विनो नाम ठाम लोकमें न रहे भार ।
लज्जा विनो जहां जावो तहां अपमान है ॥
केशव कहत साची लज्जा यह मोटी बात ।
एक लज्जा विनो नर पशुके समान है ॥

(७)

चिंता विनो कामकाज सत्यहु न माने कोय ।
चिंता विनो लेखपत्र पीपल केरा पान है ॥
चिंता विनो आरंभ अधूरा रहत है सब ।
चिंता विनो कीसका मान अपमान है ॥
चिंता विनो सुख दुःख शरीरको न जाने आप ।
चिंता विनो धुलधाणी तप जप ध्यान है ॥
केशवदास चिंता विनो चतुराई कैसी भाई ।
एक चिंता विनो तन लकड़ समान है ॥

(८)

हाथमें धरे तो वीटी पुणच्छींसे विशेष शोभा ।
कानमें धरे तो अमूल्य कुंडलके आकार है ॥
मुखमें धरे तो मुख वासमे सुवास होवे ।
कंठमें धरे तो मानो हीरों केरो हार है ॥
मस्तकपे धरे तो मुगटसे भी सुंदर शोभे ।
घरमें धरे तो अच्छो घरको शृंगार है ॥

भविता प्रताप भणे कविता कविश्वर करे
अधर रहे हुवे जनको मनको आधार है ।

(६)

बालक पीवे तो त्हेने विद्याबल बहु वधे ।
जवान पीवे तो छाक उतारे जवानीको ॥
वृद्धजन पीवे ताको हिम्मत अरु और वधे ।
उपजावे अन्तरमें रस सोला आनिको ॥
सतीयां पीवे तो त्हेने सत्यको मार्ग मीले ।
सुधारस सम नारी मोटी अरु छोटीको ॥
सुकविता अवगुणकारी होय नहीं कीसीको ।
दोप न देखाय जहामें लगार नादानीको ॥

(१०)

बोलीये तो जव तब बोलनेकी शुद्धि होय ।
न तो मुख मौन करी चूप बैठ रहिये ॥
जोरिये तो जब तब जोरवाको ज्ञान होय ।
तुंक छंद अर्थ अनूप जहामें लहिये ॥
गाइये तो जब तब गायवाको कंठ होय ।
श्रवणके सुनतेही मन जाय गाहिये ॥
तुकभंग छंदभंग अरथ मीले न कच्छु ।
सुन्दर कहत एसी वाणी नही कहीये ॥

(११)

दाने संपत्त होय, दान लच्छी घर आवे ।
दाने होय उद्धार, दानसे आदर पावे ॥
दाने निर्मल चित्त, दान घर जाचक आवे ।
दाने सुर अवतार, दानसे शिवपद पावे ॥
धन धरा संग न चले, चले जो दीनो दान ।
परभवमें दीनो मीले, समजावे गुरुज्ञान ॥

(१२)

शील सुधारस पान कर, उतरे मोहकी छाक ।
यंत्र मंत्र सिद्ध हुवे, रहे काच्छका पाक ॥
रहे काच्छका पाक महीलाको माता जाणे ।
वचनसिद्धि होइ जाय आतमा आप पेच्छाने ॥
भवभ्रमण भटक्यो घणो लगी पीपासा ज्ञान ।
सुन्दर सदा सुख शीलसे करो सुधारस पान ॥

(१३)

ज्ञान साथे तप कर, क्षमा हुको सग धर ।
कर्मोको प्रज्वाल कर, टालो मिथ्या अंधकारको ॥
इन्द्रभूति गणधार, धन्ना नामे अनगार ।
तप कियो खडग धार, जीत्या मोहरायको ॥
श्रेणिक नृपकी नार, काली आदि तप धार ।
प्रदेशीको कीयो पार, सुदत्त अनगारको ॥

काटत कर्मशूल, भवको उखेडे मूल ।
शिवसुख अनुकूल, तोडे कर्म निकाचितको ॥

(१४)

दान शील तप सही भाव साथे फल लही ।
ज्ञान ध्यान पूजा आदि, भावसे प्रधान है ॥
एक छत्र राज करे, षट खंड आण धरे ।
भरत नरेश्वर जाके, भावे केवलज्ञान है ॥
ध्यान मांहे थीर थोभ, राजतणो लाग्यो लोभ ।
प्रसन्नचन्द्र नरकदल, भावे निर्वाण है ॥
वंस रोपी करे खेल, भावसेति धोवे मेल ।
एलापुत्र केवलज्ञान, भावही निधान है ॥

(१५)

क्रोधी महा चंडाल, धड धड धूजावे छाती ।
क्रोधी महा चंडाल, आंखीयों करदे राती ॥
क्रोधी महा चंडाल, गीने नहीं छूरी कुंडो ।
क्रोधी महा चंडाल, जाय नरकमें उंडो ॥
क्रोधी महा चंडाल, कीधो तप संयम खोवे ।
क्रोधी महा चंडाल, बीज दुर्गतिको बोवे ॥
क्रोधी महा चंडाल, गीने नहीं माता भाई ।
क्रोधी महा चंडाल, दोनों गति देत डुबाई ॥
वैर वधे गटे पितडी, अग्निज्वाला जान ।
आतम शीतल जे करे, ज्ञान सुधारस पान ॥

पैसा जगमें पाप शुद्ध आचार डूबावे ॥
पैसा जगमें पाप अत्याचार करावे ।
पैसा जगमें पाप प्रेम प्रतीत उडावे ॥
पैसा जगमें पाप पापको घरपर लावे ।
पैसा जगमें पाप ज्ञानको उलट बनावे ॥
त्याग करी पैसा तणो जगको दीनी पुठ ।
ज्ञान दीपक से देखीये अक्षय खजानो अखुट ॥

(२०)

पैसा जगमें पुन्य पुन्यको निजघर लावे ।
पैसा जगमें पुन्य दुःखीको सुखी बनावे ॥
पैसा जगमें पुन्य तीर्थ अरू यात्रा करावे ।
पैसा जगमें पुन्य शासनकी सेवा बजावे ॥
पैसा जगमें पुन्य ज्ञान पढे अरु पढावे ।
पैसा जगमें पुन्य धर्म अरु कर्म कमावे ॥
त्याग कीयो जग योगीयों गृहस्थीको शृंगार ।
ज्ञान सुधारस पान-कर स्याद्वादको सार ॥

(२१)

निंदा नरक ले जाय निंदा जगवैर बढावे ।
निंदा गुणोंका नास निंदा पर दव लगावे ॥
निंदा करे फजीत निंदा दुर्गुण सब लावे ।
निंदा मानका भंग निंदा ले केद करावे ॥

विन पैसा घोबी मील्यो निंदक धोवे मेल ।
ज्ञानी आश्चर्य न करे सन कर्मोंका खेल ॥

(२२)

गुनग्राही बनीये सदा लागत नही कछु मोल ।
अवगुन जोवे आपका पामे गुन अनतोल ॥
पामे गुन अनतोल जगतमें लोक सरावे ।
परभव सुर अवतार आखर वह शिवपद पावे ॥
कहत कवी करजोड ज्ञानकी वातो सुनीये ।
लागत नही कच्छु मोल गुनके ग्राहक बनीये ॥

(२३-२४)

विदेशको हुवे तैयार, हाथ जोडी बोले नार ।
आपसे अधिक प्यार, पाछा जल्दी आवजो ॥
सठाकी कमाइ सार, लावजो मोत्याको हार ।
कदोरो ने टोटी कडा, सोनाना घडावजो ॥
बिच्छीया बाजुबन्ध भेला, वगडी घडाजो पहेला ।
नाकवाली दान्त चुक, रतन जडावजो ॥
चन्द्र सूरज बिंदी बोर, पुणच्छी पति ठुसी और ।
पनडीयो वाला तीमणीयाको, हीरासे मढावजो ॥
काच टीकी सूरमो सार, थाडको ले आजो लार ।
हींगुलकी पुडी न्यार, लाल लेता आवजो ॥
फूल ने किनार कोर, जरी बुटा तारा और ।
ओढनेके काज चीर, रेशमी थे लावजो ॥

घाघराकी चोखी छींट, सोना केरी लाज़ो ईंट।
और कोइ नवी चीज, भुली मत आवजो ॥
ज्ञानसेति जान सही, धूर्त नारी बोली नहीं।
देहली केरो पेचो एक आपके भी लावजो ॥

(२५)

ज्ञान घटे नर मूढकी संगत, ध्यान घटे चित्तको भरमाये।
सोच घटे ज्यूं साधुकी संगत, रोग घटे कछु औपध खाये ॥
रूप घटे पर नारिकी संगत, बुद्धी घटे बहु भोजन खाये।
बैताल कहै विक्रम सुनो, कर्म कटे ज्यूं प्रभु गुण गाये ॥

(२६)

ज्ञान बढे गुणवानकी संगत, ध्यान बढे तपसी सग कीनो।
मोह बढे परिवारकी संगत, लोभ बढे धनमें चित दीनो ॥
क्रोध बढे नर मूढकी संगत, काम बढे त्रिया संग कीनो।
बुद्धि विवेक विचार बढे, कवि दीन कहे सुसज्जन संग कीनो ॥

(२७)

तारोंकी ज्योतिमें चन्द्र छिपे नहीं, सूर्य छिपे नहीं बद्दल छायो।
रण चढे राजपूत छिपे नहीं, दातार छिपे नही घर मंगण आयो ॥
चचल नारिके नयन छिपे नही, प्रीत छिपे नहीं पूंठ दिखायो।
योगीका भेख अनेक करो पण, कर्म छिपे नहीं भभूत लगायो ॥

(२८)

सूर्य छिपे अदरि बदरि, अरु चन्द्र छिपे अमावस आयो।
पानिकी बूंदसे पतंग छिपे, अरु मीन छीपे इच्छत जल पायो ॥

भोर होनेपर चोर छिपे, अरु मयूर छिपे ऋतु ग्रीष्म आयो।
ओट करो शत घुंघटकी, पण चंचल नयन छिपे न छिपाये॥

(२९)

मान घटे मुखसे कछु मागत, प्रीत घटे नितके घर जायो।
बुद्धि घटे ज्युं नीचकी संगत, क्रोध घटे मनको समझायो॥
नेह घटे तुंकतेपर चूके, नीर घटे ऋतु ग्रीष्म आयो।
वैरी घटे भुज जोर किये, ज्युं कर्म कटे प्रभुके गुण गायो॥

(३०)

बालसे आल बुढेसे विरोध, अरु चंचल नारीसे ना हँसीये।
ओछेकी प्रीत गुलामकी संगत, अजानत नीरमें ना धसिये॥
बैलको नाथ अश्वको लगाम, मतंगको अंकुशसे कसिये।
कवि गंग कहे सुन साहा अक्बर, क्रूरसे दूर सदा बसिये॥

(३१)

काज विना न करे कोइ उद्यम, रीस विना रण माहि न झूंजे।
शरीर विना न सधे परमारथ, शील विना नर देहि न शोजे॥
नियम विना न लहे निश्चयपद, प्रेम विना रस रीत न बूझे।
ध्यान विना न स्थंभे मनकी गति, ज्ञान विना शिवपन्थ न सूझे॥

(३२)

कबहुँ मन रंग तरंग चढे, कबहुँ मन सोचत है धनकुं।
कबहुँ मन कामनी देख चले, कबहुँ मन मृग होय फिरे बनकुं॥

कबहुँ मन रंगमें भंग करे, कबहुँ मन साधत है रणकुं ।
कवि गग कहे सुनो शाहा अकबर, वश करो सदा कपटी मनकुं

(३३)

वचने होय मिलाप, वचन सब वैर मिटावे ।
वचने दौलत होय, वचन अमृतरस पावे ॥
वचने पावे राज, वचन विद्यावल आवे ।
वचने शील संतोप, वचन वैराग्य उपजावे ।
रोग शोक सबी जाय, वचन सुर लच्छी लावे ।
धनराज कहे सुन चतुर नर, वचनसे कवि आदर पावे॥

(३४)

चिन्तामणि पायकर, मूढताको परिहर ।
काच गेह रंग भर, अकल ताहारी काहारे ॥
गजवर वेच कर, सो तो मूंढ लेत खर ।
पावे नहिं वेर वेर, मनुष्य अवताररे ॥
कल्पवृक्ष काट कर, वोवत बंबूल शठ ।
सोना केरे थाल मांहे, रज काहे भररे ॥
रसकूम्प पाय कर, पाँव धोवे मूंढ नर ।
भावसे आदर कर, तिर संसाररे ॥

(३५)

बातनसे वैर कटे, बातनसे पन्थ हटे ।
बातनसे बहे जात दिनरात है ॥

बातनसे रोजगार, बातनसे स्नेहाचार।
बातनसे चोर घर, आये फिर जात है ॥
बातनसे भूत प्रेत, बातनसे डाकन श्वेत।
बातनसे सर्प बिच्छू विष उतर जात है ॥
और तो अनेक बात, धरमकी लिजे साथ।
बात कर जाने सो तो बात करामात है ॥

(३६)

काल बैतालकी धाक तिऊँ लोकमें, देव दानव घर रोग लगावे।
इन्द्र नरेन्द्र फणेन्द्र बंकेनर, कालकी फौजको कौन हटावे ॥
शील संतोष अवेद लिये मुनि, सो कालकी फौजको संकडे लावे।
मुक्ति महलमें जाय बिराजे, वहां कालका जोर कछु नहिं पावे ॥

(३७)

अल्प सी उमर तामें जीव सोच बहूत करे।
करणेके अनेक काम कहा कहा कीजीये ॥
आगमका अन्त नहीं प्रकरणका पार नहीं।
बाणी तो बहूत चित्त कहा कहां दीजीये ॥
कविकी कला अनेक छंदका प्रकाश बहूत।
अलकार अनेक रस कहा कहा पीजीये ॥
सौ बातांकी एक बात निकटही बताइ जात।
जो जन्म सुधारा चाहे तो एक आतमवश कीजीये ॥

(३८)

लगे सिहको शोल लगे हास्तिको अङ्कुश ।
लगे पुरूषको नार लगे तुरँगको चाबक ॥
लगे सुर्यको ग्रहण लगे चन्द्रको राहू ।
लगत लगत सबको लगे अरू ऋतु आप फल लगे ॥
बेताल कहै विक्रम सुनो सो मूर्खको क्या लगे ? ।

(३९)

पानी के काज धान पान सुखजात ।
पानीके काज मयूर बोले असमानि हैं ॥
पानीके काज रामचन्द्र रणको चढे ।
पानीके काज रावण खोई जिन्दगानी हैं ॥
पानीके काज घोडेको रातब मीले ।
पानीके काज मीनहारी जिन्दगानी हैं ॥
पानीके काज हीरा पुखराजमणी ।
पानी बिन मोतीयनकी कीमत हलकानी हैं ॥
पानीके काज रणमें झुंझत शूरवीर ।
पानीने काज सती आगमें जलानी हैं ।
कहत गुरु ज्ञानी जाके नही पानी ।
ताका जन्म धूलधानी हैं ॥

(४०)

रती बिन राज रती बिन पाट, रती बिन छत्र नहीं एक नीको ।
रती बिन साधु रती बिन संत, रती बिन योग न होय यतिको ॥

रती बिन मान रती बिन तान, रती बिन मानस लागत फीको।
कवि गंग कहे सुन शाह अकबर, एक रती बिन पाव रतीको॥

(४१)

वह विरला ससार, नेह निर्धनसे जोडे।
वह विरला संसार, ज्ञानसे मोहको छोडे॥
वह विरला संसार, आमद और खर्च संभारे।
वह विरला संसार, हाथ निर्बल पर न डारे॥
वह विरला संसार, देखकर कर अदिट्ठा।
वह विरला संसार, वचनसे बोले मीट्ठा॥
आपो मारे प्रभु भजे, तन मन तजे विकार।
अवगुण उपर गुण करे, वह विरला संसार॥

(४२)

जट कहा जाने भट्टकी बातकु, कुम्हार कहा जाने भेद जगाको।
मूढ कहा जाने गूढकी बातको, भील कहा जाने पाप लगाको॥
प्रीतकी रीत अतीत कहा जाने, भैंस कहा जाने खेत सगाको।
कवि गंग कहे सुन शाह अकबर, गद्धा कहा जाने नीर गंगाको॥

(४३)

रसना योग अरू भोग, रसना सब रोग बढावे।
रसना करे उद्योग, रसना ले केद करावे॥
रसना स्वर्ग ले जाय, रसना नर्क दिखावे।
रसना मिलावे यश, रसना जग फजीत करावे॥

रसना वश एकांत कर, पहला मनमें तोल।
वैताल कहे विक्रम सुनो, रसना संभारके बोल ॥

(४४)

धर्मके प्रभाव कोटि बार नर भयो।
अब धर्मकी बात नही सुहावत है ॥
रात दिवस करत विचार धन जोडवेको।
आयुष्य घट्यो जात ताकि चितमे न बात है ॥
हीरनके हेत कांचनके नग लेत।
आपही के हाथ देखो आप गोता खात है ॥
कविराज कहे औरनकी हूंडी सिकारी।
आपकी हूंडीका दाम रीता खोया जात है ॥

(४५)

घरमें के बारमें के कोटडी किंवाडमें के।
पोढणेकी सहेज मेंहे सुतो ही संभारेगो ॥
जंगमें के भाडीमें के बागमें के बाडीमें के।
तावकी तेजरेमें के भरवारमे डारेगो ॥
सुदमें के बदमें के बातके विरुध्दमें के।
लोककी लडाइमें के छार कर डारेगो ॥
कहत है इश्वरदास जीवनेकी कैसी आस।
कहा जानुं कर्मगति कैसी मात मारेगो ॥

(४६)

वार वार कह्यो तोय सावधान क्यों न होय ।
ममताकी पोट सिर कायको धरत है ॥
मेरा धन मेरा धाम मेरा सुत मेरा ग्राम ।
मेरी वाडी मेरा बाग भूल्यो ही फीरत है ॥
तुं तो भयो बावरो बिकाय गइ तेरी बुद्ध ।
ऐसे अंधकूपमांहि काहेको पडत है ॥
सुन्दर कहत काज आवत नाहिं तोकूं लाज ।
काजको बिगाड पर काजको करत है ॥

(४७)

कारमो कुटुम्ब यह काहेको धरत नेह ।
हारत मानव देह फेर कहां पाईये ॥
मात तात घरबार बेटा वहू परिवार ।
आवे नहीं तेरी लार कैसे मन लाईये ॥
तुं तो भयो बावरो बिकाय गइ तेरी बुद्ध ।
कौन तेरा जग बीच मुझे ही बताईये ॥
मन वच थिर कर ज्ञानसेती प्रेम धर ।
मनुष्य रत्न भव काहेको गमाईये ॥

(४८)

सरलको शठ कहे वक्ताको धृष्ट कहे ।
विनयकर तांसे कहे धनके आधीन है ॥

क्षमावन्तको निर्बल कहे दानीको अदत्त कहे ।
मधुर वचन बोले तांसे कहे आ तों दीन हे ॥
धर्म्मीको दम्भी कहे निस्पृहीको गुमानी कहे ।
तृष्णा घटावे तांको कहे भाग्यहीन हे ॥
जहां साधु गुन देखि तिन्हिको लगावे दोष ।
ऐसा कछु दूर्जनोंका हृदय मलीन है ॥

(४९)

चार जणोंको हे सखी सोहे जरा श्रृगार ।
राजा म्हेता वैद्य ऋषी गरडपणे गुनसार ॥
गरडपणे गुनसार उपजे बुद्धि रसायन ।
विणसे वेश्या मल्ल चाकरने गायक ॥
करे बहूतसी कला एक हु मन नहीं माने ।
धर्मसिंह कहे जरा क्षीण करे चार जणाने ॥

(५०)

हस्ति दान्तके खिलौने सोतो आवे बालकोंके काम ।
वाघकी वाघाम्बर शिवशंकर मन भावे हे ॥
मृगकेरी छाल सो नो बिछावत योगीराज ।
बकराकी खाल सोतो पाणीभर पावे है ॥
साम्बरके कमर पट्टे बाधत है सिपाहिलोग ।
गेंडकी ढाल सोतो राजा राणा मन चावे है ॥

करलोकी खालमें हींग है सुगंध गंध।
वृषभकी खाल सब जगको सुहावे है॥
नेकी अरू बदी देखो दोनु संग आवे।
मयाराम कहे मनुष्यकी खाल कन्छु काम नहीं आवे है॥

(५१)

हस्ति चंचल होय झपट मैदान दिखावे।
राजा चंचल होय मुल्कको सरकर आवे॥
पण्डित चंचल होय सभाका मन रीझावे।
घोडा चंचल होय सवारको युद्ध जीतावे॥
यह चारो चंचल भला राजा पंडित गज तुरी।
वैताल कहे विक्रम सुनो एक चंचल नार बुरी॥

(५२)

पग विन कटे न पन्थ, बाह विन हटे न दुर्जन।
तप विन मिले न राज, भाग्य विन मिले न मजन॥
गुरु विन मिले न ज्ञान, द्रव्य विन मिले न आदर।
पुरुप विन श्रृंगार, मेघ विन जैसे दादूर॥
वैताल कहे विक्रम सुनो, बोल बोल बोली फीरे।
धिग् धिग् मनुष्य अवतार, सो मन मेन्यां अंतकरे॥

(५३)

नमे तुरी बहु तेज, नमे दाता धन देतो।
नमे आम्र बहु फल्यो, नमे बद्दल वर्षतो॥

नमे सिंह गुणवान, नमे गज वहत असवारी ।
नमैसु भारी होय, नमे कुलवंती नारी ॥
प्रेम सहित सज्जन नमे, मोक्ष साधत मुनि नमे ।
सुखो काष्ट अरू मूढ नर, तुट पडे पण नहीं नमे ॥

(५४)

दीनको दीजीये आन दया मन, मित्रको दीजीये प्रीत वधारे ।
शत्रुको दीजीये वैर वधे नहीं, राजाको दीजीये आदर पावे ॥
सेवकको दीजीये सेव करे नित, भाटको दीजीये कीर्ति गावे ।
साधुको दीजीये मोक्षके कारण, हातको दीनो कहां नहीं जावे ॥

(५५)

चोसठ हजार नार नवनिधि भरीये भंडार ।
चक्रादिक चवदे रत्न जाके आठ सिद्धि है ॥
हस्ति अरू रथ घोडा चौरासी है लक्ष जोडा ।
छीनव क्रोड जाके पैदल प्रसिद्ध है ॥
बत्तीस हजार देश पाटणपुर नगर शेष ।
गाम है छीनव क्रोड ऐसी जाके ऋद्धि है ॥
ऐसी ज्हॉनें ऋद्धि त्यागी भये है अजब वैरागी ।
तुं तो सुणरे अभागी नर कहो तेरे केति रूद्धि है ॥

(५६)

तूटो सो छप्पर घर तामें बिल है अनेक दर ।
सर्प कोल मूषा विछू और क्षुद्र जीव है ॥

खांडी हाँडी तूटो चाड्ड फाटीसी गुदडी जाके ।
चोपाई चकचुर है ॥
कालीसी कुरुपानार-बोलत हजार गार ।
पूत है कपूत जाके विधवा घर बाई है ॥
लेणायत लारे लागे रातको दौडी ने भागे ।
और हू अनेक दुख तांहि घर माने मूंड ।
मोह निद्रा छाई है ॥

(५७)

मेरे देश विलायत हय गज, यह मेरे मन्दिर यह मेरे ख्याती।
मेरे मातापिता पुनः बान्धव, यह मेरे पुत्र यह मेरे ज्ञाती ॥
मेरी कामिनी केल करे नित, यह मेरे सेवक है दिन राती ॥
दर छोड चले गये सबही, तेल जलनेपर बुझ गई बाती ॥

(५८)

कोउ घर पुत्र जायो कोउके वियोग आयो ।
कोउ घर रंग राग कोउ रोवा पीट भारी है ॥
जहा भानू उगत उत्साह गीत गान देखी ।
सांझ समय ताहि घर हाय हाय पारी है ॥
जगतकी रीत जाण बुद्धिसे विचार आण ।
एक घर होरी और एक घर दीखत दीवारी है ॥
मनुष्य जन्म पाय सो तो छिनमें विलाय जाय ।
पुर्वकृत कर्म उदय और बांध चले लारी है ॥

(५६)

बड्डा पांव डारे सो तो पाधरा पसार दीना ।
आंख न उघाड तो गो तीरडीतीरात है ॥
अपनेही बोल आगे बोलवा न दे तो ।
बोलवो थाक्यों अब बोलायो न बोलात है ॥
छायरी निरख छबी छकीयो छकीयो चाल तो सो ।
छबी छुटी छांत भई कोई न छीवात है ॥
आवताको न कहतो आव–आयोको अभिमान करे ।
सो तो अब आप देखो, परखंदे चढीयो जात है ॥

(६०)

न्याय विना रचक कच्छु जानत नाहिं, झगडो सुन कच्छु और बढावे ।
चौरकी गौर करे शठ विर्था शाहके हातमें गोला दिरावे ॥
साचही बातको मात करे और न्यायसे दूर होय फिर पलटावे ।
नरक लहे दुख मार पडे तब आपही आप मूढ पछतावे ॥

(६१)

गोरो गोरो गात देखी काहेको गुमान करे ।
रंग तो पतंग सम काल उड जायगो ॥
धूवा केरी दीवार सो तो ढोवता न लागे वार ।
नदीके किनारे रूंख कल उठ जायगो ॥
बोलवा सो बोले नहीं बोले सो गुमान करे ।
जोवन गमायो पीछे कोडी हू न पायगो ॥

मानूषकी गंदी देह जीवतही आवे काम
मुवा पीछे कहा जान् काग कुत्ता खायगो ॥

(६२)

कंचनके आसन कचनके गामन ।
कंचनके पलग सब यहां ही रहेंगे ॥
हाथी हूलशाननमें घोडे घुडशालनमें ।
कपडे जामदानमें घडीबंध धरे रही रहेंगे ॥
बेटा और बेटी धन दोलतका पार नहीं ।
जवाहरातके डबांपर ताले जडेही रहेंगे ॥
देह छोड दिगम्बर होय देखे सब खडे लोग ।
न्यायके करइये नृप उठही चलेंगे ॥

(६३)

शीशकी शोभाको केश दीये, युगनयन दीया जिन जोवनको ।
पँथ चलनेको दोय पांव दीये, दो हाथ दीये दान देननको ॥
कथा सुननेको दोय कान दीये, एक नाक दीयो मुख शोभनको ।
कर्मराय सब ठीक दीये, पिण पेट दीयो पत खोवनको ॥

(६४)

भक्तिवन्त, मीठाबोले, कपटरहित, एक मने सुने चित्त धर सीखको ।
प्रश्नकर्ता प्रगट कहे घणासूत्र रहस्य जाने, धर्म आलस्य त्यागको ॥
निंदारहित, बुद्धिवान, दयाके परिणाम जान, करेपर उपकारको ।
गुणग्राही निद्रा नहीं ऐसे श्रोता आग करे मुनी धर्म वैपारको ॥

(६५)

एक समय मेला मिलि चाल्या है मित्र षट ।
पाको आम्र देखी कहे किस विध कीजीये ॥
एक कहे मूल काटो दूजो कहे उपरसे तो ।
तीजो कहे लघु शाखा काट लीजीये ॥
चोथो कहे काची पाकी पांचमाने पाकी पाकी ।
छठो कहे फल हेठमेही लीजीये ॥
छउ जणा सम छउ लेश्याका परिणाम जाण ।
तीन है अशुभ तीन लेश्या रस सुधा पीजीये ॥

(६६)

काजलकी कोटडीमें सेणा पुरुष पेठ देखो ।
काजलकी एक रेख लागे है पीण लागे है ॥
कोई जावे बागनमें वास आवे फुलनकी ।
कामनीके संग काम जागे है पीण जागे है ॥
बैठीये न एक ठोर भटकाये न ठोर ठोर ।
कायरके सग शूरो भागे है पीण भागे है ॥
कहत है बिहारीलाल सुनोहो सयानालाल ।
सगतकी एक रेख लागे है पीण लागे है ॥

(६७)

श्वास एक खाली मत खोयरे खलक बीच ।
कनक कीचड अंग धोयले तो धोयले ॥

अज्ञानको अंधकार कहत गुरु वारवार ।
ज्ञानकी चीराक चित जोयले तो जोयले ॥
चिंतामणि मनुष्यभव मिले नहीं मूंढ तोको ।
प्रभूजीसे प्रेम पियारो होयले तो होय ले ॥
क्षणभगुर देह जामे जन्म सुधारो चाहे तो ।
विजली चमकारे मोती पोयले तो पोयले ॥

(६८)

माडलगढ आय करं माल पूरे वेठ रह्यो ।
दिल्लिहूको याद कर आगरे को जाना है ॥
काबुल तो पीछे रही घोरागढ आय लागो ।
बदनोरको याद कर नागोरका थाना है ॥
लखनउके द्वार आय सायपुरको भूलमत ।
चितोडकी चिन्ताकर इंग्लेन्डको जाना है ॥
सुरतको सोचनकर संयतीमे वासकर ।
लोहारगढ लिया सेति शिवपुरको जाना है ॥

(६९)

क्षमा जगमें सार क्षमासे आदर पावे ।
करी प्रदेशीराय सुख सुरीयाभे पावे ॥
करी हरीकेशी अणगार मोक्षमें आप सिधावे ।
मेतारज मुनीराय अटल सुख आगम गावे ॥
खंदक मुनीके शिष्य पाचमो पदको पावे ।

उतारी मुनी चर्म कर्म कलंक मिटावे ॥
मुनिवर गज सुखमाल छिनमें शिवपद पावे ।
ज्ञान अध्यात्मसार मुझे भी आनन्द आवे ॥

(७०)

एकके पाय अनेक परे, पुनि एक अनेकके पाय परे हैं ।
एक अनेककी चिन्ता हरे पुनि एक न अपनो पेट भरे हैं ॥
एक सोवे सुख सेज पलंगपर एकको भूमि पथारी करे है ।
प्रत्यक्ष देखो पुन्य पापका फल जैसा कीया वैमाही भरे हैं ॥

७१

रोजगार बिना यार-यारसो न करे प्यार ।
रोजगार बिनो नार न्हार ज्युं घूरे हैं ॥
रोजगार बिनो सब गुण सो विलाप जात ।
एक रौजगारसे अवगुन सब दूरे है ॥
रोजगार बिन बात कच्छू बन आवत नाही ।
विना दाम बने नही कच्छू काम बैठो धाम झूरे है ॥
रोजगार बने नाहिं रोज रोज गारी खाय ।
धर्म रोजगार कर तांके दोनों भव सुखपुरे हैं ॥

(७२)

दगा किसिका सगा नहीं है कीया नहीं तो करिया देखो ।
उनका दगा उनके पुगे डूबा उन्हींका घर देखो ॥
तु औराकी करेगा परवस्ती तो तेराभी वसेगा पुरा ।
तुं किसिके लगावेगा छुरी तो तेरेभी लगेगा घुरा ॥

तु करेगा औरका बुरा तो तेरा भी होजायगा बूरा।
कलयुग नहीं करयुग है इस हाथ दे और उस हाथ ले ॥

(७३)

दूति कहे सुनो मनमोहन पॅख विना पंखेरु उडाऊं।
कागका हंस कब्ब्रेकी केसर रेतीपे नाव चला के दिखाऊं॥
पहाडपे मेंडक समुद्रमें दीपक उंटका भार पपई पे लदाऊं।
और ही मोहन वाद वदो तो घासके ढेरेमें आग लगाके-
सोर के गजमें जाय छिपाऊ ॥

(७४)

उंचा मकान फीका पकवान, मोटासा पेट लम्बासा कान। जाडी गादी दीपकका उजाला, केसरका तिलक और कपूरकी माला। छोटासा कपाट बडासा ताला, पांचसोकी पूंजी और साठसोका दीवाला॥

(७५)

भलो जहा भरतार तहां घर नारी नखरी।
पति नहीं परविण जहां घर नारी सखरी॥
जहा घर वहुलो वित्त दत्त देणो नहीं आवे।
जहा घर नहीं है वित्त दत्त देणो चित चावे॥
श्रोता तो सुखी नहीं पंडित नहीं परवीणता।
कवि कलयुग देखके राख सत्यसे लीनता॥

(७६)

गिरी और छूहारा खाय किसमिस निदामसेति चित चाह ।
सेव और सिंवाडा खाय मक्खन मिश्रीसुं खुब मन लादी है ॥
भुट्टा और मतीरा खाय काकडी खरबुजा लाय,
मूला बोर मोगरीसुं खुब प्रीत साधी है ॥
बरफी अकबरी मन जाय खांड रस पेंडा खाय,
मक्खन अरू दुध पी के लौटे बडी गादी है ।
आम्र जाम्बू केला आदि अनेक पदार्थ खाय अेदी ।
कंठ तक आरोगके शाली भूखको भगादि है ॥
नाम धर्यो अल्पाहार पेट भरपूर खाय ।
कहने की एकादशी पण द्वादशीकी दादी है ॥

(७७)

कठासुं पधारिया स्वामीनाथजी बतावो माने ।
कीसो नाम ठाम कीसो बात करो निर्धारजी ॥
किणरा टोलारा साधु गुरुजीको कांइ नाम ।
कितरा सूत्र भणिया तत्व कहोनी विचारजी ॥
और कछू पूछे नाहीं औषध आरोग तन ।
सुखशाता विहार अरु थोडी बहूत आहारकी ॥
कहे मुनी त्रिज्जुलाल सुनो हो सयाना चाल ।
ऐसी हमने चाल देखी देश मारवाडकी ॥

(७८)

कोडे चाल्यो आवे तूं तो मूडे पाटी वांध आडी ।
निकल अठासुं आगो नहीं तो पीटसुं अनार रे ।
घाली भोली लीना पातर आय उभो जम जैसो ॥
मुंडकों मूंडाई शाला क्यों छोडया घरबार रे ।
कपडा मलीन दिसे छोकरा डरावे डाकी ॥
अरे मूढ शुचि को न लेम थारे, जावों मांगो ओसवालके ।
लालचंद कहे हाथ धोया विना रोटी थने देवो नहीं ॥
चीकणी सोपारी जैसा लोक है ढुढाडको ।

(७९)

मेवाड मालवे देश माकड घणा है भाई ।
चेठका भरे छे पूरी निद्रा नहीं आवे रे ॥
माकड मकोडा राते पाडे घणा फोडा ।
डंस मस घणा सो तो चटकीने खावे रे ॥
उत्तराध्ययन दूसरे अध्ययनमाहि ।
पाचमो परिसहो जिन ढोहलो वतायो रे ॥
खूबचंद बोले इम सुनहो श्रावक जन ।
मालवे मेवाड देश किणविध आवे रे ॥

(८१)

गुर्जर भजेको देश तहा मोटा है तीर्थ निशेप ।
सुखी लोक वसे जाके अन्न धन पूर है ॥

आचार विचार कम ऐंठतणी नाही गम ।
साधू संत देखी करे भक्ति भरपूर है ॥
साफसुफ साधु रेहवे कपडाको साबू देवे ।
बोझके उठावण काज नोकर रहै साथमें ॥
कहे कविराज थें तो सुनो हो महाराज राज ।
दूध चाय पीणी हो तो जावो गुजरातमें ॥

(८१)

नाम दयाराम सो तो दया हू न राखे मन ।
नाम हे शितलदास वो तो क्रोधाग्नी जान रे ॥
नाम हे शयानालाल सो तो मै लडाक देख्यो ।
नाम जोधराज सो तो मूल ही अपान रे ॥
नाम हे नैणसुख आंखनकी खोज नहीं ।
नाम मीठालाल सो तो विष केरी वेल रे ॥
नाम दानमल सो तो दान ही जाचत फिरे ।
गुण विना नाम सो तो दीवानो सो खेल रे ॥

(८२)

नाम दीयो मायाराम माया हू न राखे पास ।
नाम हीरालाल सो तो पर्वतफल तैसो है ॥
नाम गोरीलाल सो तो श्याम ही वर्ण पेख्यो ।
नाम कस्तुरचंद वो तो हींग गंध जैसो है ॥
नाम हे गणेश तामें बुद्धिको न दीसे लेश ।

नाम विद्याराम सो तो मूर्ख ही कहाना है ॥
नाम अमरचंद सो तो मैं मरत देख्यो ।
गुन विना नाम सो तो प्रभुता न पाना है ॥

(८३)

योग लेइ योगी भयो जगसुख देखी झूरे जैसे कागो हाटको ।
योग लइ भटकत गटकत सब रस झूठो मोती साच नहीं
पायो कूंदो पाठको ।
औरोंको उपदेश देवे आप पोते रीतो रहवे हास नही पूरे
जैसे दोडायो घोडो काठको ।
ऋषी लालचद कहे शुद्धमति न्याय लहे धोबी केरो कुत्तो
सो तो घरको न घाटको ।

(८४)

योग लीयो जग देखनकूं कच्छ्र योगकी रीत सक्या नहीं पाली ।
केईक रमावत बाल छोकरा केईक चरावत गाय अरू छाली ॥
जान बरातमें संग चले जब भातमें खात सबनकी गाली ।
कहत कवि सुनो रे सज्जन, नानोंको बानो और हालीको हाली ॥

(८५)

भेप लेई गयो भूल शंक नहीं माने मूळ ।
झगडेमें रह्यो झूल हाथ लेई लाकडी ॥
मन नहीं स्थिर स्थोभ लगोहे इन्द्रियोंको लोभ ।
शरीरकी वधाई शोभ उर्ची मेली आखडी ॥

मोक्ष मार्ग दीयो मूंद जगतको खायो खूद ।
मोटी तो वधाई धूंध वन रह्यो बोकडो ॥
भणे मुनि बालचन्द्र सुनोहो विवेकवृन्द ।
ऐसे अज्ञानी साधु दूःख सहे आकरो ॥

(८६)

बने हैं बडे ब्रह्मचारी कुलकाण तज डारी ।
शुद्ध आत्मा विसारी नही आचार विचारी है ॥
झूठा झूठा नियम धारे मिथ्या सब वचन उचारे ।
जुदे जूदे पंथ चाले शुद्धमार्गको विसारी है ॥
दम्भी अभिमानी निंद्या करत विरानि ।
ऐसे अमर विमानी करी आत्माको कारी है ॥
खाली ठकूराई ज्यामें वैरागकी वडाई करे ।
माई माई करके लूगाडकर डारी है ॥

(८७)

जाति तणो अहंकार गर्व कूल बलको तौले ।
देखि रूडो रूप पंडित हो टेडो बोले ॥
तप कर गमावे तेज लाभ हो तृष्णा खोले ।
ठकूराईमें ठाकूर भयो मद छरुकीयो मगरूर ।
ज्ञान कहे मद आठसु शिवसुख रहशे दूर ॥

(८८)

प्रथम क्षमा सार दूसरो लोभ निवारे ।
होवे सरल स्वभाव मान मद दूरो नाखे ॥
हलका द्रव्ये भाव झूठ मुखसे नहीं भाखे ।
तप संयम शुद्ध ज्ञान शीयल अमृतरस चाखे ॥
ए दशविध धर्म आराधता सो गुरु लीजो धार ।
ज्ञान कहे समझायने तिरे सो तारणहार ॥

(८९)

नारीतणा दश बाण कटाक्षका नयण जाण ।
भ्रकुटी चढावे ताण उंचो नीचो जोवे है ॥
अंगको मरोडे तोडे दातसेति हास्य छोडे ।
मुंहको मरोडे और झीणी राग गावे है ॥
उंची करे कास पास बातको बनावे लास ।
स्तनतणी देइ सास घात करे शीलकी ॥
नरककी दीवार नार पुरुषको लेजावे लार ।
ज्ञान कहे ऐसी नार सो तो धार तरवारकी ॥

(९०)

स्त्रिया चरित्र दश लाख लक्ष वार्तो मुख जोडे ।
दिनमें कागथी डरे रातको अहिफण मोडे ॥
उंदरसेती दूर कूदे पकड शेर वश आणे ।
पलंगसेती गीरपडे चढ पर्वत मथ जाणे ॥

रीतोसर देखी डरे भरीयो समुद्र राते तिरे ।
कवि गंग कहे सुनो हो ठाकूरो या स्त्रिया चरित्र एता करे।

(६१)

निपट घुलावे नेण अंगवासंग ज्युं मोडे ।
कडवा बोले बोल प्रीत प्रीतमसे तोडे ॥
धोवे सरवर पाय नीर बहूतेरो लावे ।
चाले भीणी चाल राग रीभालू गावे ॥
नर देखी नखरो करे घर घर फिरे तरूणी ।
कवि गंग कहे सुनो हो ठाकूरो ।
यह लत्तण नारी कूलत्तणी ॥

(६२)

माय लजावत बाप लजावत और लजावत लारली खट्टी ।
खबर पडे दरबारके माणस कूटत माथो ने ताणत लट्टी ॥
सिरे बजारमें जूते लगावत गहना गांठा लेत झपटी ।
तोहि न छांडतपरनारींको पापी कामके वश भये काछ लपट्टी ॥

(६३)

गढके पासे डूंगरी कबही गढको भंग ।
साधूके पास त्रीया जो बैठे तबही वढे कुसंग ॥
तबही वढे कूसंग भंगजो शीलमें होवे ।
नारीके पास बैठके मुर्ख मूलकी जो पूंजी खोवे ॥

शीलादिक आचारको पालणसे मन भांगो।
नाथ कहै रे बालका यो योगको रोग लागो ॥

(६४)

महिला परिचय अति बूरो माडे बहूली बात।
चित चंचल जाणो सही करे शीलकी घात ॥
करे शीलकी घात शंका इसमें मत आणो।
धर्मकर्म से भ्रष्ट रोग बहु काल का जाणो।
उत्तराध्ययन सोलमें भाख गया जिनराज।
लज्या पामें लोकमें चिटलजाय मुनीराज ॥

(६५)

द्रव्यको पायके मूर्ख धर्म कथा न रूची
तीनको तीनको।
जिन एकेक रांड बुलाय नचावत नहीं आवत
लाज जरा जिनको जिनको।
मृदंग कहे धिक है धिक है सुरताल
पुछे किनको किनको—
तब उत्तर राड बतावत है धिक है सब
इनको इनको ॥

(६६)

फांसी जब लग मजहबकी, तब लग होत न ज्ञान।
तुटे फांसी मजहबकी, तब पावत निर्वाण ॥

तब पावत निर्वाण, निरंजनमांहि समावे।
जन्म मरण मिट जाय, फिर योनी नही आवे॥
कहे गिरधर कविराय, बोध बिन फिरे चौराशी।
तब लग हूवे न ज्ञान, मजहबकी जब लग फांसी॥

(९७)

लकडीमे गुण बहूत है सदा राखीये संग।
नदी नाला विषमस्थान जहां तहां बचावत अंग॥
जहां तहां बचावत अंग झपट कूत्तेको मारे।
दुश्मन दावागीर होय तिनकुं पण टारे॥
कहे गिरधर कविराय सुनो हो धुरके भाटी।
जो चाहो दिल चैन तो हाथमें राखो लाठी॥

(९८)

बंदा बहूत न फुलीये मालक चमेगा नाहिं।
जोर जुल्म न कीजीये मृत्युलोकके मांहि॥
मृत्युलोकके मांहि तजरबा तुरत दिखावे।
जेता करे गुमान तेता नर गोता खावे॥
कहे दीन दरवेश भूल मत गाफल अन्धा।
खुदा चमेगा नाहि बहूत मत फुले बंदा॥

(९९)

गुनके ग्राही बहूत है बिन गुन लेत न कोय।
जैसे काग कोकिला शब्द सुने सब कोय॥

शब्द सुने सब कोय कोकिला सबे सुहावे ।
दोनोंका रंग एक काग मनमें नहीं भावे ॥
कहे गिरधर कविराय सुनो हो मनके ठाकूर ।
बिन गुँन लहे न कोय सहस्र नर गुनके ग्राहक ॥

(१००)

फूट बूरी है जगतमें जाने सकल जहान ।
मन्दोदरी लज्या गई गया रावणका प्राण ॥
गया रावणका प्राण भेद बिभिक्षण दिन्हो ।
कुटुम्ब सहित परिवार नाश अपनोंही कीन्हो ॥
कहे गिरधर कविराय लकगढ कैसे तुटे ।
पडे दुश्मनका दाव भेद जब घरका फूटे ॥

(१०१)

सम्पत मवसे सचिये सरे सम्पमे काज ।
जैसे रस्मीकी सुतळी स्थंभत है गजराज ॥
स्थभत है गजराज सपका कारण यही ।
कहा पूणीका ताग कहां मत्तगकी देही ॥
कहे गिरधर कविराय सम्पमे वैरी कम्पत ।
जो होवे पुण्यवान ताँ घर पावे सम्पत—

(१०२)

बनिक अपने बापको ठगत न लगावे वार ।
काम पडे जननी ठगे जहा लियो अवतार ॥

जहां लीयो अवतार मास नव उदरे राख्यो ।
गुरुसे करे विवाद आप पंडित मद दाखे ॥
कहे गिरधर कवि राय बेचे हल्दी अरु धनिया ।
गुरु मित्र ठग लेत वस जहां पहूंचे बनिया ॥

(१०३)

मिश्री घोले झूठकी ऐसे सन्त हजार ।
जहर पिलावे सत्यका वह विरला संसार ॥
वह विरला संसार पठंतर उनका ऐसा ।
मिश्री जहर समान जहर है मिसरी जैसा ॥
कह गिरधर कविराय सुनोरे सज्जन भोले ।
जिसके सिर पैजार झूठकी मीसरी घोले ॥

(१०४)

मित्र विछोवो अति वूरो मत दीजे करतार ।
उनका गुन जब चित चढे वर्षत नयन अपार ॥
वर्षत नयन अपार मेघ श्रावण झरलाई ।
अबके विछडे कब मिलोगे कहो कैसी बन आई ॥
कहे गिरधर कविराय विनति सुनीये एहा ।
कृपानिधि कृपाल मत दे मित्र विछोहा ॥

(१०५)

विन विचारे जो करे सो पीछे पस्ताय ।
काम विगारे आपनो जगमें होत हंसाय ॥

जगमें होत हंसाय चितमें चैन न पावे ।
खान पान सनमान राग रग मनहू न भावे ॥
कहे गिरधर कविराय दुःख कछु टरत न टारे ।
खटकत है दीलमाहि कीये जो बिन विचारे ॥

(१०६)

भाई वेर न कीजीये गुरू पंडित कविराय ।
बेटा बनिता पोरिया यज्ञ करावनहार ॥
यज्ञ करावनहार राजमंत्री जो होइ ।
बिप्र जुवारी वैद्य आपके तपे रसोई ॥
कहे गिरधर कविराय जुगनसे यह चल आई ।
इन तरहसे वैर भूल मत करीये भाई ॥

(१०७)

बेगम गावे गालीया कर कर मनमें कोड ।
बूढी हूई है बेशर भी अब तो ममता छोड ॥
अब तो ममता छोड घणी गाई अरू नाची ।
कहे दास सागर अब नथु न ले पाछी ॥
कर्मराय देशे धका यम कुटसी रोड ।
बेगम गावे गालीया कर कर मनमें कोड ॥

(१०८)

ढुढीये इन्हीं ससारमें पेट भरनके काज ।
गध्धा जीम ममता फीरे, जीम तीतर पर बाज ॥

जीम तीतरपर बाज, लाज इन्हींको नही आवे ।
मेले कपडे पहेर, ज्ञान उलटाही सुनावे ॥
कहे गीरधर कविराय, कहो ये किसके मुंडीया ।
आदि धर्म उठावे पापी नरकमें जाते ढुंढीया ॥

(१०६)

तेरापन्थी धर्ममें, नही दया नहीं दान ।
चुका कहे महावीरने, धरे उन्होंका ध्यान ॥
धरे उन्होका ध्यान, ज्ञान भली वह ही सुनावे ।
आप नरकमें जाय, और कों साथ ले जावे ॥
कहे गीरधर कविराय, सुनोरे उथापन्थी ।
नहीं दया नहीं दान, धर्म है तेरापन्थी ॥

(११०)

विवहा मत्त कर भावरा, खोडे पडसी पाव ।
खीली देशी खाचके, पीच्छे निकला न जाय ॥
पीच्छे निकला न जाय, आथके दोला फीरसी ।
लेसी लाटो लूंट पछे आ किणने केसी ॥
पहेला कहो न मानीयों, अब बैठो पछताय ।
कवि कहे परणो मति, खोड पडसी पाव ॥

(१११)

चिन्ता ज्वाला शरीर वन दव अगि लगि जाय ।
प्रगट धूंआ नहीं देखीये उर अंतर धूधनाय ॥

उर अंतर धूधवाय जले ज्यों काचकी भट्टी ।
जरेगो लोही मांस रह गइ हाडकी तट्टी ॥
कहे गिरधर कविराय सुनो हो मेरे मिन्ता ।
वह नर कैसे जिवन्त जाहि तन व्यापै चिन्ता ॥

(११२)

धोखे दाडिमके सुवा गयो नारियल खान ।
फल खायो पाई सजा फिर लाग्यो पछतान ॥
फिर लाग्यो पछतान बुद्धि अपनीको रोयो ।
निर्गुनियोंके संग बैठ गुन अपनो ही खोयो ॥
कहे गिरधर कविराय कहुं जइये नहीं ओखे ।
चोंच खटकके टुटी सुवा दाडिमके धोखे ॥

(११३)

पूर्वदिशा पलटी अर्क उगे पश्चिमदिशी ।
सदा काल कलयुगे ज्वाला वर्षे शशि ॥
सायर तजे मर्याद अचल गिरि होय चलाचल ।
पावक शीतलता भजे पृथ्वी जो जाय रसतल ॥
शिर सहस्र नाग धुणे कदा, धरा उपर निचे गगन ।
जिनहर्ष ताई न पलटे उत्तम पुरुष बोल्या वचन ॥

(११४)

अंजनै मंजनै चन्दनै चीरैं, दोउ कर कंकणै बाजुं धीर ।
बिंदैली निलाड जवकती भाल, शोभित हारं फुलनकी मालं ॥



घमके घुँघरी[१०] चमके दुल्लारी[११], नाके नकवेश्वरं[१२] कंचुक भौंरी[१३] ।
काजल[१४] टीकी[१५] तंबोल[१६] जोवन शौरी, यह सोले श्रृंगार बनावत गौ

(११५–११६)

यति नाम धरायके इन्द्रियों जीते नाय ।
परनारीके लंपटी रखे भेंसने गाय ॥
रखे भेसने गाय करे बाग वाडी अरू खेति ।
फेरै व्याजीणा दाम तृष्णा अमर जेती ॥
शेतरंज चोपड रमे आठ पहोर करे गद्धमस्ती ।
अणगलीया नीरसे करे स्नान ॥
कहो कीस विध कहिये यति ॥ १ ॥
यति वह ही जानिये इन्द्रिय जीते पांच ।
परनारी माता गीने मुखसे बोले साच ॥
मुखसे बोले साच करे छे कायाकी जयणा ।
आरभ परिग्रह छोड पाले श्री जिनवर वयणा ॥
भ्रमरपणे करे गौचरी दोष न लागे रति ।
इणपरे करे विहार जिन्होंको कहिये यति ॥ २ ॥

(११७)

एक करे अणखोड, दुसरी लाड लडावे ।
तीजी लेवे निद्रा, चोथी कथाका मडप मडावे ॥
अदविच उठे एक, एक पुठ फेरीने बेसे ।
सुनेतो समझे नाय, गुरू सम जावे केसे ॥

घरको धघो छोडके, भेली मीली यह नार ।
कवि कहे समझायने, बाइयों कहीं निकाल्यो मार ॥

(११८)

व्याख्यानकी तैयारी हुइ, रहेनो मीली हजार ।
श्रावक वाणी झेलसी, अपों वातोंने होशीयार ॥
वातोंने होशीयार, करे कोइ छाने छाने ।
केई होय निःशंक, वरजे ताही नहीं माने ॥
सदूगुरु वाणी वागरे, बोले कंठको तान ।
कवि कहे समझायके, बाइयों सुनो व्याख्यान ॥

(११९)

वेश्याको ज्ञान काहा, गधाहुको पान काहा ।
नाजरको नार कांहा, अन्धेको आरसी ॥
मूर्खका मान कांहा, दुष्टका दान कांहा ।
कपटिकी प्रीत कांहा, खोटी उर धारसी ॥
कायरका युद्ध काहा, कृपणका धन कांहा ।
शत्रुका मग कांहा, दगोकर मारसी ॥
कहे कवि रंग, दुष्टहु का छोड संग ।
भावे कहो सिंधी, भावे कहो पारसी ॥

(१२०)

ज्ञानसे ज्ञान आदरसत्कार पावे ।
ज्ञानसे ज्ञान भार लक्ष्मी घर आवे ॥

ज्ञानसे ज्ञान आत्म परात्म तारे ।
ज्ञानसे ज्ञान लोकपरलोक सुधारे ॥
ज्ञानसुन्दर गुण ज्ञानविन सब गुण होत निकाम ।
मम्यक् ज्ञान गुरुमुख लहे सो पामे शिव धाम ॥

(१२१)

लच्छी तोरे काज ठग्या बहु सज्जन प्यारे ।
लच्छी तोरे काज धरतीपे कीये बहुत पसारे ॥
लच्छी तोरे काज हिताहित नही वीचारे ।
लच्छी तोरे काज धर्म कर्म सब दुरे डारे ॥
भुख तीरसा मेने सही, ले नाखी धरती धमन ।
मुंजी कहे लच्छी सुनों, उठ चलो मेरी गमन ॥

(१२२)

प्रथम चरण मेरा यह हरप सन्तन सुखडारे ।
द्वितिय चरण मेरा यह जीवोंका प्रान उभारे ॥
तृतिय चरण मेरा यह शासनके काज सुधारे ।
चतुर्थ चरण मेरा यह खावे खीलावे अरू लेवे लारे ॥
यह चारों चरण काटके, ले नाखी धरती धमन ।
शिर पीट मर जाय मुंढ, नही चालुं तोरी गमन ॥

(१२३)

के गांठसे गीरपरा के काउ को दीन ।
जोरु पुन्छे मुमसे केसे वदन मलीन ॥

नही गांटसे गीरपडा, नही काउको दीन ।
देतों देखे आंखको जिन्हसे वदन मलीन ॥

(१२४)

सज्जन एसा किजिये, जेसे तनकी छाय ।
भेद भाव नहीं चित्तमें, एकरूप हो जाय ॥
मित्र एसा किजिये, जेसे शिरका बाल ।
काटे कटाने फीर कटे, कबुह न छोडे ख्याल ॥

प्रास्ताविक दोहा.

सबसे अधिका प्रेम हे, प्रेमसे अधिका नियम ।
जहा घर नियम न प्रेम हे, तहा घर कुशल न क्षेम ॥१॥
सगत शोभा पाईये, सुनो अकबर बैन ।
वहीज काजल ठीकरी, वहीज काजल नयन ॥ २ ॥
मन मोति गीरवे रखा, प्रभु तुमारे पास ।
भक्ति व्याज नित्यका बढे, नहीं छूटणकी आश ॥ ३ ॥
काच कटोरो नयन धन, मोती और मन ।
इतना तुटा नहीं मीले, पहेला करो जतन ॥ ४ ॥
पापी रे तु पापकर, पापकरीयो गति होय ।
जो तु पा पकरे नहीं तो, नरकमे राखे न कोय ॥ ५ ॥

पाठ कियोसे एक गुन, अनुभव होत हजार ।
तां ते मनको रोकीये, आतमज्ञान विचार ॥ ६ ॥
ठगी ढुंगी आळसु, चौंर निद्रा जुगार (जुवा) ।
एता सत्य बोले नही, कीजे कोड प्रचार ॥ ७ ॥
साधु स्वामी सन्यासीया, भक्त वैरागी मौन ।
जब लग ममता संग नहीं, तब लग सबही सुन ॥ ८ ॥
होकामे हिंस्या घणी, पापतणो है पुर ।
जो सुख चाहो जीवका, तो होका करदो दूर ॥ ९ ॥
ओडीया पीवे मोडीया पीवे, पीवे पुत्त कालालीका ।
ब्राह्मण बनीया होका पीवे, फुटा कर्म लीलाडीका ॥ १० ॥
माया सुखी हाड जीम, श्वान जीम संसार ।
चाट चाटके मर गया, तांही न छोडे लार ॥ ११ ॥
कहना था सो कह दीया, क्या बजाउं ढोल ।
समय एकमें जात है, तीन लोकका मोल ॥ १२ ॥
जम जीवन अपजस मरण, सुनो सयाना लोय ।
कहा लंकपत ले गयो, कहा करण गयो खोय ॥ १३ ॥
हिंमत किंमत होय, विन हिंमत किंमत नहीं ।
ज्यांने आदर करन कोय, रदी कागद जिम राजिया ॥१४॥
नारी निरखे पुरुषको, पुरुष पराइ नार ।
दोनो ही लंपट मीले, वह नकटा वह छीनार ॥ १५ ॥
पार्णीमे पापाण, भींजे पण भेद नहीं ।
मृर्खको उपदेश, देवे पण लागे नहीं ॥ १६ ॥

गत सज्जन और लच मित्र, मजलम मित्र अनेक ।
म्कट में साथे रहै, सौ लाखनमें एक ॥ १७ ॥
चरण धरे चिंता करे, नयन निद्रा नही जौर ।
डुढत फीरे सुवरणको, जाहार कवी अरु चौर ॥ १८ ॥
ग्रंथ पढियो अरु तप तप्यो, सहे न परिसह धर्म ।
केवल तत्त्व पेच्छान विन, मिट्यो न मनको भर्म ॥ १९ ॥
बंध्यासे बंध्यो मीले, छुटे कोन उपाय ।
भगत किजे निर्बंधकी, सो छीनमें देत छोडाय ॥ २० ॥
विद्या गुरुभक्तिसे लहै, फीर करिये अभ्यास ।
भील द्रोणकी भक्तिसे, सीख्यो बाण विलास ॥ २१ ॥
पंडितकी लातों भली, नही मूर्खकी वात ।
इन्ह लातों सुख उपजे, उन्ह वातों दुःख थात ॥ २२ ॥
जल न डुबावे काष्टकों, कहो कहाकी प्रित ।
अपना सिंचा जानके, यह वडोंकी रीत ॥ २३ ॥
सिन्याथा गुण जानके, कपटी निकला काट ।
गुन अवगुन जाना नहीं उलटी पाडी वाट ॥ २४ ॥
वडा कभी डुबावे नहीं, जो पकडे तस बाह ।
नावा सग लोहा रहे, तीरत फीरत जल माह ॥ २५ ॥
जो जा के सरणे वसे, ताको उन्हीकी लाज ।
उलटे जल मच्छली तीरे, बहे जात गजराज ॥ २६ ॥
यौवन था तव रूप था, पुछते थे सब मोय ।

यौवन रूप गयों पछी, वात न पुछे कोय ॥ २७ ॥
चन्द्र विनो क्या चान्दनी, मोती विना क्या हार ।
धर्म विना क्या मानवी, पिउ विना क्या श्रृंगार ॥ २८ ॥
धन संग्रह और पन्थचलन, गिरिपर चढन सुजान ।
धीरे धीरे होत सवी, ज्ञान ध्यान बहुमान ॥ २९ ॥
तीन स्थान संतोष धर, धन भोजन स्त्रनार ।
तीन संतोष न किजिये, दान पठन तपचार ॥ ३० ॥
अन्न पान मकान दे, भय रत्तक ज्ञानी ।
दीचा जनक ससुरा भणी, यह सात पिता सम जाणी ॥ ३१ ॥
शील दान सत्य मधुरता, सुस्वर शब्द विनयवान ।
क्षमा स्थिरता चातुर्यता, नव सिंधा निधान ॥ ३२ ॥
जब लग अंकुश शिरपें रहे, तब लग नर गुणगेह ।
हस्ती अंकुश बाहीरो, शिरपर डालत खेह ॥ ३३ ॥
बिन अंकुश बीगड्या घणा, कुशिष्य कुपुत्र कुनार ।
अंकुश शिरपें नित्य वहे, वह विरला संसार ॥ ३४ ॥
अरे ! विनोला (कपास) बापडा, तुं छे बडोज धीर ।
आप उघाडो हो रह्यो, परको ढांक शरीर ॥ ३५ ॥
गन्ध विनो जिम फुल, जीव विनो जिम देहडी ।
पुत्र विनो गृहकुल, सुनो लागे साहिबा ॥ ३६ ॥
ज्ञान प्रणति संगमें, जो उपयोग रमन्त ।
रस अनगम आतम लहै, अनुभव केल करन्त ॥ ३७ ॥
सज्जन विछेवो कठिन है, सुकत सर्व शरीर ।

धींग् पापी सुकत नहीं, सो भर भग आवत नीर ॥ ३८ ॥
काजल तजे न स्यामता, मोती तजे न श्वेत ।
दुर्जन तजे न कुटिलता, सजन तजे न हेत ॥ ३६ ॥
च्यार मील्या चौसठ हस्या, वीस रहा कर जोर ।
सो बासठ तृप्त हुवे, पंडित करो निछोर ॥ ४० ॥
जो देवे तो वेश्याने दीजे, ब्राह्मणने दीयो नरक पडिजे ।
वेश्याने दीयो वढेगा वंश, ब्राह्मणने दीया जाय निर्वंश ॥ ४
मूर्ख मुख कमान है, वचन कठोरके तीर ।
एसा मारे खेंचके, सो साले सर्व शरीर ॥ ४२ ॥
एक उदरके उपने, जामण जाया वीर ।
महिलावोंके वश हुवे, नहीं शाकमें सीर ॥ ४३ ॥
प्रितम की प्यारी प्रितमसे कनहु न रहत न्यारी ।
प्रितम सुतो प्यारी जागे, प्यारी सुतो पीयु कनहु न जागे ॥४४
कोन चाहे वरसना, कोन चाहे धूप ।
कोन चाहे बोलना, कोन चाहे चुप ॥ ४५ ॥
माली चाहे वरसना, धोबी चाहे धूप ।
शाहा चाहे बोलना, चौर चाहे चुप ॥ ४६ ॥
विद्या वनिता नृप लता, यह नही जाय गिलीत ।
जाहांके संग निशदिन रहे ताहासे ही लपटंत ॥ ४७ ॥
पातर प्रित पतग रग, ताते मदकी तार ।
पाछल दिन अरु अउत धन, जातां न लागे वार ॥४८॥

जो कुच्छ लिखा लिलाटमें, विच्छरन मीलन संजोग ।
दोष किसीको न दिजिये, सुनो सयाना लोग ॥ ७० ॥
दालिद्र घर डेरा हुवे, तो परणी न आवे पास ।
रूपइया हुवे रोकडा, तो सोरो आवे श्वास ॥ ७१ ॥
प्रभु नाम खारो लगे, मीठा लागे दाम ।
दुविधामें दोनो गई, माया मीले न राम ॥ ७२ ॥
लघुतासे प्रभुता मीले, प्रभुते प्रभुता दुर ।
जो लघुता धारण करे, तो प्रभुता हाथ हजुर ॥ ७३ ॥
सोच करे सो शूर है, कर सोचे सो क्रूर ।
सोच कर्यो मुख नूर है, कर सोच्यो मुख धूर ॥ ७४ ॥
समय सज्जन मत चुकीये, कहत कविजन कुक ।
चतुरनके खटके हृदय, समय चुककी हुक ॥ ७५ ॥
चन्दनकी चुगटी भली, गाडी भली न काठ ।
चतुरा तो एकही भली, मूर्ख भली न साठ ॥ ७६ ॥
हुं थाने पुछुं हे लच्छी (लक्ष्मी), तुं सुम घरे क्यों जाय ।
दाता पंडित शूरता, ये तुझ क्यों न सुहाय ॥ ७७ ॥
शूरा घर विधवापणो, दाता दे परहाथ ।
पंडित घरमें शोक है, जिन्हसे करूं न साथ ॥ ७८ ॥
मन मर्यो तन मर्यो, मर मर गया शरीर ।
आशा तृष्णा न मरी, कह गया दास कबीर ॥ ७९ ॥
जहांके घर समता नहीं, ममता मग्न सदैव ।
रमता राम न जाणीये अपराधी नित्यमेव ॥ ८० ॥

पल पलमें करे प्यार, पल पलमें पलटे परा ।
नोलतीयोंकी लार, रज उढवो राजीया ॥ ८१ ॥
हृदय होवे हाथ, तो कुसंगीके वां मीलो ।
चन्दन भुंजगो साथ कालो न लागे कीसनिया ॥ ८२ ॥
सज्जन एसा नहीं किजिये, जेसा चीरमी बोर ।
मुख मीलीयां मीठा रहे, भीतर वडा कठोर ॥ ८३ ॥
सज्जन एसा किजिये, जिसमें लचण बत्तीस ।
भींड पडयो भागे नहीं, देवे अपना शिष ॥ ८४ ॥

(थोकडा)

सोनो कहे सुनो सोनार, उत्तम मेरी जात ।
काल मुखकी कुकसी (चीरमि), तुली हमारी साथ ॥ १ ॥
मैं हूं वनकी लाडकि, लाल हमारो रंग ।
काला मुह जिनसे हुवा, तूली नीचकी संग ॥ २ ॥
भोली चीरमी भावली, भोली कर रही बात ।
जो तेरेमें गुण हुवे तो, जल हमारी साथ ॥ ३ ॥
वन जाइ वन उपनि, वनमें किया वनाय ।
तुतो जले कलकके कारण, मेरी जले बलाय ॥ ४ ॥ ॥८५॥

(थोकडा)

नहीं काडी नहीं केतकी, नहीं फुलनका ढंग ।
हु थाने पुछुं हे मखी, अमर भस्म लगाजत अंग ॥ १ ॥

पेहला थी यहां केतकि, चलगइ दवके संग ।
प्रित निभावण कारणे, भ्रमर भस्म लगावत अंग ॥ २ ॥
एसा था तब क्यों रहा, चलतों इन्हीके संग ।
प्रित लजावन हे सखी, भ्रमर भस्मी लगावत अंग ॥ ३ ॥
दव लागीथी केतकि, भ्रमर नहीथा संग ।
प्रित पालनके कारणे, भ्रमर भस्म चहावत गङ्ग ॥४॥ ॥८६॥

(चोकडा)

आइ लच्छमाणी नही, लाखो कहे सुण भट्ट ।
निश्चय परभव जावणो, के सातों के अट्ट ॥ १ ॥
लाखो भुलो लख गुणो, भोली कर रखो वात ।
कोन जाणे क्या होयगा, उगन्तडे प्रभात ॥ २ ॥
फुलाणी भुले मति, हृदय विमासी जोय ।
आँख तणे फरूकडे, कोन जाने क्या होय ॥ ३ ॥
लाखो अन्धो थी अन्धी, फुलाणी अन्धी महीं ।
श्वास वटाउ पावणो. आवे के आवे नहीं ॥ ४ ॥ ॥ ८७ ॥
शोर अश्व गज केसरी, पय पदम शिर मोड ।
उदयराज केस बने, प्रीत कपट एक ठोर ॥ ८८ ॥
खोटी करणी आचरे, खोटा सुखकी आश ।
खोटी भक्ति हृदय धरे, खोटा प्रभुका दास ॥ ८८ ॥
खातों पीतां प्रभु मीले, तो मुझको भी कहना ।

कष्ट कियामें प्रभु मीले, तो चुपचाप ही रहेना ॥ ८९ ॥

ज्ञान गुजारम किजिये, अपनि अपनी देख।
दुःखी दुनिया भाखली, इसमें मीन न मेख ॥ ९० ॥

अध्यातम लखियो नहीं, न पीनो ममता नीर।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, निष्फल गमायो तीर ॥ ९१ ॥

जगत जिन्होंका दास है, सो है जगके दास।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, मीटी न जगकी आस ॥९२॥

रुप अध्यातम कन्तसे, कबु हि न भीडी बाथ।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, धूले धोया हाथ ॥ ९३ ॥

आत्म अनुभव रस नही चाख्यो, नव नव चाल्यो चाल।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, बन्धी न सरवर पाल ॥९४॥

पाच कामिनी मीलके तोंको, निलमाने दीन रात।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, जाणी नहीं निज जात ॥९५॥

आत्म स्वरूप नहीं ओलख्यो, नही ओलख्यो वपु रूप।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, नहीं छुटो भव कूप ॥ ९६ ॥

जे जे कारण मोक्षना, कारज मान्या तास।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, मीटी न तृष्णा प्यास ॥९७॥

हठयोग साध्या बहुत, आसन समाधि ध्यान।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, पाम्यो नही सद्ज्ञान ॥९८॥

तपकर तन शोषण कर्यो, किया कालो काल।

पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, दम्यो न मन विकराल ॥ ९९ ॥
स्व स्वभाव भुल्यो फीरे, पर पुद्गलकी लार ।
पंडित भयो तो कहा भयो प्यारे, मीली न सुमतिनार ॥१००॥
स्व स्वभावमें रमणता, पर पुद्गलसे रहे दुर ।
सो पंडित जगमें सही, ज्ञानसुन्दर रसपुर ॥ १०१ ॥



अथश्री दानछत्तिसी.

दोहा.

आदिनाथ प्रणमु सदा । जिण दिनो वर्षी दान ॥ प्रथम संयम आदर्यो । उपनो केवळज्ञान ॥ १ ॥ ऋषभ श्रेण गण-धर नमुं । द्वादशांगी ज्ञान ॥ च्यार प्रकारे धर्ममें । प्रथम प्ररूप्यो दान ॥ २ ॥ दुष्कर देणो दानको । भगवतीको ज्ञान ॥ सावधान थइ सांभळो । आगे करू व्याख्यान ॥ ३ ॥ नयो मत प्रगट भयो । बाजे तेरापन्थ ॥ दान उत्थापे बापडा । वह कुमतिका कन्थ ॥ ४ ॥

ढाल—देशी गोपीचन्दके ख्यालकी

मुडोमति देखो । पाप कहेरे पन्थीदानमें ॥ मु० ॥टेर॥ नाम लेइ भगवती केरो । वोधोने वेकावे ॥ शतक आठ उदेशो पाचमो । अमती पाठ बतावेरे ॥ मु० १ ॥ वहांतो कर्मादान बतायो । श्रावक विणजकी वात ॥ अनाथ दुर्वल पन्थी कहे । उदय हुवो मिथ्यात रे ॥ मुं २ ॥ भूखों मरता रक भिखारी । कोइ चिणा भूगडा देवे ॥ कहो पाप लागो किण विधसे । तत्त्व विचारी लेवे रे ॥ मु० ३ ॥ शतक आठ उदेशो छठो ।

भगवतीको नाम ॥ जिणसु पाप कहे अज्ञानी । यह कुमत्यांर कामेरे ॥ मु० ४ ॥ तथा रूपको पाठ देखलो । मत पाखंडि होवे ॥ गुरू जाण पडिलाभे तीणने । एकांत पाप अढारमे जोवेरे ॥ मुं० ५ ॥ आनन्द श्रावक अंग सातमे। नहीं देउ नहीं दीराउ ॥ एसी थाप करे अज्ञानी । जीणरो भेद बताउंरे ॥ मु० ६ ॥ आनन्द पेहला थो अन्यमति। गुरू जाणने देतो ॥ आज पछी देउं नहीं एसे । हुयो हाथ जोडके केहतोरे ॥ मुं० ७ ॥ भगु पुरोहितका दोनों बेठा । वली आर्द्र नामकुमार ॥ उलटा अर्थ बतावे मूर्ख । समजे नहीं गिवाररे ॥ मुं० ८ ॥ दुजे दशमें अंग बतायों । नरक तणो अधिकार ॥ दांन नाम सुर नहीं लीयो सरे। हृदय करो विचाररे ॥ मुं० ६ ॥ परदेशी राजा हुवे सरे । श्रावक व्रतको धार ॥ चोथा भागकी दांन शालाको । खोली चित्त उद्वाररे ॥ मु० १० ॥ श्रावक बहु तूंगीया तणासरे । भगवती अधिकार ॥ भात पाणी बहु निपजे सरे । खुल रहा अभंगद्वाररे ॥ मुं० ११ ॥ चिज चावे नहीं मीलीयां सेति । क्रिया भारी दुखरी ॥ मिलीयांसे पतली हो जावे । भगवती छे मासीरे ॥ मुं० १२ ॥ देनेवालाकी ममता उतरी । दोनों घर बधाइ ॥ मुंजी समके मन नहीं भावे । निन्हव वडे कसाईरे ॥ मु० १३ ॥ दुजे अंग अध्ययन इग्यारे । सावद्य दान निपेधे ॥ आज्ञा चोरी वीतरागकी । वह व्रतीको छेदेरे ॥ मुं १४ ॥ दशमा अंगमे दान निपेधे । वह प्रभुको चोर ॥ निर्लज्जियोंको लाज न आवे । जुठ मचावे शौररे ॥

।।मुं० १५।। कहे वर्षीदान दियो वीरजी। जिणसुं कर्म सताया ।। एसी वात कहेतों अज्ञानी ।ज़रा नहीं शरमायारे ।। मु० १६ ।। मल्लिजिनवर दान देइने। लीनो संयमभार।। एक प्रहर छदमस्थ रया सरे। हुवा केवलके धार रे ।। मु० १७ ।। त्रिविधे २ पापज्ञ त्यागी । फासु भोजन लावे ।। पडिमा धारी छेदसूत्रमें । श्री जिन इम फरमावे ।। मु० १८ ।। तीणने दीयांसु पाप ब॰ तावे । अव्रत रहे गई बाकी ।। जोवो हृदय फुटा कुमत्यांका । चडि मोहकी छाकी रे ।।मुं०१९।। आज्ञा दी प्रतिमाकी जिनवर। जिणमे मागने खावे। आप तीरे दातार जो हुवे। तो चौरसे अधिको थावे रे ।।मुं० २०।। द्रव्य धन तो चौर लेजावे। लारे पाप नही आवे ।। यों माल ले जावे पाप दे जावे । तो विश्वास घाती कहेवावे रे ।।मुं० २१।। जो पाप हुवे पडिमामें। जिनवर किसुं बतावे। अव्रतकी क्रिया नहीं लागे। भगवती आप बतावे रे ।।मु० २२ ।। पाखंड कपट चलावे एसो । अधिकरण श्रावक काया। पाप कहूं इण न्यायसे सरे । भगवतीकी वाया रे ।।मुं० २३।। अधिकरण नाम हे क्रोधको सरे वृहत्कल्प को पाठ। वलि व्यवहार सूत्रमें देखो। मत करो मनका थाठरे ।।मु० २४।। शतक शोले उद्देशो दुजो। आहारक शरीर अधिकार। अधिकरण कहि साधुकी काया। हृदय करो विचार रे ।।मुं० २५।। अंबड श्रावक करे पारणा। सो-सो घर मझार। श्रावक दान देइने हरषे। लाभ तणो नहीं पार रे ।। मुं० २६ ।। शतक बारा उद्देशो पहेलो। संखपोखलि सार।

स्वामिवत्सल कियो भावसे। भव जल तारण हार रे ॥ मुं० २७ ॥ पाछों जबाव न देवे मूर्ख। कुडाकुं हेत लगावे। अव्रतीने दान दीयों पछी। वह आरंभ करे करावे रे ॥मुं० २८॥ यह आरंभ दातारने लागे। जिणसे पाप ठरावों। मन मानि गप्पों क्युं ठोकों। सूत्र पाठ बतावो रे ॥मुं० २९॥ पन्थी साधुने घृत दान दो। जिणसे इन्द्रिय जागी। अथवा कीडा पडे पेटमें। पाप तणो कुण भागी रे ॥ मुं० ३० ॥ श्रावकने थे धर्म सिखावो। थोरी श्रद्धा देवता थावे। मोग भोगवे देवी संघाते। वह पाप सब थोरे आवेरे ॥मुं० ३१॥ जब कहे में गुणजाणि। साधुने आहारज देवों। पच्छे पाप करे जो कोइ। मन करने नहीं लेवेंरे ॥मुं० ३२॥ इम अनुकंपा लावी देवे। दुर्बलने कोइ दान। भलो न जाणे पाप कर्मने। ते श्रावक गुणवान् रे ॥मुं० ३३ ॥ श्रावक व्रती तेहीज जाणो। राखे चित्त उदार। पूर्व भवमें साता उपजाइ। जोवो सनत कुमार रे ॥ मुं० ३४ ॥ राखो उज्वल भावना सरे। नित्यका चटता भाव। पूजो अरिहंत देवने सरे। यहीज मोक्ष उपाय रे ॥मु० ३५॥ सद्गुरू सिख हृदय में धारों। पन्थी दुर निवारों। कुलिंग परिचय त्यागो प्राणी। जो चाहो भवपारो रे ॥मुं० ३६॥

कलश.

नृपसिद्धार्थनन्द कहिये, त्रिशला देवी मायजी। त्रिकाल पूजा करो प्राणि, प्रणमो नित्य नित्य पायजी ॥ देश मरूधर ग्राम तीवरी, वहुत्तर कार्त्तिक मासजी। कृष्ण अष्टमि गयवर जोडि, ढाल दानकी खासजी ॥ इति ॥

॥ अथ श्री अनुकंपा छत्तीसी ॥



दोहा.

समकित रत्न शिरोमणि, जिणके लक्षण पाच। मूढ भेद समजे नहीं, खाली कर रह्या खाच ॥ १ ॥ शम संवेग जाणीये, निर्वेग तीजो होय। अनुकंपाने आसता, नयन खोल कर जोय ॥ २ ॥ जीव अनंता शिर धरी, शिवपुर गया और जाय। सावद्य थापे बापडा, चउगति गोता खाय ॥ ३ ॥ बडो उंठ आगे भयो, पाछल भई कतार। सबही हुवा बापडा, बडा उंठकी लार ॥ ४ ॥

॥ ढाल–देशी घूमरकी ॥

सावद्य अनुकंपा पन्थीडा थापे। श्री वीरजी वचन उत्थापे हो लाल॥ सा० टेर॥ आगे तो एक प्रतिमा उत्थापी, ये प्रगट बाजे टोला हो लाल। दया–दान भिखम उत्थापी, ज्यांरा भर्ममें पडिया केइ हो लाल ॥ सा० ॥१॥ अनुकपाने सावद्य बतावे, जिणसुं दया उठावे हो० । काकरा मेली चोगा चेकावे, ज्याने जरा शरम नहीं आवे हो० ॥ सा० ॥ २ ॥ किसा सूत्रको पाठ बतावो, के मनका कुहेतु लगावो हो० ।

रेणादेवीको नाम लइने, क्युं फोगट जाल फेलावो हो० ॥ सा० ॥ ३ ॥ अनुकंपाको नाम न चाल्यो, थें ज्ञाता नवमें देखो हो० । ' कालुण ' पाठ दीनपणाको, जरा टेक छोडीने झांखो हो० ॥ सा० ॥ ४ ॥ कृष्ण अभय सुलसा ये तीनों, सावद्य अनुकंपा केवे हो० । कारण कार्य न समजे अज्ञानी, ये बीज दुर्गतिको बोवे हो० ॥ सा० ॥ ५ ॥ सुबुद्धि मंत्रिने चित्त सारथी, कर्तव्य सावद्य किधो हो० । जयशत्रु प्रदेशी बुज्यो, ये तो लाभ घणेरो लिधो हो० ॥ सा० ॥ ६ ॥ चोथो लक्षण समकित केरो, निर्वद्य अनुकंपा जाणो हो० । क्षयोपशम भावे कही जिनवरजी, ये तो मूंडन न्याय पीछाणे हो० ॥ सा० ॥ ७ ॥ पाणी मांहे डूबे साधवी, मुनि अनुकंपा लावे हो० । चलता पाणीसे काढे साधवी, श्री वीरजीको हुकम उठावे हो० ॥ सा० ॥ ८ ॥ कहे अज्ञानी आ तो साध्वी, धर्मसूत्रमें चालीयो हो० । गृहस्थी उपर अनुकंपा करणी, तो क्युं न सूत्रमें घालीयो हो० ॥ सा० ॥ ९ ॥ ऑखांरा अन्धाने हृदयरा फुटा, मिथ्या हठ लइ बेठा हो० । जो थांने निर्णय करणो हुवे तो, सद्गुरु चरणज भेटो हो० ॥ सा० ॥ १० ॥ उत्तराध्ययन तेरमें देखो, चित्त ब्रह्मने दाखे हो० । सर्व जीवोरी अनुकंपा करणी, ये मुनि आदेशमें भाखे हो० ॥ सा० ॥ ११ ॥ दुजे आगे छठे अध्ययने, श्री वीर जिनेश्वर भाखी हो० । सर्व जीवोरी अनुकंपा करणी, ये तो आर्द्रकुमार छे साखी हो० ॥ सा० ॥ १२ ॥ अग्निमें बळतो नाग बचायो,

श्री वामादेवीनो जायो हो० । शरणो दई स्वर्ग पहुंचायो, ये तो धरणेंद्र पद पायो हो० ॥ सा० ॥ १३ ॥ वाडा पिंजरा भरीया देखी, नेमप्रभु हित राच्या हो० । जीव छोडाई दीनी वधाई, ये तो दया रग रस माच्या हो० ॥ सा० ॥ १४ ॥ हाथीरा भवमें शुसीयों वचायो, ये तो श्रेणिक सुत कहायो हो० । चोडे पाठ ज्ञाताजी बोले, ये तो कुमत्यांरे मन नहीं भायो हो० ॥ सा० ॥ १५ ॥ मेघरथराजा पौषध कीनो, ज्यारे शरणे पारेवो आयो हो० । करी अनुकंपा जीव बचायो, ये तो शान्तिनाथ पद पायो हो० ॥ सा० ॥ १६ ॥ मेतारज शिर चर्मज बांध्यो पच्चिनी करुणा आणी हो० । दयारंगमें मुनिवर रमता, करी शिवसुन्दरी पटराणी हो० ॥ सा० ॥ १७ ॥ कडवी तुंबी परिठण चाल्या, कीडीयांरी करुणा आणी हो० । धर्मरुचि मुनि मोटका कहीजे, ये तो ज्ञाता सूत्रकी वाणी हो० ॥ सा० ॥ १८ ॥ छे कायाको जीवणो वांछे, मुनिवर फासुक भोजी हो० । शतक पहेले उद्देशे नवमे, निर्णय करे कोई खोजी हो० ॥ सा० ॥ १६ ॥ आवश्यक अर्थ देखो अज्ञानी, थें मोहनिद्राथी जागो हो० । पडतो बालक झेले मुनिवर, ज्यांरो ध्यान रति नहीं भांगो हो० ॥ सा० ॥ २० ॥ पन्थीरे कोइ फांसी दे जावे, कोइ खोले अनुकंपा आणी हो० । दोनों जणांने निन्हव पाप बतावे, या नरकतणी निशानी हो० ॥ सा० ॥ २१ ॥ शतक सोले उद्देशे तीजे, मुनिवर ध्यानमें

नागे हो० । मसा देखीने वैद्य जो काटे, ज्यांने पाप रति नहीं
लागे हो० ॥ सा० ॥ २२ ॥ पडिमाधारी ध्यानमें उभा, कोइ
दुष्ट त्यां अग्नि लगाइ हो० । आप परिसह सहे मुनीश्वर,
नेकले दुजाके तांड हो० ॥ सा० ॥ २३ ॥ गउवोंका वाडामें
अग्नि जो लागी, कोइ कहाडे अनुकंपा आणी हो० । पाप कहे
ग्रन्थी दोनोंमें, एतो जोवो कुमत्यारी वाणी हो० ॥ सा०
। २४ ॥ आचारांग दुजे श्रुतस्कन्धे, थे तो तीजा अध्ययनमें
जोवो हो० । मृषा बोले मुनि दया निमित्ते, क्युं वृथा जन्मज
खोवो हो० ॥ सा० ॥ २५ ॥ प्रश्न व्याकरण छट्ठे अध्ययने,
साठ (६०) नाम फुरमाया हो० । शाता वेदनी जीवरक्षा थीं,
थे तो भगवती सूत्रमें गाया हो० ॥ सा० ॥ २६ ॥ वीरप्रभुने
चुका बतावे, देवे अच्छतो आलो (दूषण) हो० । मृषावा-
दीको क्या पतीयारो, ज्यारो कीजे मुंडो कालो हो० ॥ सा०
॥ २७ ॥ सावद्य अनुकंपा कहे अज्ञानी, गोला भर्मरा भेले
हो० । किसो अध्ययन उद्देशो बतावे, जद शरणो क्रोधको
झेले हो० ॥ सा० ॥ २८ ॥ कुबुद्धि कपटसे बोगा बेकावे,
श्रावक दुःखीयो थावे हो० । हाथ फेरीने आच्छो करदो,
एसा कुहेतु लगावे हो० ॥ सा० ॥ २९ ॥ शीतकाले थे पाणी
ठारो, जिणमें मखि मच्छरादि पडिया हो० । मुहपति में राखी
आच्छा करो छो, पाछा बोले मोहसु नाडिया हो० ॥ सा०
॥ ३० ॥ नही वंछोमें मारणीरो जीवित, पोते पापज टालो
हो० । तीणसु केहे वो रात अन्धारी, श्रावक अन्धो पालो हो०

॥ सा० ॥ ३१ ॥ थोरा पाटसु आखडि पडियो, मूर्च्छा आई तेहने हो० । कपटी न टालो पाप पोतारो, आच्छो नहीं करे एहने हो० ॥ सा० ॥ ३२ ॥ पाणीसे माखी काडी बचावे, पाप टालो इम बोले हो० । नही करे आन्छी श्रावक व्रतीने, बुद्धियंत मनमें तोले हो० ॥ सा० ॥ ३३ ॥ देखो छलइया कपटयो केगे, निर्दयामन भाइ हो० । पाप नही कहेवे जीव बचायो, पुच्छियाँ सेति कसाइ हो० ॥ सा० ॥ ३४ ॥ नेमनाथजीने पार्श्वप्रभुजी, श्रीवीरजिनेश्वर राया हो० । शान्तिनाथजी पूर्वभवमें, ये तो दयारा भंडार खुलाया हो० ॥ सा० ॥ ३५ ॥ सात निन्हवतो आगे हुवा, नहीं कोइ दया उत्थापि हो० । भिखम निन्हव पाचमे आरे, ए तो जड समकितकी कापी हो० ॥ सा० ॥ ३६ ॥

कलश

दया सागर करूणा आगर, जगत रक्षण आप हो । नाग बचायो स्वर्ग पहुंचायो. अश्वसेन नन्दन आप हो । साल बहुतेर कार्तिक मासे, कृष्ण सप्तमी शनिवारजी । करूणारसमें रमत गयवर, करदो बेडा पारजी ॥ १ ॥ इति.



अथ श्री प्रश्न माला

अर्थात्

बत्तीस सूत्रोंके मूल पाठका १०० प्रश्न.

दोहा.

मंगल शासनाधीशजी, मंगल गौतम स्वाम। मंगल गुण जिनतणी, वंन्छित सिझे काम ॥१॥ स्याद्वाद गंभिर, जाणी पुर्व धार। पंचांगी जिणने रचि, खोल दीया तार ॥ २ ॥ नयो पन्थ प्रगट भयो, माने सूत्र बत्तीस। भोला लोकों आगले, पुरे मनः जगीस ॥ ३ ॥ पुछीयो ते इम कहे, प्रकरण टीका मांह। मिलता बोलज को नहीं, तासु मानों नांह ॥ ४ ॥ तीण कारण निचे लिखुं, बत्तीस सूत्रोंका बोल। विनपंचांगी दिजिये, मूल सूत्रथी खोल ॥५॥

॥ ढाल देशी–आदर जीव क्षमागुण आदर ॥

मूल सूत्रथी उत्तर आपो, के करो पंचागी प्रमाणजी टेर ॥ सत्तावनसो कह्या समवायांग, मल्लि मनःपर्यव नाणजी। ज्ञाता अंगे कह्या आठसो, या जिनवर की वाणजी मू० ॥ १ ॥ गुण पटसो कह्या अवधि नाणी, समवायांगनो

सेखजी । दोय सहस्र मल्लिजिनवरके, ज्ञाता सूत्र लो देखजी ॥ मू० ॥ २ ॥ ज्ञातामें कृष्णकी राणी, बत्तिस सहस्रको मानजी । सोला सहस्र कही ते देखो, यों अन्तगडको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ ३ ॥ चार ज्ञान केशी श्रमणके, रायपसेणी जोयजी । तीन ज्ञान उत्तराध्ययन बोले, शुं तफावत होयजी ॥ मू० ॥ ४ ॥ विराधि पहेले देवलोके, भगवती में वातजी । ज्ञातामें गइ इशान देवी, आठोंइ एक साथजी ॥ मू० ॥ ५ ॥ उववाइमें ताप देखो, उत्कृष्ट जोतीषी जायजी । भगवतीमें तांमली तापस, इशानेंद्र कहायजी ॥ मू० ॥ ६ ॥ उववाइ छठे देवलोके, जावे चौदा पूर्वना धारजी । कार्तिक सेठ प्रथम देवलोके, भगवतीमें तारजी ॥ मू० ॥ ७ ॥ तीन करण योगथी टाले, श्रावक कर्मादानजी । उपासकमें हल निवाडा, सगडाल आनंद गुणवानजी ॥ मू० ॥ ८ ॥ वेदनी कर्मकी बारह मुहूर्त, जघन्य स्थिति पन्नवणा जाणजी । तेहिज अंतर्मुहूर्त दाखी, उत्तराध्ययनकी वाणजी ॥ मू० ॥ ९ ॥ भगवतीमें बाल मरणथी, वंदे अनंत संसारजी । ठाणागमें दो मरणकी, आज्ञा दी कीरतारजी ॥ मू० ॥ १० ॥ चौदा पूर्व महाबल भण्यो, भगवती ब्रह्म देवलोकजी । छट्ठाथी नीचे नहीं जावे, उववाइ सूत्र अवलोकजी ॥ मू० ११ ॥ लसण मांहे जीव अनंता, उत्तराध्ययनमें सारजी । प्रत्येककाय पन्नवणा बोले, पंचांगी लो धारजी ॥ मू० ॥ १२ ॥ दोय भाषारी आज्ञा नहि, दशवैकालिक जाणजी । चार भाषा आराधी बोली, पन्न-

अथ श्री प्रश्न माला

अर्थात्

बत्तीस सूत्रोंके मूल पाठका १०० प्रश्न.

दोहा.

मंगल शासनाधीशजी, मंगल गौतम स्वाम। मंगल वाणि जिनतणी, वंच्छित सिझे काम ॥ १ ॥ स्याद्वाद गंभिरता, जाणी पुर्व धार। पंचांगी जिणने रचि, खोल दीया सब तार ॥ २ ॥ नयो पन्थ प्रगट भयो, माने सूत्र बत्तीस। भोला लोकों आगले, पुरे मनः जगीस ॥ ३ ॥ पुछीयो सेति इम कहे, प्रकरण टीका मांह। मिलता बोलज कों नहीं, तीणसु मानों नांह ॥ ४ ॥ तीण कारण निचे लिखुं, बत्तीस सूत्रोंका बोल। त्रिनपंचांगी दिजिये, मूल सूत्रथी खोल ॥५॥

॥ ढाल देशी—आदर जीव क्षमागुण आदर ॥

मूल सूत्रथी उत्तर आपो, के करो पंचागी प्रमाणजी ॥ टेर ॥ सत्तावनसो कह्या समवायाग, मल्लि मनःपर्यव जाणजी। ज्ञाता अंगे कह्या आठसो, या जिनवर की वाणजी ॥ मू० ॥ १ ॥ गुण पटसो कह्या अवधि नाणी, समवायांगनो

लेखजी । दोय सहस्त्र मल्लिजिनवरके, ज्ञाता सूत्र लो देखजी, ॥ मू० ॥ २ ॥ ज्ञातामें कृष्णकी राणी, बत्तिस सहसको मानजी । सोला सहस्र कही ते देखो, यों अन्तगडको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ ३ ॥ चार ज्ञान केशी श्रमणके, रायपसेणी जोयजी । तीन ज्ञान उत्तराध्ययन बोले, शुं तफावत होयजी ॥ मू० ॥ ४ ॥ विराधि पहेले देवलोके, भगवती में वातजी । ज्ञातामें गइ इशान देवी, आठोंइ एक साथजी ॥ मू० ॥ ५ ॥ उववाइमें ताप देखो, उत्कृष्ट जोतीषी जायजी । भगवतीमें तांमली तापस, इशानेंद्र कहायजी ॥ मू० ॥ ६ ॥ उववाइ छट्ठे देवलोके, जावे चौदा पूर्वना धारजी । कार्तिक सेठ प्रथम देवलोके, भगवतीमें तारजी ॥ मू० ॥ ७ ॥ तीन करण योगथी टाले, श्रावक कर्मादानजी । उपासकमें हल निवाडा, सगडाल आनंद गुणवानजी ॥ मू० ॥ ८ ॥ वेदनी कर्मकी बारह मुहूर्त, जघन्य स्थिति पन्नवण जाणजी । तेहिज अंतर्मुहूर्त दाखी, उत्तराध्ययनकी वाणजी ॥ मू० ॥ ९ ॥ भगवतीमें बाल मरणथी, वधे अनंत संसारजी । ठाणागमें दो मरणकी, आज्ञा दी कीरतारजी ॥ मू० ॥ १० ॥ चौदा पूर्व महाबल भएयो, भगवती ब्रह्म देवलोकजी । छट्ठाथी नीचे नहीं जावे, उववाइ सूत्र अवलोकजी ॥ मू० ११ ॥ लसण माहे जीव अनंता, उत्तराध्ययनमें सारजी । प्रत्येककाय पन्नवणा बोले, पचांगी लो धारजी ॥ मू० ॥ १२ ॥ दोय भाषारी आज्ञा नहि, दशवैकालिक जाणजी । चार भाषा आराधी बोली, पन्न-

वणाकी वाणजी ॥ मू० १३ ॥ दशवैकालिकमें चित्रित नारी, नहीं रहे अणगारजी । ठाणांगके पांचमे ठाणे, साधु साध्वियां रहे लारजी ॥ मू० ॥ १४ ॥ रोग आयो औषध नहीं करणो, उत्तराध्ययनमें लेखजी। वीरप्रभुजी औषध कीनो, भगवती लो देखजी ॥ मू० ॥ १५ ॥ दशवैकालिक भोजन करवा, एक भक्तको मांनजी । विकट भोजी तपस्वी साधु, और कल्पसूत्रको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ १६ ॥ अल्पछांटां जावे गोचरी, कल्पसूत्रमें जाणजी । वर्षादमें बिलकुल नहीं जावे, दशवैकालिक वोणजी ॥ मू० ॥ १७ ॥ भगवतीमें अणसण कीधो, कदाचित करे आहारजी । बीजे सूत्रे व्रतभंगको, लागे दोष अपारजी ॥ मू० ॥ १८ ॥ पन्नवणामे स्त्रि वेदजो, स्थितिका पांच आदेशजी । सर्वज्ञका मतमें किम चाले, पिण छे सूत्रका रहस्यजी ॥ मू० ॥ १९ ॥ राजपिंड साधु नहीं लेवे, ठाणांगमें जाणजी । देवकी वहोरायो छे साधुने, अन्तगडकी वाणजी ॥ मू० ॥ २० ॥ पचवीश जोजन उपसर्ग नहीं होवे, समवायांग अतिशय अधिकारजी, अभगनसणादि शूली चडीया, विपाकसूत्र मझारजी ॥ मू० ॥ २१ ॥ दोय साधु समोसरण माहे, बाल्या गोशाले आणजी । लोही ठांण हुवो भगवंतके, भगवती पेहेचाणजी ॥ मू० ॥ २२ ॥ समवायांगमें श्रावकों केरा, चैत्य हुंडीमें होयजी । उपासकसूत्रमें देखो, पाठ न दीसे कोयजी ॥ मू० ॥ २३ ॥ अल्प आयुष्य ठाणांगे, दे दोषित आहारजी। अल्प पाप ने बहुत निर्जरा, भगव-

तीसूत्र मभारजी ॥ मू० ॥ २४ ॥ पाच महानदी नही उतरें, ठाणागरो लेखजी । मार्ग जातां नदी उतरें, आचारांग लो देखजी ॥ मू० ॥ २५ ॥ चौमासामें विहार न करणो, बृहत्कल्पकी साखजी । पांचमे ठाणे विहार करणको, वीतराग गया भाखजी ॥ मू० ॥ २६ ॥ त्रिविधे २ हिंसा नहीं करणी आचारांग दशवैकालजी । नदी उतरे नावमें बेठे, आचारागमें भालजी ॥ मू० ॥ २७ ॥ कल्पसूत्र साधु चौमासे, विगइ नही लेवे वारंवारजी । सूयगडागमें निषेध कीनो, नही लेवे अणगारजी ॥ मू० ॥ २८ ॥ सचित्त मिश्र वस्तु नहीं लेवे, दशवैकालिक जाणजी । आचारागमें लुण जो खावे, आ जिनवरकी आणजी ॥ मू० ॥ २९ ॥ भगवतीसूत्रमें देखो, निभज तीखो होयजी । कडवो कह्यो अध्ययन चौत्तिसे, उत्तराध्ययन लो जोयजी ॥ मू० ॥ ३० ॥ मृषावादका त्यागज कीना, दशवैकालिक जाणजी । आचाराग 'मृगादिक' ताइ, जुठ बोले दया आणजी ॥ मू० ॥ ३१ ॥ समवायागे तेविश तीर्थकर, सूर्य उग्यो केवळज्ञानजी । नेमिश्वर पाछले पहोरे, दशाश्रुतस्कंध पेच्छाणजी ॥ मू० ॥ ३२ ॥ सूर्य उगता ज्ञान उपनो, तेविश तीर्थकर जाणजी। पाछले पहोरे मल्लि जिनवर, ये ज्ञातासूत्रकी वाणजी ॥ मू० ॥ ३३ ॥ दश प्रकारे वैयावच्च बोली, उववाइमें लेखजी । हरिकेशीकी वैयावच्च करतां, जब ब्राह्मण हणीया देखजी ॥ मू० ॥ ३४ ॥ प्राणभूत जीव सत्वने,

दुःख नहीं देणो कोयजी । प्रत्यक्ष मांहे ब्राह्मण हणीया, वैयावच्च कीणविध होयजी ॥ मू० ॥ ३५ ॥ श्री ठाणांगे मल्लि जिनवर, दीक्षा लिनी जण सातजी । छसो जण साथे निकल्या, आ ज्ञातासूत्रकी वातजी ॥ मू० ॥ ३६ ॥ मल्लि जिनने केवळ उपन्यो, पछी मंत्री दीक्षा जाणजी । सात जण साथे दीक्षा, आ ठाणांगकी वाणजी ॥ मू० ॥ ३७ ॥ पशु पिंड रहित हो स्थानक, उत्तराध्ययन न रहे अणगारजी । साधु साध्वी भेला रहे, ठाणांगसूत्र मझारजी ॥ मू० ॥ ३८ ॥ निषेध ओर प्रशंसा न करणी, सुयगडांग सावद्य दानजी । एकांत पाप कह्यो जिनवरजी, ओर भगवतीको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ ३९ ॥ नन्दन वन पांचसो योजनको, जंबुद्विप पन्नति वायजी । बलकुट सहस्र जोजनको, तेहमें केम सामायजी ॥मू० ॥ ४० ॥ पांचसो जोजनका चोड दाख्या, गजदंता दोय जाणजी । उपर कुट सहस्र जोजनको, जंबुद्विप पन्नति आणजी ॥ मू० ॥ ४१ ॥ ऋषभ कुटको पहूलापणो, आठ जोजनको मूलजी । पाठातर बारा जोजनको, जंबुद्विप पन्नति अनुकुलजी ॥ मू० ॥ ४२ ॥ अर्द्ध भरतकी जीवा दाखी, जंबुद्विप पन्नति मझारजी । नव सहस्र सातसो अडतालीश, बारा कला विचारजी ॥ मू० ॥ ४३ ॥ चोथे अंगे तेहीज जीवा, नव हजारको मानजी । पचांगी विना ते किम जाणे, हृदय आणो ज्ञानजी ॥ मृ० । ४४ ॥ चोथे अगे जघन्य थिति, बत्तीस

सागर विजय विमाणजी । पन्नवणामें इगतीस सागर, जघन्य थिति परिमाणजी ॥ मृ० ॥ ४५ ॥ ऋषभ वीरके वीचे समवायाग, अंतरो कोडाकोड एकजी । बयालीस सहस्र वर्ष छे उणा, जबुद्विप पन्नति लो देखजी ॥ मृ० ॥ ४६ ॥ आधाकर्मी आहार भोगवे, सुयगडाग बोले एमजी । कर्मोंथी लेपे न लेपे, दो वातों मीले केमजी ॥ मृ० ॥ ४७ ॥ भगवती सूत्रमें देखो, आधाकर्मी अधिकारजी । चार गतिको कह्यो पोषणो, रुले वहुत संसारजी ॥ मृ० ॥ ४८ ॥ उणो सहस्र तेतीस सूर्य, चक्षु स्पर्शे चोथे अंगजी । बत्तीस सहस्र एक जोजन अधिको, जंवुद्विप पन्नति रंगजी ॥ मृ० ॥ ४६ ॥ शतक आठ उदेशो दशमो, भगवती अंग जाणजी । पोग्गले पोग्गली कह्यो जीवने, तेहनो सुं परिमाणजी ॥ मृ० ॥ ५० ॥ सोला नाम मेरुका चाल्या, समवायागमें जोयजी । आठमो प्रियदर्शन दाख्यो, चौदमो उत्तर होयजी ॥ मृ० ॥ ५१ ॥ तीमहिज जबूद्विप पन्नति, मेरुका सोला नामजी । आठमो सलोचय चौदमो उत्तम, यों पचांगीको कामजी ॥ मृ० ॥ ५२ ॥ अणआहारी दोसमय स्थिति, पन्नवणा पेखाणजी । तीन समय भगवती बोले, आ जिनवरकी आणजी ॥ मृ० ॥ ५३ ॥ चर्म तीर्थंकर कल्पसूत्रे बयालीस वर्ष दीक्षा संगजी। वयालीस वर्ष झाजेरा, देखो चोथो अगजी ॥ मृ० ॥ ५४ ॥ जीवाभिगम रुचक द्विपको, कह्यो असख्यातो मानजी । ठाम

दुणो संख्यातो आवे, जोवो जिनवरको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ ५५ ॥ मेरु करंड अडतीस सहस्रको, समवायांगमें होयजी । तेहिज छत्तीस सहस्र बतायो, जंबुद्विप पन्नति जोयजी ॥ मू० ॥ ५६ ॥ इगसठ सहस्र जोजनको जाणो, समवायांग दुजो करंडजी । तैसठ हजार जोजनको देखो, जंबुद्विप पन्नति मंडजी ॥ मू० ॥ ५७ ॥ नव हजार नवसो जोजनको, नन्दनवन चोथे अंगजी । चौपन जोजन अधिको दाख्यो, जोवो पंचमे उपांगजी ॥ मू० ॥ ५८ ॥ दशमे अंगे बत्तीस इंद्र, अडतालीश पांचमे उपांगजी । चोष्ट कह्या दुजे ठाणे, देखो तीजे अंगजी ॥ मू० ॥ ५९ ॥ सिद्धांकी अवग्गना उववाइ, बत्तीस अंगुलको मानजी । जघन्य सात हाथका सिद्धा, यों भगवतीको ज्ञानजी ॥ मू० ॥ ६० ॥ सिद्धशीलाथी उणो जोजन, सिद्धक्षेत्र भगवती जाणजी । उववाइमें पुरो जोजन, करो पंचांगी परिमाणजी ॥ मू० ॥ ६१ ॥ छट्ठी नरकका मध्य भागसु, घणोदधिनो चरमांतजी ॥ गुणीयासी सहस्र समवायांग बोले, केवलज्ञान अनन्तजी ॥ मू० ॥ ६२ ॥ जीवाभिगम गणती करतां, इठंतर सहस्र जोजन परिमाणजी । पंचांगी विन ते किम जाणो, हृदय आणो नाणजी ॥ मू० ॥ ६३ ॥ रेवती नक्षत्रथी जेष्टातांइ, तारा अट्ठाणुं होयजी । गणती करता सत्ताणु आवे, समवायांग लो जोयजी ॥ मु० ॥ ६४ ॥ नव जोजन घ्राणेंद्रि विषय, पन्नवणामें जाणजी । च्यारपांचसो जोजन दाखी, दुजे उपांग परिमाणजी

॥ मू० ॥६५॥ भगवतीमें पल्योपमको, कुंवा तणो कह्यो मानजी। तेथी फर्क घणेरो दिसे, अणुयोग द्वारको ज्ञानजी ॥मू० ॥ ६६ ॥ असुर अवधि ज्ञान जघन्यथी, पचविस जोजन चौथे उपांगजी। अगुल भाग असंख्याता दाख्यो, देव सुधर्मा चंगजी ॥ मू० ॥ ६७ ॥ बादर तेउ मनुष्य लोकमें, पन्नवणा पहेचांणजी। देखो अग्नि कही नरकमें, उतराध्ययन उगणीसमें जाणजी ॥मू० । ६८ ॥ शौरीपुरमें नेमीनाथजी, कह्या उत्तराध्ययन मझारजी। दीक्षा ले तो कहि द्वारका, मूलथी काडो सारजी ॥ मू० ॥६९॥ शौरीपुर पूर्वमें जाणो, द्वारका पश्चिम जाणजी। राम कृष्ण वंदन कर चाल्या, आ जिनवरकी वाणजी ॥ मू० ॥ ७० ॥ सात कुलकरका नाम बताया, ठाणांग ठाणे सातजी। दश कुलकर कह्या दशमें ठाणे, मूळथी मेलो वातजी ॥ मू० ॥७१॥ आवती उत्सर्पिणी जाणो, कुलकरको अधिकारजी। सातमे दशमे ठाणे देखो, उपरवत् विचारजी ॥ मू० ॥७२॥ सुधर्म इशान कह्यो बरोबर, जीवाभिगम जोयजी। भगवती सूत्रमें देखो, इशान उंचो होयजी ॥ मू० ॥७३॥ तीर्छि गति कही असुरकी, नंदीश्वरद्विप मझारजी। राजधानी असंख्या द्विपे, भगवती अंग विचारजी ॥ मू० ॥७४॥ महावेदना सम्यग्दृष्टी नेरीयां, प्रथम शतके थायजी। शतक अठारे उदेशो पांचमो, अल्प वेदना कहेवायजी ॥ मू० ॥७६॥ बारमो तीर्थंकर कह्यो कृष्णने, अंतगड अधिकारजी। जिनवर

होसी तेरमो देखो, समवायांग सूत्र मझारजी ॥ मू० ॥ ७६
मनुष्य तीर्यंचको काल वैक्रिय अंतर्मुहूर्त पांचमे अंगजी । भी
मुहूर्त चार बताया, जोवो तीजे उपांगजी ॥ मू० ॥७७॥ उ
घन्य आराधिक रत्नत्रयीको, भव करे सत अठजी । नरदे
उत्कृष्टो रहेवे, अर्द्ध पुद्गल मठजी ॥ मू० ॥७८॥ भगवती
निद्रा लेतो, सात आठ बन्धे कर्मजी । तीजा पहोरे निद्रा लेर्ण
उत्तराध्ययनमें मर्मजी ॥ मू० ॥ ७९ ॥ असंघयणी क
नेरीया, जोवो तीजे उपांगजी । उत्तराध्ययन सुयगडां
देखो, मांस खवावे करे तंगजी ॥ मू० ॥ ८० ॥ दी
संघयण कह्या देवता, लेवो पन्नवणा देखजी । असंघय
जाणो देवता, जीवाभिगमको लेखजी ॥ मू० ॥ ८१ ॥ भग
वती असन्नी मनुष्यको, अडतालीस मुहूर्त अवस्थित कालजी
चौवीस मुहूर्तको विरह बतायो, पन्नवणामें भालजी ॥ मू
॥ ८२ ॥ ब्रह्मकल्प वैमाण ठाणांग, रक्त श्याम नीलव
जाणजी । रक्त पेत सुपेत बतायो, जीवाभिगम पिछाणजी ॥ मू
८३ ॥ समवायांग भगवती मांहे, शक्र स्तव अधिकारजी
दोनों पाठमें फर्क जदीसे, पचागी लो धारजी ॥ मू० ॥ ८४ ॥
पांचसो तीस भेद बताया, पुद्गल पन्नवणा लेखजी । चारस
बैयासी दाख्या, उत्तराध्ययन लो देखजी ॥ मू० ८५ ॥ जघन्
किल्विषी सुधर्म जावे, पन्नवणाकी वायजी । भगवती सूत्र
देखो, भुवनपतीमें जायजी ॥ मू० ८६ ॥ साहरण करतो

नहि जाणुं, कल्पसूत्र परिमाणजी। आचारांगमें कहे में जाणुं, आ वीर जिणंदकी वाणजी ॥ मृ० ॥ ८७ ॥ पहेला देव और पछी मनुष्यने, धर्म कह्यो जगनाथजी। अच्छेरामें वाणी निष्फळ, मेलो-मूलके साथजी ॥ मृ० ॥ ८८ ॥ योग वैपारसे हिंसा हुवे, भगवतीमें वातजी। आज्ञा दीनी शुभ योगकी, मेलो उववाइ सातजी ॥ मृ० ॥ ८९ ॥ बाग व्रत लेशु इम बोल्या, आनंद उपाशक जोयजी। सात व्रत उचरीया जाणो, अतिचार बारेका होयजी ॥ मृ० ॥ ९० ॥ वनस्पति संघट्टो नहि करणो, भगवतीमें लेखजी। झाड पकड खाइसु नीकले, आचारांग लो देखजी ॥ मृ० ॥ ९१ ॥ समय मात्र प्रमाद न करणो, उत्तराध्ययन दशमे जाणजी। तीजे पहोरे निद्रा लेणी, छवीशमे अध्ययन परिमाणजी ॥ मृ० ॥ ९२ ॥ गृहस्तीने कठण नहि बोले, निशिथसूत्रमें लेखजी। केशी कहे मूढ तुच्छ प्रदेशी, रायपसेणी लो देखजी ॥ मृ० ॥ ९३ ॥ निशिथमें साधुने वरज्यो, कोइ चीज देखवा जायजी। विपाक मृगापुत्रने गौतम, देख्यो जिनवर वायजी ॥ मृ० ॥ ९४ ॥ गृहस्तीसे परिचय नहि करणो, दशवैकालिक जाणजी। गौतम अंगुली पकडी एमंतो, आ अंतगडकी वाणजी ॥ मृ० ॥ ९५ ॥ छ पुरुष सातमी नारी, अंतगड अर्जुन जाणजी। पुरुष सातमो छे कही नारी, प्रगट पाठ परिमाणजी ॥ मृ० ॥ ९६ ॥ इत्यादि बहु बोल चाल्या, मूल सूत्रमें भालजी। स्याद्वादकी

शैली विना, ते किम जाणे बालजी ॥ मू० ॥ ९७ ॥ जो नहि माने ते पांचांगी, तासुं कहीये तेमजी । मूल पाठथी उत्तर आपो, जब बोले पाधरा एमजी ॥ मू० ॥ ९८ । परम्पराने चले धारणा, टबा अर्थमें जोयजी। मतवालोंकी वातों सुणतां. आश्चर्य होवे मोयजी ॥ मू० ॥ ९९ ॥ लुंकाजी मजुरी करता, चौरीसे उलटो ज्ञानजी । परंपरा तमे केहनी चालो, हृदय आणो ज्ञानजी ॥ मू० ॥ १०० ॥ टबावालो हेला पाडे, में कीयो टीका अनुसारजी । टबो माने टीका नहि माने, वे डूबे डूबावणहारजी ॥ मू० ॥ १०१ ॥ भद्रबाहुस्वामि वृत्ति कीनी, ते बहु कठिण जाणजी । तेनी सुगम करी आचारज, ते वृत्ति परिमाणजी ॥ मू० ॥ १०२ ॥ वादी कहे वह तो पांचांगी, गइ कालमें वितजी । नवी रची आचारज ज्यारी, किम आवे प्रतितजी ॥ मू० ॥ १०३ ॥ सूत्र रह्या " निर्युक्ति " वीती. तेहनो शु परिमाणजी । आचारज रचित नहि मानो, आगे सुणजो वाणजी ॥ मू० ॥ १०४ ॥ तीन छेद भद्रबाहु किना, पन्नवणा श्यमाचारजी। देवऋद्धि गणी नंदी बनाइ, दशवैकालिक सज्जंभव गणधारजी ॥ मू० ॥ १०५ ॥ धर्मधूरधर पूर्व धारी, टीका करता जाणजी । काम पडे जद चोलचालको, शरणों लेवो आणजी ॥ मू० ॥ १०६ ॥ जैन नाम धरावे फोगट, जिन आगमथी दूरजी । तेहिज वाचो पंडित वाजो, कतमोन कुरजी ॥ मू० ॥ १०७ ॥ मूल सूत्र पांचांगी मानो,

दो बहु आदर मानजी । स्याद्वादकी शैली समजो, लो गुरुगमथी ज्ञानजी ॥ मू० ॥ १०८ ॥

कलश.

नाभिरांय कुल वंशभूषण, मरुदेवी मायजी । "अष्टापद" पर आप सिद्धा, गणधर प्रणमे पायजी । एकादशी अषाढ शुक्ल, उगणीश बहुत्तर सालजी । देश मरुधर ग्राम तीवरी, प्रभु जोडी प्रश्नमालजी ॥ १ ॥

॥ इति श्री प्रश्नमाला संपूर्णा. ॥



परम योगिराज श्री श्री १००८ श्री श्री रत्नविजयजी महाराज कृत

॥ विनतिशतक ॥

—※(◎)※—

[देशी वीर सुणो मारी विनति]

वीर सुणो मारी विनति, कर जोडी हो प्रभु करुं अरदासके। तुं समर्थ सायब धणी, मुज मननी हो करुं वात प्रकाशके ॥ वीर ॥ १ ॥ दश द्रष्टान्ते दोहिलो, पाम्यो पंचमे हो नरभव अवतारके। पंच हलाहल झहरमें, कृष्णपची हो बहुलो नर नारके ॥ वीर ॥ २ ॥ तुज शासन सुर तरु जीसो, जयवन्तो हो रहेशे चरमान्तके। आराद्धिक केइ होव से, निःशंक हो प्रभु तुज सिद्धान्तके ॥ वीर ॥ ३ ॥ हुंडासर्पिणी योगथी, तुज धरमें हो निन्हव हुवा सातके। छसो नव वर्षे थया, दिगम्बर हो सहु लोप्या सिद्धान्तके ॥ वीर ॥ ४ ॥ चैत्यवासी विधि चैत्यना, अविधि चैत्यना हो जगडा बहु जोयके। तेरासे वर्ष प्रभु पच्छी, गच्छ चौरासी हो जुदा जुदा होयके ॥ वीर ॥ ५ ॥ दोय सहस्र वर्ष हुवा, लुको लुपक हो मान्या आगम एकतीसके। मुह बंधा तीणमे हुवा, टोले टोले

हो निकल्या त्रानिसके ॥ वीर ॥ ६ ॥ तेरापन्थी अलगा पड्या, टोले टोले हो मांहोमांही जुठके। भेद क्रिया श्रद्धा विषे, करे फोगट हो बहु माथाकुटके ॥ वीर ॥ ७ ॥ गच्छ गच्छान्तर जुवा-जुवा, अन्योअन्य हो बोले जुठ मजुठके। एक बीजाने उत्थापता, मांहोमांही हो करे लुठ मलुठके ॥ वीर ॥८॥ जुठी पटावली बन्धने, माहोमाही हो करे खाचाताणके, वेष क्रिया श्रद्धा जुइ जुइ, जुदा जुदा हो सहुना ऐंनाणके ॥ वीर ॥ ६ ॥ चोरासीथी वदता हुवा, गच्छ तीनसो हो दश पन्थापन्थके। बावीसमाथी छन्नु थया, थापे उत्थापे हो केइ ग्रन्थाग्रन्थके ॥ वीर ॥ १० ॥ अढाई हजार वर्ष हुवा, कलयुगीया हो पेठा शासन मांहके, घटमां गोचा गालता, लजावे हो प्रभु शासन तोयके ॥ वीर ॥ ११ ॥ संवेगी नाम धरायने, दूरो मुक्यो हो संवेगनो रंगके। लोक लजावे बापडा, न्यारा न्यारा हो जाणो सहुना ढंगके ॥ वीर ॥ १२ ॥ वेष क्रिया पदवी तणा, करे जघडा हो माहोमांही जुठके। अन्तानुबन्धी राखी रह्या, खाली हो करे माथाकुटके ॥ वीर ॥ १३ ॥ मार्गानुसारीपणो कीहां, कीहां समकित हो चारित्रनी वातके। कलयुगीया वेला हुवा, माहोमाही हो करे गजयनी वात के ॥ वीर ॥ १४ ॥ देव वीतरागी तु प्रभु, गुरु वीतरागी हो गौतमादिक जोयके। धर्म वीतरागी पामीने, कलयुगीया हो फोगट देवे खोयके ॥ वीर ॥ १५ ॥ मांहोमाही जुठा कहे, लडी

भरता हो केइ वापडा रंकके । जाये थोडुं ताये घणुं, थई पासत्था हो विचरे निःशंकके ॥ वीर ॥ १६ ॥ पापारंभ करावता, सदोषित हो लेता अन्नने पाणके । राखे रखावे परिगरो (द्रव्य), करे आडम्बर हो जुठा तोफानके ॥ वीर ॥ १७ ॥ तीगट कारट कवर गणा, राखे पासे हो नोटों मस्तानके । नामा मंडावे गृहस्तना, कलयुगीया हो जाग्या सेतानके ॥ वीर ॥ १८ ॥ लेखक, पंडित राखे साथमे, नोकर चाकर हो साथे गखे साधके । सिद्ध साधक जोडी मीली, भोला जीवोंने हो पकडे जीम व्याध के ॥ वीर ॥ १९ ॥ जुठा खाना चलावता, तार-टीपालहो लेता वी-पी आपके । मणीयाडार मोकलावता, वज कलदारंग हो बेठा जपे जापके ॥ वीर ॥ २० ॥ चौमासानी वीनती, करे श्रावक हो तव बोल रकम के । बे चार आठ हजारमे, दश हजार हो बोले हरदमके ॥ वीर ॥ २१ ॥ चौमासानी पेदासने, पोते मंगावी हो राखे निजपासके । नगद नारायण भेला करे, भोला जीवोंने हो आपे बहुत्रासके ॥ वीर ॥ २२ ॥ मोटा महन्त कहवावता, करे हुकम हो ओफीसर जेमके । हाकमनीपरे हाकता, नही राखे हो गरीबोंनी रहमके ॥ वीर ॥ २३ ॥ उपधान वोने कडावता, पैसा रोकडा हो तीम उजमणा मांह के, दीक्षा यात्रा तप व्रत में, लुटालुटी हो करे वापडा तांह के ॥ वीर ॥ २४ ॥ ग्रन्थ लिखावा कारणे, ग्रन्थ छापावाहो मांगे पैसा रोक के, लावो लावो करता फीरे, कलयुगीया हो हारे संयम फोकके ॥वीर॥ २५ ॥

गुरु नामे विचरे गणा, श्रावकना हो वीत्त (द्रव्य) हरण हारके। साचा सत् गुरु स्वलप छे, श्रावकना हो जो चित्त हरण हारके ॥ वीर ॥ २६ ॥ धर्मशाला उपासरा, मठ, धारी हो अपणा करी लिधके । खाता पोता राखे तेहना, मुनि पदने हो जलाञ्जली दीधके ॥ वीर ॥ २७ ॥ पाठ-शाळा थापे आपणी, टीप मंडावे हो बापडा गामो गामके। मायाना मजुरीया फीरे गणा, लजावे हो प्रभु पीलोनुं नामके ॥ वीर ॥ २८ ॥ व्याज वीणज करे गणा, भाडा लेवे हो करे धीर उद्धारके। केस लडे कोरट छडे, पीली पलटणना होये छे समाचारके ॥ वीर ॥ २६ ॥ छापा परस्पर छापता, देता चेलेंजो हो लडता मांहोमांहके । लोक लजावे बापडा, पीताम्बरी ही अब बीगडता जायके ॥ वीर ॥ ३० ॥ नहीं करीयो नही करशके, न कुच्छ हो करणाने योगके । पीला कपडा पहेरके, भला हसाया हो कलयुगीया लोकके ॥ वीर ॥ ३१ ॥ रेल विहारी कोइ थया, कोइ पोटलीया हो थया मायाना मजुरके । साधु साध्वीयों साथे विचरता, पाच सात हो साथे होय मजुरके ॥ वीर ॥ ३२ ॥ पाछली रात्री बेला उठीने, गामोगाम करता विहारके । तुज शासन निंदा-वता पीली पलटणना, हो केता लिखुं समाचारके ॥ वीर ॥ ३३ ॥ क्यां श्राण प्रभु ताहरी, क्यां हो श्रा अज्ञान विला-सके। मुनि मतंगज क्यां प्रभु, क्यां कलयुगीया हो श्रा साध्वा भापके ॥ वीर ॥ ३४ ॥ एटलां छतां श्रा बापडा, थइ बेठा

हो अहमींद्र सामान्यके। स्वश्लाघा परनिंदका, परस्पर हो गीणे तृण सामान्यके॥ वीर ॥ ३५ ॥ साधुपणो न पले कदि, रुंडो कह्यो हो प्रभु गृहस्थावासके। उभय भिष्ट महा पापीया, पीला कपडानुं हो वाले सत्यानाशके ॥ वीर ॥ ३६ ॥ साधु-मांथी यति थया, 'यतिओमांथी हो कीयो क्रिया उद्धारके। पीलमांथी कोइ नीकली, करे पीलानुं हो प्रभु जीर्णोद्धारके॥ वीर॥३७॥ जेसी दशा पीलांतणी, तेमी ढुंढकनी हो थइ आ-वारके। स्वामी नहीं कोइ वातमें, तुं जाणे हो तस सर्व प्रकारके ॥ वीर ॥ ३८ ॥ पूर्व विराधी भावथी, पामी धर्म हो नहीं जाणे मर्मके। मर्म विना कर्म न विकटे, धर्म नामे हो पड्या फोगट मर्मके ॥ वीर ॥ ३९ ॥ शाहुकारने देवालीया, भीखारी आ तीन प्रकारके। आराधिकने विराधीका, अप्राप्त हो भीखारी लो धारके॥ वीर ॥ ४० ॥ पूर्व देवाला काढीने, अधुना हो काढे देवाला खुबके। साथे रहीने देखशो तो, देखाशे हो चित्र बेहुबके ॥ वीर ॥ ४१ ॥ पोते पदवीधारी थई, वाडा बांधे हो करे खेंचताणके। एक घर छोडी नीकल्या, घर अनेक हो थया मोटे मंडाणके ॥ वीर ॥ ४२ ॥ उपकरण चवदा कया प्रभु, पण वदता जावे हो जोवो दिनने रातके। परिसह गौचरी दोषमें, नहीं समजे हो आचार्ज आ वातके ॥ वीर ॥ ४३ ॥ संसार तजवो सोहलो, सार तजवो हो दोहिलो थयो आजके। किम तीरसी ते बापडा, जोड जाणी हो विगाडे काजके ॥ वीर ॥ ४४ ॥ बुकसने पडिसेवणा, देश-

कालना हो याना धरे मुंढके । यथाशक्ति खप नवि करे, नवि जाणे हो परमार्थ गुढके ॥ वीर ॥ ४५ ॥ शास्त्र अभ्यास मुक्यो पड्यों, जवरीसे हो हाके जुठ दफाणके । गाम पंडोलीया थइ रह्या, वातोनी स्वाध्याय हो सुतोनो ध्यानके ॥ वीर ॥ ४६ ॥ भवाभिनन्दी बापडा, सुख शैल्या हो पामर थाता जायके । 'बुडाणं बुडियाणं' न्यायथी, कलयुगीया हो दुर्लभ बोधी थायके ॥ वीर ॥ ४७ ॥ माया कपटाइ समाचरे, मान वडाई हो इर्षा मृषावादके । हितशिक्षा माने नहीं, अन्योअन्य हो करे वादविवादके ॥ वीर ॥ ४८ ॥ गृहस्थी परिचय बहुलो करे, स्वच्छंदता हो कायरता तेम के । स्वार्थता बहु कुटिलता, तुच्छ वस्तुपर हो बहु राखे प्रेमके ॥ वीर ॥ ४९ ॥ पासत्थाने कुशीलीया, अहछंदा हो ममत्ता प्रायके । उसन्ना नित्य पिंडिया, व्रत खंडिया हो बहुलो समुदायके ॥ वीर ॥ ५० ॥ पंडित नाम धरावता, मुर्खना हो करे काम तमामके । आचार्य नाम धरायने, अनाचार हो सेवे ठामोठाम ॥ वीर ॥ ५१ ॥ क्रियापात्र क्रिया नवि करे, तपस्वी हो जाय लपसी अनेकके । साधु नाम धरायने, वरतावे हो बहुलो अविवेकके ॥ वीर ॥ ५२ ॥ नवा नवा कायदा घडे, नित्य तोडे हो कलयुगीया आपके । मिच्छामि दोकडो कुंभकारनो, कोण काढे हो जो पापनो मापके ॥ वीर ॥ ५३ ॥ कनक कामनी लालचे, करे चालाकी केइ अपरम्पारके । सर्व प्रकार जाणो तमे, कर तेहनो हो प्रभु जलदी उद्धारके ॥ वीर ॥ ५४ ॥ पांच पांत्रडा तीम

जाणवा, छ छकडा हो सात सातडा तेमके । आठ आठडा नव नवडा कह्या, कलयुगीयाना हो अंक एटला जेमके ॥ वीर ॥ ५५ ॥ आचार्य नाम धरावता, साधु साध्वी हो श्रावक, श्राविका तेमके । नाम धारी नरके जाशे, तुमे भाख्या हो प्रवचनमें एमके ॥ वीर ॥ ५६ ॥ दुकानदारी चलावता, कलयुगीया हो मील्या कर्म संयोगके । लोक पुकारे कीणकने, उत्तम मुनिनो हो प्रायः आज वियोगके ॥ वीर ॥ ५७ ॥ सद्गुरु योग विना प्रभु, अकलावे हो घणा गृहस्थी लोकके । कीणने पासे दीक्षा लेवुं, किम सुधरे हो मारो आ परलोकके ॥ वीर ॥ ५८ ॥ गठामठा निरांकुशा, मम लज्जिया हो तमे भाख्या नाथके । ते तो आज देखाय छे, मील्यो बहुलोहो स्वार्थीयों साथ के ॥ वीर ॥ ५९ ॥ मात पीता सुत नारनों, संग छोडवुं हो सोहीलो जग माहके । पण कुगुरुनी पासनी, द्रिष्टी रागनों हो सग दुःखे तजाय के ॥ वीर ॥ ६० ॥ शस्त्र अग्नि विष सर्पना शत्रुना हो दुःख अेकज वार के । कुगुरु घणा भुंडा कर्या, करे हाणी हो अनन्तिवार के ॥ वीर ॥ ६१ ॥ भस्मी गृह योगथी, घणा उपना हो भस्मराशी समान्यके । चालणीनी परे छेदीयो, तुजशासन हो जे चंद्र समान्यके ॥ वीर ॥ ६२ ॥ ज्ञानना थाना आगें धरी । कलयुगीया हो करे अज्ञानना काम के । केटला लिखु बापजी, छांना नही हो जाणे गामोगामके ॥ वीर ॥ ६३ ॥

योग उपधानादि तणी, क्रिया माटे हो पैसा परिठाय के। सिद्ध साधक जोडी वणी, कलयुगीया हो इम लुटी खायके। ।.वीर॥६४॥ तुज शासन अति उज्वलो, देवताने हो पण प्रीय जणाय के। कलयुगीया डोलोकरे, जोइ सांभली हो बहु खेद कराय के॥ वीर॥ ६५॥ मुनिपुंगव बहु थोडाला, जेना नाम हो सुरलोक गवाय के। पासत्था विचरे गणा, जेना नाम हो दुनीया शरमाय के ॥ वीर॥ ६६ ॥ अे ता पन्थ निलाय जाशे, के सगला हो थाशे एकत्र के। के अनेरो कोइ जागसी, मारी कल्पना हो एवी छे अत्रके॥ वीर॥६७॥ श्रावक पण तेवा माल्या, सरखां सरखा हो कोइ कर्म संयोग के। फुटीनावा नाविक अधिलो, पार पामे हो किम असाध रोगके॥ वीर॥ ६८॥ देव दुकान मंडी रह्या, कारखाना हो तीर्थ कमेटी नाम के। पेसा लेइ करे एकठा, नहीं खरचे हो केइ उत्तम ठामके॥ वीर॥ ६८॥ शेठी मालक थइ बेठा, एक देहरानी हो मीलकत जो होयके। बीजे देहरे खरचे नहीं, बीजे तीर्थ हो नहीं वापरे कोयको॥ वीर॥ ७०॥ व्याज वदारे वाणीया, भरे बेंको हो मीलोमें द्रव्यके। देवाला नीकले तेहना, डुबी जावे हो धर्मादो सर्वके॥ वीर॥ ७१॥ के तो माहोमाही खायने, केइ जगडे हो लडे माहोमाहके। वकील कोरटना घर भरे, सात चेत्र हो प्रभु पडिया सिधायके॥ वीर॥ ६२॥ कान्फरन्स केइ घर भरे, छापखाना हो भरे आपणा पेट के। पाठशाला सिघाया करे,' मील्या प्राणी हो

स्वार्थना शेठके ॥ वीर ॥ ६३ ॥ धर्म धुतारा बापडा, धर्म नामे हो जग धुरति खायके। पोल खुले जो एहनी, कलयुगीया हो सीधा नवि थायके ॥ वीर ॥ ६५ ॥ पेगम्बर केइ उपन्या, दिगम्बर हो केइ पेदा थायके। महात्मा केइ निकल्या, द्रव्य साधु हो केइ दुग रचायके ॥ वीर ॥ ६५ ॥ साधु संसार सुधारता, केइ सुधारता हो श्रावक संसारके। सात क्षेत्र सुधारता, कलयुगीया हो केइ आव्या वारके ॥ वीर ॥ ७६ ॥ घरना जगडा लावीने, नोखे धर्मम हो प्रभु शुं कहुं वातके। हीलना करावे धर्मनी, कलयुगीया हो करे आत्मघातके ॥ वीर ॥ ७७ ॥ निर्बलानी सहायता नवि करे, सबलानी हो करे सार सबालके। उलटो न्याय चाले प्रभु, शासनना हो करे हालहवालके ॥ वीर ॥ ७८ ॥ पांजरापोल्या केइ उपन्या, धर्मादीया हो केइ उपन्या दलालके। स्वार्थीया पिंडपोषीया, शुं थाशे हो आ जगतना हालके ॥ वीर ॥ ७६ ॥ परस्पर जुठा कही, मनःकल्पित हो थापे आपणा बोलके। वलीम कोद्रव नाग जीउ, फोगट हारे हो तुज धर्म अमूल्यके ॥ वीर ॥ ८० ॥ नवीयिक टोला थया, पांचसो हो जिम सुभटनुं वृन्दके। फालचुकी जिम वंदरा, दुःख पामे हो कलयुगीया अन्धके ॥ वीर ॥ ८१ ॥ आपकर्मी अलगा गया, बापकर्मी हो तिम चाल्या जायके। पापकर्मी भेला थया, कोण जाणे हो क्यारे छुटे चलायके ॥ वीर ॥ ८२ ॥ मोक्षमार्ग माहे चालता, अधविचमें हो जे लुंटता जायके। पुद्गलानन्दी बापडा. करे चालाकी हो

मिथ्या आडम्बरी थायके ॥ वीर ॥ ८३ ॥ परोपदेशे पंडिता, पोते पापथी हो भरे आपणो पडके। जड उठावे धर्मनी, गुणहीना हो राखे खुब गमडके ॥ वीर ॥ ८४ ॥ प्रभु तुम नामे लुटीने, धुती खावे हो कलयुगीया आजके। धनलोभी धर्म वेचता, केइ करता हो केटला अकाजके ॥ वीर ॥ ८५ ॥ दशवैकालिक आगमे, आवश्यक हो तेम उत्तराध्ययनके। आचारांग सूयगडायांग भगवती, प्रश्न व्याकरण हो ते बोल्या वचनके ॥ वीर ॥ ८६ ॥ उववाइ उपदेशमालामें, ते भाख्यो हो मुनिमार्ग जेहके। कुगुरु तेहने छीपावता, मुनि लिंगमें हो उडावे स्वेयके ॥ वीर ॥ ८७ ॥ एकलो ज्ञान न फल देवे, तिम एकली हो क्रिया फलहीनके। फल समपुरण तब थावे। मांहोमांही हो दोय होय अधिनके ॥ वीर ॥ ८८ ॥ तेरी तृष्णा तेरा काठीया, त्रिविध तापे हो ताप्या भवजीवके। बावना चन्दन मुनि क्यां. करे ठाड हो हरे ताप अतिवके ॥ वीर ॥ ८९ ॥ कामधेनु सम मुनि कया, काम कुंभ हो सुरमणि सुरवृत्तके। सुगुरु देखीने सभाले, सुदेव हो सुधर्म प्रतित्तके ॥ वीर ॥ ९० ॥ अहो मुनि अहो संयमि, अहो ज्ञानी हो अहो ध्यानी जेह के। अहोत्यागी वैरागीया, नमु नमु हो कर जोडी तेहके ॥वीर॥९१॥ शासन रक्षक देवता, उठोजागो हो थयो सावधानके। साहय करो शासन तणी, अम उपर हो थावो मेहरबानके ॥ वीर ॥ ९२ ॥ युग प्रधान मुनिराजजी, दोय सहस्रने हो चार हुमे जेहके। वीरण तारण

कलीकालमे, भव्य जीवोना हो उपकारक तेहके ॥ वीर ॥
॥ ९३ ॥ शासन पडतो देखने, तव उपन्यो हो दीलमे बहु
दाभ्क के, साहाय करो कोइ जीवने, जिम सुधरेहो स्वपरना
काज के ॥ वीर ॥ ९४ ॥ भसमगृह उतरी गयो, वर्ष पांचसे
हो विक्रनो अन्तके । अढाइ हजार वर्ष तुज धर्मनो, थाशे
महोदय हो इम आप भर्णतके ॥ वीर ॥ ९५ ॥ शासननायक
तुं प्रभु, सुद भेटयो हो में आपो आपके । साहाय करो प्रभु
भली पेरे, मारा मालीक हो मूज मनमे व्यापके ॥ वीर ॥९६॥
सहाय दीवि सिधसेनने ते तारीयों हो प्रभु हेमकुमारके । आ-
र्यरक्षतादि उद्धरया अभयदेवने हो तुं दीनो आधारके ॥ वीर॥
॥ ९७ ॥ साहाय करी जगचन्द्रनी, आनन्दविमलनी हो ते
करी संभाल के, मल्लवादी देवसूरिनी, हीरसूरीनी हो ते की
अति पालके ॥ वीर ॥ ९८ ॥ साहाय करी प्रभु सत्य नि,
यशोविजयनी हो उन्नति करी नाथके । भक्तोना कार्य सूधा-
रवा, प्रभू थारे हो हजार छे हाथके ॥ वीर ॥ ९९ ॥ इम अने-
कने उद्धारया, ते केता हो प्रभु कहु अवदातके । भक्तवत्सल्य
भगवान छो, दीनोद्धारक हो तू छे साक्षातके ॥ वीर ॥१००॥
ज्यारे ग्लाणी हो धर्मनी, त्यारे साहायक हो तू थाय जरुर
के । भक्तोंका शंकट टाळवा, आपो आप हो तू थाय हजुर
के ॥ वीर ॥ १०१ ॥ थोडो कर्यो घणो जाणजे, मारा साथव
हो तमे चतूर सूजानके । विरुद्ध संभालो राजनो, सर्व

व्यापक हो तमे छो सावधान के ॥ वीर ॥ १०२ ॥ मारा मनमें उपनी, तेदी विनती हो करी दीन दयालके । समर्थ आगल बोलतो, ते बातनो हो होय तूरत निकाल के ॥ ॥ वीर ॥ १०३ ॥ ओशीयां मंडन वीरजी, शासनपति हो श्री वीर जिनेन्द के । साधिष्ठायक प्रतिमा प्रभु, करी दर्शन हो पावू आनन्द के ॥ वीर ॥ १०४ ॥ तूज निर्वाण पन्छी प्रभु, वर्ष सीतर हो उपकेशमजार के । रत्नप्रभसूरिश्वरे, दीव्य विधियी हो करी प्रतिष्टा सार के ॥ वीर ॥ १०५ ॥ प्रभु तुम संवत् चौंसिसमो, इगतालीसमो हो ज्येष्ट माम उद्धारके । शुक्लाष्टमि रविदिन भलो, विनति शतक हो स्तवन रच्यो श्रीकारके ॥ वीर ॥ १०६ ॥ महाय करो मुज बाल हा, कर करुणा हो गरीबनिवाजके । दिनो-ध्दारक तुं मिल्यो, सेवकना हो सफला थाय काजके ॥ वीर ॥ १०७ ॥ ओशोया मंडन वीरजी, जयजय हो तुं श्री जिन-रायके । धर्मरत्न निर्मल करो, जिन सुधरे हो सब जैन समाजके ॥ वीर ॥ १०८ ॥

॥ इति विनतिशतक स्तवन समाप्तम् ॥



ॐ

अथ श्री स्तवन संग्रह.

—※(◎)※—

भाग १ लो.

॥ दुहा ॥

मंगल शासनधीसजी; मंगल गौतम स्वांम; मंगल वाणि जिनतणि, वंन्छित सिजे काम ॥१॥ सुत्र सिद्धांतमें रस घणो, म्हासु पियो न जाय; निवले भाजन किम रहे, सिहणी दुध कहाय ॥२॥ प्राकृत संस्कृतमें, पूर्वकरी सज्भाय: अधुनातो कठिण थन्यो, बालक नहीं समभाय ॥३॥ तीर्थ ओसीयांमें गयो, भेट्या श्रीमहावीर; सफल करि निज आतमा, घाली सुत्तमें सीर ॥४॥ स्तुती नित की नवी, आणी हर्ष अपार। रसना पावन म्हारी भई, वाचो नर और नार॥५॥ इति पदम्.

(१) स्तवन पहेला—(देशीफागकि)

हा मूर्ती मोहनगारी, जब देखु जब लागे प्यारी। हरखु मनकुं मोहने खुली केसर क्यारीरे ॥ मूर्ती ॥ टेर ॥ अष्टसहस्र लक्षण के धारी, गुण अनंत नहीं आवे पारी। वर्णन कयो नही जाय. जिभया एक हमारीरे ॥ मूर्ती ॥ १ ॥

अशोक वृत्तकी छाया भारी. भामंडलकी छवी हे न्यारी। तीन छत्र शीर ऊपरे, चमर अधिकारीरे ॥ मूर्ती ॥ २ ॥ स्फटिक सिंहासण प्रभुजी छाजे, देव दुंदुभि नितकी बाजे। वाणी जोजन गामिणी, या घन जीउ गाजेरे ॥ मूर्ती ॥ ३ ॥ बारह प्रकारे परिषदा आवे. अमृतधारा जिन वर्षावे। सुणतो वाणी आपकी, शीतलता थावेरे ॥ मूर्ती ॥ ४ ॥ केइ समकित केइ व्रत आराधे, केइ दिक्षा सिवपुरको साधे। केइ पूजा रचावे आपकी, मानव भव लाधेरे ॥ मूर्ती ॥ ५ ॥ केसर चन्दन कर्पूर लावे, कस्तुरीका किच मचावे। पुष्प सुगंधि मांहने, प्रभु अङ्गीया रचावेरे ॥ मूर्ती ॥ ६ ॥ केइ मुगट केइ हार मडावे, रत्नजडितका चोरखा लावे। कुंडल कंदोरा हेमका, कोइ तिलक चढावेरे ॥ मूर्ती ॥ ७ ॥ अक्षत सोपारी श्रीफळ लावे, अत्तर अगर फुलेल चढावे। धूप दीप बहु विधी करी, मन हर्ष उमावेरे ॥ मुर्ती ॥ ८ ॥ जिन प्रतिमा जिन सारखी दाखी, रायपसेणी सूत्र साखी। वलि भगवती माहने, श्रीजिनवर भाखिरे ॥ मूर्ती ॥ ९ ॥ नरभव केरो लाहो लीजे, द्रव्यभावमे पूजा कीजे। चेत सके तो चेत, दान सुपात्र दीजेरे ॥ मुर्ती ॥ १० ॥ तीर्थ ओसीया मनमें भायो, त्रिसलादे राणीको जायो। चाकर गयवर आपको, चरणोंमे आयोरे ॥ मूर्ती ॥ ॥ ११ ॥ इति पदम् ॥

(२) स्तवन दुजो (देशी पूर्वकी)

हां पास मन लागे प्यारो, भक्तजनोकुं जलदी तारो ॥ (गयवर मुनिकुं जलदी तारो) सरणो लीधो आपको । सफल जमारोरे ॥ पास० ॥ टेर ॥ वाणारसी नगरीको रायो, वामादे राणीको जायो । पार्श्व पारस सारखो, वली रूप सवायोरे ॥ पास० १ ॥ बलतो जलतो नाग बचायो, शरणो देके स्वर्ग पहुंचायो । हुवो धरणेंद्र महाराज, सहस्र फण छत्र रचायोरे ॥ पास० २ ॥ समोसरणकी रचना भारी, तीन गढकी छबि हे न्यारी । रत्न सिंहासण ऊपरे, तीर्थपदधारीरे ॥ पास० ३ ॥ देवता आवे चार प्रकारे, नाटकका लग रह्या झणकारे । भक्ति करे अति भावमे, सुर समकित धारीरे ॥ पास० ४ ॥ वादी मानी जो नर आवे, केइ तो पेहली समकित पावे । नहीं तो हो अपमान, किट होय पाछा जावेरे ॥ पास० ५ ॥ शान्तमुद्रा मोहनगारी, प्रभु पूजा रचावे समकित धारी । देखी छवी आपकी, खूशी केसर क्यारीरे ॥ पास० ६ ॥ द्रव्य भावसे पूजा किजे, नरभव केरो लावो लिजे । राखो उज्वल भावना, जीम कारज सिजेरे ॥ पास० ७ ॥ दान शीयल तप भावना भावो, तिणमे वेगा मुक्ति सिधावो । जन्म मरण मीट जाय, फेर नहीं गर्भे आवोरे ॥ पास० ८ ॥ तीर्थ ओसीयां मुक्ति काजे, सरणे आयो गयवर गाजे । तीन लोकके मांहने प्रभु, डंका वाजेरे ॥ पास० ९ ॥ इतिपद ॥

(३) स्तवन तीजो (देशी ख्यालकी)

पूजाके माही आठ कर्म जावे तूटरे ॥ आज० ॥ टेर ॥ चैत्यवंदन स्तुति करता, ज्ञानावरणी छुटे । दर्शन करता भावे भावना, दर्शनावरणी छूटे ॥ आज० ॥ १ ॥ प्राणभूत जीव सत्वकी, करुणा घटमें लावे । अशाता वेदनी जाय मूलमे, शाताको बंध थावे ॥ आज० ॥ २ ॥ आठ कर्ममें नायक कहिजे, मोहको मोटो फंद । वीतरागकी भावो भावना, कटे कर्मको फंद ॥ आज० ॥ ३ ॥ योग अवस्था ध्यावता सरे, चारित्र मोहको नाश । ध्यावो सिद्धकी अवस्था सरे, तूटे दर्शन मोहनी खास ॥ आज० ॥ ४ ॥ परिणामोंकी लहर चढे जद, कैसा आवे भाव । आउ बांधे सुरतणो सरे, यों पूजा परभाव ॥ आज० ॥ ५ ॥ नाम लेउं प्रभु तुमतणो सरे, अशुभ कर्म जावे दूर । बंध होय शुभ नामको सरे, पामे सुख भरपुर ॥ आज० ॥ ६ ॥ वंदना करतां गोत्र कर्म जो, होय नीचको नाश । उंच गोत्र पदवी मिले सरे, फिर रहुं तुमारे पास ॥ आज० ॥ ७ ॥ द्रव्य चढावे शक्ति फोरवे, इम तुटे अंतराय । भाग्य उदय हो जेहनां सरे, प्रभुकी भक्ति कराय ॥ आज० ॥ ८ ॥ अशुभ कर्मको नाश पुजामें, शुभको बंधज थावे । द्रव्यक्रियासे भाव आवे जद, वेगो मुक्तिमें जावे ॥ आज० ॥ ॥ ९ ॥ स्वरुप हिंसा द्रव्य पूजामें, देखी चमके भोला ॥ भक्ति नफो पिछाणे नाहि, वणरह्या भर्मका गोला ॥ आज० ॥१०॥ पाणी मासु काढे साधजी, कहो केति हिंसा थावे । आज्ञा धर्म

बतायो जिनवर, युं पूजामें भावे ॥ आज० ॥११॥ थोडो पाणी माछियां घेरी, कोइ करुणा दिल लावे । जाय नांखे दरियावमें सरे, पाप विना पुन थावे ॥ आज० ॥ १२ ॥ 'जे आसव्वा ते परिसव्वा,' शुभ योगे संवर होय । 'आचारांग भगवती' मांहे, पाठ काढल्यो जोय ॥ आज० ॥ १३ ॥ रावण गोत्र तीर्थंकर बांध्यो, केइ श्रावक पूजा किनी । आठ कर्मकी होय निर्जरा, भगवंत आज्ञा दिनी ॥ आज० ॥ १४ ॥ दान शियल तप भावना भावो, पूजा खुब रचावो । नरभवकेरो लाहो लिजे, फेर गर्भ नही आवो ॥ आज० ॥ १५ ॥ साल बहोतर तीर्थ ओसीया, गयवरकी अरदास । वीर प्रभूसे विनती सरे, में रहुं आपके पास ॥ आज० ॥ १६ ॥

(४) स्तवन चोथो (देशी पूर्ववत)

दान शीयल तप भावना, पूजामें आवे ॥ टेर ॥ यत्ना सहित जिन घरमें आवे, करुणा घटमें लावे । अभयदान छकायको दे, विधिसे पूजा रचावेरे ॥ पूजा० ॥ १ ॥ अक्षतादि कोई द्रव्यज लावे, प्रभुको आण चढावे । दान सुपात्र शुभ खेत्रमें, हरख २ गुण गावेरे ॥ पूजा० ॥ २ ॥ विषयभोग इन्द्रियोंतणा सरे, नहीं व्यापे तन लेम । शील धर्म इम नीपजे सरे, बण्यो ब्रह्मचारी वेपरे । पूजा० ॥ ३ ॥ घडी महुर्त पच्चख्खाण पोरसी, नियमां पूजामाह । तीजो तप इम जाणजो सरे. कर्म दग्ध हो जायरे ॥ पूजा० ॥ ४ ॥ शान्त-

मूर्ती देखने सरे, आवे अच्छा भाव। निरमल चित्तवृति हुवे मर, येही ज मुक्ति उपायरे ॥ पूजा० ॥ ५ ॥ च्यार प्रकारे धर्म चताव्यो, सो पूजामें आयो। निंदे गेहली टाटडी मरे, भेट कछु नही पायोरे ॥ पूजा० ॥ ६ ॥ मैत्री करूणा मध्यस्थ भावना, चोथी छे प्रमोद। जिन पुजामें च्यारू आवे, लेवे आत्म शोधरे ॥ पूजा० ॥ ७ ॥ अनित्यादिक बारों भावना, जिन घरमाहे भावो। इण भव मांहे लीला लच्मी, परभव मुक्त सिधावोरे ॥ पूजा० ॥ ८ ॥ पूजा करणी जिन आज्ञामें, लेवो सुत्र देख। गोत्र तीर्थकर ज्ञाता माहे, बान्धे जीव विशेषरे ॥ पूजा० ॥ ९ ॥ जन्म राजने केवलीसरे, सिद्ध अवस्था च्यार। प्रतिमा देखी मनमें भावो, पामो भवनो पाररे ॥ पूजा० १०॥ साल बहुत्तर तीर्थ ओसीया, भेट्या श्रीमहावीर। भवसागर तीरवाने गयवर, । आयो तोरी तीररे ॥ पूजा० ॥ ११ ॥

(७) स्तवन पाचमो (देशी पूर्व)

पुन्य आछा किधा, भक्ति करु छु प्रभुजी आपकी ॥ पुन० १ ॥ टेर ॥ तुज भक्ती विन काल अनतो, भम्यो चउगति माह। जो किनि तो लोक देखाउ, अंतर भिज्यो नाहरे ॥ पुन० १ ॥ आ लोकअर्थी जो जश किर्ति, लोक शोभाके काज। बात कही गिति थकीसरे, प्रभु राख हमारी लाजरे ॥ पुन० २ ॥ नीठे नरभव पाम्यो सरे, प्रभु थारे सरीखा देव। मन मारो हरखे घणो मरे मिलि तुज सेवरे ॥ पुन० ३ ॥

तन मन धन अर्पण करे सरे, मिल्यो तुम प्रसाद । जन्म सफल मनमें गणेसरे, कटें कर्म उपाधरे ॥ पुन० ४ ॥ अष्ट प्रकारे सत्तरे भेदे, नवपद पूजा सार । पच इकीस चोसठ भेदसुं, वली नीनाणु प्रकारेरे ॥ पुन० ५ ॥ शान्ति स्नात्र अष्टोत्रीसरे, पुजा विविध प्रकार । करे करावे भावसुं सरे, धन्य तेहनो अवतारे ॥ पुन० ६ ॥ राखो उजवल भावना सरे, नितका चढता भाव । दान शियल तप भावना भावो, येहीज मोक्ष उपायरे ॥ पुन० ७ ॥ साल बहुत्तर तीर्थ ओसीया, जेष्ट पुर्ण मास । शान्ति स्नात्र पूजा भणावे, रत्नविजयजी खासरे ॥ पुन० ८ ॥ धन्य करणी श्रावक तणीसरे, जिनभक्ति मन भावे । अनुमोदे मन मोहे गयवर, हरख २ गुण गावेरे ॥ पुन० १० ॥

(६) स्तवन छठो (देशी पुर्व)

पुर्ण लागि छे प्रभु प्रीतडी, छूटी नही जावे ॥ पुर्ण टेर ॥ दशमा स्वर्ग थकि चव आया, बहोतर वर्ष आउ पाया । भव्य जीवांका कारज सारी, शिवपुर नगर सिधायाजी ॥ छुट० १ ॥ मूर्ति सुर्ती मोहनगारी, जाणुं अबही बोले । और देव जगमांहने सरे, कोण आवे तुम तोलेजी ॥ छुट० २ ॥ प्रीत करे जो रागीयासरे, तुं छे प्रभु वीतरागी । हुं छुं रागी धर्मको मरे. दिठा क्षयोपशम जागीजी ॥ छुट० ३ ॥ मूर्त्ती मेहलमें आप विराजो, हु छुं यह अभीलाषी । निशदिन ध्यान धरुं प्रभु थारो, आत्मा अनुभव भाषी ॥ छुट० ४ ॥ पति वसे परदे-

शर्में सरे, ज्यारी नार सवागण होय । हाजर च्यार अवस्था त्रिचे, में प्रत्यक्ष लीनी जोयजी ॥ छूट० ५ ॥ न जाणुं प्रभु कामण कीधो, चित्त मेरो हर लिनो । नयण निरखतां आणद आवे, जाणे अमृत पिधोजी ॥ छूट० ६ ॥ काल अनंता प्रीत कर्मसे, अब आयो छे छेडो । अधम उधारण विरूद आपको, माने जलदी तेडोजी ॥ छूट० ७ ॥ ज्ञान ध्यान उद्यम नही सरे, नही कल्प क्रियाकी सार ॥ संजम व्रत पिण स्थिर नही सरे, थारा वचनांरो आधारजी ॥ छुट० ८ ॥ निरधनीयाकुं धनवंत करदो, सुण शासन सिरदार । गयवरचंदकी एही विनती, करदो बेडा पारजी ॥ छुट० ६ ॥ इति

(७) स्तवन सातमो (देशी पुर्व)

सरणे आया कि राखो लाज हो, वर्द्धमान जिनेश्वर ॥ मरणे ॥ टेर ॥ में गरीब अनाथ प्रभूजी, और न सुझ आधार। शरणो लीधो आपकोसरे, कर दो बेडा पारहो ॥ व० ॥ १ ॥ दुजा देव अनेरा जगमें, में दीठा सरागी । मूर्ति देखी आपकी सरे, ध्यान घडो वीतरागी हो ॥ व० ॥ २ ॥ चौरासीमें भटक्योसरे, कुगुरुको प्रताप । सूत्र अर्थ नही मानीयासरे, करी अछती थापहो ॥ व० ॥ ३ ॥ एक वचन उत्थापे थारो, रूले अनंत संसार । चौंडे धारे पाठ मरोडे, ते किम पामे पारहो ॥ व० ॥ ४ ॥ सूत्र अर्थ साची पचांगी, नय निक्षेप प्रमाण । स्याद्वादमें धर्म तुमारो, में निश्चय लीनो जाणहो ॥ व० ॥५॥

च्यार निक्षेपा जिनतणा सरे, सूत्रमें वन्दनीक । ठाणायंग अणयोगद्वारमें, नही माने प्रत्यनिकहो ॥ व० ॥ ६ ॥ द्रव्य भावसे श्रावक पूजे, सूत्र लेवो देख । मूर्ख पाप बतावे जिणमें, द्रव्येलीनो भेख हो ॥ व० ॥ ७ ॥ समकित विन चारित्र नही सरे, चारित्र विना नही मोक्ष । कष्ट लोच क्रिया करी सरे, जन्म गमायो फोक हो ॥ व० ॥ ८ ॥ जिनवर वचन आराधलो सरे, मत करो माथाकूट । कोड भवांका किना पातक, छिनमें जावे छूट हो ॥ व० ॥ ९ ॥ सम्यक् ज्ञान दर्शन आराधो, चारित्रसे चित्त लावो । जिन आज्ञा प्रमाण करीने, वेगा मुक्ति सिधावो हो ॥ व० ॥ १० ॥ तीर्थ ओसीयां वीर विराजे, जहाँ मे दर्शन पाया । गयवरचंद कहे साल बहोतर, दिन २ सुख सवाया हो ॥ व० ॥ ११ ॥ इति.

(८) स्तवन आठमो

मरु दे मईया, आदिकरण तोरा जइया ॥ टेर ॥ स्वार्थसिद्ध थकी चवि आया, वनिता नगर वसईया । नाभिराय मरू देवीनन्दन, तीन लोक पूजईया ॥ पूजईयामईया आदिकरण तोरा जईया० ॥ १ ॥ बालपणामें खेल खेलईया, इंद्र व्यवह रचइया । इंद्राणी मिलि मंगल गावे, नाचत थई थई थईया ॥ थईया० ॥ २ ॥ निती कला बताई प्रभुजी, युगल्या धर्म नमईया । च्यार सहस्र संग संजम लिनो, मुक्तिका पंथ चलईया ॥ चलईया ॥ ३ ॥ स्फटिक सिंहासण प्रभुजी सोहे,

चामर छत्र धरईया । सघला पहेली निज जननीको, शिवपुर विच पठईया ॥ पठईया० ॥ ४ ॥ मूर्ति सूर्ती मोहनगारी, नित्य २ ध्यान धरईया । गयवर शरणे आपरे प्रभु, बेडा पार लगईया ॥ लगईया मइया० ॥ ६ ॥

(९) स्तवन नवमो

सेवा दे मईया नेमकुंमर तोरा जईया ॥ सेवा०॥ टेर ॥ समुद्र विजयका नन्द कहीजे, जादव वम धरईया; खेल खेलंता आयुध शालामें, पंचानन संख पुरईया ॥ पुरईया १ ॥ सहस्र गोपीयां कर मनसुवो, होरी फाग मचईया, जबरदस्तीसे कृष्ण मुरारी, राजुल व्याह रचईया ॥ २ ॥ सब जादव मील जान लेइने, जुनेगढ धमईया, वाडा पांजरा भरीया देखी, करूणा नेम धरईया ॥ धरईया ३ ॥ पशु छूडाई गिरिवरजाई, सहस्र पुरुष सगईया; च्यार महाव्रत दिक्षा लीनी, केवल ज्ञान जगईया ॥ जगईया ४ ॥ गीरनार मंडण नेमि जिनेश्वर, पूजो भाव धरईया; गयवरचन्द भाने जिन पूजी, आतमकाज सरईया ॥ सरईया ५ ॥ इति

(१०) स्तवन दशमो

त्रिसलादे मईया, प्यार लगत तोरा जईया ॥ टेर ॥ इंद्रादिक मिल महोत्सव किनो, इन्द्राणी नृत्य करईया । तीन लोकमें भयो उजालो, वृद्धिकरण तोरा जईया ॥ जईया० १ ॥ मस्तक मुगट कानोंमें कुंडल, तिलक लिलाड लगईया । नाय वेरखा रत्न जडतका, खेलत तोरा जईया ॥ जईया० २ ॥

रमजम २ नेवरेया वाजे, ठम २ पॉव धरईया। तीन लोकमें रूप अनोपम, निरखत नयन ठरइया ॥ठरईया० ३॥ दीक्षा लेने तपस्या किनी, केवल ज्ञान जगईया। कारज सारे मोक्ष पधारे, आत्म राम रमईया ॥ रमईया० ४ ॥ मूर्ती सूरती मोहनगारी, ध्यावत् ध्यान धरईया। गणवरचंदकी एही विनती, मोकू ही पार लगईया ॥ लगईया० ५ ॥

(११) स्तवन इग्यारमो (देशी अमवारीकी)

वीर तोरा दर्शनको में आयो, नाथ तोरा दर्शनको में आयो, हे देख छवि हुलसायो ॥ नाथ० ॥ टेर ॥ शांत मुद्रा-मोहनी मूर्ती, दिव्य २ तेज सवायो। दर्शन कोई पुन्यवंत पावे, मे जन्म सफल मनायो ॥ नाथ० १ ॥ मस्तक मुगट रत्न जडतको, कानोंमें कुंडल सोहे। बाह बाजूबंद बेरखा भारी, सुरनरका मन मोहे ॥ नाथ० २ ॥ हेम कडा जडाउ भारी, तो पुणचीकी छवी न्यारी। मोत्यांको हार कंठ विराजित, आ अद्भूत रचना थारी ॥ नाथ० ३ ॥ कंचन वरणी काया थारी, अंगीया रचात्रे भारी। नयन रह्या लोभाय प्रभुजी, हृदये हरख अपारी ॥ नाथ० ४ ॥ भक्ति करे प्रभु भावसे थारी, पूजा विविध प्रकारी। दूर देशका आवे जात्रु. वंदे छे नर नारी ॥ नाथ० ५ ॥ पतीव्रता जो होवे नारी, जीवत और न चावे। मेरे तो तुं जबर धणी है, और नहीं मन भावे ॥ नाथ० ६ ॥ तु चिंतामणी कल्पवृक्ष हे, चित्रावेल वखाणुं। कामधेनु कामकुम्भ समा, रसायन मोक्षकी जाणू ॥ नाथ० ७ ॥ साल व-

होत्तर नवमी जेष्टकी, शुक्र सोम जुहारो । जन्म सफल जिण प्राणी भेट्यो, ओसीयां तीर्थ थारो ॥ नाथ० ८ ॥ जो भवि-प्राणी आराधे प्रतिमा, सो जिनवरने आराध्या । गयवर कहे ते कर्मोंथी छुट्यो, आत्मकारज साध्या ॥ नाथ० ९ ॥

(१२) स्तवन बारमों (देशी बीणजाराकी)

नय सात उतारुं सारी, जिन बिंबकी जाऊं बलीहारी ॥ टेर ॥ नैगम नय मन्दिर आयो, जिन बिंब देख उलसायोजी । प्रणाम करु चित्तचारी ॥ जिन० १ ॥ संग्रह नय चित्त संभारी, अरिहतका गुण भारिजी । प्रभु अद्भूत् रचना थारी ॥ जिन० २ ॥ व्यवहारे वंदना कीधी, साधन भावार्थ सिधीजी । लौकिक व्यवहार मजारी ॥ जिन० ३ ॥ परिणाम ऋजु सूत्र लीनो, जिण चित्त एकाग्र किनोजी । जिन भक्ति के लागो लारी ॥ जिन० ४ ॥ शब्द संपूर्ण जाणे, अरिहतका गुण पिछाणेजी । मिली निमित्त कारण एक तारी ॥ जिन० ५ ॥ समभिरूढ छठो जाणो, चेतनता वीर्य पीछाणेजी । शुद्ध आत्मा आप विचारी ॥ जिन० ६ ॥ शुद्ध नय सातमी जाहारी, प्रगटी चैतनता भारीजी । मिली शुक्ल ध्यानकी मारी ॥ जिन० ७ ॥ इम सात नय वखाणी, जिन सारखी सूत्रमें आणीजी । नित वंदे नर और नारी ॥ जिन० ८ ॥ जिन बिंब देखी हुलसायो, जाणे अमृत प्यालो पायोजी । मारी प्रीत लगी एक तारी ॥ जिन० ९ ॥ सरागीमें मोहनी जागे,

नहीं दमीयो,-प्रभु काल अनंतो इम गमीयो ॥ अहो० ८ ॥ में कुगुरु कुदेवा संगे राच्यो, मिथ्या मत मोहमें माच्यो । जद में कर्मा संग नाच्यो,-तुम सरीखो धणी में नहीं जान्यो ॥ अहो० ९ ॥ हो पुद्गल सुखमें अभिलाषी, विधिपूर्वक समकित नहीं चाखी । लही तदपी यत्ना नहीं राखी,-सांप्रतनो हे प्रभु तुं साखी ॥ अहो० १० ॥ शुद्ध मनसे प्रभु तुम नाम रटे, छिनमें पुराकृत पाप कटे । शिवनगरी होवे अच्च पटे, तिया काल अरीनो काउ न वटे ॥ अहो० ११ ॥ चंद चकोर न चित्त धसीयो, पुष्पअलीके मन वसीयो । मयूरमग्न घनको रसीयो, इणविध प्रभु तुं मेरे दिल वसीयो ॥ अहो० १२ ॥ मूर्ती प्रभु मोहनगारी, सुरती अति लागे प्यारी । नीरखत नयण दिया ठारी,-में वार २ जाउं बलीहारी ॥ अहो० १३ ॥ जो शुभ नजर साहब तेरी, तो मानो वीनती मेरी । काटो भर्म कर्म वैरी,-प्रभु पुनरपि नहीं पडे भव फेरी ॥ अहो० १४ ॥ वीर तीर्थ ओसीयां ठाइ, साल बहोत्तर सुखदाई । गयवरचंद वीनती गाई, प्रभु भाग उदय संपत्ति पाई ॥ अहो० १५ ॥ इति

(१५) स्तवन पन्नरमो (देशी नागजीरी)

नाथजी टुक एक नयन निहालरे, काई शरणे आयो साहब हो ना० ॥ १ ॥ ना० सेवकनी अरदासरे कोई, अर्जी पे हुकम लगायदो हो ना० ॥ २ ॥ ना० मस्तक मुगट जडावेरे काई, काने कुंडल जल हले हो ना० ॥ ३ ॥ ना० गले

मोतीयनकी मालरे कांई, बीचमें लालो शोभतिहो ना० ॥४॥ ना० बाजूबंद सोहे बांहरे कांई, नीचे सोहे बहरकाहो ना० ॥ ५ ॥ ना० कडा सोहे दोय हाथरे कांई, पुणची रत्न जडाचकीहो ना० ॥ ६ ॥ ना० मुदडीया कर मांहरे कांई, कंदोरा कम्मर विपेहो ना० ॥ ७ ॥ ना० आगी रत्न जडावरे कांई, नयन लोभाया निरखतांहो ना० ॥ ८ ॥ ना० फूलां हंदो गेंदरे कांई, शोभे हिवडा मांहनेहो ना० ॥ ९ ॥ ना० केसर चंदन कपुररे कांई, कस्तुरी किच मचावीयाहो ना० ॥ १० ॥ ना० अत्तर अबीर फ़ुलेलरे कांई, पुष्प सुगधी आपेरहा ना० ॥ ११ ॥ ना० धूपदीपादिक जाणरे कांई, भक्त भक्ति करे भावसुं हो ना० ॥ १२ ॥ ना० जननी जायो एकरे कांई, दुजी माता नही भग्तमेंहो ना० ॥ १३ ॥ ना० और घणाई देवरे कांई, बात कहुं देखी जीसीहो ना० ॥ १४ ॥ ना० कोई हाथ हथीयाररे कांई, धनुपबाण लिया खडा हो ना० ॥१५॥ ना० कोई हाथ तलवाररे कांई, देख्या कंपे कालजो हो ना० ॥ १६ ॥ ना० केई त्रिशूल भाला हाथरे कांई, कामचेष्टा कर रयाहो ना० ॥ १७ ॥ ना० केईक जपनी हाथरे, कांई स्मरण करे कोई औरकोहो ना० ॥ १८ ॥ ना० हांसीवाली वातरे कांई, योनिमें लिंग थापियो हो ना० ॥ १९ ॥ ना० कोइ मांगे वली ने भोगरे कांइ, पंचइंद्रीना घातीया हो ना०॥२०॥ ना० कहेता न आवे पाररे कांई, राग द्वेषमें पचरयाहो ना०

॥ २१ ॥ ना० मे देख्या वीतरागरे कांई, शरणो लीधो वायरोहो ना० ॥ २२ ॥ ना० बीजे तीजे उपांगरे कांई, जिनप्रतीमा जिन सारखीहो ना० ॥ २३ ॥ ना० छोडी प्रतीमा सेवरे कांई, अन्य देव ध्यावत फिरेहो ना० ॥ २४ ॥ ना० मे गरीब अनाथरे कांई, तुम शरणा वीन भटकीयोहो ना०॥२५॥ ना० अंतराय करी दुररे कांई, चरण तुमारा भेट्याहो ना० ॥ २६ ॥ ना० साल बहोतर मांहरे कांई, तीर्थ ओसीया आयनेहो ना० ॥ २७ ॥ ना० आवागमन मिटायरे कांई, गयवरचंदने तारजोहो नाथजी० ॥ २८ ॥

(१६) स्तवन मोलमो (देशी पनजीगी)

मासुं मुंढे बोल २ आदेश्वरवाला । कांई थारी मरजीरे ॥ मासुं० ॥ टेर ॥ मातामरुदेवी वाट जोवता, इत्तने वधाई आईरे । आज ऋषभजी उतरया बागमें, सुण हरखाई ॥ मा० १ ॥ नाय धोयने गज असवारी, करी मरुदेवी मातारे । जाय बागमें नन्दन निरखी, पाई सातारे ॥ मा० २ ॥ राज छोडने निकल्यो रीखवा, आ लीला अदभुतीरे । चमर छत्र ने और सिंहासण, मोहनी मूर्तीरे ॥ मा० ३ ॥ दिनभर बेठी वाट जोवती, कद मारो रिखबो आवेरे । केहती भरतने आदिनाथकी, खबरा लावोरे ॥ मा० ४ ॥ किसी देशमें गयो वालेश्वर, तुज वीना वनिता सूनिरे । वात कहो दिल खोल लालजी, केउ वनीया मुनीरे ॥ मा० ५ ॥ रहा मजेमें हे सुखसाता, खुस

६ ॥ कारण कारज द्रव्यादि चार, कर्ता कर्म क्रिया लो धा
॥ जि० ७ ॥ उपनेवा विगेवा धुवेवा जाण, हियगय उपदे
तीनों पीछान ॥ जि० ८ ॥ द्रव्याणु गिणतांणु कथाणुयोग
चोथो चरणाणुं जाणे लोग ॥ जि० ९ ॥ कठण सूत्र जाणय
पूर्वधार, घणा आचारज किया उपगार ॥ जि० १० ॥ टीक
निर्युक्ति चुर्णी जाण, भाष्य दीपिका अवचूरी वखाण ॥ जि
११ ॥ लिंग काल विभक्ति प्रमाण, दशमे अंग सोला बोलों
कों जाण ॥ जि० १२ ॥ इत्यादिक जो सूत्र जाण, आराधि
पद तवही जाण ॥ जि० १३ ॥ अणपढ सूत्र भणे अरे, अर्थ
तणा अनर्थ करे ॥ जि० १४ ॥ गुरुगम विन सूत्र भणे कोय
निशिथमें चोमासी प्रायछित होय ॥ जि० १५ ॥ इंद्रादि
केइ आवे राय, सूण वाणी अति हरषीत थाय ॥ जि० १६
क्रोध मान मद लोभकी जाल, सुणतां शितल होवे ततका
॥ जि० १७ ॥ एहीज मंत्र तंत्र जाण, भूत पिशाच वसीकर
व्याख्यान ॥ जि० १८ ॥ वाणी सूणतां जीव अनेक, भवस
गर तिर गया लो देख ॥ जि० १९ ॥ नंदिसूत्र मांहे अधिक
र, अनन्त जीव आराधिक पाम्या पार ॥ जि० २० ॥ नम
स्कार कीयो गणधार, भगवती सूत्र आदि मझार ॥ जि
२१ ॥ जिन वचनारी राखो प्रतित, अष्टसिद्धि नवनिद्धि नि
॥ जि० २२ ॥ लिखावो छपावो भंडार करो, ज्ञानावरण
तूटे परोरे ॥ जि० २३ ॥ वहु मान देइने पुजा करो, संस

समुद्र वेगा तिरोरे ॥ जि० २४ ॥ मारे तो एक एहिज आधा
र, गयवर वंदे वारंवार ॥ जि० २५ ॥

(१८) स्तवन अढारमो

तुमारे कदमका शरणा, मूझे भी याद तो करणा ॥
टेर ॥ भटकायो चोरासी मांही, वात कहूं कठा ताही । भेटि-
या अब तोय चरणा ॥ तु० १ ॥ सेवक हुं आपका बंदा,
मिटा दो चोरासी फंदा । जरा शुभ नजर तो करणा ॥ तु०
२ ॥ तेरे बहु सेवक हे सेवा, मेरे तु एक हे देवा । अरज पे
ध्यान तो धरणा ॥ तु० ३ ॥ अवगुण वहु वोलिया थारा,
उन्हीको छिनकमें तारा । रागीपर देर क्यों करणा ॥ तु० ४॥
ध्यानमें विंबतो दिठो, लागे-अमृतसे मिठो । हिया मेरा आज
हरखाणा ॥ तु० ५ ॥ उभो या कर रयो अरजी, में हु एक
मोचका गरजी । गौर अब अर्जपे करणा ॥ तु० ६ ॥ मेरे नहीं
आसरो दुजो, गयवर कहे भावसे पुजो । जीन्हीसे जलदी हो
तिरणा ॥ तु० ७ ॥

(१९) स्तवन उगणिसमो

रखो वीरतणो आधार, जिनसे उतरोगे भवपार ॥
रखो० टेर ॥ जिनवर वाणी अमिय समाणि, भवजल तारण
हार । च्यार निक्षेप जिनवर वंदो, सुणो सूत्रका सार ॥ रखो०
१ ॥ ठाणायंग के चोथे ठाणे, सत्य निक्षेपा च्यार । विशेष
पाठ सूत्रको देखो, अणुयोगद्वार मजार ॥ रखो० २ ॥ नाम

लियो कोई महावीरको, नाम निक्षेपो सार । अक्षर प्रतिम थापि वीरकी, थापना निक्षेपो विचार ॥ रखो० ३ ॥ गोत्र तीर्थंकर बांध्यो जिण दिनसे, नही हुवे केवल के धार । जबतक द्रव्य निक्षेपो वंदो, आणी हरख अपार ॥ रखो० ४ ॥ चौंतीस अतीशय पैंतीस वाणी, थापे तीर्थ चार । भाव निक्षेपे केवलज्ञानी, भवजल तारणहार ॥ रखो० ५ ॥ नाम भाव तो सबही मांने, नही इसमे तकरार । द्रव्य स्थापना कहुं सूत्रसें हृदये करो विचार ॥ रखो० ६ ॥ गणधर मुनिवर स्थापन वंदि, भगवती सूत्र मजार । द्रव्य भावसे श्रावक पूजे, ओ समकितको सार ॥ रखो० ७ ॥ अजितादिक तेवीस तीर्थंकर वंदे पहिला गणधार । अनन्त चोविसी सिद्ध हूवे सब, द्रव्य निक्षेप विचार ॥ रखो० ८ ॥ ठाम २ सूत्रके मांहिं, प्रतिमाको अधिकार । एक बोल उत्थापण सारू, सहस्र करे नवा तयार ॥ रखो० ६ ॥ अंतरायको दूरी कर दो, बनो प्रतिमा पूजणहार । तीर्थ ओसीयां वीर भेटवा, हृदये हर्ष अपार ॥ रखो० ॥ १० ॥ जेष्ट शुक्र सोम नवमी, बहुतर साल मजार । गयवर कहे शुद्ध समकित धारो, जिम पामो भवपार ॥ रखो० ॥ ११ ॥

(२०) स्तवन बीसमो (देशी जलारी)

वीर मारो बाल हो, मूर्त्तिमें माले होराज । वीर मारो माहवो ओसीयांमें माले हो ॥ टेक ॥ प्रत्यक्ष प्रभु दीठा नहीं जी. जो दीठा नहीं याद. मूर्ती देखी ताहरि प्रभु, मन उपनो

आल्हाद ॥ वीर० १ ॥ वार २ करूं विनती, प्रभु एक वार तो बोल । हुं गरीब अनाथ छुं, प्रभु अंतरपट दो खोल ॥ वीर० २ ॥ बालक आडो ले मायसुं, प्रभु जीउ मैं तेरे पास । हुंस लगी मिलवातणी प्रभु, सफल करो मारी आस ॥ वीर० ३ ॥ पतीव्रता संसारमें प्रभु, दुजो न वंछे यार । मारे एक तुंहिज धणी, प्रभु जीवनप्राण आधार ॥ वीर० ४ ॥ मोहनी मूर्ती देखीने प्रभु, कल्पु अवस्था च्यार । जन्म राजने केवली प्रभु, सिद्ध वडा सिरदार ॥ वीर० ५ ॥ पखाल करावे प्रेमसु, प्रभु जन्म अवस्था जाण । आभरण पुष्प चडावता प्रभु, राज अवस्था मन आण ॥ वीर० ६ ॥ ध्यान सामी दृष्टि करू, जद केवल आवे याद । गुण स्मरूं मन मांहने, जद सिद्ध अवस्था साध ॥ वीर० ७ ॥ इम कर निश्चये जाणियो प्रभु, तारक तुं वर्द्धमान, शरणे आयो माहरा, अब तारो २ भगवान् ॥ वीर० ८ ॥ आशा राखुं मन मांहने प्रभु, निश्चय तारसी वीर । केई पापीने उद्धरीया प्रभु, मैं रागी तुज तीर ॥ वीर० ९ ॥ भाव पूजा गणधर करे, प्रभु श्रावक द्रव्ये भाव । तूज आणा शिरपर धरे, प्रभु येहीज मोक्ष उपाय ॥ वीर० ॥ १० ॥

(२१) स्तवन इकवीसमो (देशी अनोकामवैंर)

सुण २ साहना हो प्रभुजी, सेवककी अरदास (टेक) सिद्धार्थ कुल उपनाहो प्रभुजी, त्रिसलादेवी माय । इन्द्रादिक

महोत्सव कियो हो प्रभुजी, महावीर नाम धरायके ॥ सु० १॥ तीस वर्ष घरमें रह्या हो प्रभुजी, लीनो संजम भार । छदमस्तपणे तपस्या करी हो प्रभुजी, हुवा केवलका धारके ॥ सु० २ ॥ समोसरण देवा रच्यो हो प्रभुजी, वर्णन कियो न जाय। अमृतधारा देशना हो प्रभुजी, श्रोता रह्या लोभायके ॥ सु० ३ ॥ एकवीश सहस्र वर्ष लगे हो प्रभुजी, भगवतीमें जोय । शासन थारो चालसीहो प्रभुजी, एक आश्रय छे मोय ॥ सु० ४ ॥ कोइ आगम माने नहीं हो प्रभुजी, केइ वर्त्ते इच्छाचार। कोइ पाप कहे दया दानमें हो प्रभुजी, कोइ प्रतिमा उथापणहार ॥ सु० ५॥ कोइ बाजे साधु नामका हो प्रभुजी, टोले टोले भेद । क्रियाथी शीथिल हुवा हो प्र०, कर रह्या खेदाखेद ॥ सु० ६ ॥ नहीं अवधि नही केवली हो प्रभुजी, नहि पूर्वके धार । मनःपर्यव ज्ञानी नही हो प्रभुजी कोण निकाले तार ॥ सु० ७ ॥ लब्धि पीण म्हारे नहीं हो प्रभुजी, जाउं विदेह मजार । परचो नहीं कोइ देवरो हो प्रभुजी, किम मेलु समाचार ॥ सु० ८ ॥ सूत्र पुरा नही रह्या हो प्रभुजी, रह्या में खांचा ताण । पेटी जमावे आपरी हो प्रभुजी, नही माने तुझ आण ॥ सु० ६ ॥ छीन्न भिन्न शासन हुयो हो प्रभुजी, वध्यो घणो मिथ्यात । जाय पूकारुं किण कने हो प्रभुजी, कोण सुणे मारी वात ॥ सु० १० ॥ हुं अधन्य अभागीयो हो प्रभुजी, उपनो भरत मझार । दुखमी आरो पंचमो हो प्रभुजी, कहो कहेनो

आधार ॥ सु० ११ ॥ मुख्यतामें ये कह्याहो प्रभुजी, गौणता में गुणवान । शासन तेहने उपरहो प्रभुजी, मे किनो अनुमान ॥ सु० १२ ॥ दुखमा आरा मांहनेहो प्रभुजी, एक आधार छे मोय । केइ प्रतिबोध ज पामसीहो प्रभुजी, सूत्र प्रतिमा जोय ॥ सु० १३ ॥ शासनकी उन्नति करे हो प्रभुजी, तिणसमो नही उच्च । निंद्या करावे धर्मकि हो प्रभुजी, जिण समो नही निच्च ॥ सु० १४ ॥ हुं छुं पामर जीवडोहो प्रभुजी, तुं शासन सिरदार । अर्जीपे हूकम लगायदो हो प्रभुजी, शुं थारो विरुद्ध विचार ॥ सु० १५ ॥ ध्यान धरुं छुं ताहरुं हो प्रभुजी, प्रतिमा सामे बेठ । तुं साहब त्रीभुवन धणीहो प्रभुजी, या अर्ज करी मैं भेट ॥ सु० १६ ॥ बालक आडो ले मायसुंहो प्रभुजी, माबाप करे छे सार । आस हमारी पुरसोहो प्रभुजी, मैं निश्चय लिनो धार ॥ सु० १७ ॥ समदृष्टि कोइ सुर हूवे हो देवा, शासनको रखवाल । तिण सेति पीण विनतीहो देवा, चेतो २ इण काल ॥ सु० १८ ॥ द्रव्य भाव पुजा करेहो प्रभुजी, श्रावकनो आचार । साधु पूजे भावसे हो प्रभुजी, नित्य आणी हरख अपार ॥ सु० १९ ॥ चार निक्षेपा वंदसु हो प्रभुजी, घणा सूत्रकि साख । जिन प्रतिमा जिन सारखी हो प्रभुजी, श्रीमुखसे दीनी भाख ॥ सु० २० ॥ गयवरचंदकी विनती हो प्रभुजी, तीर्थ ओसीया आण । जेष्ट शुक्ल एकादशी हो प्रभुजी, साल बहोत्तर जाण ॥ सु० २१ ॥

(२२) स्तवन बावीसमो.

जिणंद थारो आसरो हमे लीधोरे, मेंतो अमृत प्यालो पीधो । (मेंतो जाउं मोक्षमें सिधो) ॥ जिणन्द० टेर ॥ विरुद सुणो प्रभु मारीरे, अधम उद्धारण हारीरे । तेथी सेवामें आयो छुं थारी ॥ जिन० १ ॥ बिंब देखिने सुख पायोरे, मारे हृदये हर्ष नही मायोरे । थारो स्वरूप यादमें आयो ॥ जिन० २ ॥ तुं अनंतगुणको धारीरे, गीणतां नही आवे पारीरे । प्रभु आसा पुरो हमारी ॥ जि० ३ ॥ प्रभु और नही आधारोरे, तारे सो तारणहारोरे । जिणथी मे लागो छुं लारो ॥ जि० ४ ॥ जमालि गोशालादिकोरे, अवगुण बोल्या प्रत्यक्षोरे । जिणने दियो मोक्षको सिको ॥ जि० ५ ॥ तुज गाया लारे गाउंरे, थारी आणा माथे चडाउरे। फेर किउ नही मोक्ष में जाउं ॥ जि० ६ ॥ नरभवको लावो लिजेरे, द्रव्य भावसुं जिन पूजिजेरे । कर्मोको दावानल दिजे ॥ जि० ७ ॥ दान शीयल तप भावोरे, एहीज मोक्ष उपावोरे । नित्य अरिहंतका गुण गावो ॥ जि० ८ ॥ तीर्थ ओसीया मारीरे, दर्शनकुं आवे नरनारीरे। गयवर कहे विनती हे मारी ॥ जि० ९ ॥ इतिपदम् ॥

(२३) स्तवन तेवीसमो (गोतम पचीसी)

श्रीगौतम गणधर वंदिये, लब्धितणा भंडार ॥ गौतम टेर० ॥ मगध देशके माहने, गुवर नाम हे गाम । पृथ्वी माता आपकी, पिता वसुभूती नाम ॥ गौ० १ ॥ इंद्रभुती नाम

आपरो, गौतम गोत्री जाण । अग्नीभूती वाउभूती, लघुबंधव पिछाण ॥ गौ० २ ॥ मध पापा नगरी भली, सोमल नामा माहण । यज्ञ करावण तेडीया. मिलिया इग्यारे आण ॥ गौ० ३ ॥ तिण पाडारे टुकडै, महासेन नामा उद्यान । वैशाख सुदी एकादशी, समोसर्या वर्धमान ॥ गौ० ४ ॥ चार प्रकारे देवता, केई विद्याधर जाण । नगर लोक बहु गुण करे, गौतम सांभली वाण ॥ गौ० ५ ॥ श्रो कुण्डरे इंद्र जालियो, मांसु अधिको फेर । कर आडबर शिष्यने, लिधा पांचसो लेर ॥ गौ० ६ ॥ ठीचो उभो आयने, आपे जिनवर एम । जीव छे किंवा नहीं, गौतम शंका छे नेम ॥ गौ० ७ ॥ शसय मेटी दीक्षा दिनी, पंचसो परिवार । त्रीपदी तिण समे रची, द्वादश अंगी सार ॥ गौ० ८ ॥ गौराने घणा फुटरा, भगवती में वात । घोर तपसीमें गुण घणा, वीर धर्यो माथे हाथ ॥ गौ० ९ ॥ छत्तीस सहस्र प्रश्न किया, सूत्र भगवती मजार । वजीर वाज्या श्रीवीरना, सब साधूना सिरदार ॥ गौ० १० ॥ हाथतणा दीक्षितने, उपनो केवलज्ञान । गौतम मन चिंता थई, जाय वंद्या भगवान ॥ गौ० ११ ॥ देव वाणी आकाशमें, तीर्थ अष्टापद सोय । भूचर लब्धिसे वादतां, चर्म शरीरी होय ॥ गौ० १२ ॥ आज्ञा मांगी श्रीवीरसे, श्रीजिन दिनी फरमाय । तीर्थयात्रा जो करे, जन्म सफल होजाय ॥ गौ० १३ ॥ सूर्यकीरण अवलंबने, अष्टापद जाइ वंद । तापस देखी आश्चर्य थया,

गौतम गुणको कंद ॥ गौ० १४ ॥ अष्टापद कि यातरा, गौतम करी हुलास । चैत्य वंद्या वीतरागना, उत्तराध्ययन खुलास ॥ गौ० १५ ॥ पाछा वलता प्रतीबोधिया, तापस पनरेसो तीन । अष्टम छठ चोथ तप, जूदी मेखला तीन ॥ गौ० १६ ॥ गौतम पडिगामे लावीया, जाणे अमृत खीर । अंजण करासि के देशी टिकिया, तापस मन दिलगीर ॥ गौ० १७ ॥ धरीयो अंगुठो पडिगा विषे, गौतम लब्धि भंडार । पन्नरासे तीनने पारणो, करायो तिणवार ॥ गौ० १८ ॥ पेहला समोसरण देखने, दुजा समोसरण मान । तीजा प्रभुने देखने, उपनो केवलज्ञान ॥ गौ० १९ ॥ बेठा केवली परषदा, गौतम मन उदास । भगवती में भाख्यो, आगे गणो समास ॥ गौ० २० ॥ घणा भव भेला किया, लोक बडाइनी रीत । तुला होसे इण भवथकी, गौतम मन प्रतीत ॥ गौ० २१ ॥ मोक्ष पधार्या वीरजी, गौतम केवलज्ञान । बारह वर्ष लगे विचर्या, पहूंता पद निर्वाण ॥ गौ० २२ ॥ नामे नवनिध संपजे, पूज्या जावे दुःख । एक चित करने ध्यावतां, पामे मोक्षना सुख ॥ गौ० २३ ॥ गौ–कामधेनु त–तरु, म–मणि रत्न जाण । अर्थ अक्षर तीनु तणो, चतुरा लिजो पिछाण ॥ गौ० २४ ॥ जन्म सफल मानुं सदा, लेउ गौतम नाम । वारंवार करुं वीनती, देवो अविचल ठाम ॥ गौ० २५ ॥ कलस–इम गुण गाया, सुख पाया, हरख हियडे अती घणो । वसुभूती नन्दन जगत वदन, गौतम नाम नित २ भणो ॥ साल बहोत्तर तीर्थ ओ-

सीया, जेष्ट शुक्र एकादशी । दर्शन पायो गयवर गायो प्रभु मूर्ती मुज हृदये-चसी ॥ १ ॥

(२४) स्तवन चोवीसमो

अनुभवीने एकलो । आनन्दमें रेवुंरे । करवुं प्रभुनुं भजन । बीजुं कंइ नं केवुंरे ॥ अनु० ॥ १ ॥ सिद्ध बुद्ध चिदानन्द । शुद्ध कुंदन जेवुंरे । निजानन्द स्वरूप रमणे । परमहंस रहेवुंरे ॥ अनु० २ ॥ मुंगाकु सुपना भया । मनमें समजी लेवुंरे । कोइने कहेवानुं नहीं । मस्तानन्द रेहेवुंरे ॥ अनु० ३॥ संसारी जीव पामर प्राणी । भला बुडा न कहेवुंरे । कहेवु सुनवुं वृथा जाणी । मौन व्रत लेवुंरे ॥ अनु० ४॥ आशा पास तोडी फोडी । मस्त फकिरी रहेवुरे । रंकना रतन जेम । जतन करी लेवुंरे ॥ अनु० ५ ॥ भूत भविष्य भुली जाई, वर्तमाने रेहेवुंरे । धर्मरत्न आपो आप । तुही तुंही कहेवुंरे ॥ अनु० ६॥

(२५) स्तवन (राग प्रभाती)

कोन सुने मेरी बात, मैं कहूं कीस आगे । दुःखकी वातें याद करुं जब, दुःख ही दुःख जागे ॥ कोन० १ ॥ दुःख ही में दिन गये, दुःख ही में जावे । दुःख ही के कारण मील्यां, चेतन दुःख पावे ॥ को० २ ॥ कीयासो दुःख करे सो दुःख, दुःख उंदय आवे । सुनेसो दु खी कहेसो दुःखी. केसे दुःख जावे ॥ को० ३ ॥ अदुःखीको दुःख नहीं, दुःखीको दुःख सतावे । ज्ञानसुन्दर निज दुःखकी वतीयां, प्रभुको सुनावे ॥ को० ॥ ४ ॥ इति.

—॥ इति स्तवन संग्रह प्रथम भाग ॥—

अथ श्री

स्तवन संग्रह भाग दुजो.



न १ श्रीफलोधिमंडन गौडी पार्श्वनाथजी।

दरसन कीनारे गौडी पासका, धन्य भाग्य हमारा ॥ द० ॥ टेर ॥ बहुत दिनोंसे थी अभिलाषा, कब भेटुं प्रभु पास, पुन्य अंकुरो उगीयोसरे, आज फली मुज आशजी ॥ ध० ॥ १ ॥ शान्त मुद्रा मोहनगारी, नीलवर्ण तन सोहे। नयन निरखता आनन्द आवे, सुरनरका मन मोहेजी ॥ ध० ॥ २ ॥ ज्ञानादिक गुण संपदा सरे, तुज है अनन्त अपार, एक अंस तीण मांहलो सरे, मुज दीजे कीरतारजी ॥ ध० ॥ ३ ॥ परस्परा प्रभु आपकी सरे जिन्हके छठे पाट, पर उपकारी श्रीरत्नप्रभसूरी, नाम लीया हो थाटजी ॥ ध० ॥ ४ ॥ नगर फलोधी भेटीया सरे, प्रथम गौडी पास, गयवरचन्द शरणो लियो सरे, पुरो वंछीत आशजी ॥ ध० ॥ ५ ॥

न० २ श्रीफलोधीमंडन शीतलनाथजी।

(देशी नमनाथजीकी जानकी)

शीतल जिन अरजी सुन लीजे, सेवक पर महेर नजर कीजे ॥ टेर ॥ दढरथ राजाको नन्दो, मोहे जिम तारामें

चन्दो, सर्व संघ वन्दनके काजे, वाज रहा पांचो ही वाजे ॥ दोहा ॥ गौडिजीसे आविया, शीतलके दरबार, मनोहर मूर्ति देखी म्हारो, हरख्यो हृदय अपार, जरा शुभ द्रष्टि तो कीजे ॥ शी० ॥ १ ॥ प्रभुजी आप वीतरागी, दर्शनसे अनुभव मुज जागी, आजको दिन है भारी, सेवा में आयो हुं तारी ॥ दोहा ॥ हुं अग्नि कषायमे, जल रहा दिन और रात, शीतल च-न्दन बावनो सरे, करलो अपने साथ, रग प्रभु अपनो मोय दीजे ॥ शी० ॥ २ ॥ तारक विरुद आपको स्वामि, मै हू एक मोक्षको कामी, मेरे मन तुंही तुं भावे, गयवरचन्द और नहीं ध्यावे ॥ दोहा ॥ मेरी तो मोक्ष हो गई, कीना तुम दीदार, एक अरज साहबजी तुमसे, ढुंढकको दो तार, इतना यश मे-रेको दीजे ॥ शी० ॥ ३ ॥ इति.

न० ३ श्रीफलोधिमंडन शान्तिनाथजी ।

अचरादे मईया, शान्ति करन तोरा जईया ॥ अ० ॥ टेर ॥ मेघरथ राजा जिनवर पूजी, जीव पारेवा बचइया, वीश स्थानककी करी सेवना, तीर्थंकर गोत बंधईया ॥ चन्धईया म-ईया ॥ शान्ति ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धका सुख अनुभवी, गजपुर भूप घरईया, मृगी केरो रोग निवारी, शान्ति शान्ति वरत-ईया ॥ च० शान्ति ॥ २ ॥ मेरु शिखरे महोत्सव कीनो, इन्द्र-हरष भरईया, कुमार राजमंडलिक भोगवी, षट् खंड छत्र धर-ईया ॥ घ० शान्ति ॥ ३ ॥ सब अपि त्यागी भये वैरागी, केवलज्ञान जगईया, सुरवर रचित समोसरणवानि, अमृतजल

भरसईया ॥ भ० शान्ति ॥ ४ ॥ अमर अमरीं मील नाटक कीनो, मृदंग ताल बजईया, भक्ति करे सुर इन्द्र मिलके, नाचित थईथई थईया ॥ थ० शान्ति ॥ ५ ॥ शान्त मुद्रा तीजे मन्दिर पूजीत हरप भरईया, गयवरचन्द जिन शान्ति सेवतां दिन २ सुख सवईया ॥ स० शान्ति ॥ ६ ॥ इति.

नं० ४ श्रीफलोधीमंडन आदिनाथजी ।

आदिनाथ अलवेश्वरु, मुज पापीने तार लालरे ॥ आदि ॥ टेर ॥ पद्मासन प्रभु ध्यानमें, मूर्ति शान्त स्वरुप लालरे । अनन्त ज्ञान दर्शन धणी, तुं त्रीभुवनको भूप ॥ ला० ॥ आ०॥१॥ हास्यादिक छउ गइ, गई अन्तराय पांच ला० मिथ्या अज्ञान अव्रत गइ, रही नही कोइ खांच ॥ ला० आ०॥ २ ॥ राग द्वेप निद्रा गइ, दुर गया दोप अढार ला० निष्कलंक शुद्ध आत्मा, अक्षय सुख अवतार ॥ ला० आ० ॥ ३ ॥ योग भोग रोगको नहीं । जन्म जरा नहीं शोक ला० आतमसत्ता रमणता, अटल अकर्म अभोग ॥ ला० आ० ॥४॥ तुज गुण स्मरण भावना, वीर्य थाय हुलास ला० समकित गुण प्रगट करो, गयवर तोरो दास ॥ ला० आ० ॥ ५ ॥

नं० ५ श्रीफलोधीमंडन चिंतामणिपार्श्वनाथजी ।

हां राणीसर मंडन सोहे, चिंतामणिजी चितको मोहे । पूजा करतो नाथकी सब पातिक खोहेरे ॥ चिं० ॥ टेर ॥ नगर फलोधी है गुलजारी, राणीसरकी छबी हैं न्यारी, सोहे चिं-

तामणि पार्श्व, और दादाशा जाहारीरे ॥ चिं० ॥ १ ॥ अनन्त ज्ञान दर्शनके धारी, तेवीसमा हो तुम अवतारी, शरणे आयो पुरजो, प्रभु आश हमारीरे ॥ चिं० ॥ २॥ तुं जगतारक विरुद धरायो, में हूं दीन याचनको आयो, कुलिंग छोडियो नाथजी, चिंतामणि पायोरे ॥ चिं० ॥ ४ ॥ पाचमें मन्दिर मुक्ति काजे, जैनधर्मका डंका वाजे, गणधर चाकर आपको या घनजियु गाजेरे ॥ चि० ॥ ५ ॥

नं० ६ श्री जेसलमेर मडन आदिनाथजी

(देशी विणजारी)

सुण मरुदेविका नन्दा, म्हारा काट चोरासी फन्दा ॥ सुण ॥ टेर ॥ समौसरण विच सोहे, चउ तीर्थका मन मोहे- जी, थाने सेवे सुरनर इन्दा ॥ सुण ॥ १ ॥ भाखी अर्थ रुपी वाणी, गणधर गूंथी गुण खांणीजी, द्वादश अग सुरतरु कन्दा ॥ सु० ॥ २ ॥ धर्म अधर्म आकासा, जीव पुद्गल काल चौका- साजी, षटद्रव्य विचार आनन्दा ॥ सु० ॥ ३ ॥ एकरुपी एक है जीवा, पांच अरुपी पांच अजीवाजी, द्रव्य गुण पर्याय सा- नन्दा ॥ सु० ॥ ४ ॥ तीन एक तीन अनेका, पचास्ति का- लहै शेषांजी, वली देश प्रदेश है खन्धा ॥ सु० ॥ ५ ॥ अ- गुरु लघु पर्यायहै जाहांरी, साधर्मीषट् मझारीजी, वीचार भाव अवन्धा ॥ सु० ॥ ६ ॥ शुद्ध सम्यकत्व बोही पावे, षट्द्रव्य हृदयमें ध्यावेजी, इम ज्ञान भजे जिनचन्दा ॥ सु० ॥७॥ इति

न० ७ जेसलमेर मडन श्री सभवनाथजी

भावपूजा संभवनाथकि. करिये शुद्ध परिणाम सलुणा ॥ टेर ॥ द्रव्य भाव शौची करी, जावे जिन प्रासाद ॥ स० ॥ शान्तमुद्रा वीतरागकि. धरियेचित अहलाद । स । भा० ॥१॥ मयूरपिच्छि इर्यातणी. ज्ञान नीर पखाल । स । अनुभव अंग लुणाकरी, पूजो होइ उजमाल ॥ स ॥ भा० ॥ २ ॥ श्रद्धाकि शिला करो, कर्माकि केसर जाण । स । संतोष चन्दन मुठियां, शील सुगन्ध पिछाण ॥ स ॥ भा० ॥ ३ ॥ तत्वकटोरी शुद्ध मति, नव अंग पूजो देव । स । आतम अनुभव भासना, आज मीली प्रभु सेव ॥ स ॥ भा० ॥ ४ ॥ हारमौति महाव्रत तणो, भावना करिये फूल । स । ध्यान मुगट कुंडल क्रिया । तीलक आज्ञा अनुकुल ॥ स ॥ भा० ॥ ५ ॥ स्याद्वाद बाजुबन्धको, नयनिक्षेप जडाव । स । पुणछि निश्चय व्यवहारकि । उत्सर्ग अपवाद मंडाव ॥ स ॥ भा० ॥ ६ ॥ सप्तभंगीको सेहरो, अहिंसा आंगी जाण । स । तपस्या कुडच्छा धूपका, अशुभ कर्म धूप मान ॥ स ॥ भा० ॥ ७ ॥ विवेक दीपक गुप्ती वति, पाप कर्मको तेल । स । तीक्षण बुद्धि जोतीसे, जिनवचनोंपर खेल ॥ स ॥ भा० ॥ ८ ॥ चार अनुयोग चौकी करी, श्रद्धाको साथियो पुर । स । तीन तत्त्व उपर धरो, सिद्ध शिलासे मुक्ति नहीं दुर ॥ स ॥ भा० ॥ ९ ॥ सिद्धान्त साकल सुमति घंटा, सदगुरु बजावनहार । स । अन्त उतारो आरति, आलोचन पद धार ॥ स ॥ भा० ॥ १० ॥ भाव पूजा साधु

करे, श्रावक द्रव्ये भाव, ज्ञानसुंदर जिन पूजतो, मीलीयो चौक्नो डाव ॥ स ॥ भा० ॥ ११ ॥ इति

न ८ श्री जेसलमेर मडन चन्द्राप्रभुजी

चन्द्राप्रभु चिंताहरो, करलो आप समान वालेश्वर । चन्दा । टेर । शान्तमुद्रा सोहामणि, नयन रहा लोभाय । वा । यात्रा करी भला भावशु· सफळ हुइ मुज काय । वा । चन्दा ॥ १ ॥ धूर गुणस्थानक पेहलडे, रह्यो काल अनन्त । वा । यथाप्रवृति करण हुवा, गीणतो न आवे अन्त । वा । चन्दा ॥ २ ॥ करण अपूर्व दुसरो, स्थिति कर्म सातों शम । वा । कारण निमत्त मीलीयां थको । अनिवृति पाम्यों धर्म । वा । चन्दा ॥ ३॥ औपशम समकित त्यां लही, जावे चोथे गुणस्थान । वा । पडतों स्पर्शे दूसरो, छे आविलका प्रमाण । वा । चन्दा ॥ ४ ॥ मिश्रभाव तीजे गयो, पेहले के चोथे जाय । वा । सात प्रकृति क्षय करे, सात बोलोंको बन्ध न थाय । वा । चन्दा ॥ ५ ॥ तत्वरुची षटद्रव्य कि; जाणे जीवादि भेद । वा । सिद्ध सम गीणे आतमा, रहे सदा अभेद । वा । चन्दा ॥ ६ ॥ इग्यारे उच्छेदने, जावे पांचमें गुणस्थान । वा । श्रावक व्रत जो आदरे, पाले जिनवर आण । वा । चन्दा ॥ ७ ॥ प्रकृति पन्दरातणो, क्षय करे उपशम । वा । प्रमत्त गुणस्थानक लहे, मुनिपद क्षम शम दम । वा । चन्दा ॥ ८ ॥ पांच प्रमादने परिहरे, अप्रमत्त गुण होय ।

। वा । जेहथी जावे आठमे, त्यां छे श्रेणि दोय । चन्दा । ६ ।
उपशम करे इकविसनो, नवमे सतविस जांण । वा । दशमे
संज्वलका लोभ कों, उपशम इग्यारमें ठाण । वा । १० ।
अन्तर महूर्त त्यां रहै, कालसे अनुत्तर वैमान । वा । पाछो
पडे तो विचमें स्थंभे, नही तो पहले गुणस्थान । वा । चन्दा० ।
॥ ११ ॥ दूजी क्षपक श्रेणी चडे, करे अठाविस क्षिण । वा ।
दशमाथी जावे वारमे, तोडे घनघाति तीन । वा ॥ चन्दा० ॥
॥ १२ ॥ केवल पद लहे तेरवे, चवदमाथी निर्वाण । वा
निज आतम निहाळतो, छुटो न धूर गुणस्थान ॥ वा ॥ चन्दा०
१३ ॥ नाम धराउ छट्ठा तणो, कृत्य जाणे जगनाथ । वा ।
तो पण घन ज्युं गाजसुं, मारे माथे तोरा हाथ वा । ॥चन्दा०॥
॥ १४ ॥ निर्गुणो तो पण आपको, नही औरन से प्रित । वा ।
शरणे आयाने करो सारखो, आछे वडनकि रीत ॥ वा ॥
चन्दा० ॥ १५ ॥ जेसलमेर जुहारियों, महश्रेण नृपको नन्द
। वा । उपकेशगच्छ को किंकरु, आज ज्ञान आनन्द । वा ।
चन्दा० ॥ १६ ॥ इति ॥

न. ९ श्री जेसलमेर मडन श्री सुमतिनाथजी.

मुखडो दिठोरे, २ जिनन्दा मोने लागे मीठोरे ॥ मु०
॥ टेर ॥ काल अनन्तो हूं भम आयो, दंडकमें दंडायोरे, सम-
कित मांहे नामो, म्हारो नहीं मंडायोरे ॥ मु० ॥ १ ॥ सात
नरकको पेहलो दंडक, भुवनपति दश जाणोरे, पृथ्वी पाणी

तेउ वायु, वनस्पति दादोंगोरे ॥ मु० ॥ २ ॥ बे, ते, चो, पंचेन्द्री तीर्यच, मनुष गतिमें रमीयोरे, व्यंतर जोतिषी वैमानिकमें, काल अनंता गमीयोरे ॥ मु० ॥ ३ ॥ पतला पड्या कर्म हमारा, जद आ रुची जागीरे, अब तो नामो मंडासु साहब, तुम वीतरागीरे ॥ मु० ॥ ४ ॥ करणी करके सबही तीरीया, कांइ बडाइ धारीरे, साचो दाता जबही थाशो, मुज निगुणाने दो तारीरे ॥ मु० ॥ ५ ॥ दुखे पीडीयो आडो तेडो, बोली चम्या कीजोरे, ज्ञानसुन्दर चाकर चरणाको, हीवडे लगाई लीजोरे ॥ मु० ॥ ६ ॥ इति.

न १० श्री जेसलमेर मंडन श्री चिंतामणि पार्श्वनाथ

मुक्ति दिजो चिंतामणिमाने चोडे सुनो चाहे छाने ॥ मुक्ति० ॥ लेनदार जो आवीने बेठे, देरी करे क्या जाने ॥ मु० ॥ १ ॥-पावणो आवे सो जिमने जावे, करे टालाडुली शाने ॥ मु० ॥ २ ॥ धीणो होवे तो ग्छासने आवे, नहीं तो आवे काने ॥ मु० ॥३॥ हुं छु दीन ने तुं छे दाता, क्यु तरसावे माने ॥ मु० ॥ ४ ॥ सर्व बातको जानो साहब, घणो शु कहेवुं थाने ॥ मु० ॥ ५ ॥ इति.

तुठो तुठोरे वामाको जायो, म्हेतो सहेज मुक्त गढ पायो ॥ तु० ॥ टेर ॥ निज सेवकपर करुणा आणी, अरजीपे हुकम लगायो ॥ तु० ॥ १ ॥ हु छोरु कुच्छोरु तो पण, लीनो कण्ठ लगायो ॥ तु० ॥ २ ॥ तीन भुवनका राजसे अधिको, आज

आनन्द मोय आयो ॥ तु० ॥ ३ ॥ आज आनन्द रंग ज्ञान वधावो, मो मन हरष सवायो । तु० ॥ ४ ॥ इति.

न ११ श्री जेसलमेर मंडन अष्टापद नायक

अष्टापद वन्दो, भरत भराया बिंब भावसे ॥ टेर ॥ आदिश्वरजी केवल पायो, भरत वन्दनने आयो, हाथ जोडने प्रश्न पुन्छे, और होंशे जिनराया हो ॥ अष्टा० ॥ १ ॥ सुन भरतेश्वर राजवि सरे, भापे जगदाधिश, इणहीज काले भरत क्षेत्रमें, होसे जिन तेवीस हो ॥ अ० ॥ २ ॥ सुन भरतेश्वर अष्टापदपर, शिखर बन्ध चोविस, चैत्य कराया बिंब स्थपाया, जिम भाख्या जगदिस हो ॥ अ० ॥ ३ ॥ रत्नमय मूर्तिसरे, वर्ण अवगाहना सरखी, उत्तराध्ययने गौतमस्वामि, चैत्यवन्दन कर निरखी हो ॥ अ० ॥ ४ ॥ कृत्यवस्तु संख्याता कालतक, वादि इणपर बोले, देव साहित्य काल असंख्या, जम्बुद्विपपन्नति खोले हो ॥ अ० ॥ ५ ॥ उत्तराध्ययन सागर चक्रीका, पुत्रे रचा कीनी, आवश्यकमें भद्रबाहु, विस्तारे टीका लीनी हो ॥ अ० ॥ ६ ॥ अष्टापद नामको मन्दिर, जेसलमेरके मांहि, मरुदेविको नन्दन दिठो, कमी रहे नहीं कांइ हो ॥ अ० ॥ ७ ॥ जहां भेटुं तहां रत्नविजयजी; आवे मुजने याद, जल्दी मुक्ति होजो तेहनी, मुज मन आज आहलाद हो ॥ अ० ॥ ८ ॥ उपकेशगच्छके नायक कहीजे, रत्नप्रभसूरी राया, ज्ञानसुन्दर चाकर चरणोंको, दिन दिन सुख सवाया हो ॥ अ० ॥ ९ ॥ इति.

न १२ श्री जेसलमेर मडन शान्तिनाथजी

(देगी गौरोके गीतकि)

आंगी खुब बनी है दीनानाथकीजी, मनडो हरख्यो मारो देखी छवी नाथकीजी । टेर । सर्वार्थसिद्ध थकी आवियाजी, मारो मृगीको रोग निवारीयाजी–माता अचरादेवी जाया, ज्होंके सुरवर इन्द्र आया. प्रभुको मेरुशिखर न्हवाया, इन्द्र महोत्सव करे भक्ति नाथकिजी ॥ आ० ॥ १ ॥ मंगल गावे इन्द्राणी आयनेजी, माता आसपुरे हुलरायनेजी–माता आसापुरी रमके, नेवर घुघर पगमें घमकें, पगल्या धर रह्या ठम ठम टमके, आशा सफळ करी प्रभू मातकिजी ॥ आ० ॥ ॥ २ ॥ पचविश सहस्र कुंमर पद गयाजी, इतनाही प्रभु मंडलीक रह्याजी–भया छे खंड केरानाथ, ज्यांने सुरनर जोडे हाथ, प्रभुजी तत्त्क्षण त्यागी आथ, दीक्षा महोत्सव करे म्हारा नाथकीजी ॥ आं० ॥ ३ ॥ छदमस्त मास केवल लच्योजी, सुर समोसरण आवि रच्योजी,–प्रभुके चौंतीस अतिशय छाजे, वानी घन जीयूं गाजे, इन्द्र आवे वन्दन काजे, नाटीक करे इन्द्राणी सन साथकीजी ॥ आ० ॥ ४ म्हेतो आज आनन्द शान्ति लह्योजी, योतो अष्टापद उपर रह्योजी, येतो पुष्प सुगन्धी लावे, श्रावक आंगी खुब रचावे, भावे ज्ञान सुन्दर गुण गावे, जेसलमेरमें निरखी मुद्रा नाथकीजी ॥आ० ॥ ५ ॥ इति ॥

नं १३ श्री जेसलमेर मडन–वीरप्रभु

वीर तौरे दर्शनकि बलीहारी, २ । वारी जाउं वार हजारी । वी० टेर । अनन्त ज्ञान दर्शनकों नायक, लायक शिव सुखधारी, अटल अवाधित सुखके दाता, ताते शरण तुम्हारी ॥ वी० ॥ १ ॥ आतम सत्ता अनुभवकि रीती. प्रीति की गति न्यारी, भोगि अभोगी योगि अयोगि, लखी न जाय गति त्हारी ॥ वी० ॥ २ ॥ भेद अभेद खेद अखेद, जान अजान संभारी, अकल कळा गीनी नही जावत, अन्दर रहे के न्यारी ॥ वी० ॥ ३ ॥ सुख न दुःख अनुभव रसमें, रोग सोग रहै न्यारा, चाहत अनूभव ज्ञान सुधारस, मीलादो सुमति प्यारी ॥ वी० ॥ ४ ॥ इति ॥

नं १४ श्री जेसलमेरके ज्ञानभंडार

सुनो चैतन प्यारे भक्ति करोनि श्रुतज्ञानकी ॥ टेर ॥ जेसलमेर किलाके अन्दर, चैत्य जिनेश्वर पास, गुप्त-भोंयरा मोहनेसरे, ज्ञानभंडारो खासरे ॥ सु० ॥ १ ॥ दोय उपासरे रहे कुंजीयों, यति श्रावकके पास, श्री संघसे करी याचना, पुरी मनकी आशरे ॥ सु० ॥ २ ॥ श्रावक यतिजी आये सरे. खोल दीयो भंडार, स्तुतिकर अन्दर आये, हृदय हरप अपारे ॥ सु० ॥३॥ गुप्त भंडारा मोहनेसरे, सूत्रपेटी सात, बाविश सौ जाजेरी प्रति, आ छे टीपनी वातरे ॥ सु० ॥ ४ ॥ भडार मांहन पडे अंधारो, जीन्हसुं मन्त्र लाया बारे, ताडपत्रपर आगम

देखी आनन्द वरत्यो म्हारेरे ॥ सु० ॥ ५ ॥ हजार वर्षका जुना देखा, ताडपत्रका लेख, सूत्र ओर ग्रन्थ है बहूला. में प्रत्यक्ष लीधा देखरे ॥ सु० ॥ ६ ॥ पंचांगीको साची मानो, जो चाहो तुम तीरणो, शंका हो तो मैं बतलाउं, जुठो हठ नहीं करणोरे ॥ सु० ॥ ७ ॥ जिनवाणीसे तीरणो होसी, कलीकालके अन्त, ज्ञान कहे आधार हमारे, जिनवाणी महिमावन्तरे ॥ सु० ॥ ८ ॥ इति.

न १९ श्री लोदरवा पार्श्वनाथजी

(देशी गौरीकी)

आयो आयोरे लोदरवाजी भेटवाने, मारा भवभव पातिक मेटवाने ॥ आ० ॥ टेर ॥ वामादेविको नन्दो, तुं तो दुरोआइ वसीयो, लारेलारे हुं पण आयो, तुमेरा चित्तमें धसीयो ॥ आ० ॥ १ ॥ संसाररुपी अटविभारी, डर लागो छे तुजने, तेथी आण एकान्ते बेठो, छोड आयो प्रभु मुजने ॥ आ० ॥ २ ॥ विषम वाटने भुट काकरा, शीत सताइ माने, सोरो दोरो आयो साहेब, आ अरज करी छे थांने ॥ आ० ॥ ३ ॥ इतना दिन तो भर्म भटकीयो, फीरीयो चौरासी ताई, पतो न लागो साहेब तोरो, उम्मर वृथा गमाई ॥ आ० ॥ ४ ॥ तेरागच्छमें जन्म लीयो पण, ढुढक जालमें फसीयो, कुलिंग वेष मुंडो बाधी, कर्मों आगे कसीयो ॥ आ० ॥ ५ ॥ मिथ्या मोहको दुर कर्यो, अब अन्तराय गइ भागी, चैतनचलीये कर्म हठाया, अन्तर शुद्ध मति जागी ॥ आ० ॥ ६ ॥ बहत दिनोंमेथी

अभिलाषा, आज दर्शमें किनो, नयन निरखतो आनन्द आयो, जाणे अमृत पीनो ॥ आ० ॥ ७ ॥ कल्पवृक्ष मेरे आंगण फलीयो, चिंतामणि कर आयो, कामधेनुसे अधिको, में तो प्रभुजीको दर्शन पायो ॥ आ० ॥ ८ ॥ जेसे पुष्प अली मन वसीयो, मयूर मगन घन रसीयो, चन्दन भुजंगके मन भावे, हुं तुज सेवा तरसीयो ॥ आ० ॥९॥ एक अर्ज साहेबजी मेरी, अब न्यारो मत राखो, हुं तो बालक आडोलीनो, अमृत वयणे भाषो ॥ आ० ॥ १० ॥ छठे पाटे रत्नप्रभसूरी, पासे संतानीया वाजे, ओशवंसकी करी स्थापना ज्यारो यश युगमाहे गाजे ॥ आ० ॥ ११ ॥ ज्ञानसुन्दर चाकर चरणोंको, फलोधिसे आयो, पोष कृष्ण पडिवा तेहोतर, दिन दिन सुख सवायो ॥ आ० ॥ १२ ॥ इति.

न १६ श्री अमृतसर मंडन आदिनाथजी

अमृतसर उपर, झाखी बन रहीरे दीनानाथकी ॥ टेर ॥ जेसलमेर लोदरवा विचे, अमृतसर है भारी, निर्मल नीर ओर बाग बगेचा, खुलरही केशर क्यारीरे ॥ अ० ॥ १ ॥ तीनों कांठे तीनो मन्दिर शिखरबंध है सारा, उचिध्वज गगनसे वातो, नित्य नित्य घूरे नगारारे ॥ अ० ॥ २ ॥ तीनो चैत्यमें मूर्ति सोहे, जीम तारोंमें चन्द, मरुदेविको नन्दन निको, निरखत नयन आनन्दरे ॥ अ० ॥ ३ ॥ शान्त मुद्रा मोहनगारी, आंगीकी छबी न्यारी, महीमा अगम अगोचर प्रभुका, दर्शनकी बलीहारीरे ॥ अ० ॥ ४ ॥ जीतना सुख तुमारे साहब, इतना

मुजको दिजो, दातानाम धरावो तो तुम, दया दीनपे किजोरे ॥ अ० ॥ ५ ॥ हुकम आपको मेरे शिरपर, अच्छो आनन्द आयो, ज्ञानसुन्दर चाकर चरणोंको, आज अमरपद पायोरे ॥ अ० ॥ ६ ॥

न १७ श्री पोकरण मंडन पार्श्वनाथ

पार्श्वप्रभु मुजने, पार उतारे तुं थारो निरुद विचारे ॥ पार्श्व० ॥ टेर ॥ बनारसीमें जन्म आपको, अश्वसेन कुलचन्दा, मूर्ति मोहन दर्शन पायो, रोमरोम आनन्दा ॥ पा० ॥ १ ॥ स्याद्वाद हे जो तुज वाणी, पांच अंगसे पुरी, जो पंचागी माने नहि, तेहने मुक्ति हे दुरी ॥ पा० ॥ २ ॥ पाच अगसे पुरुप पूरो, एक माने च्यार छेदे. ते तो दुश्मन घाती कहीये, निन्हव आज्ञाने भेदे ॥ पा० ॥ ३ ॥ क्रिया उपर करे आडम्बर, पेट भरा भंडसूरा, आप थापीने प्रतिमा उत्थापी, कृतघ्नी ने क्रूरा ॥ पा० ॥ ४ ॥ भगवती स्थानायाग बोले, अनुयोगद्वारने नन्दी, समवायाग पचांगी माने, नही माने मोह फन्दी ॥ पा० ॥ ५ ॥ टीकासुं जिण टबो कीनो, मगलाचरणमें बोले, टबो माने टीका नहीं माने, पापी कोन इणतोले ॥ पा० ॥ ६ ॥ करुणा मध्यस्थ प्रमोद मित्रए, भावना नित्य नित्य भावु, ढुंढक बुद्धि सुधारो नाथजी, या बात सदा में चाउं ॥ पा० ॥ ७ ॥ लोदरवासे पाच्छा वलता, पोकरण यात्रा कीनी, एक चौकमें तीनो मन्दिर, तीन तीन प्रदक्षणा दीनी ॥ पा० ॥ ८ ॥ दोय मन्दिर पार्श्व प्रभुका, एक आदिश्वर केरो, ज्ञानसुन्दर जिन चरणकमलमें, एक रुप तेरो मेरो ॥ पा० ॥ ९ ॥ इति.

नं (१८) श्री खीचन्द मंडन चौविस भगवान्

(टखी श्री नेमिश्वरजीकी जानकि)

सुनोश्री चौविसों महाराज, सूधारो सेवकके सब काज। सुनो। टेर। ऋषभ अजित संभवहै स्वामि, अभिनन्दजी हित-कामि, सुमति पद्म सुपासजी सोहे, चन्द्राप्रभुजी मन मोहे। दोहा। सुविधि शीतल श्रेयांसजी, वासुपूज्य भगवान्, विमल अनन्त श्री धर्मनाथजी, शान्तिनाथ सुख खान, प्रभुजी रखीये मेरी लाज। सुनो ॥ १ ॥ कुंथु अरि मल्लीजिन वन्दों, देख मुनिसुव्रत आनन्दो, नमि नेम पार्श्व यशधारी, वीरजी शासन संभारी, । दोहा। चौविसे जिनराजजी, खीचन्द मंडनग्राम, मूलनायक श्री पार्श्वनाथजी, वंच्छीतपुरे काम, सफल हो देव-नके शिरताज। सुनो ॥ २ ॥ द्रव्य और भावसे पूजो, एसो नही देव कोइ दुजो, पूजासे मोक्षफल पावे, सूत्र श्री ज्ञाताजी गावे, । दोहा। आदि अनादि प्रतिमा, भाखे श्री गणधार, पाप बतावे पूजामाहे, डूबे डवावणहार—नरकमें मारेगा जमराज। सुनो ॥ ३ ॥ रायपसेणी ज्ञाता और, भगवती ठाणांयांग पेच्छाण, जीवाभिगमहै साखी, जहा तहा प्रतिमाही दाखी, । दोहा। ठाम ठाम सूत्रोंके माही, प्रतिमाको अधिकार, एक बोल उन्थापण कारण, सहस्र करे नवा तैयार, मीलगइ कुंम-त्यादि समाज, सुनो ॥ ४ ॥ साधुकों वन्दनने जावे, चौमासे भठीयों चलावे, साधु कोइ मर भी जावे, दीक्षाको महोत्सव करावे। दोहा। आदि अनेकों बोलमें, रहे हिंसा अनुकुल,

नाम लेवे प्रभु पूजाकेरो, हृदय उठे शूल–छोडदो मिथ्या मतकी पाज । सुनो ॥ ५ ॥ छोडि कंइ कुमत्योंकि समाज, भया केइ जिनवरके मुनिराज, दुढकजी बाहीर नहीं आवे, गालोंका गोला चलावे । दोहा । वह जमाना अब नहीं, भोला पडे कोइ फन्द, अज्ञान अंधेरी नहीं रहे सरे, अब उगो छे चन्द, जराकुच्छ मनमांहे तुं लाज ॥ सुनो० ॥६॥ कहेताहुं हितके ताही, समजलो मनके मांही, छोडदो कुलिंगीका संग, लगालो समकित केरा रंग । दोहा । फलोधीसे आवीया, सघ चतुर्विध लार, माघकृष्ण पडिवा तेहोत्तर, पूजा नीनाणु प्रकार, ज्ञानपे कर कृपा जिनराज । सुनो ॥ ६ ॥ इति.

न० (१८) श्री लोहावट मडन श्री पार्श्वनाथजी ।

सुनो पार्श्व प्रभुजी डंका वाजे रे तोरा नामका । सु० टेर । ग्राम लोहावट जाटा वासे, मन्दिर वनियों भारी, में पण यात्रा भावे किनी, दर्शन कि बलीहारी हो सु० ॥ १ ॥ द्रव्य कषायने योग आतमा, चोथी है उपयोग, ज्ञान दर्शन चारित्र सातमी, वीर्य आतमा उपभोग हो सु० ॥ २ ॥ दोय चौर ने दोय बोलाउं, प्रभुके लाद्धे चार, निज आतम निहालतों सरे, योग कपाय प्रचार हो सु० ॥ ३ ॥ दोनो चौर आतमा सोतों, मेरे लारे लागी, लूंट लिया बोलाउं दोनों, आयो दोडके भागी हो सु० ॥ ४ ॥ मोहर छापका दो परवाना, लगे न किसका जोर, बोलावाको साथे करदो, पडिया रहेशी

भौर हो सु० ॥ ५ ॥ जहां लग मीलन च्यार आतमा, घोला था रहै लार, मीलीयोंसे दुरा हो जावे, चैतन मुक्ति मझार हो सु० ॥ ६ ॥ कर्म बापडा शुक रेसरे, एक लहेरमें जाय, ज्ञानसुन्दर भक्तिमें राच्यो, ओर न आवे दाय हो सु० ॥७॥ इति.

न० २० श्री लोहावट मडन चन्दाप्रभुजी ।

(ऊंची माटी जगमें माहनी)

चन्दा प्रभु चित्तमें वस्यो, कांइ खसीयो हो श्रो मोह विकार ।) चन्दा ॥ टेर ॥ चन्दपुरीनो राजीयो, कांइ महासेन हो लीछमणानो कन्त, तेहनो नन्दन लाडलो, कांइ त्रीभुवनमें हो महिमावन्त । चन्द० ॥ २ ॥ चौतिस अतिशय शोभता, कांइ वाणी हो ए गुण पेंतिस, आठ प्रतिहारज मोटका, कांइ जीत्या हो ए रागने रीस ॥ चन्द० ॥ २ ॥ लोहावटमें भेटीया, कांइ दुजो हो बीसनोइ वास, पूजा व्रत बारा तणी, काइ कारण हो मुक्तिनो स्वाम ॥ चं० ॥ ३ ॥ आज दहाडो शुभ घडी, कांइ दीठो हो प्रभुको दीदार, जनम सफल भयो मुज तणो, काइ हृदय हो यो हरष अपार ॥ च० ॥ ४ ॥ मुज अवगुण तुज गुण तणो, कांइ गीणतां हो नहीं आवे पार, तोपण मुज निगुणा तणी, कांइ लीजो हो प्रभु सार सभाल ॥ चं ॥ ५ ॥ तुं जगतारण साहवो, काइ उभो हो हुं करुं अरदास, शिवसुख दिजे वालहा, कांइ पुरो हो मनवांछित आश ॥ चं ॥६॥ साल तहोतेर फागकी, काइ तीथी हो आ तीथी

तीज, ज्ञानसुन्दर शरणो लीयो, नही चाहे ओ काइ दुजी चीज ॥ चं ॥ ७ ॥ इति.

नं २१ श्री सिद्धचक्रजी महाराज

भवी पूजोरे सिद्धचक्र पदको ॥ भवी० ॥ पहिले पद श्रीअरिहंत देवा, चौसठ इन्द्र करे सेवारे ॥ भ० ॥१॥ दुजे पद श्री सिद्धको ध्यावो, मनःवंच्छित सब फल पावोरे ॥ भ० ॥ २ ॥ तीजे पद आचारज सोहे, च्यार तीर्थका मन मोहेरे ॥ भ० ॥ ३ ॥ चोथे पद पाठक गुणधारी, वाचना देवे अति सारीरे ॥ भ० ॥ ४ ॥ पांचमे पद साधु भगवन्ता, क्षम शम दम वली गुणवन्तारे ॥ भ० ॥ ५ ॥ छठे पद दरशनको पूजो, अनुभव रस नहीं कोइ दुजोरे ॥ भ० ॥ ६ ॥ सातमा पदमें ज्ञान प्रकाशे, लोकालोक जेहथी भासेरे ॥ भ० ॥ ७ ॥ आठमे पद चारित्र सोभागी, चक्रवरत धरी ऋद्धि त्यागीरे ॥ भ० ॥ ८ ॥ नवमे पद श्री तपको ध्यावो, कर्मकाट केवल पावोरे ॥ भ० ॥ ९ ॥ सिद्धचक्र पूजा फल केसो, श्रीपाल मयणा जेसोरे ॥ भ० ॥ १० ॥ रत्नप्रभसूरीश्वर प्रसादे, ज्ञानसुन्दर आतम माधेरे ॥ भ० ॥ ११ ॥ इति.

नं० २२ श्री सिद्धचक्र भगवान्।

आज रंग वरसेरे । आज रग वरसे ये तो सिद्धचक्र महाराज पूज मन मेरो हरखेरे आज० ॥ टेर ॥ श्वेत वर्ण पहेले पद पूजो, अरिहंत श्रीवीतरागीरे, रक्त वर्ण दुजे पद

अरचो, सिद्ध सोभागीरे आ० ॥ १ ॥ स्वमत मंडन कुमति विहंडन, जीण केसरीया कीनारे, तीजे पद आचारज पूजो, शिव सुख लीनारे आ० ॥ २ ॥ निलवर्ण चोथेपद नीमये, द्वादशांगना पाठीरे. ज्ञानदाता उपाध्याय पूजतां, कुमति नाठीरे आ० ॥ ३ ॥ श्यामवर्ण पदपांचमे पूजो, मुनिवर गुणका दरियारे, पद् खंड केरी छोडी साहबी, शिव सुख वरियारे। आ०। ॥ ४ ॥ श्वेतवर्ण दर्शनपद पूजो, बीज मोक्षनो जाणीरे। करणी सहु परिमाण हुवे, स्वसत्ता पिच्छाणीरे आ० ॥ ५ ॥ उज्वल वर्ण ज्ञानपद पूजो, लोकालोक प्रकाशेरे, भक्षाभक्ष तेहथी लहीये, निज आतम भासेरे आ० ॥६॥ श्वेतवर्ण अष्टमपद पुजो, चारित्र मोक्षको दातारे, अचल अटल शिवपुरके माहि, पावे सातारे आ० ७॥ नवमेपद निर्वाण कारणे, श्वेत वर्ण तप पुजोरे, इन्ह सिवाय मुक्तिकों दाता, नहीं कोइ दुजोरे आ० ॥८॥ साढा च्यार वर्ष कोइ लगती, आंबिलओली करशेरे, भक्ति सहित उजमणो करतो, शिव सुख वरसेरे ॥ आ० ९ ॥ जेसे मयणा श्रीपालजी, सिद्धचक्र आराध्यारे, कष्टरोग भयो सब दुरो, निज आतम साध्यारे आ० ॥१०॥ श्रीकमलेगच्छ नायक सदगुरु, रत्नसूरि मन भायारे, ज्ञानसुन्दर कहे तास प्रसादे, सुखसवायारे आ० ॥ ११ ॥

न० (२३) श्री ओशीया मंडन श्री वीरप्रभु ।

वीर प्रभुसे विनति, करलो आप मामान्य चालेश्वर

॥ श्री ॥ टेर ॥ हुं अज्ञानी जीवडो, भजीयों नहीं तुज नाम । वा । कुडकपट मद लोभमे, न किधो रुडो काम ॥ वा ॥ ॥ वीर ॥ १ ॥ तुं जाणे कृत्य माहरा, हु सब जगत से निच ॥ वा ॥ अशुभ कर्म प्रयोगसे, फर्मीयों मोहके बीच ॥ वा ॥ ॥ वीर ॥ २ ॥ नियम व्रत नहीं आखडि, नहीं कल्प क्रिया-कीसार ॥ वा ॥ अधम उद्धारण साहबों, मुजपापीने तार ॥ ॥ वा ॥ वीर ॥३॥ धन माल मागुं नहीं, राज पाट देवलोक ॥ वा ॥ तुम कृपाथी शुद्ध छे रे, आ-लोकने परलोक ॥ वा ॥ ॥ वीर ॥ ४ ॥ भवभव चाकर त्हारो, मुजे इतनो आधार, ॥ वा ॥ ज्ञानसुन्दर शरणोलियो, भवो दधिपार उतार ॥ वा ॥ वी ॥ ५ ॥ इति.

नं० २८ श्री ओशीया मडन वीरप्रभु ।

अब शरणे वीरके आयो, शुद्ध निर्मल समकित पायोंरे अब ॥ टेर ॥ प्रभुलक्ष चौरासी भमियो, में कर्म नाटीक संग रमियों, निज आतम नहीं दमियो, इम काल अनन्तो गमियोरे । अब ॥ १ ॥ मारे कुमति नार लारे लागी, या शुद्ध बुद्ध गई सब भागी, मोहराजाकी ल्हेरो जागी, सब जगमें में अभागीरे । अब ॥ २ ॥ प्रभु देखी मुद्राधारी, जद नाठी कुमति नारी, तब अनुभव जागी भारी, प्रगटी चैतनता मारीरे । अब ॥ ३ ॥ अब मेहर निजर कर लिजे, अवगुणकी माफि दिजे, भूखोंतों धायों पतिजे, सुण साहब कृपा किजेरे ॥ अब ॥ ४ ॥ दिन

भयो सफल प्रभु आजे, मेलाकावाजा वाजे, यहतीर्थ ओसीया छाजे, थारो ज्ञान घन जीयुं गाजेरे अब ॥ ५ ॥ इति

नं २९ सिद्धाचल स्तवन

जात्रा नवाणुं करीये विमलगिरि ॥ जात्रा० ॥ टेर ॥ पूर्व नवाणुं वार शेत्रुंजा गिरि, ऋषभ जिनन्द समोसरीये ॥ वि० ॥ १ ॥ कोडी सहस भव पातक तुटे, शेत्रुंजा सामो डग भरीये ॥ वि० ॥ २ ॥ सात छठ दोय अठम तपस्या, करी चढीये गिरिवरीये ॥ वि० ॥ ३ ॥ पुंडरिक पद जपीये मन हरखे, अध्यवसाय शुभ धरीये ॥ वि० ॥ ४ ॥ पापी अभव्य न नजरे देखे, हिंसक पण उद्धरीये ॥ वि० ॥ ५ ॥ भूमि संस्थारो ने नारी तणो संग, दूर थकी परिहरीये ॥ वि० ॥ ६ ॥ सचित्त परिहारीने एकल आहारी, गुरु साथे पद चरीये ॥ वि० ॥ ७ ॥ प्रतिक्रमण दोय विधिशुं करीये, पाप पडल विखरीये ॥ वि० ॥ ८ ॥ कलीकाले ए तीर्थ मोटुं, प्रवहण जीम भव दरीये ॥ वि० ॥ ९ ॥ उत्तम ए गिरिवर सेवन्ता, पद्म कहे भव तरीये ॥ वि० ॥ १० ॥

॥ इति श्री स्तवनसंग्रह भाग दुजो समाप्तम् ॥



अथ श्री

॥ स्तवन संग्रह भाग त्रीजो ॥

न० १ श्री पार्श्वनाथ अक्रोधी (असवारी)

नाथमोंकों क्रोधसे क्युं न बचावे, अक्रोधी नाम धरावे। नाथ। टेर। स्नं परे उभयं निर्थकं वस्थुं। क्षेत्रं शरीरं औपंधि, जानं अजंन उपशमं अनोपशमं, संज्वलं प्रत्यें अप्रत्यें अनन्तों-नुबंधि, । नाथ० ॥ १ ॥ समुचय जीव और चौविश दंडक, सोला गुण जो करिये, भागा चारसो इणि परे होवे, क्रोध सदा परिहरिये नाथ० ॥ २ ॥ चियं उपचियं बन्धं उदयं और, उदीरणां निरजंरीया, तीन कालसे गुणा करतां, अठारा उर धरिया ॥ नाथ० ॥ ३ ॥ एक वचन बहु वचनसे गणतां, संख्या छतीस दीजे, समुचय जीव और चौवीस दंडक, नवसो भांगा गीण लिजे नाथ०॥४॥ पूर्व च्यांरसो मीलके सारा, तेरां सो भागा जाणो, मांनं मांयां लोभं इणीपरे, बांवनसो भागा पिच्छाणो ॥ नाथ० ॥ ५ ॥ एक एक भांगे काल अनन्तो, चेतन चउगति रमीयों, अब तुज चरण शरण दो साहब, ज्ञानसुन्दर मन गमीयो ॥ नाथ० ॥ ६ ॥ इति.

नं० २ श्री आदिनाथ ।

सुनके पातीक मेरा, अवतार तार तार आदिनाथ ॥ टेर ॥ काल अनादि ताप तपतों, आज आलोचित पाप, पांचसो त्रेसठ भेद जीवका, माफी करादो आप ॥ सु० ॥ १ ॥ चौदा नरक अडतालीस तीर्यच, मनुष्य तीनसेतीन । एकसो अठाणु भये देवका, अभिहयादि [१०] गुण [५६३०] लीन ॥ सु० ॥ २ ॥ राग द्वेषसे दुगुना करिये [११२६०], तीन्हको गुनीये [३३७८०] तीहुकाल, तीन योगसे पुनः गुनलीजे [१०१३४०], गुन करण [३] तीहु संभाल [३०४०२०], ॥ सु० ॥३॥ पट्के साखसे [१८२४१२०] करत आलोचन, होत है लच अठार, सहस्र चौविस एक सो उपर, वीस भये निरधार ॥ सु० ॥ ४ ॥ शुद्ध आतम निष्कपटसे, मिथ्यादुष्कृत निवार, ज्ञानसुन्दर जिन चरन शरन अब, नइयां करदो पार ॥ स० ५ ॥ इति.

न० ३ श्रीआदिनाथ प्रभु ।

अपनाही रंगमें रंगदो नाथ मोंको अपनाही रंगमें रंगदो ॥ टेर ॥ मोह मिथ्यात लग्यो मुज लारे, सो अब इन्हकों हरदो ॥ नाथ० ॥ १ ॥ राग द्वेष दोय चौर लुटेरा, इन्साफ करी इन्हको दंडदो ॥ नाथ० ॥ २ ॥ रत्न तीन तुम पास खास हैं । सो अब हमको संग दो ॥ नाथ० ॥ ३ ॥ अनन्त ज्ञान दर्शनके दाता, एक अंस अब मुज दो ॥ नाथ० ॥ ४ ॥ ज्ञानसदा प्रभु शरन तुमारे, मेरी नइयां पार लगादो ॥नाथ० ॥ ५ ॥ इति.

न० ४ श्री नेमिनाथ प्रभु।

कोंण जाने श्याम तौरा मनकि मनाकि तनाकि लगन- किरे कोंण ॥ टेर ॥ सिवा देविके नन्द कहाया, श्रा जांन युक्तसे लाया, रथ नेसी तौरण पे आयारे। को० ॥ १ ॥ पुकार सुनी पशुवनकी, प्रभु दया करी तुम तीनकि, मेरी प्रीत तोडी नव भवकीरे। कोण ॥ २ ॥ कोण दुति कामन कीनो, शिव रमणीपे चित्त दीनों, सहसावन संयम लीनोरे ॥कोण ॥ ३ ॥ विन अवगुण मुजकों त्यागी, लो-आप भये वैरागी, फिर कहां जावोगा भागीरे। कोण॥ ४ ॥ आप पेहलीमें जाउं, शिव- पूरमें सेज विच्छाउं, मे अचल प्रेम बनाउंरे। कोण ॥५॥ यों मनीयों प्रेम मजारो, अपनोभि विरुद विचारो, प्रभु ज्ञानसुन्दर को तारोरे। कोण ॥ ६ ॥ इति

न० ५ श्री आदिनाथ भगवान्।

हे प्रभु मोय दर्शन दे ॥ टेर ॥ में हु प्यासा तुज दर्शनको, दीनपे करुणा क्यों न करे॥ हे० ॥ १ ॥ क्या नुकशान किया में तेरों, मेरी अरजी क्यों न सुने ॥ हे० ॥ २ ॥ जबर पापीकों तार दिया, अब भक्तकों क्यों विसारा ॥ हे० ॥ ३॥ आप नीरागी बनके बेठे, मुजे निरागी क्यों न करे ॥ हे० ॥ ४ ॥ रहीम दील उत्कृष्ट, होके अब क्यों हृदय निष्ठुर भये। हे० ॥ ५ ॥ जब होवेंगे आप रुपमें, तब तेरी गरजी कोन करे ॥ हे० ॥ ६ ॥ आदिनाथकों भेट लिया, फिर इच्छात

सुखको क्यों न वरे ॥ हे० ॥ ७ ॥ आतमराम अध्यात्म साखी ज्ञान सुमति संग लपट रहे ॥ हे० ॥ ८ ॥ इति.

न० ६ श्री भगवतीसूत्रकी स्तुति (होरी)

जय बोलो सदाशिव शान्तिकी जय बोलो ।
जय बोलोरे पांचमा अंगकी जय बोलो ।
जय बोलोरे सूत्र भगवतीकी जय बोलो ।

भगवतीसूत्रने विवाहपन्नति, पांचम अंग और शिवशान्तिरे ॥ जय० ॥ १ ॥ जिनवर भाषित द्वादशांगी, गणधर गुन्थी नवरंगीरे ॥ जय० ॥ २ ॥ मूल श्रुतस्कन्ध- शतककी शाखा, अन्तर शतक[१४१] हे प्रति शाखारे ॥ जय० ॥ ३ ॥ पत्र पुष्प उद्देशा[१९२५] जिन्हका प्रश्न[३६०००] सुन्दर फल तीन्हकारे ॥जय०॥४॥ अनुभव रस और प्रेमका प्याला, चैतन बन गया मतवालारे ॥ जय० ॥ ५ ॥ भरतचक्रीने श्रेणिक राजा, तुंगीया तणा श्रावक ताजारे ॥ जय० ॥ ६ ॥ मृगावतीने और जयन्ति, चेलणा राणी गुणवंतीरे ॥ जय० ॥ ७ ॥ इत्यादिक चउविध संघ सारा, द्रव्यभाव बनी पुजारारे ॥ जय० ॥ ८ ॥ गहुंली करी मंगल गावे, मोतीयन चोक पुरावेरे ॥ जय० ॥ ९ ॥ भगवती सुनीया भगवन्त थावे, पूजा करतो शिवपद पावेरे ॥ जय० ॥ १० ॥ भवभव शरणो होजो मुजने, आधाद करुं नही हुं तुजनेरे ॥ जय० ॥ ११ ॥ आज आनन्द रंग मंगल वरसे, पाप रही हीवेशुं करशेरे ॥ जय० ॥ १२ ॥ अष्टसिद्धि

ननिधिके दाता, शरणे आयो करे बहु ज्ञातारे ॥ जय० ॥ १३ ॥ नगर फलोधि माल सीतंतर, चौमासे चित आनन्दकर ॥ जय० ॥ १४ ॥ आषाढ आरंभ फागण पुरे, कृष्ण चोथ चउगति चुरेरे ॥ जय० ॥ १५ ॥ ज्ञानकल्प तरु आंगण फलीयो, सुन्दर आज मेलो मीलीयोरे ॥ जय० ॥ १६ ॥ इति.

न० ७ भाष (होरी)

खेलो होरीरे ज्ञान बगीचेमें ॥ खेलो० ॥ टेर ॥ चमाको कोट ने श्रद्धाकी धरती, दयातणी बुरज फीरतीरे ॥ खे० ॥ १ ॥ तपकी तोपो उपशम साजे, दानादिक चउ दरवाजेरे ॥ खे० ॥ २ ॥ मन मोगरो चित चम्पेली, क्रिया केतकी बनी वेलीरे ॥ खे० ॥ ३ ॥ ज्ञान गुलाब जाइ जुइ जतना, ध्यान मंडप बनीया कीतनारे ॥ खे० ॥ ४ ॥ गुप्तीका गुच्छा समितिकी लता, शील सुगन्ध भरी सत्तारे ॥ खे० ॥ ५ ॥ नयननिचेप पुष्प हे निका, नवतत्त्व फल नम्या जीकारे ॥ खे० ॥ ६ ॥ हृदय होदने शुद्ध मन पाणी, शम संवेगनुं रंग जाणीरे ॥ खे० ॥ ७ ॥ स्याद्वादकी डोलची सारी, कुंट काडी कुमति नारीरे ॥ खे० ॥ ८ ॥ ज्ञान पीचकारी भरी भरी मारी, मोहकी छाकको निवारीरे ॥ खे० ॥ ९ ॥ सिद्धान्तकी भग गुरु मुख गोटी, भर भर पीवो वडी लोटीरे ॥ खे० ॥ १० ॥ नसेकी तारमें माल मसाला, षट् द्रव्य ओडण दुसालारे ॥ खे० ॥ ११ ॥ राचे माचे नाचे सारी, चेतन संग सुमति नारीरे ॥ खे० ॥ १२ ॥ मरुधर नगर फलोधि भारी, साल सीतंतर सुखकारीरे

॥ खे० ॥ १३ ॥ इण विध होरी खेलो मेरे प्यारे, ज्ञानसे कर्म करो न्यारे रे ॥ खे० ॥ १५ ॥ इति.

(८) श्री आनदघनजी कृत अध्यात्मपद

अवधू क्या मागुं गुन हीना, वे गुन गनान प्रवीना ॥ अवधू० ॥ गाय न जानुं बजाय न जानुं, न जानुं सुर भेवा । रीज न जानुं रीजाय न जानुं, न जानुं पद सेवा ॥ अ० ॥ १ ॥ वेद न जानुं कीताब न जानुं, जानुं न लच्छन छंदा, तर्कवाद विवाद न जानुं, न जानुं कवि फंदा ॥ अ० ॥ २ ॥ जाप न जानुं जुवान न जानुं, न जानुं कवि वाता, भाव न जानुं भगति न जानुं, जानुं न सीरा ताता ॥ अ० ॥ ३ ॥ ग्यान न जानुं विग्यान न जानुं, न जानुं भज नामा, आनंदघन प्रभुके घर द्वारे, रटन करुं गुण धामा ॥ अ० ॥ ४ ॥ इति.

(९) अवधू राम राम जग गावे, विरला अलख लखावे ॥ अवधू० ॥ मतवाला तो मतमे माता, मठवाला मठराता, जटा जटाधर पटा पटाधर, छता छताधर ताता ॥अ०॥१॥ आगम पढी आगम धर थाके, माया धारी छाके, दुनियांदार दुनिसे लागे, दाशा सब आशाके ॥ अ० ॥ २ ॥ बहिरातमा मूढ जग जेता, मायाके फन्द रहेता, घट अन्तर परमातम भावे, दुर्लभ प्राणी तेता ॥अ०॥३॥ खग पद गगन मीनपद जलमें, जोखों जेसो-वैरा, चित्त पंकज खोजे सो चिन्हे, रमता आनंद भौरा ॥ अ० ॥ ४ ॥ इति.

(१०) आशा औरनकी क्या कीजे, ज्ञान सुधारस पीजे । आशा ॥ भटके द्वार द्वार लोकनके, कूकर आशा धारी, आतम अनुभव रसके रसीया, उतरे न कबहु खुमारी ॥ आ० ॥ १ ॥ आशा दासी के जे जावे, ते जन जगके दासा, आशा दासी करी जे नायक, लायक अनुभव प्यासा ॥ आ० ॥ २ ॥ मनका प्याला प्रेम मसाला, ब्रह्म अग्निपर जाली, तन भाठी अवटाइ पीये कस, जागे अनुभव लाली ॥ आ० ॥ ३ ॥ आगम प्याला पीयो मतवाला, चिन्ही अध्यातम वासा, आनन्दघन चैतन वहै खेले, देखत लोक तमासा ॥ आ० ॥४॥

(११) अकल कला जगजीवन तोरी, अकल० । अनन्त उदधिथी अनंत गुणो तुज, ज्ञान लघु बुद्धि ज्युं मेरी ॥ अकल० ॥१॥ नय अरु भंग निक्षेप विचारत, पुरवधर थाके गुण हेरी, विकल्प करत थाग नहीं पाये, निर्विकल्प होत लहरी ॥ अ० ॥ २ ॥ अंतर अनुभव विनतोय पद्में, युक्ति नहीं कोउ घटत अनेरी, चिदानन्द प्रभु करी कीरपा अब, दीजे ते रस रीझ भलेरी ॥ अ० ॥ ३ ॥ इति.

(१२) जोग जुगति जाण्या विना, कहा नाम धरावे. । रमापति कहे रंककुं, धन हाथ न आवे ॥ जो ॥ १ ॥ भेख धरी माया करी, जगकु भरमावे, पूरण परमानन्दकी, सुधिरंचन पावे । जो ॥ २ ॥ मन मुंडये विन मूंडकुं, अति घेट मुंडावे, जटा जूठ शिर धारके, कउ कोन फरावे । जो ॥ ३ ॥ उर्ध्व-

बाहु अधोमुखें, तन तापत पावें, चिदानंद समज्यों विनो, गि-
णती नवि आवे ॥ जो ॥ ४ ॥ इति.

(१३) अवधू निरपच्छ विरला कोइ । देख्या जग सहू जोइ ॥ अ० ॥ समरस भाव भला चित्त जाँके, थाप उथापन कोइ, अविनासीके घरकी वार्तो, जानेगा नर सोइ ॥ अ० १ ॥ राव रंकमें भेद न जाने, कनक उपलसम लेखे, नारी नागणीको नहीं परिचय, सो शिव मन्दिर देखे ॥ अ० ॥ २ ॥ निंदा स्तुति श्रवण सुणिने, हर्ष शोक नवि आणे ॥ ते जगमें जोगी-सर पुरा, नित्य चडते गुणठाणे ॥ अ० ॥ ३ ॥ चन्द्र समान सौम्यता जाकी, सायर जेम गंभीरा; अप्रमत्त भारंड परे नित्य, सुमेरगीरी सम धीरा ॥ अ०॥ ४ ॥ पंकज नाम धराय पंकशुं, रहत कमल जिम न्यारा, चिदानंद इस्या जन उत्तम, सो साह-बका प्यारा ॥ अ० ॥ ५ ॥ इति ॥

(१४) मारग साचा कोउ न बतावे, जाइं जाय पूछीयें ते तो अपनी अपनी गावे । मारग । मतवारा मतवाद वाद धर, थापत निजमतनीका, स्याद्वाद अनुभव बिन ताका, क-थन लगत मोहे फीका । मा० । १ । मत्त वेदांत ब्रह्मपद ध्यावत, निश्चय पख उर धारी, मीमांसक तो कर्म वदे ते, उदय भाव अनुसारी । मा० । २ । कहत बौद्ध ते बुद्ध देव मम, क्षणिक रूप दरसावे, नैयायिक नयवाद ग्रहीने, करता कोउ ठेरावे । मा० । ३ । चारवाक निज मनः कल्पना, शुन्यवाद

कोउ ठाये, तिनमें भये अनेक भेद ते, अपनी अपनी तायें। मा० । नय सरवंग साधना जामें, ते सर्वज्ञ कहावे, चिदानन्द एसा जिन मारग, खोजी हो सो पावे । मा० । ५ ।

(१५) अपने पदकों तजके चैतन, परमें फसना ना चहिये, रंजमे रोना ओस असरतमें हसना ना चहिये । टेर । जगत वस्तु सब विनासीक, तीहु काल विसरना ना चहिये, राव रंक हो कभी अपशोप करना ना चहिये । सुखमें दुःख और दुःखमें सुख इनमें चित्त धरना ना चहिये, यह पौदूगलीक है इसका आपमें समझना ना चहिये; तेरा तो एक भेप निराला, कीसीमें बसना ना चहिये । रंज । १ । भाइ बन्ध सुत दारासे कर प्रित हरखना ना चहिये, यह स्वार्थ साथी भरोसा इन्हका रखना ना चहिये, हुइ तेरी गफलत अनादकि अपतों रखना ना चहिये, यह दुःखदाइ है, भुल या भली नही, रखना ना चहिये, दर्शनज्ञान जो सभाव तेरा, जिसे विसरना ना चहिये । रंज । २ । तुं चैतन है सबसे न्यारा, भरममें आना ना चहिये, जडमें आपा आपमें जडका गाना ना चहिये । तूं अविनासी येहे विनासी, तुजे लोभाना ना चहिये, इन आतम रत्नको काचखड मूल्य विकाना ना चहिये, निकल जलदी इन्ह अन्धकूपसे, पड्या तडफना ना चहिये । रंज । ३ । राग द्वेष भट पाडासे निज विभव ठगाना ना चहिये, ज्ञानी होके कभी पर संग लगाना ना चहिये, तेरे और परमातममें कुच्छ फरक

समझना ना चहिये, ये वही चिदानन्द जिस्को वृथा सताना ना चाहिये, हो कून्दन अब जगसे न्यारा, भोग विलसना ना चहिये ॥ रंज ॥ ४ ॥ इति ॥

(१६) दरसन दिजे शीतलनाथ, मूक्तिपदके देनेवाले । टेर । मैं लच चौरासीमें भटका, मेरा मीटा नही अबी खटका, नित कर्म दीखावे लटका जोकि, नरक लेजाने वाले । द० । १ । प्रभु तुमहो पर उपगारी, एक मांनो अरज हमारी, दो स्थिर चित्त सेवाधारी, अनुभव ज्ञान जचाने वाले । द० । २ । शुद्ध समकित दर्शन पाया, मिथ्या मत अंधेर मीटाया, गुण रत्नत्रय प्रगटाया, भवोदधि पार लगानेवाले । द० ।३। इति.

(१७) बलिहारि बलिहारि बलिहारि जगनाथ होजाउं तोरी शान्ति जिन शान्ति सेवक दीजीयेजी ॥ टेर ॥ काल अनादिकेरा फिरताहुं जगमें फेरा, अंत न आयो जिन उपगारी ॥जग०१॥ पून्यउदय पाये, चरण शरण आयो, और न तुमसमजग दातारी ॥जग०२॥ चिदघन नामी स्वामि शिवपदगामी पामी, जूठ न मानु अब हितकारी ॥ जग० ३ ॥ दीन अनाथ नाथ, ग्रहियो में हाथ साथ, दोष न रंचक गुण भंडारी ॥जग०४॥ आतमको सुख आपो, वल्लभना दुःख कापो, फेर न लेउं भव अवतारी ॥ जग० ५ ॥ इति ॥

(१८) नजरटुक महेरकी करके, दिखादोगे तो क्या होगा ?

अनुपम रुपहै प्रभुजी, बतादोगे तो क्या होगा ॥ टेर ॥ प्रभु तुमदीनके रक्षक, करो मूझ दीनकी रक्षा, चौराशीलक्ष कि फेरी, मिटादोगे तो क्या होगा ॥ १ ॥ अनादि कालसे भमता, नहि अभी अंत आया है, शरण अब आपका लीना, हटादोगे तो क्या होगा ॥२॥ अनादि कालसे रूलिया, बन्यो मिट्टी, कभी पानी, तेउ वायु हरीकाया, बचादोगे तो क्या होगा ॥ ३ ॥ बि-ति-चउजाती पंचेन्द्री, पशु परवश दुःखपाया, अमर नरनारकी रुपे, छुडादोगे तो क्या होगा ॥ ४ ॥ इसी ससार सागरमें, मेरी प्रभु झुलती नईयां, करी करुणा किनारेपर, लगादोगे तो क्या होगा ॥ ५ ॥ करो प्रभुपार भवोदधिसे, निजातम सम्पदा दीजे, सेवकको अपना वल्लभ, बनालोगे तो क्या होगा ॥ ६ ॥ इति.

(१९) भर लावोरे कटोरा चन्दनका, नव अंग पूजो परमेश्वरका । भ० १ । सति द्रौपदी चन्दन चरच्यो, ज्ञान सुनो सूत्र ज्ञाताका । भ० २ । नर नारी मीलमील के पूजो, पावो अचल सुख मुक्तिका । भ० ३ । आज आनन्द रंग मगल गावो, सेवक चाकर चरणोंका । भ० ४ । इति.

(२०) भर लावोरे चगेरी फूलनकि, आगी रचावो नाभिकुलनकि । टेर । चंपो चंपेली मरवो मोगरो, विचविच छडियो गुलाबनकि । भ० १ । केवडो केतकि गन्ध सुवासीत, खुब खुली छत्री हारनकि । भ० । २ । गेंद गुलानको हृदय

विराजित, मूर्ति सोहे मन मोहनाकि । भ० । ३ । सुरसुरियामे जिनवर पूजा. साख सूनों रायप्रसेनीकि । भ० । ४ । द्रव्य भा-चसे पूजा करतों, निर्मल ज्योती समकितकि । भ० ।६। इति.

(२१) प्रभु तुम सम और न कोइ खलकमें । प्रभु० । हरिहर ब्रह्म विगोवता सो तो मदन तें जीत्यो पलकमें । प्रभु० ।१। ज्युं जल जगमें आग बूझावत। वडवानल सो पीवे पलकमें । प्रभु । २ । आनन्दघन प्रभु वामारे नन्दन । तोरी हाम न होत हलकमें । प्रभु० । ३ ।

(२२) सोहं सोहं सोहं सोहं सोहं । सोहं रटना लगीरी । सो । टेर । इंगला पिंगला सुखमना साधके, अरुण पतिथी प्रेम पगीरी । वंक नाल खट चक्र भेदके, दशमें द्वार शुभ ज्योति जगिरी । सोहं० । १ । खुलत कपाट घाट निज पायो, जनम जरा भय भीति भगीरी ॥ काच शकल दे चिंतामणि ले । कुमता कुटिल कूं सहज ठगीरी । सोहं० । २ । व्यापक सकल स्वरूप लख्यो इम । जिम नभमें मग लहत खगीरी । चिदानन्द आनन्द मूरति । निरख प्रेमभर वुद्धि थगीरी । सोहं० । ३ । इति

(२३) किन गुन भयोरे उदासी भमरा । किनगुन० । टेर । पंख तेरी कारी, मुख तेरा पीरा । सब फूलनको वासी । भमरा० । १ । मवकलीयनको रस तुम लीनो । मो क्युं जाय

नीरासी । भमरा० । २ । आनन्दघन प्रभु तुमारे मीलनकों । जाय करवत ल्यू कासी । भमरा० । ३ ।

(२४) वारोरे कोइ परघर रमवानो ढाल, म्हानी वहुने परघर रमवानो ढाल । वारोरे । टेर । परघर रमतों थई जूठा-बोली, देशे धणीजीने गाल । वारो । १ । अलने चाला करति हींडे, लोकडा कहे छे छीनाल । ओलंवडा जण जणना लावे, हैडे उपासे शाल । वारो । २ । बाहर पाडोमण जुओने लगा-रक । फोकट खासे गाल । आनन्दघन प्रभु रंगे रमतों, गोरे गाल झबुके झाल । वारो । ३ । इति ।

(२५) ऐसे जिनचरने चित्त लाउंरे मना एसे अरिहंतके गुन गाउंरे मना । टेर । उदर भरनके कारनेरे गौआं वनमें जाय । चारो चरे चिहुं दिश फीरे, वाकी सुरति वछरुआ मांहेरे । मना । १ । पांच सात साहेलीया रे, हील मील पाणी जाय, ताली दीये खडखड हसेरे, वाकी सुरति गगरुआ माहेरे । मना ॥ २ ॥ नटुआ नाचे चोकमेंरे, लोक करे लख सोर । वासग्रही वरत चढे । वाकों चित्त न चले कहुं ठोररे मना ।३ जूआरी मनमें जूवारे, कामिनीके मन काम । आनन्दघन प्र युं कहे, तुमे ल्यो भगवन्तको नामरे मना । ४ । इति ।

॥ इति श्री स्तवनसंग्रह भाग तीजा समाप्तम्



अथ श्री

सज्झाय तथा गहुंली संग्रह.

भाग १ ला:

न० १ दशवैकालिककी सज्झाय

धम्मो मंगल मुकिठं, अहिंसा संजमो तवो। देवावितं नमंसंति, जस्स धम्मे सयामणो ॥ १ ॥ जहा दुमस्स पुप्फेसु, भमरो आविरइ रस। नय पुप्फ किलामेई, सोय पीणेइ अप्पयं ॥ २ ॥ एमे ए समणा मुत्ता, जे लोए संति साहुणो। विहं-गमाव पुप्फेसु, दाणं भत्ते सणे रया ॥ ३ ॥ वयं च विर्त्ति लप्भामो, न य कोइ उवहम्मई। अहागडेसु रीयंते, पुप्फेसु भमरा जहा ॥४॥ महुकार समा बुद्धा, जे भवंति अणिस्सिया। नाणापिंड रया दंता, तेण वुच्चंति साहुणो। त्तिबेमि। इति.

न० २ बीजकी सज्झाय.

या बीज कहे सुण कन्त शान्त घर आवो तो सही ॥ या बीज० ॥ टेर ॥ रतन तीन तुम पास खास किम खोवो छो सही। यों शम संवेगका रंग पिया किम धोवो छो सही— धोवो छो सही रे मेरे चैतन धोवो छो सही ॥या बीज०॥१॥ कुमति कुटीला नार जार संग जोवो छो सही। यों नरक नि-गोदको बीज पिया किम बोवो छो सही ॥ बोवो० ॥ या बीज०

॥२॥ शब्द रूप रस गन्ध फन्दमें मोहो छो सही। या पर-पुद्गल संग बेठ बेठ किम खोवो छो सही ॥ खोवो० ॥ या बीज० ॥३॥ तृष्णा मच्छर मान विषय विष होवो छो सही। या देख पराइ नार लार किम जोवो छो सही ॥ जोवो० ॥ या बीज० ॥४॥ सुमति बिच्छाइ सेज मेजपर पोडो तो सही। या अनुभव ज्ञानकी प्रीत रीत घर मांडो तो सही ॥ मांडो० ॥ या बीज० ॥ ५ ॥

न० ३ पांचमकी सझाय.

तप वडोरे संसारमें जीव उज्वल थावेरे। कर्मरुपी इंधन जले, वेलो मुक्तिमें जावेरे ॥ तप० ॥ टेर॥ शासनपति श्री वीरजी, कर्म काटण जगसूरारे। साढा बारा वर्ष भूजीया, बाजा तप कारण तूरारे ॥ तप० ॥ १ ॥ कठिन कर्मकों छेदके, पाम्या केवल नाणोरे। छठ छठ तप कीया पारणा, गणधर गौतम जाणोरे ॥ तप० ॥ २ ॥ छठ तप अंबिलपारणे, अरस निरस आहारोरे। वीर जिनन्द वखाणीयो, धन्य धन्नो अण-गारोरे ॥ तप० ॥ ३ ॥ काली आदि दश जाणजो, श्रेणिक नृपनी नारोरे। एकावली मुक्तावली, पोया तपस्याना हारोरे ॥ तप० ॥ ४ ॥ आनन्दआदि श्रावक हुवा, धरी प्रतिमा इग्यारोरे। तप करी काया शोषवी, हुवे एका अवतारोरे ॥ तप० ॥ ५ ॥ कोटी संचित हुवे, किधा कर्म विकरालोरे। क्षमा सहित तपस्या करे, देवे छीनमें प्रज्वालोरे ॥ तप० ॥ ६ ॥ आराधो

ज्ञान पंचमि, दुःख दोर्भाग्य जावेरे। निर्मल हुवे आतमा, ज्ञान केवल पावेरे ॥ तप० ॥ ७ ॥ इति ।

नं० २ पखवाडाकि सझाय ।

पिया पखवाडो वितों, वितोंरे दोय पखा एक मास, पिया पखवाडो वितों । टेर । एकम कहे तुं एकलोरे, थारो नहीं जग कोय । स्वारथीया मीलीया सहुरे, ज्ञान दीपकसे जोय–पिया । १ । दुज कहे बन्ध करमकारे, राग द्वेष दोय बीज । उखेडो जडा मूलसेरे, संभालो निज चीज पि० । २ । तीज कहे तत्त्व धरोरे, हृदय करों विचार । देवगुरु धर्म शुद्धतारे, भवजल तारणहार पि० । ३ । चोथ च्यार कषायकोंरे, चंडाल चोकडी नाम । त्यागो संगत तेहनीरे, तो पामों निज धाम पि० । ४ । पंचमि पंच इन्द्रिय तणारे, तेवीस विषयसे रहो दूर । दो सो बावन विकारकोंरे, जाण करो चकचूर पि० । ५ । छठ जयणा छे कायनीरे, सात भय निवार, आठमदको परिहरोरे, नव पाळो ब्रह्मचार पि० । ६ । दशविध यतिधर्म धरोरे, पडिमा वहो इग्यार । बारा प्रतिमा साधुतणीरे, तेरा काठीया निवार पि० । ७ । चवदा नियम चीतारजोरे, जनम सफल होय जाय । पख पुरो पुनम दिनेरे, पूर्णकला प्रगटाय पि० । ८ । सातवार पन्दरे तीथीरे, एक दिन आसे काल । चेत सके तो चेतलेरे, पाणी पहेला बान्धो पाल पि० । ९ । उगणीसे इठंतेरे, फलवृद्धि कीयों चोमास, ज्ञान उपदेश सुणी भलोरे, करो करमोंका नास पि० । १० । इति ।

नं० ९ इग्यारा अंगकि सझाय ।

अंग इग्यारे पुजो प्राणी, इम कह्यो केवलनाणीरे । अंग० । टेर । प्रथम अंग आचारंग जीणरा, दो श्रुत स्कन्ध वाजेरे, अध्ययन पैंचवीस उदेशा पीचैंयासी, मुनि क्रियासु छाजेरे ॥ अंग० ॥ १ ॥ तीम सुयगडायाग दो श्रुत स्कन्धे, अ-तेवीस उ-तेतीसरे । स्वमत मंडन परमत खंडन, न्याय युक्ति विशेषरे ॥ अंग० ॥ २ ॥ ठाणायंग दशठाणा उदेशा, एकवीस कह्या न्यारान्यारारे । एक से दश बोलोंकों संग्रह, संक्षेपे कह्या सारारे । अंग ॥ ३ ॥ सामवायंगमें एक से लेके, क्रोडाक्रोडी तांई रे । अरिहंत चक्री हरी हलधर सब, सूत्र सुंधज आइ रे। अंग ॥ ४ ॥ पचम अग भगवती सूत्र, शतक इगतालीस सारा रे । उगणीसो पचवीस उदेश, प्रश्न छत्तिस हजारा रे । अंग ॥ ५ ॥ ज्ञाता धर्मकथा छे जिणमें, अध्ययन कह्या उगणीसो रे । माढा तीन क्रोड छे कथा, नव नव रंगवणीसोरे । अंग ॥ ६ ॥ उपासक दशाग सातमे, श्रावकोंका अधिकार रे । प्रतिमा साधी व्रत आराधी, हुवे एका अवतार रे । अग ॥ ७ ॥ अन्तगढमें मुनिवर नेउ (९०), अन्तमें केवलनाणो रे। अनुत्तरोववाइमें मुनि तेतीस, गया अनुत्तर वैमाणो रे । अग ॥ ८ ॥ प्रश्न व्याकरण दशमे अगे, विद्या अनेक प्रकारो रे । आदि उत्तर आपे, संवरासंवर विचारो रे । अंग ॥ ६ ॥ विपाक लहीजे, सुख दुःखको अधिकाररे । द्रष्टिवाद

अंग बारमो, नही हमाणो प्रचार रे । अंग ॥ ९ ॥ पूजा कीजे शील पालीजे, दान सुपात्रे दीजे रे । ज्ञान कहे कन्याणक दिवसे, मौने पौषद लीजे रे । अंग ॥ १० ॥ इति ।

न० ६ सखपोक्खली श्रावककी सझाय

भविक जन तरीये इम संसार, पामी जे भवपार ॥ भविक जन तरीये इम संसार ॥ टेर ॥ जम्बुद्विपका भरतमेंजी, सावत्थी नगरी जाण । संख श्रावक जहां वसेजी, पोखली आदि गुणखाण ॥ भ० ॥ १ ॥ विचरन्त वीर समोसर्याजी, परिषदा वन्दन जाय । वाणी सुधारस देशनाजी, सुणतां आनन्द थाय ॥ भ० ॥ २ ॥ वांदीने पाछा वळ्याजी, संख कहे सुनो एम । आज पाखीनो दीन छेजी, पौषध करो धरी प्रेम ॥ भ० ॥ ३ ॥ यत्ना कर निपजावजोजी । असनादिक चउ-आहार । खातां पीतां विचरशोजी, पौषद शुं करी प्यार ॥ भ० ॥ ४ ॥ विनय करी कहे पोखलीजी, तुम आज्ञा परिमाण । भोजनकी तैयारी करेजी, विविध प्रकारे जाण ॥ भ० ॥ ५ ॥ संख निज घर आवतोंजी, चढीया भाव रसाल, निज नारी सूचित करीजी, पहुचा पौषधशाल ॥ भ० ॥ ६ ॥ निराहार पौषध करीजी, ध्यावे धर्म ज ध्यान, पोखली आव्या तेडवाजी, उत्पला[1] दे सन्मान ॥ भ० ॥ ७ ॥ वन्दन कर पुछे इसोजी, भले पधार्या आज,* संख श्रावक किहां गयाजी, छे मुज तेथी काज ॥ भ० ॥ ८ ॥ चळती बोले उत्पलाजी, पौषधशाल

१ उत्पलाजी सख श्रावककी भार्या है वह भी श्राविका है । * पोखली बोला

मझार। पोखली त्या आवी करीजी, वन्दन करे नमस्कार ॥ भ० ॥ ९ ॥ चालो पौषध कीजीयेजी, भोजन विविध तैयार, आज मुझे कल्पे नहींजी, तुम छन्दे करो विचार ॥भ०॥१०॥ विस्मय पामी पोखलीजी, आया निज पौषधशाल। खातां पीतां पौषध करेजी, निज आतम उज्वाल ॥ भ० ॥ ११ ॥ प्रातः उठी गया वीरपेजी, सुनी उपदेश रसाल। संख हीले पोखलीजी, भापे दीनदयाल ॥ भ० ॥ १२ ॥ प्रिय द्रढ धर्मि मख छेजी, निंदतां लागे कर्म। भय पामे अति पोखलीजी, वीर बतायो मर्म ॥भ०॥१३॥ अपराध खमायो आपणोजी, वन्दन कर नमस्कार। सखजी प्रश्न पुछीयोजी, कीसो कषायको सार ॥ भ० ॥ १४ ॥ उत्तर आपे जगधणीजी, सुनजो सहु नरनार। कर्म बाधे चीकणांजी, रूले अनन्त संसार ॥भ० ॥ १५ ॥ विषय कषाय निवारजोजी, धरजो आतम ध्यान। स्वामिवत्सल भावसेजी, करलो सुन्दर ज्ञान ॥ भ० ॥ १६ ॥ संख श्रावक व्रत पालनेजी, जाशे स्वर्ग मझार। विदेहक्षेत्रमें सीझसेजी; करशे भवनो पार ॥ भ० ॥ १७ ॥ भगवती शतक बारमेजी, प्रथम उदेशे मझार। एकासणे पौषध करोजी, भाषे जगदाधार ॥ भ० ॥ १८ ॥ उगणीसे इठांतरेजी, माघ कृष्ण सोमवार, फलवृद्धि एकादशीजी, ज्ञान सदा जयकार ॥ भ० ॥ १९ ॥ इतिशम्।

नं० ७ तुंगीया नगरीके श्रावकोंकी सझाय (झला)

श्रावक तुंगीया तणा श्री वीरना रागी हो राज ॥ श्रा-

वक० ॥ टेर ॥ तुंगीया नगरी सुहामणीजी, श्रावक वसे वि-
शाल । धनधान्य उद्धारताजी, चैत्यघणा पौषधशाल ॥ श्रा०
॥ १ ॥ नवतत्त्वने ओळखेजी, क्रिया पचवीशना जाण । गुरु
गीतार्थसे लीयोजी, स्याद्वाद परिमाण ॥ श्रा० ॥ २॥ साहाज
न वंछे सुरतणोजी, द्रढ श्रद्धा जिनरंग । देव दानव समरथ
नहींजी, करे धरमको भंग॥ श्रा० ॥ ३ ॥ पार्श्वनाथ संतानी-
याजी, पांचसो मुनि परिवार । तुंगीया नगरी समोसर्योजी,
भवजल तारणहार ॥ श्रा० ॥ ४ ॥ श्रावक मीली वन्दन
गयाजी, देशना सुनी रसाल । तप संयम फल पुछीयाजी,
उत्तर आपे दीनदयाल ॥ श्रा० ॥ ५ ॥ संयम रोके आवताजी,
क्षीण तपथी थाय । श्रावक तर्क करे इसीजी, तो देवलोके
किम जाय ॥ श्रा० ॥ ६ ॥ तप संयम सरागसेजी, कर्म संग
सुर थाय । परिषदा वन्दे प्रेमसेजी, आइ जीण दिशी जाय ॥
श्रा० ॥७॥ वीर कहे गौतम सुणोजी, मुनि श्रावककी जोड ।
दोनों शिवपद पामशेजी, कर्म झंझीरो तोड ॥ श्रा० ॥ ८ ॥
उगणीसे इठान्तरेजी, वसंतपंचमी जान । फलवृद्धि पामे
सदाजी, सुन्दर करीये ज्ञान ॥ श्रा० ॥ ६ ॥ इतिशम्.

नं ८ कामदेव श्रावककी सज्झाय (असवारी)

धन्य हे श्रावक व्रतके धारी, निज आत्माको तारी ।
॥ धन्य ॥ चम्पानगरी कामदेवजी, एक दिन पौषदशाले, दृढ
प्रतिज्ञा पौषद कीनो, निज आतम उज्जवाले । ध० ॥ १ ॥
देव पिशाचको रुप बनायो, दीसे महा भयकारी, हाथमें खडग

शालामें आयो, एसा वचन उचारी । ध० ॥२॥ धर्म छोडणो नहीं तुझ कल्पे, हु रे छुडावण आयो, खंड खंड तुझ तनका करशुं, श्रावक नहीं गभरायो । ध० ॥ ३ ॥ अडग देख गज-रुप बनायो, सर्प रुप अरु कीनो । दान्ताशुल ओर डंक मारिया, उपसर्ग सुर बहु दीनो । ध० ॥ ४ ॥ ध्यान अखंड आत्मरमणता, देखी सुर सरमायो, देवरुप असली कर अपना, सन अपराध खमायो । ध० ॥ ५ ॥ चरम तीर्थंकर चम्पा नगरी, समोसरण सुर ठायो । कामदेव पौषद पारीने, जिन चरणोंमे आयो ॥ ध० ॥ ६ ॥ कामदेवकी करी प्रशंसा, मुनिगण वीर बुलावे । उपसर्ग सह्या श्रावक मेरा, एक भव करी शिव जावे । ध० ॥ ७ ॥ तुमे तो द्वादश अंगके पाठी, अधिक रखो मजबुती । कर्मशत्रुका नाश करीने, जलदिवरों वरमुक्ति । ध० ॥ ८ ॥ उगणीसे इठान्तर माधकी, शुक्र तीज भोमवारो, आतम ज्ञान सदा सुखकारी, फलोधी नगर मझारो । ध० ॥ ९ ॥ इतिशम् ।

न ९ आनन्द श्रावककी सझाय ।

हाथ जोडी आनन्द कहे, नीचो शिप नमाय हो । स्वामी मारी उठणरी शक्तिकों नहीं, आगाचरण कराय हो । स्वामी हु अर्ज करुं थासे विनति । टेर । ॥ १ ॥ गौतम चरण आगा कीया, वाद्या गयो हुलास हो । स्वामी मारो धन्य दहाडो धन्य घडी, सफल हुई मुझ काय हो । स्वा० ॥ २ ॥ आनन्द प्रश्न पुछीयो, गौतम ध हो, आनन्द प्रायश्चित लो

ण व्रतकों । राखो मुक्तिसे प्रेम हो । स्वा० ॥ ३ ॥ साचाने
ायश्चित नहीं, झूठाने लागे पाप हो । स्वामी में देख्यो जैसो
ापीयो प्रायश्चित लोनी आप हो । स्वा० ॥ ४ ॥ इतनी सुण
का हुइ, आया वीरनी पास हो । स्वामी हुं आज्ञा लेइ गयो
ोचरी, कीधी वात प्रकाश हो । स्वा० ॥ ५ ॥ वळता वीर
ी कहे, वचन थयो पतीत हो । गौतम जाय खमावो आ-
न्दने, आ जिनमारगनी रीत हो । स्वा० ॥ ६ ॥ तहत
चन श्री वीरना, शिष चढाइ आण हो । गौतम पारणो
ीधो नहीं, न्याय मारगना जाण हो । स्वा० ॥ ७ ॥ साचा
ाचा थे श्रावकों, गुणो करी गंभीर हो । आनन्द सरधामें
ठागणा, थोरा गुण कीया श्रीमहावीर हो । स्वा० ॥ ८ ॥
िवानन्दा नारी भली, पतिवरता शुभनित हो, गौतम वहा
ण श्रेणी श्राविका, जिनमार्गकी प्रतित हो।स्वा० ॥६॥ एक
ासनी संलेखना, गयो पेहले देवलोक हो । गौतम च्यार
ल्योपमनो आउखो । चवीने जासी मोच हो । स्वा० ॥१०॥
ान शीयल तप भावना, यह जगमें तंतसार हो। प्राणी पाळो
ाराधो भावसे, कुशल सदा जयकार हो । स्वा० ॥ ११ ॥
तिशम् ।

न० १० असरपदकि सझाय ।

अब हम अमर भये न मरेंगे ॥ अब० ॥ या कारण
मिथ्यात दीयो तज, क्युं कर देह धरेंगे ॥ अब० ॥ १ ॥
ाग द्वेप जग बंध करत है, इन्हकों नाश करेंगे, मरीयों अ-

नंत काल तें प्राणी, सो हम काल हरेंगे ॥ अव० ॥ २ ॥ देह विनाशी मै अविनाशी, अपनिगति पकरेंगे। नासी जासी हम थिरवासी, चाखे व्हैं निखरेंगे ॥ अव० ॥ ३ ॥ मर्यों अनंतवार विन समज्यों, अब सुख दुःख विसरेंगे। आनंदघन निपट निकट अचर दो, नहीं समरे सो मरेंगे ॥ अव० ॥ ४ ॥ इति ।

नं० ११ निद्रासे जागृत होना ।

अवधू खोली नयन अब जोवो, द्रिग मुद्रीत काहा सोवो । अव० । मोह निंद्रा सोवत तुं खोया, सर्वस्व माल अपना, पंचचोर अजहुं तोय लूंटत, तास मर्म नहीं जाना ॥ अव० ॥ १ ॥ मीली च्यार चंडाल चोकडी, मंत्री नाम धराया । पाइ केफ प्याला तोहे, सकल मुलक ठगखाया ॥ अव० ॥ २ ॥ शत्रुराय महाबल जोद्धा, निजनिज सैन्य सजाये । गुणठाणेमें बन्ध मोरचे, वेरिया तुम पुर आये ॥ अव० ॥ ३ ॥ परमादी तुं होय पियारे, परवशता दुःख पावे । गया राजपुर सारथ सैंती, फीर पाछा घर आवे ॥ अव० ॥ ४ ॥ साभली वचन विवेक मित्तका, छिनमे निज दल जोड्या । चिदानंद एसी रमत रमतां, ब्रह्म वंक गढ तोड्या ॥ अव० ॥ ५ ॥ इति ॥

न० १२ आपस्वभावनि सज्झाय ।

आप स्वभावमां रे अवधू सदा मगनमें रहेना । टेर । जगत जीवहे करमाधिना, अचरिज कच्छुअ न लिना ॥ आप० ॥ १ ॥ तु नहीं केरा कोइ नहीं तेरा, क्या करे मेरा मेरा,

तेरा हे सो तेरी पासे, अवर सबे अनेरा ॥ आप० ॥ २ ॥ वपु विनासी तुं अविनासी, अबहे इनको विलासी । वपु संग जब दूर निकासी, तब तुम शिवका वासी ॥ आप० ॥ ३ ॥ राग ने रीसा दोय खविसा, ए तुम दुःखका दीसा । जब तुम उनको दूर करीसा, तब तुम जगका ईशा ॥ आप० ॥ ४ ॥ परकी आशा सदा निराशा, ये हे जगजन पासा । ते काटनकुं करो अभ्यासा, लहो सदा सुखवासा ॥ आप० ॥ ५ ॥ कबहीक काजी कबहीक पाजी, कबहीक हुआ अपभ्राजी । कबहीक जगमें कीर्ति गाजी, सब पुद्गलकी बाजी ॥ आप० ॥ ६ ॥ शुद्ध उपयोगने समताधारी, ज्ञान ध्यान मनोहारी । कर्मकलंककुं दूर निवारी, जीव वरे शिवनारी ॥ आप० ॥ ७ ॥ इति ॥

नं० १३ समकितनी सझाय

समकित नवि लह्योरे, एतो रूल्यो चतुर्गति मांहे ॥ सम० ॥ त्रस थावरकी करुणा कीनी, जीव न एक विराध्यो । तीनकाल सामायिक करतां, शुद्ध उपयोग न साधो ॥ सम० ॥ १ ॥ झूठ बोलवाको व्रत लीनो, चौरीको पण त्यागी । व्यवहारादिक महानिपुण भयो, अंतरदृष्टि न जागी ॥ सम० ॥ २ ॥ उर्ध्व भुजा करी उंधो लटके, भस्म लगा धूम गटके । जटा जूट शिर मुंडे झूटो, विन श्रद्धा भव भटके ॥ सम० ॥ ३ ॥ निज परनारी त्यागज करके, ब्रह्मचारी व्रत लीनो । स्वर्गादिक याको फल पामी, निज कारज नवि किनो ॥ सम० ॥ ४ ॥

बाह्य क्रिया सब त्याग परिग्रह, द्रव्यलिंग धर तीनो। देवचन्द्र कहे आविधतो हम बहुतवार कर लीनो ॥सम०॥५॥ इति.

नं० १४ लघुताकी सज्झाय.

लघुता मेरे मन मानी, लेइ गुरुगम ज्ञान निशानी ॥ लघु० ॥ टेर ॥ मद अष्ट जिनोने धारे, ते दुर्गति गये बिचारे। देखो जगतमें प्रानी, दुःख लहत अधिक अभिमानी ॥लघु०॥१॥ शशी सूरज बडे कहावे, ते राहुके वश आवे। तारागण लघुता धारी, स्वर भानु भीति निवारी ॥लघु०॥२॥ छोटी अति जोयण गन्धी, लहे खटरस स्वाद सुगन्धी। करटी मोटाइ धारे, ते छार शीश निज डारे ॥ लघु० ॥ ३ ॥ जब बालचन्द्र होय आवे, तब सहु जग देखण जावे। पूनम दिन बडा कहावे, तब क्षीण कला होय जावे ॥ लघु० ॥ ४ ॥ गुरुवाइ मनमें वेदे, उपश्रवण नासिका छेदे। अंग मांहे लघु कहावे, ते कारण चरण पूजावे ॥ लघु० ॥ ५ ॥ शिशु राज धाममें जावे, सखी हिलमिल गोद खेलावे। होय बडा जाण नही पावे, जावे तो शिश कटावे ॥ लघु० ॥ ६ ॥ अतरमद मान वहावे, तब त्रिभुवन नाथ कहावे। इम चिदानंद ए गावे, रहणी विरला कोउ पावे ॥ लघु० ॥ ७ ॥ इति.

नं० १५ कथणी

कथणी कथे सहु कोइ, रहेणी अति दुर्लभ होइ ॥टेर॥
शुकरामको नाम वखाणे, तम जाणे। या विध

भणी वेद सुणावे, पण अकल कला नवि पावे ।कथ०॥१॥ षट् त्रीस प्रकारे रसोइ, मुख गीणतों तृप्त न होइ। शिशु नाम नाही तस लेवे, रस स्वादत सुख अति लेवे ।कथ०॥२॥ वंदीजन कडखा गावे, सुणी शूरा शीष कटावे। जब रुंढ मूंडता भासे, सहु आगळ चारण नासे । कथ० ॥ ३ ॥ कहणी तो जगत मजुरी, रहेणी हे बंदी हजुरी । कहेणी साकर सम मीठी, रहणी अति लागे अनीठी । कथ० ॥ ४ ॥ जब रहणीका घर पावे, कथणी तब गीणती आवे । अब चिदानन्द इम जोई, रहणीकी सेज रहे सोई । कथ० ॥ ५ ॥ इति ।

न १६ मीजाजीको हितशिक्षा।

कह्यो मान मीजाजी जोबन जावेंगा छीनमें छोडके । क्यो ॥टेर॥ रगी चंगी सुन्दर काया, देख छबी इन तनकी। टेडी पगडी बाल सुवारे । कर रह्यो मोजों मनकीजी कह्यो० ॥ १ ॥ मेला खेला तीज तमासा नाटक देखण जावे । पर रमणीसे प्रीत करे तुं, कुलको कलंक लगावेजी । कह्यो० । २॥ हाड मांसको पींजर बनीयो, विष्टा केरी कोठी । नारी दीपक नरक दीखावे, क्या छोटी क्या मोटीजी । कह्यो० ॥३॥ गर्भावासमें उंधो लटक्यो, दुःख अनंतो पायो । भुल गयो वेदन जोबनमें, पुद्गल प्रेम लगायोजी । कह्यो० ॥ ४ ॥ काल आनके दोलो फीरसी, कीसके सरणे जासी । ज्ञानसुधारस प्याला पीले, काटे मोहकी फांसीजी । क्यों० ॥ ५ ॥ इति ।

न १७ क्रोधकी शान्ति ।

क्रोध मत करीये तुम सेणारे, क्रोध मत करीये तु
सेणा । धारधार संतोष जरा रस समताका लेणा ॥ टे
॥ क्रोध प्रीतकों तोडे छीनमें, वैर करे जगसे । त
सयमकों दव लगावे, ताप होय तनसे । क्रोध० ॥ १ ॥
कल्पवृक्ष सम मुनिपद धारी, क्रोध बहुत कीनो ।
तीर्यंच गति नाग योनिमें, जाय जनम लीनो । क्रोध० ॥२॥
चालीस क्रोडाकोड उदयमें, स्थितिबन्ध थावे । उदय रस वि-
पाक विपाके, चैतन्य दुःख पावे । क्रोध० ॥ ३ ॥ गजसुख
माल मेतारज मुनिवर, खंधक ऋषि जाणो । एवन्ती सुकुमाल
क्षमा करी, प्रदेशी राणो । क्रोध० ॥ ४ ॥ निज रिपुके सन-
मुख होके, क्षमा खडग लीजे, ज्ञान सुधासम रसके प्याले,
भर भरके पीजे । क्रोध० ॥ ५ ॥ इति ।

न० १ गहुली श्री चिदानन्दजी कृत ।

चंद्रवदनी मृगलोचनी, ए तो सजी शोला शणगाररे ।
एतो आवी जगगुरु वन्दवा, धरी हियडे हरख अपाररे ॥चं०॥
१ ॥ हांरे एतो मुक्ताफल मुठी भरी, रचे गहुंली परम उदा-
ररे । जिहां वाणी जोजन गामिनी, धन वरसे अखंडित धाररे
॥ चं० ॥ २ ॥ हांरे जिहां रजत कनक रतनना, सुर रचित
त्रण प्रकाररे । तस मध्य मणि सिंहासने, शोभित जगदा
धाररे ॥ चं० ॥ ३ ॥ हांरे जिहां नरपति खगपति लछपति,
सुरपति मुत परखदा बाररे निधान गुण आगररे,

जिहां गौतमसा गणधाररे ॥ चं० ॥ ४ ॥ हारे जिहां जीवादि नवतत्त्वनो, षट्द्रव्य भेद विस्ताररे । एतो श्रवण सुणी निर्मल करे, निज बोधवीज सुखकाररे ॥ च० ॥ ५ ॥ हांरे जिहां तीन छत्र त्रीभुवन उदित, सुरढोलीत चमर च्याररे । सखी चिदानन्दकी वन्दना, तस होजो वारंवाररे ॥ चं०॥६॥ इति।

नं० २ गहुंली व्याख्यान सुनने विषय।

व्याख्यानमें चालो हे सहेलडी। कांइ सूत्र सुणवा काज, व्याख्या० ॥ टेर ॥ पौषद कर भोजन करोहे महेलडी । कांइ कदेय न लागे भुख ॥ व्याख्या० ॥ १ ॥ धर्मलाभकों पाटीयो हे स० । कांइ मंगल चरणकों थाल ॥ व्या० ॥ २ ॥ सूत्र पकवान जीमसोहे स० । कांइ अर्थ सुधारस पान ॥ व्या० ॥ ३ ॥ भुजीया पकोडा भावना हे । स० । कांइ हेतु पापड जाण ॥ व्या० ॥ ४ ॥ दृष्टान्त साग सुहामणा हे । स० । कांइ स्याद्वादको भोल ॥ व्या० ॥ ५ ॥ पुरसणवाला गुरू मील्या हे । स० । कांइ रूच रूच जीमो आप ॥ व्या० ६ ॥ खुमार कदी उत्तेर नहीं हे । स० । कांइ भवोभव भागे भुख ॥ व्या० ७ ॥ मुक्ताफलकों साथीयो हे । स० । कांइ गहुंली गावो रसाल ॥ व्या० ॥ ८ ॥ नरभव सफलो किजिये हे म० । कांई ज्ञान सदा जयकार ॥ व्या० ९ ॥ इति ॥

न० ३ गोतमस्वामीकि गहुली।

इंद्रभूति गणधार, बहु मुनियों परिवार, सुनजो चित्त-

लाय, राजग्रही समोसरयाए ॥ १ ॥ श्रेणकनृप थइ तैयार
सैना च्यार प्रकार, सुनजो चित्तलाय । चेलना चाली चुपसेए
॥ २ ॥ देई प्रदित्तणासार, वन्दे वारंवार, सुनजो चित्तलाय,
योगस्थान बेठी परिषदाए ॥ ३ ॥ गौतम दे उपदेश, जीवा-
जीव विशेष, सुनजो चित्तलाय, पट्द्रव्य भिन्न भिन्नसाभलोए
॥ ४ ॥ धर्माधर्म आकाश, जीवपुद्गल निकाश, सुनजो चित्त
लाय, कालद्रव्य छट्ठो कह्योए ॥ ५ ॥ चलन थिर अवगहान,
उपयोग पुरणजाण, सुनजोचित्तलाय, वरतनगुण कह्यो काल-
नोए ॥ ६ ॥ पंच अरूपी अजीव, एकरूपी एक जीव, सुनजो
चित्तलाय, स्व स्वगुण क्रिया करेए ॥ ७ ॥ अगुरु लघु पर्याय,
साधारण कहेवाय, सुनजो चित्तलाय, हानि वृद्धि पट्गुण हु-
वेए ॥ ८ ॥ गहुंली अध्यातम ज्ञान, गावे चतुर सुजान, सु-
नजो चित्तलाय, अत्तय ज्ञान आनन्द करोए ॥ ९ ॥ इति ॥

नं० ४ वीरप्रभु आगे जयन्तीबाइकी गहुंली ।

दरसन करसोजी दरशन करसोजी म्हारे पुन्यजोगसे
प्रभुजी पधारयाजी दरशन० ॥ टेर ॥ ग्रामनगरपुर पाटण
विचरत । प्रभुजी आज पधारयारे, सोना केरो सूरज ऊगो,
...रज सारयारे ॥ दर० ॥ १ ॥ नगरी कौसंबी खुब शृंगारे,
...ा च्यार प्रकारेरे । राय उदाइ वन्दन जावे, बहुपरिवारेरे ॥
...० ॥ २ ॥ कहे जयन्ति सुनो मोजाइ, चालो वन्दन जा-
... । स्नान मज्जन वस्त्र भूषण, घर भाव उमावोरे ॥ दर० ॥
... एक रथपर नणंद ... । वन्दन जावेरे । मध्य

दावसेजी ॥ व्या० ॥ ३ ॥ गुरु गौतम गुण सागर वर्याजी, ये तो राजग्रही समोसर्याजी (छूट) राजा श्रेणिक वन्दन आवे राणी चेलणा संग जावे, गहुली हर्ष हर्षके गावे, (मीलत) अक्षय पदकों पावों सुन्दर ज्ञानसेजी ॥ व्या० ॥ ४ ॥ इति ।

न० ८ गहुंली (गेहरोजी फूल गुलाबको)

मीठी वाणी जिनतणी।आतो मीठी २ दुद्ध निवात म्हारा गुरुजी मीठी वाणी जिनतणी ॥ टेर ॥ राजग्रही उद्यानमें, ए तो आया वीरजिनन्द म्हारागुरुजी ॥ मी० ॥१॥ समौसरण देवें रच्यो । एतो श्रेणीक वन्दन जाय ॥ म्हा० मी०॥२॥ गहुली करे राणी चेलणा । ए तो श्रोता सुधारस पान ॥ म्हा० मी० ॥४॥ जीव अजीव पुन्य जाणवा । पापाश्रव बन्ध छोड म्हारा जीवड ॥ मी० ॥ ५ ॥ संवर मोक्ष निर्जरा । ए तों तीन करो अंगीकार म्हारा जीवड मी० ॥ ६ ॥ च्यार जीव नवतत्वमें । ए तो पांच कह्या अजीव म्हा० मी० ॥७॥ च्यार अरूपी रूपी कह्या । ए तो रूपी अरूपी एक म्हा० मी० ॥८॥ इत्यादिक जिन देशना।ए तो सुनी चेत्या नरनार म्हा० मी॥९॥ सुन्दर गहुंली गावतां, एतो ज्ञान सदा जयकार म्हारागुरुजी मी० ॥ १० ॥ इति ॥

समाप्तम्

अथश्री

उपकेश (कमला) गच्छ लघुपट्टावली ।

कविताकर्ता,

श्रीमदुपकेश (कमला) गच्छाचार्य परमपूज्य भट्टारक
श्री श्री सिद्धसूरिजी महाराज.



(१)

छन्द छप्पय.

प्रथम पट्ट अधिरूढ पार्श्वजिन ज्ञान प्रकाशक ।
सयम श्रुत संपन्न अखिल अज्ञान विनाशक ॥
अहि बालक प्रतिपाल कमट कुत्त सिव भ्रुनि भ्रामक ।
सरणागत भयहरण भय भवि जन भय नाशक ।।
वसुवेद संख्य जिण पट्ट अनराजत शुभ जिन धर्मधर
सचियाय चरण सेवन निरत सिद्ध सूरि श्रीपूज्यवर ॥ १ ॥
द्वितिय पट्ट शुभदत्त तृतिय हरदत्त सुजानहु ।
चतुर्थ आर्य समुद्र सकल गुन सागर मानहु ॥
पचम केशीकुमार भूप परदेशीय बुद्धे ।
पष्ट स्वयंप्रभसूरि यच्च के तन मन शुद्धे । वसुवेद ॥ २ ॥

मरूथल श्रीमालनगरे राय यज्ञ करावही ।
ने वे हजार प्रतिबोध श्रीमाल वंश धरावही ॥
देविविघ्न विनास नयरी पम्हा जाणहु ।
प्राग्वट वंस पेंतालीस हजार ठाणहु । वसु ॥ ३ ॥
श्रीरत्नप्रभसूरि पट्ट सप्तम जब लिनहु ।
मंत्री सुतहि जीवाय गच्छ उपकेश किनहु ॥
कर प्रसन्न सचियाय कर्म हिंसादिक शुद्धे ।
लच्च तीन सिद्धि व्यूह सह शिष्य प्रति बुद्धे । वसु ॥४॥
अष्टम पट्ट प्रविष्ट यच्च प्रति बोध प्रकाशक ।
यच्चदेव आचार्य संघ जन विघ्न विनासक ॥
नवम पट्ट अधिरूढ कक्क सूरि गुन पूरने ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट दिग दोष विचूरने । वसु ॥ ५ ॥
पट्ट एकादश पूज्य सिद्धसूरि पुनः वारहु ।
श्रीरत्नप्रभसूरि द्वादश पट्ट विचारहु ।
यच्चदेवसूरि सु ककसूरि मनु संजक ॥
वीरप्रकृति कि विकृति स्नात्र शुभविधि सनभंजक । वसु ॥६॥
देवगुप्त सूरि सु पंचदश पट्ट प्रभानहु ।
शशिरस पट्टारूढ सिद्धसूरि पुनः मानहु ॥
श्रीरत्नप्रभसूरि सप्तदश पट्ट वखानिय ।
यच्चदेवसूरि सु पट्ट अष्टादश जानिय ॥ वसु० ॥७॥

---

१ श्री पार्श्वनाथप्रभुको प्रथमपट्ट गीननेसे श्रीरत्नप्रभसूरिजी सातमे पाटपर आते है । और शुभदत्त गणधरसें प्रथम पट्ट गीननेस रत्नप्रभसूरि छठे पाटपर होते है ।

चन्द नन्द पट्ट ककसूरि गुन ग्यान प्रविनहु ।
देवगुप्तसूरि सु विशय घतति छिन्नहु ।
सिद्धसूरि पट्ट एकवीस सिद्ध संपत्त पूरिय ।
नेत्र नेत्र पट्ट पूज्य विज्ञ रत्नप्रभसूरिय ॥ वसु० ॥८॥
यक्षदेवसूरि सुनयन गुन पट्ट मनोजै ।
अग्निवेद पट्ट ककसूरि गुनवन्त गनीजै ।
लोचनसर पट्ट देवगुप्तसूरि सुखदायक ।
सिद्धसूरि षट्विंश पट्टमुनि जन गन नायक ॥ वसु० ॥६॥
श्रीरत्नप्रभसूरि नवत्रीति सतावीस पट्ट पूजित जानिये ।
यक्षदेवसूरिसु अष्टविंशति पट्ट मानिये ।
उनत्रिस पट्ट ककसूरि गुन गन गंभीरहु ।
देवगुप्तसूरिसु पट्ट गुननभ अति धीरहु ॥ वसु० ॥१०॥
शिव लोचन शशिपट्ट सिद्धसूरि सुखकारिय ।
श्रीरत्नप्रभसूरि सकल भविजन भवहारिय ।
द्वात्रिंशत पट्ट पूज्य प्रखर पडित अवधारिय ।
यक्षदेवसूरि सुदेवादि गुन पट्ट विचारिय ॥ वसु० ॥११॥
ककसूरि चउतीस पट्टमें अति तप धारिय ।
जिन वचन पुन निपत्त सेठ सोमाकी टारिय ।
देवी दर्शन प्रत्यक्ष छंड भंडारसु डारिय ।
नाम उभेद्वात्रिंश अपर गण साख निकारिय वसु० ॥१२॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट गुन सर वर जानिय ।

सिद्धसूरि गुनभूरि राम रस पट्ट वखानिय ।
शिव लोचन मुनि पट्ट ककसूरि चित्त आनीये ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट पावक सिद्धि मानिय ॥ वसु० ॥१३॥
गुननिधि मुनिनिधि पट्ट सिद्धसूरि सुभमानहु ।
ककसूरि तपभूरि पट्ट विधि मुख वखानिहु ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट वीर धीर शशिमानहु ।
वीण विद्या प्रविण जान क्रिया कच्छुक प्रमानहु । वसु० ॥१४॥
सकल संघ मोल सिद्धसूरि मुनि नायक थांपे ।
वारिद्धि लोचन पट्ट अखिल तप तेज अमापै ।
पट्ट वरण ककसूरि श्रावक अघहारक ।
निज मुख पंच प्रमाण ग्रन्थ रच ज्ञानपसारक । वसु० ॥१५॥
वेद वेद पट्ट देवगुप्त सूरि दुःख सहु हरता ।
स्वोपयोग टीका सु ग्रन्थ नवपद पर करता ॥
वारिद्धि वाण सु पट्ट सिद्धसूरि सिद्धि धरता ।
सागर रस पट्ट ककसूरि मुद मंगल भरता । वसु० ॥ १६ ॥
हरि भूज मुनि पट्ट देवगुप्तसूरि-गुरु ग्यानिय ।
चरण सिद्धि पट्ट सिद्धसूरि वहु बुद्धि विधानिय ॥
वारद्धि निधि पट्ट ककसूरि उज्वल यशजानिय ।
तस्स चरण चित्त लाय नाम नित्य स्वमुख वखानिय । वसु ॥१७॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट पंचाशत सुजानहु लिन्नो ।
तब भैसा निज भक्त सप्त लक्ष धन व्यय किन्नो ॥

ताते कोटि न कोट द्रव्य ताकों गुरु दिन्नो।
सर शशि पट्टारूढ सिद्धसूरि सवपुर चिन्नो। वसु० ॥१८॥
ककसूरि बावन पट्ट पूजित जब धारे।
नृप वचने हेमाचार्य शिष्य निर्दयी निवारे॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट तेपन्न विराजै।
लच्छन धन निज त्याग साधु साधन सब सजै। वसु ॥१९॥
चाण वेद पट्ट सिद्धसूरि पूरण गुन पूजहु।
चाण बाण पट्ट कक्कसूरि कारत कि कुंजहु॥
जिन किय कोट मरोट प्रगट अत्यन्त सुशोभत।
देवगुप्तसूरि सुपत्रि रस पट्ट अलोभत। वसु० ॥ २० ॥
सायक मुनि पट्ट सिद्धसूरि शरनागत त्राता।
कक्कसूरि सर सिद्धि पट्ट गुन ग्यान विधाता॥
देवगुप्तसूरि पट्ट इषु निधि गुन सिद्धाता।
रस नभ पट्टारूढ सिद्धसूरि जगत विख्याता। वसु० ॥ २१ ॥
ऋतु विधु पट्टारूढ ककसूरि जिन मंडन।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट रस भूम्र अज्ञानहु खंडन॥
राग राम पट्ट सिद्धसूरि पुरण गुनवन्तहु।
शास्त्रवेद पट्ट ककसूरि जपतप जसवन्तहु। वसु० ॥ २२ ॥
देवगुप्तसूरि सु पट्ट रस शर शुभ धारेउ।
तीर्थाटन कर देशलादि भक्तनकों तारेउ॥
दर्शन दर्शन पट्ट सिद्धसूरि जब ... ।

आदिनाथकों पूज्य प्रतिष्ठापन जिन किन्नो ॥ वसु० ॥२३॥
रसऋषि पट्टारूढ ककसूरि तप धारिय ।
तीन किया गच्छ प्रबन्ध सकल साधुन सुखकारिय ॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट पट वसु बुद्धि वारिधि ।
सिद्धसूरि मुनिराज पट्ट वडभाग राग निधि ॥ वसु ॥२४॥
मुनिनभ पट्टारूढ ककसूरि बुद्धिसागर ।
इति विनाशन करन सरनभय हरनयनागर ॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट ऋषि रसा सुजानिय ।
स्वर लोचन पट्ट सिद्धसूरि दुःख मोचन मानिय ॥ वसु० ॥२५॥
द्विपदेव पट्ट ककसूरि जप तप तन धारिय ।
देवगुप्तसूरि सुपट्ट ऋषि वेद विचारिय ॥
ताल त्रीलोचन वदन सिद्धसूरि पट्ट मानहु ।
ककसूरि गुन भूरि पट्ट मुनि रस पहिचानहु ॥ वसु० ॥२६॥
देवगुप्तसूरि सुपट्ट पुनि मुनिमुनि मानिय ।
ऋषि वसु पट्टारूढ सिद्धसूरि चित्त आनिय ॥
तरुनिधि पट्ट प्रविष्ट ककसूरि चित्तलावहु ।
दिग्गज नभ पट्ट देवगुप्तसूरि गुन गावहु ॥ वसु० ॥२७॥
सिद्धि अवनि पट्ट सिद्धसूरि सतन कुले भूपन ।
भूधर भुज पट्ट ककसूरि पूरन तप पूपन ॥
विधि लोचन गुन देवगुप्तसूरि पट्ट मंडन ।
पावन पूज्य प्रताप ताप भविजन भयखंडन ॥

वसुवेद संख्य जिण पट्ट अवराजत शुभ जिन धर्मधर ।
सचियाय सेवन निरत सिद्धसूरि श्रीपूज्यवर ॥ वसु० ॥२८॥

दोहा-सोरठा ।

सिद्धसूरि श्रीपूज्यवर । कमलागच्छाधिश ॥
विरची यह पट्टावली । जासु वचन धर शिस ॥ १ ॥
जो नर या पट्टावली पढहि सुनहि चित्त धार ॥
सो पावत संसारमें । शीघ्र पदारथ च्यार ॥ २ ॥
गीनियत बहुत ग्रन्थनमहिं । चक्रगति तैं अङ्क ।
या मैं तो ऋजु रीत तैं । गुनि गन गनो निशङ्क ॥ ३ ॥
चैत्र शुक्र तृतिया सुदिन । चन्द नन्द रस व्योम ॥
लिखी यह पट्टावली । वत्सर वासर भोम ॥ ४ ॥

(२) श्रीओसवंश स्थापक श्रीरत्नप्रभसूरिजी महाराजकी स्तुति ।

कमले गच्छनायक श्रीरत्नप्रभसूरि पूजनो । कमले ॥टेर
रत्नचुड विद्याधर नायक, जा रहे बेठ वैमान । पार्श्वनाथ
पाट पंचमे, स्वयप्रभसूरि करे व्याख्यान हो कमले ॥ १
अटक गयो वैमान नभमें । सुनवा आये वाणी ॥ चार म
व्रत दीक्षा लीनी । अनन्त सुखोंकी खाणी हो कमले ॥ २
वीर निर्वाण वर्ष बावनसे । आचारज पद पाया ॥ तेथी

अठारा पीच्छे । नगर ओशीया आया हो कमले ॥ ३ ॥ प्रतिबोधी चामुंडा देवी । समकित लीनो धार। तीन लचने सहस्र चोराशी । श्रावक किया तीणवार हो क० ॥ ४ ॥ देवी च्यार सेवे नित्य चरणा । अम्बिका पद्मावती जाण। तीजी सिद्धायिका चोथी चामुंडा । तुझ आण करे परिमाण हो क० ॥५॥ वीर प्रभुके बिंबकिसरे । करी प्रतिष्ठा सार । ओसवंशकी करी थापना । वरत्या जयजयकार हो क० ॥६॥ ओसवंशके गोत्र अठारे । सुनिये चतुर सुजान । तातेड बाफणा वेद संचेती । करणावट पोकरणा जान ॥ हो क० ॥ ७॥ चोरडीया छाजेड गदइया । लुणावत समदडया नाम । विरहट भटेवडा कुंभट रांका ॥लघुसेठि थाप्या स्वांम ॥ हो क० ॥ ८ ॥ श्रीश्रीमालने डीडू गोत्र । फीर साखा हुइ अनेक । एसे महान् गुरु उपगारी । ज्यारी भक्ति करो विशेष हो ॥ क० ॥ ९ ॥ परम्परा गुरु आपकी सरे । अविच्छिन्न चाले आज । सचे दिल समरण करेसरे । सवही सुधारो काज ॥ हो क० ॥१०॥ ककसूरि आदि आचारज। हुवे बडे विद्वान। राजा राणा बादशाह, कांइ दीयो सभामें मान हो ॥ क० ॥ ११ ॥ नगर फलोधी गौडीजीमें । मूर्ति गुरुकी सोहे । दरशन करतो आनन्द आवे । हस्त वदन मन मोहे हो ॥ क० ॥ १२ ॥ उगणीसे तहोत्तेर आसोजकी । शुद्ध तेरस मन भावे । ज्ञानसुन्दर चाकर चरणोका । हरष हरष गुण गावे हो ॥ क० ॥ १३ ॥ इति ।

(३) परमपूज्य कक्कसूरिजी महाराज गुणअष्टकम्।

जे आराध्या तुम एक चित्ते । निश्चय हुवा ते सव संघफत्ते ॥
हिव म्हारी प्रभु आश पुरे। सुण विनति सदा गुरु कक्कसूरे ॥१॥
कदाची बांध्या मइ कर्म कोड । उपार्ज्यो आगल अन्तराइ ।
तीणे करिये प्रभु पाप दुरे। सुण विनति सदा गुरु कक्कसूरे ॥२॥
नर नारी निश्चय आपने वखाणु। प्रभु तेहना पुन्यनो पार न जाणुं।
नित्य नमे उगमतेय सूरे। सुण विनती सदा गुरु कक्कसूरे ॥३॥
कलीकालनो नीर अछे अथागे। तेण पीडीयो न ल्हे न त्यागे।
लोलो अछु हु प्रभु तेण पुरे। सुण विनति सदा गुरु कक्कसूरे ॥४॥
प्रभु तारवानो प्रतिपन्न पाले। मय डूबताने म मेल निराले ।
विवेकनो वहान वेग पूरे। सुण निनति सदा गुरु कक्कसूरे ॥५॥
जाणु अमारो भव अप्रमाणे। प्रभु देशनानो न सुणीयो वखाणे।
नही पुजीयों पुस्तके मइ एक पूरे। सुण विनति सदा गुरु कक्कसूरे ॥
ते उधर्यो गच्छ उएस भारे । नही तुमारे गुणनो कोई पारे ।
ते आठ आगे किया कर्म दूरे। सुन निनति सदा गुरु कक्कसूरे ॥७॥
यह विनति सुन गुरु कक्कसूरे । पढ सुणे जिम मन रग पूरे ।
तीहां तणी तुं प्रभु आश पूरे। सुण विनति सदा गुरु कक्कसूरे ॥८॥

॥ श्रीगुरुगुणाष्टकम् ॥

पार्श्वपाट सुभदत्त गणी हरिदत्त आर्यसमुद्र ।
केशीश्रमण प्रतिवोधीया दोय दश नरेन्द्र ॥ १ ॥

भिनमाल भव तारवा वारवा मिथ्या जाल ।
सयंप्रभसूरी किया श्रीमाली पोरवाल ॥ २ ॥
रत्नप्रभसूरि आविया ओसीया नगरी मजार ।
ओशवंश जैनी कीया तीन लक्ष चोराशी हजार ॥ ३ ॥
राजगृही मणिभद्रने प्रतिबोध्यो हित काज ।
सवा लक्ष जैनी किया, यक्षसूरी महाराज ॥ ४ ॥
ककसूरी करुणा निधि, देश कनोजमें जाय ।
जीव छोडाया यज्ञका दीया जैन बनाय ॥ ५ ॥
गुप्तपणे रहे देवता करे शासनका काम ।
स्मरणथी शिवपद लहे देवगुप्तसूरी नाम ॥ ६ ॥
सिद्धपद वरवा नित्य नमुं सिद्धसूरी महाराज ।
पांच नाम जो पाछला अविच्छिन्न चाले आज ॥ ७ ॥
उपकेशी उपकेशगच्छ कमलापति सुजान ।
भवसागर तीरवा भणी शरणे आयो ज्ञान ॥ ८ ॥
विशुद्ध सिद्धे संस्कृतं प्रभक्तिरेव सत्तमे ।
सुतरन एक दक्ष दृष्टि रुक्तमैर्गुणैसदाभि ॥

श्री ओशीया मंडन रत्नप्रभसूरिजी ।

(देशी तुमारे कदमका शरना.)

रत्नप्रभसूरीका शरना, मुजे संसारसे तारना ॥ टेर ॥ विद्याधर वंसके दाता, नंदिश्वर जातरा जाता, बीचमें मुनिपद भरना ॥ रत्न० ॥ १ ॥ चतुर्दश पूर्वके धारी, पांचसे शिष्य

है लारी, ओशीयां आपके चरणा ॥ रत्न० ॥ २ ॥ मंत्रीका पुत्र बचाया, नगर सब जैन बनाया, देवी समकित शुद्ध धरना ॥ रत्न० ॥ ३ ॥ उपकेशगच्छ आपसे वाजे, गौत्र अढार है ताजे, गुरुका समरन नित्य करना ॥ रत्न० ॥ ४ ॥ ढुंढक और पन्थी है किधर, शिखरबन्ध वीरका मन्दिर, सीतर वर्ष वीरसे गीनना ॥ रत्न० ॥ ५ ॥ नामसे दुःख सब जावे, पूजासे सम्पदा पावे, अक्षयसुख मोक्षका धरना ॥ रत्न० ॥६॥ तीर्थ जग ओशीया वावो, गुरुगुण मीलके गावो, ज्ञानका ध्यान तुम चरना ॥ रत्न० ॥ ७ ॥ इति.

श्रीफलोधीमंडन श्रीरत्नप्रभसूरिजी म०

पूजो रत्नसूरी महाराज, मोक्षकि राह बताने वाले । । पूजो० । नगर ओशीयां आये, सबकों जैनी आप बनाये, जिन्होंका वंस ओश थपाये गौत्र अठारे बनाने वाले । पू० । ॥ १ ॥ जग तारण गुरुराज, सुधारों भक्तों के सब काज, शरणे आयोंकि रखो लाज, दुःख सब दुर हटाने वाले । पू० । ॥२॥ तुमहो दीन दयाल, करीये सेवक कि प्रतिपाल, मीटादो कर्मोंका जंजाल, ज्ञानकों अमर बनाने वाल ।पू०। ॥३॥ इति.



॥ श्री ॥

॥ ओएशवंशस्थापक श्रीमदुपकेश (कमला)गच्छीय दादासाहिब श्री १००८ श्री जिनरत्नप्रभसूरीश्वरजी महाराजके गुणानुवादका संग्रह ॥

॥ छन्दाष्टक त्रिपदी ॥

सुगुरु दयालं जन प्रतिपालं, मूर्ति विशालं अशुभहरम्। ताप विदारं दुरित निवारं, भवदधितारं शुभ्भकर॥ तजनपठाठं संयमवाटं गणधरपाटं ऋद्धभरं । सुमतिवधारं जापउचारं विद्याभण्डारं सिद्धकरम् ॥ १ ॥ जनमनरंजं दुःखविभंजं, दधिश्रुतमंजं पूर्वधरं। योगउचारं अर्थविचारं, शीलअपारं ध्रुवठरं॥ प्रेमपवित्रं अक्षयचरित्र, शिशवकलत्रं सुखभर। सूर्यप्रकाशं मुक्तिविलासं, ओएशवासं स्थूम्भकरम् ॥ २ ॥ मिथ्यानिकासं व्रतधरवासं, सुरनृपरासं सेवकरं । पूरतआसं मेटतत्रासं, सर्वविभासं नेवकरम् ॥ ज्ञानसुमंडं चरित अखंडं, कुमतिविहंडं देवपरम् । जोतिस्वरूपं मूर्तिअनुपं, भवदधिकूपं चेमकरम् ॥३॥ वैक्रियधारं कोरंटपारं, बिम्बपधारं धर्मधूरम् । शीलसलीलं निरमलनिलं, सुमतिसुढील भर्मदूरम् ॥ ओएशवंशं निशीकरअंशं, मिथ्याध्वंसं धर्मपूरम् । समकितसारं पासआधारं, जपनवकारं कर्मचूरम् ॥ ४ ॥ साचलपरचं सद्गुरुअरचं, वसुविधचरचं कुसुमफलं । पुरपुरधामं जपगुरुनामं, इच्छतकामं कलुप-

जलं ॥ बहुविधभोगं अंगनिरोगं, तापकुशोकं अनिलटल । मारविडारं कुष्टकुठारं, वचघनधारं सुमनोखिलं ॥ ५ ॥ नवग्रह-तुष्टं हरिकरिदुष्टं, विषधररुष्टं शान्तिकर । प्रेतपिशाचं अविना-पासं, लीलविलासं ध्यानधरं ॥ पगपगमानं ज्ञानसुज्ञानं, आवतध्यानं प्रातधरं । हयगयउज्जलं मनिधनविपुलं, गुनगनविमलं ज्ञातवरं ॥ ६ ॥ संकटचूरं अनधनपूर, अघतमदूरं पीरहरं । विद्यापीठं सुगुनगरिष्टं, भाजतदिष्टं धीरकर ॥ अशरणशरणं भवभयहरण, भविसुखकरण तीरपरं । स्वयंप्रभपाट शिवपुर-वाटं, अक्षयठाठं चीरभरं ॥ ७ ॥ ओएशगच्छं रयणप्रभसचं, विरुदसुलच्छं जानमन । भणयविलासं श्रीधरवासं, दालिद्र-नासं जानमन ॥ जगमपुवर सिद्धगुरुसुरं, खेचतअगर जान-मनं । कविशुभकथनं लस्करवमनं, मुनिश्रुतवरपं जानमनं ॥ ८ ॥ इति मंगलाष्टक सम्पूर्णम् ॥



॥ दादाजी महाराज श्रीजिनरत्नप्रभसूरीश्वर छन्दाष्टकम् ॥



आदित्य तेज प्रताप निशिकर वाणी जलधर गाजहिं । नय सप्तधारक पूर्वपारक सूरि पट गुरु गाजहिं ॥ भव जीव सहायक कर्मघायक तरणि भव सम छाजहिं । शुभ लेत जो प्रभरत्नसूरि नाम अघदल भाजहिं ॥१॥ कुल राज सम्पत

संयम लेन महितल फिरै। कोरंट गढ ओण सभै पतित पावन जन करै। सेठ उहड तनय निर्विष कीन शुभ यश पावहि ॥ शुभ० ॥ २ ॥ देवी साचल पद्मा अम्बा और वहु देवाधणे। करत सुर मुनि भूप सेवा वीर पावन स्तुति भणे। मिथ्याध्वंसक जैन थाप्या जैनाऽखंड दीपावहिं ॥ शुभ० ॥३॥ पुर ग्राम पट्टन धाम विचरे जैन आणाहिय धरी। देश देशसें कुमति काढी सुमति वहु पुर विस्तरी। शान्त दान्त महान्त पूरण गणश्री कहावहि ॥ शुभ० ॥ ४ ॥ उपकेशगच्छाऽधिपमंडण पद स्वयंप्रभ सोहते। छवी कान्ति सुन्दर कमल मुख लखदेव दाणव मोहते ॥ ध्यानारूढ निशंक शत गुण कथन कीरत पावहिं ॥ शुभ० ॥५॥ सलिल चन्दन कुसुम विकसित भावसे चाढै सदा। क्रोड व्याधि दुर होवे पावै पग पग सम्पदा। आणा चउदिश जाहि फैले भावसें भवि ध्यावहिं ॥ शुभ० ॥ ६ ॥ परताप सव महाराजका जाने सुधिमन प्रेमसें। प्रातः उठ कर जाप जपे दो घटि नित टैमसे। सवल चिन्ता शीघ्र भाजे सेव त्रैकरण लावहिं ॥ शुभ० ॥ ७ ॥ ये आद्य मंगल शुद्ध चित कर पठन पाठन जो करै। लहत सम्पदा लोक त्रैकी सुयश भूपर विस्तरै ॥ कर जोर कवि शुभकरण कहता दासपे मया राखहि ॥ शुभ० ॥ ८ ॥ इति छन्दाष्टकम् ॥

॥ श्रीरत्नप्रभसूरीश्वराष्टकम् ॥

भव्यावली मकलकानन राजहंसं, श्रेयः प्रवृत्ति मुनि मानस राजहंस। श्रीपार्श्वनाथ पदपंकज चिंचिरकं, रत्नप्रभु गुणधरं सततं स्तवीमि ॥ १ ॥ विद्याधरेन्द्र पदवी कलितोपिकामं, श्रीमत् स्वयंप्रभुगिरः परिपीय योऽत्र। दीक्षा वधुमुदवदव मुदमादधानो, रत्नप्रभुःस दिशतात् कमलाविलासं ॥२॥ मन्त्रीश्वरोहड सुतो भुजंगेन दष्टः, संजीवितः सकल लोक सभा समचं। यस्याहि वारिसह पुष्कर सिंचनेन, रत्नप्रभुःस दिशतात्कमलाविलासं ॥ ३ ॥ मिथ्यात्व मोह तिमिराणी विधूयथेन, भव्यात्मनां मनसि तिग्मरुचेव विश्वे। संदर्शितं सकल दर्शन तत्वरुपं ॥ रत्न० ॥ ४ ॥ येनोपकेश नगरे गुरु दिव्य शक्त्या, कोरंटके च विदधे महती प्रतिष्ठा। श्रीवीर बिंबयुगलस्य वरस्य येन॥ रत्न० ॥ ५ ॥ श्रीसच्चिका भगवती समभूत प्रसन्ना, सर्वज्ञ शासन समुन्नति वृद्धिकर्त्री। यद्देसना रस रहस्य मवाप्य समाक ॥ रत्न० ॥ ६ ॥ गृह्णंति यस्य सुगुरोर्गुरुनामंत्रं सम्यक्त्व तत्त्व गुणगौरव गर्भिताये तेषां गृहे प्रतिदिनं विलसंति पद्मा ॥ रत्न० ॥ ७ ॥ कल्पद्रुमः करतले सुर कामधेनु, श्चिंतामणिः स्फुरति राज्य रमाभि रामा। यस्योल्लमत् क्रमयुगांबुज पूजनेन ॥ रत्न० ॥ ८ ॥ इत्थ भक्तिभरेण देवतीलकश्चातुर्य लीलागुरोः। श्रीरत्नप्रभसूरिराज सुगुरोः स्तोत्रं करोतिस्मयः प्रात काम्यमिद पठत्य

विरतं तस्यालये सर्वदा सानंदं प्रमदेव दिव्य तीतरां साम्राज्य लच्मीः स्वयं ॥ ६ ॥ इति श्रीओएश नगरे त्रयलच चौराशी हजार श्रावक प्रतिबोधिता ओशवाल ज्ञाति स्थापिता तस्य स्तोत्रमिदं प्रत्यहं पठनीयं ॥ सम्पूर्ण जात॥ः

॥ पद ॥

शरणो तो तिहांरो लीयो लीया ॥ लखे चरण गुरुराजसरे सबकाज प्रबलसुखदीयो दीयो ॥ स० ॥ १ ॥ दीये संसय भ्रम मेट भई सुभ भेट, प्रफुल्लित हियो हियो ॥ स० ॥ २ ॥ कहत करण कर जोर जपो नित भोर, अखंड शाशन कीयो कीयो ॥ ३ ॥ इति ॥

॥धुन ॥

मो मन लागो तिहांरे चरणा, भव भव हरणा शिव-सुखकरणा आनन्द अन धन भरणा ॥ मो ॥ १ ॥ जय २ युगवर रयण सूरीश्वर सुमति सुबुध घट धरणा ॥ मो ॥ २ ॥ कहत करण शुभ दोय कर जोडी, महर निजरदी करणा ॥ ॥ मो ॥३॥ इति पदम् ॥

पूजन मेरे मन भाई सद्गुरुकी ॥ रुडै भावे जो नित पूजै, कष्ट कठिन टर जाई । ईत उपद्रव तुरत पुलावै, पग पग ऋद्ध जश पाई ॥ सद्गु० ॥ १ ॥ जो सद्गुरुको ध्यान धरत मग चेम कुशल घर आई । अरिकारि सागर सिंह दावानल देखत चट टर जाई ॥ स० ॥ सद्गुरु रयण

चिन्तामणी फल सम देत अधिक वरदाई । सद्गुरु जगमें सुर तरुसरिषो मन इच्छित फल पाई ॥ स० ॥ ३ ॥ इह भव पर-भव अन धन लक्ष्मी सुखसम्पद ठकुराई । वंध्या पुतर गोद खिलावै निश्चय मन गुरु गुण गाई ॥ स० ॥ ४ ॥ धन धन रत्न प्रभुयुगराया देवो दरश गुरु आई । शुभको अविचल प्रेमसे दीजै येहीज बात समाई ॥ स० ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ चाल होरीकी ॥

गुरु पद पूंजा सुहाई मिलकर पूजो रे भाई ॥ गुरुमुख-चंद विलोकन सेती । जठर ताप टर जाई ॥ मिथ्या अना-दिकी मोहनी निद्रा । नासत लख अधिकाई ॥ लगन जद गुरुसें लगाई ॥ गु० ॥ १ ॥ गुरुगुण अमृत श्रवण पानतें । विष निर्विष हो जाई ॥ दधि श्रुत लहर सुमत घट आवै । मोडत मान हरिकरि आई ॥ सुरत जद गुरुसे लगाई ॥ २ ॥ गु० ॥ गुरु कज धूलि चरन फरसनतें । कुमता मोरी पुलाई ॥ कहत करण शुभ दोई कर जोडी । सुभग दशा घडी आई ॥ निरख छवी रह्यो हुं लुभाई ॥ गु० ॥ ३ ॥ इति ॥

॥ पुन ॥

लगैरी मोकु नाम गुरुजीका प्यारा । जाके रटे भव-पारा ॥ गुरुजीका नाम अमरफल देवै । जो जपै घटि च्यारा ॥ साचे मनसें जो कोई ध्यावै । टूटै करम जंजारा ॥ १ ॥लगै॥

गुरुसम देव ना कोई जगमें । देख्या नैन पसारा ॥ रूडे भावैं जो भवि पूजै । पावै ऋद्धि भंडारा ॥ लगै ॥ २ ॥ जन मन रंजन भव भय भंजन । मेटत दुरित विकारा ॥ अघदल खंडन कुमति विहंडन । सुमति मंडण धारा ॥ ३ ॥ लगै ॥ केशी गणधर पाट दीपता । नाम रतन प्रभु प्यारा ॥ मिथ्या ध्वंशक जैन दीपायो, एसे गुरु अवतारा ॥ ४ ॥ लगै ॥ नगर ओ-एश्यां ओस वंश थाप्यो, फेल्यो सुयश विस्तारा । करन कहै शुभ दोई कर जोडी देवो दरश दीदारा ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ राग आशा ॥

सुगुरुने भंगिया एसी पिलाई, जामें शिवमग देत दिखाई ॥ टेर ॥ सिलवट सुमता शीलकी लोढी, गुप्तिकी भांग मिलाई। ग्यानकी मिरच व्रतके पिस्ता, नियमकी एलची लाई ॥ सु० ॥१॥ आगम दूध नयके बीजे, करण बिदामे पिसाई । जिन-वाणी अति नीर सुधारस, शर्करा भावे मिलाई ॥ सु० ॥ २॥ शुद्ध क्षमा अति उज्वल साफी, तामें लुगदी छनाई । भविजन चेतन हरखसे पीवे, निरखै आतमा शांई ॥ सु० ॥३॥ करण कहै शुभ एसी भंगीया, पीवै जो पूरा न्याई । शिवपद पदवी प्रेमसे पावै, भवभव तांत जलाई ॥ सु० ॥ ४ ॥

॥ राग आशावरी ॥

सुगुरु तोरी छबि लागै मोहे प्यारी मै तो वारि जाबुं

वार हजारी ॥ टेर ॥ महेन्द्रचूड लक्ष्मीवति नंदा गौर वरण द्युति भारी। इक अवतारी कारज सीझा तीन भूवन यश जारी ॥१॥ चोखै भावे ओजन अरचित भाजै कलुपता सारी। ऋधसिध सम्पत सामी आवै ध्यान धरे इकतारी ॥ २ ॥ भीम भगंदर नामसे भाजै तुटै बंध अपारी। शौक मरी स्वपने नवि व्यापै डरपै कुमति निचारी ॥ ३ ॥ रतनप्रभुसूरि जंगम जुग-पति उपकेशगच्छ पटधारी। मिथ्याध्वंसक जैन दीपायो एसे गुरु अवतारी ॥ ४ ॥ देवि चामुंडा समकित कीनि कीने गोत्र अढारी। एसे सद्गुरु शुभ उठ नमतां वारि जाउ वार हजारी ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ राग काफि–जिल्ला ॥

सुगुरुजी अब मोहै पार उतारो, भवभव भटकत तुम पद पायो। लीनो शरण तिहारो ॥ सु० ॥ १ ॥ न्यारे लुटेरे मोहै नित घेरे ताते दूर निकारो ॥ सु० ॥ २ ॥ आस धरिने बहुली आयो चिंतित काज सुधारो ॥ सु० ॥ ३ ॥ मोहै भरोसो अतिही नीको जानत मम हियवारो ॥ सु० ॥ ४ ॥ शुभ उठ शुभ करजोडके नमतां कुमति कलुपता टारो ॥सु०॥५॥ इति ॥

॥ राग जिलाजोगीया तथा श्यामकल्याण ॥

सुगुरु तोरो दरश सरस अति नीको, दरश करतहिं पातिक भाजै मिट गयो फंद अरिको ॥ सु० ॥ १ ॥ याभव

परभव ऋद्धसिद्ध चाहै कर अरचन गुरुजीको ॥ सु० ॥ २ ॥ नाम लियासे आनन्द उपजै बाढै सुमति कोटीको ॥ सु० ॥ ३ ॥ उकेशगच्छ नायक सोहो नामरतनप्रभुजीको ॥ सु० ॥ ४ ॥ शुद्ध मन शुभ कवि सद्गुरु नमतां जमियो बीज सुगतिको ॥ सु० ॥ ५ ॥ इति ॥

॥ राग रेखता ॥

दशा शुभ आज मम जागी भग्या भ्रमवास मो मनका ॥ टेर ॥ रतनप्रभसूरि पद पाये । फल्या मनकाज सब मेरा, रविसम ज्योत लखनखकी नसा मिथ्यात्व अंधेरा ॥ द० ॥ १ ॥ कलपसम इच्छ फल देते जोसेते द्रव्य-युक्तिसे । उपाधी व्याधि टर जावै वंदणकर भावभक्तिसैं ॥ द० ॥ २ ॥ कुसुम जुहि जाति अहि चम्पा चढावो नित चरणो पै। ग्रहादिक क्लेश अति पीडा, नशावै शिघ्र पलकोंमे ॥ द० ॥ ॥ ३ ॥ गया हुवा राज भट आवे अचिंति लच्मी बहु पावे सुवंध्या पुत्र तत् पावै सुगुरुके ग्राम गुण गावै ॥ द० ॥ ४ ॥ अरज कर जोडके करता हमारी विनती सुन लीजै ॥ दयानिधि आप सद्गुरु हो दरश शुभको तुरत दीजै ॥ द० ॥ ५ ॥ इतिपदम्

राग देशी

गुरु मया करो तप जप संयम सुख भरे अनुभव दी-जीये ॥ टेर ॥ गुरु नाम जपत रीध मीध आवे ॥ अरीजन

सगळा दुर पुलावे ॥ मन वंछीत कारज सीध थावे ॥ गु० ॥ ॥ १ ॥ रोग दोहग दुःख सघला नासे ॥ पग पग पामे लील विलासे ॥ भय भय रव सुपने नहीं भासे ॥ गु० ॥ २ ॥ श्री श्री स्वयंप्रभ पट पर छाजो ॥ उपकेश गच्छके नायक गाजो ॥ कुमति कुटील मद तज भाजो ॥ गु० ॥ ३ ॥ गुरु नामे निर्धन धन पामे ॥ वंध्या पुत्र गोद खिलावे ॥ रण बीच जीत सुगम घर आवे ॥ गु० ॥ ४ ॥ सुभ उठ जोजन सद्गुरु रटते ॥ अनिल सलिल ज्वरसे नही डरते ॥ सुख मोद प्रमोद हीयेमे विचरंते ॥ गु० ॥५॥ मो मन गुरु नामा भावे। गुरु विन दुजा याद न आवे ॥ शुभ करी गुरु गुण गावे ॥ ॥ गु० ॥ ६ ॥ इतिपद्यम्

सलूनाकी देशी

सुगुरु चरण नीत भजीये सलूना ॥ मन इच्छित बहु फलीये सलूना ॥ टेर ॥ सुगुरु मेहेरसे अन धन लखमी ॥ भरीय अखूटे भंडार सलूना । सुगुरु चरनसे पाप जो नासे ॥ हरीये दुरीत प्रचार सलूना ॥ सु० ॥ १ ॥ सुगुरु जगतमें पोत समाना ॥ सुगरु जिना भव रुलीये सलूना ॥ सुगुरु चिंतामणी रत्न समाना ॥ मन चींता सहु फलीये सलूना ॥ सु० ॥ २ ॥ सुगुरु चरण कज सुरतरु सरीखो ॥ मन वछीत फल देय, सलूना ॥ अजर अमर, पदवी सुख चाहो ॥ तो

भवी सद्गुरु सेव सलूना ॥ सु० ॥ ३ ॥ गुरुसम दुजो देव ना जगमे ॥ सद्गुरु भवदधि जाहाज सलूना ॥ गुरु देवनके देव कहीजे ॥ गुरु है जग शिरताज सलूना ॥४॥ सुगुरु कृपासे मनु भव पायो फलियो साहस विचार ॥ सलूना ॥ करण कहे मम पातीक भाजे ॥ सुगुरु जीवन आधार सलूना ॥ सु० ॥५॥ इतिपदम्

देशी मालवी

रत्न प्रभूजीसे वंदणा नित होय जो हमारीरे ॥टेर॥ महेंद्र चूड लच्मीवति नंदन ॥ गौर वर्ण द्युती कायारे ॥ सूरी स्वयं प्रभ पाटपे छाजो ॥ जंगम युगपती रायारे ॥ रत्न० ॥ १ ॥ आप वस्या बारमे देवलोके ॥ हुं इन भरत मझारेरे ॥ मो मन तुम चरणे लाग्यो ॥ किम आवूं तुम पासरे ॥ रत्न० ॥ २ ॥ सुरतरु सुरमणी रत्न हो गुरु ॥ चाकर खंडाका चोरे ॥ आप समो मोय कीजीये गुरु ॥ दीजे अनुभव दासारे ॥ रत्न० ॥ ३ ॥ जो जो काज कर्या तुम मेरा । में भूलनका नांहीरे ॥ अब तो किंकर ये नित चाहे । आय बसो दिल मांहीरे ॥ रत्न० ॥४॥ उपकेश मंडण साहीबा । सुरतरु सम अन्नदातारे ॥ को कवी गुण गण कह सके । गुरु गिरवा गुणवंतारे ॥ रत्न० ॥ ५ ॥ में तो पदरज धूल हुं । तुम्हे सुरगिरी जेवारे ॥ अवगुण म्हारा छांडीने । गुरु कीजे पार जो खेवारे ॥ रत्न० ॥ ६ ॥ शुभ

उठ शुभ करणे रटे । चाकर पद रजवासा रे ॥ भवभव सेवा चाकरी गुरु । आपो संयम खासारे ॥ रत्न० ॥७॥ शशी नव अब्दा तेहोचरा । वद आश्विन मासारे ॥ लस्कर संध्या माहने । गुरु विनती रची सुखशाता रे ॥ रत्न० ॥८॥ इति पदम् ।

यह पद हमेशां प्रतिक्रमण करनेके बाद बोलनेसे सब तरहका आनद मंगल होता है । इत्यलम् ।

॥ दादासाहेबकी थुई ॥

आज दिवस मनोहर ए पेखे परम दयाल तो । जन्म कृतारथ मम थयो ए पाप गया पायालतो ।सुरतरु घर आंगण फल्यो ए सरिया चिंतित काजतो । रत्नप्रभसूरि सेवतांए भाजै कोटी फिसादतो ॥१॥ उकेश गच्छनायक दीपतां ए रवि सम ज्योत प्रकाशतो । ओएश गढ गुरु आवियाए मिथ्या ध्वंस निकासतो । चउदे पूर्व विद्यानिधिए चउनाणि तप स्यादवो । ॥२॥ सद्गुरु दीनी देशनाए टाल्या दुरित जंजालतो । पद्मा अम्ब सिद्धादिकाए सुनके भई है निहालतो ।समकित सुधसा-चल लह्योए तज कुमति परमादतो । ॥ ३ ॥ ताके पट्ट परंपराए सिद्धसूरि महाराजतो । बलदेव गणी मुख शोभताए विद्यागुण भण्डारतो । शुभ उठ सद्गुरु शुभ नमेए मनमें धरी आनन्दतो ॥ ४ ॥ इति ॥

॥ पद बेमात्रा ॥

पारस नाम समाया मुज मन ॥ टेर ॥ भवभय हरता सुखघन करता ग्यान उज्वल सुखदाया ॥ मुज० ॥ १ ॥ जय जय वामा तनय भुवन तप गुण गण सुर गुरु गाया ॥ मुज० ॥ २ ॥ कहत करण शुभ उठ तुम्ह पद चरण शरण लय लाया ॥ ३ ॥ इति ॥

श्रीरत्नप्रभसूरी स्तुति.

महिन्द्र चुड घर जनमिया, लक्ष्मी कुक्ष निधान ।
कुलभूषण विद्याधरा, रतन रत्न समान ॥ १ ॥
दिक्षा शिक्षा उर धरी, सूरीपद गणधीश ।
चौदा पूर्व श्रुत केवली, मयल विचरे मुनीश ॥ २ ॥
अतिशय तेज अखंड यश, भव्य जन सुधारत काज ।
उपकेश पट्टन आविया, तारण भवजल जहाज ॥३॥
मंत्रीसुत विषधर ग्रह्यो, वासक्षेप विष निवार ।
पँवार नृप जैनी भया, तीन लक्ष चौरासी हजार ॥४॥
गौत्र अष्टादश स्थापीया, जैन धर्म जयकार ।
रत्नप्रभसूरी नमुं दिनमे वार हजार ॥ ५ ॥

समाप्त.